UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186131

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 349.5 Accession No. H 109

Author J45M

Title महाभारत

This book should be returned on or before the date last marked below.

हिन्दी महाभारत के रचियता

कविराज पण्डित जयगोपाल

Calcutta Art Printing Works, Lahore.

भूमिका।

महाभारत ग्रन्थ की प्रशंसा में कुछ लिखना ऐसा ही है, जैसे सूर्य्य को दीपक दिखाना। मैं तो यह कहूंगा, कि जिस हिन्दू (आर्य्य) ने महाभारत नहीं पढ़ा, उसने संसार की सभी विद्याओं के पढ़ लेने पर भी कुछ नहीं पढ़ा, और जिसने महाभारत को पढ़ लिया है और पढ़कर इसे अपने हृदय-पटपर अङ्कित कर लिया है, उसे अन्य किसी पुस्तक के पढ़ने की विशेष आवश्यकता नहीं रहती। समुद्र में जिस प्रकार हीरे, मोती, सीप, घोंगे, मोंगे, आदि अनेक प्रकार की सम्पत्तियां भरी पड़ी हैं, इसी प्रकार महाभारत-रूप विचारों के समुद्र में सब प्रकार के विचार भरे पड़े हैं। धर्म-नीति, राज-नीति, मानवी-सभ्यता, दुष्कर्मों का परिणाम, पुण्यों का फल, संसार के आरम्भ से महाभारत-काल तक के राजाओं महाराजाओं का इतिहास, वीरता, वैराग्य आदि सब भाव इसमें पाये जाते हैं। मेरा तो यहां तक निश्चय है, कि भारत के, नहीं नहीं संसार-भर के अन्दर इस समय जितना भी साहित्य Literature दिखाई देता है, चाहे वह हिन्दी, उर्दू, अंग्रेज़ी, फ्रेञ्च, जर्मन, अर्बी, फ़ारसी, जापानी किसी भी भाषा में हो उसका मूलाधार महाभारत ही है।

सच तो यह है कि महाभारत आर्य्य जाति की राष्ट्रीय सम्पत्ति है और जब तक यह हमारे पास है आर्य्य जाति कभी भी नष्ट नहीं हो सकती। सहस्रों वर्षों से पीड़ित और विदेशी शासकों से पद दलित यह जाति यदि अभी तक नष्ट नहीं हुई तो उसका एक मात्र कारण रामायण और महाभारत है। इस संसार समुद्र को तरने के लिये महामुनि व्यासदेव जी ने महाभारत रूप एक जहाज बना दिया है। महाभारत की रचना करने वाले भगवान व्यासदेव जी ने साढ़े आठ सहस्रों में इस ग्रंथ को पूरा किया, परंतु वह इतने कठिन और रहस्यों से भरे हुए हैं कि व्यासदेव जी ने स्वयं लिखा है कि मेरे ग्रंथ को संजय भी भली भांति समझता है

(

व नहीं यह मैं नहीं जानता। इसी मह ...त को वैशंपायन जी जनमेजय के प्रति सुनाते हैं और उस समय चौबीस सहस्र श्लोकों में इसकी समाप्ति होती है। इसके बहुत काल पश्चात् जब बुद्ध धर्म का जोर हुआ ता सौति ने महाभारत को और बढ़ाया और इसके एक लाख के लगभग श्लोक बन गये। इस प्रकार व्यासदेव जी के "जय" नामक ग्रन्थ को वैशंपायन ने तिगुना करके "भारत" नाम दिया और सौति ने भारत को चौगुना रूप दे कर भारत को महाभारत का नाम दिया। परन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि वैशंपायन और सौति ने व्यासदेव जी के विरुद्ध कोई नया सिद्धान्त भरा हो, नहीं, उनका सारा का सारा परिश्रम व्यासदेव जी के मूल लेख के आधार पर ही है और एक रत्ती भर भी अंतर नहीं आता। मेरा काम यहां महाभारत की समालोचना करना नहीं है, यहां केवल मैंने यह दिखलाना है, कि आर्य्य जाति को महाभारत पढ़ने और उसके अनुसार चलने की क्यों आवश्यकता है।

पाठक! महाभारत काल में आर्य्य जाति सारे संसार में राज्य करती थी यह बात आप को इस ग्रंथ के पढ़ने से ही पता लगेगा। कौरव और पांडवों का। युद्ध होता है, उसमें भारत के सब प्रान्तों के राजे-महाराजे एकत्र होते हैं। चीन का राजा आता है, अमरीका (पाताल देश) का राजा आता है, और हरिवर्ष (यूरप) की सेनाएं इसमें सम्मिलित होतीं है। काबुल, कन्धार, शक, हूण, (फ़ारस) किम्बहुना, कुरुक्षेत्र का मैदान सारे संसार की जातियों की वीर-प्रदर्शिनी भूमि बन जाता है। आर्य्य जातिं के इस अभ्युदय का, उस ऐश्वर्य का, एक-मात्र कारण प्राचीन आर्य्यों की सभ्यता, उनका सच्चा वैदिक धर्म, उनका ब्रह्मचर्य्य, उनका आत्म-ज्ञान, उनका शारीरिक बल, और राजनैतिक भाव ही है, जिनको महाभारत में मूर्तिमान करके दिखाया गया है।

ब्रह्मचर्य्य को ही लीजिये, पितामह भीष्म अपने पिता की प्रसन्नता के लिए आजन्म ब्रह्मचारी रहते हैं, राज्य का त्याग करते हैं और एक

सौ पच्चीस वर्ष की आयु में इतना प्रबल युद्ध करते हैं, कि पाण्डवी-सेना के छक्के छूट जाते हैं, आज जब कि स्त्रियों पर हाथ चलाने में भी लोक लज्जा नहीं करते वह शिखंडी के हाथों इस लिए मारे जाते हैं कि वह पूर्व जन्म में स्त्री था, उनका बल आदर्श था, बाणों की शय्या पर महीनों लेटे रहे, परंतु हाय तक नहीं की और सिरहाना भी लिया तो वह भी बाणका, और प्राण दिये तो अपनी इच्छा से। यह था आर्य्यों का आत्मिक और शारीरिक बल; यह बात थी जिसने आर्योंको संसार का स्वामी बना दिया था।

एक ईश्वर पूजा—महाभारत के समय आर्य्य लोग एक ईश्वर की पूजा करते थे, और यह पूजा संध्या हवन और बड़े बड़े यज्ञों द्वारा हुआ करती थी।

तीर्थ—महाभारत काल में आर्य्य लोग तीर्थ यात्रा करते थे, और इसको पुण्य कर्म समझते थे, यह तीर्थ आजकल के तीर्थों से बहुत भिन्न थे। वह प्रायः नदियों और ऋषियों व तपस्वियोंके आश्रमों का दर्शन करते थे।

कारीगरी—कला कौशल तो महाभारत काल में पराकाष्ठा को पहुंच चुका था। मय नाम दैत्य की बनाई हुई सभा इसका एक नमूना है, जिसने जल में स्थल और स्थल में जलका दृश्य दिखला कर दुर्योधन जैसे भूपति को भी चक्कर में डाल दिया था।

विवाह—विवाह में आजकल के समान बिरादरियों का बंधन नहीं था, कन्या की और वरकी योग्यता देखी जाती थी, चाहे वह किसी देशके अथवा किसी जाति के हों। द्रौपदी हिडिंबा और उलूपी तथा मत्स्य गंधा इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। द्रौपदीका स्वयंवर होता है, और शर्त यह लगाई जाती है कि जो मत्स्य भेदन करे वही इसका पाणिग्रहण करे पांडव उस समय ब्राह्मण के वेश में बैठे थे, श्रीकृष्ण के बिना दूसरा कोई उनको पहचान न सका जब कोई राजा उस मछली का निशाना न कर सका उस समय अर्जुन उठता है वह ब्राह्मण के स्वरूप में होता है परंतु

कोई उन पर शंका नहीं करता और वह उसको ब्याह कर ले जाता है, यदि उन दिनों ब्राह्मण क्षत्रियों का परस्पर विवाह प्रचलित न होता तो अर्जुन ब्राह्मण रूपमें कभी ऐसा साहस न करते। इसके पश्चात भीमसेन हिडिंबा नाम राक्षसी के साथ ब्याह करते हैं और घटोत्कच नामक पुत्र उस राक्षसी के गर्भ से होता है· फिर अर्जुन पाताल देश अर्थात् अमेरिका में जाते हैं जहां उलूपी नाम की नागकन्या से उनका विवाह होता है इस प्रकार अनेक आख्यान महाभारत में मिलते हैं जिनसे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि उन दिनों द्विजों का परस्पर बेटी व्यवहार प्रचलित था हां शूद्र किसी द्विजकी कन्या नहीं ले सकता था क्योंकि द्रौपदी स्वयंबर में जब सारे राजा लोग हार कर बैठ गये उस समय कर्ण मत्स्य भेदन के लिये उठा। तब द्रौपदीने साफ़ २ कह दिया कि आप बैठ जाइये सूत पुत्र से मैं ब्याह नहीं करूंगी।

पुनर्विवाह—पुनर्विवाह की प्रथा महाभारत काल में प्रचलित नहीं थी, उन दिनों सती की प्रथा जारी थी। पति की मृत्यु होने पर पत्नी उसके साथ जल जाती थी। इस सती की प्रथा में कई एक नियम थे। हां सन्तानोत्पत्ति के लिए नियोग की प्रथा थी। पांचो पांडव और विदुर इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं· परंतु इसमें भी बहुत से नियम थे जैसे पति परदेस गया हो और बहुत वर्ष तक न आए नपुंसक हो, सदा का रोगी हो, यह एक ऐसी पवित्र प्रथा थी जिससे स्त्रियों और पुरुषोंमें व्यभिचार की भावना ही नहीं हो सकती थी।

पातिव्रतधर्म--पातिव्रत धर्म का महत्त्व आर्य्य स्त्रियों में आरंभ से ही चला आरहा है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण धृतराष्ट्र की स्त्री गांधारी है। इससे बढ़कर सतीत्व का संसार भरमें उदाहरण दूसरा नहीं मिलता। मेरे पति धृतराष्ट्र चक्षु हीन हैं यह बात गांधारी ने विवाह के समय पर ही जानी, उसने अपने पति का एक वार मुख देखा और फिर उसी रूपको हृदय में अंकित करके आंखों पर पट्टी बांधली· इसके अनंतर केवल एकवार उसने पट्टी खोली जब दुर्य्योधन उसके सामने नग्न खड़ा होने के लिये आया। आयु

भर अंधे पतिके साथ अंधा बने रहना और घोर दुःख उठाना, यह पतिव्रत धर्म का उदाहरण गांधारी के सिवा दूसरी किसी स्त्री ने नहीं दिखाया, इसी पतिधर्म के दिखाने के लिये सावित्री सत्यवान का उपाख्यान है। इस प्रकार के सहस्त्रों उपाख्यानों से महाभारत भरा पड़ा है, जिनसे उस समय के आचार व्यवहार का पता लगता है।

राजनीति--राजनीति से तो सारा महाभारत भरा पड़ा है, विदुरनीति और भीष्मनीति संसार भर में प्रसिद्ध हैं। इनमें राजा को किन लक्षणों से युक्त होना चाहिये, प्रजा के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, कर कितना कैसे और किन किन स्थानों पर लगाना चाहिए, शत्रु और मित्र के साथ किस प्रकार का व्यवहार होना चाहिये, मंत्री सेना राजकोष किस प्रकार के हों गुप्तचर किन लक्षणों से युक्त हों और किन २ स्थानों पर उनको नियुक्त करना उचित है, सेनाओं के मोर्चे अनेक प्रकार के शस्त्र अस्त्र जैसे वारुणास्त्र आग्नेयास्त्र, वायव्यास्त्र, रुद्रास्त्र, ब्रह्मास्त्र आदिक अस्त्रों का वर्णन आता है; जिनके जोड़के अस्त्र आज तक संसार ने नहीं देखे, आकाश में उड़ने वाले विमान पृथिवी पर कलाओं से चलने वाले बड़े २ रथ इत्यादिक का वर्णन पढ़ने से आर्य्य जातिका गौरव देख पड़ता है। जहां सत्य नीति का महत्त्व दिखाया है वहां सत्यासत्य का निर्णय भी बड़ी सुन्दर रीति से वर्णन किया है। शत्रु को मार देना ही एक मात्र राजनीति का सार है, कर्ण के रथ का पहिया दलदल में फंस जाता है, वह उतर कर पहिये को भूमि से निकालने का प्रयत्न करता है और अर्जुन को धर्म की दुहाई देता है, परन्तु श्रीकृष्ण उस समय कर्ण को जो उत्तर देते हैं, उससे जान पड़ता है कि राजनीति उन दिनों चर्म सीमा पर पहुंच चुकी थी, द्रोणाचार्य को मारने के लिये श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर के मुख से यह कहलवाना कि अश्वत्थामा मारा गया मनुष्य अथवा हाथी इत्यादि घटनाएं सिद्ध करती हैं कि शत्रु को मार देना ही परमधर्म समझा जाता था, और सच पूछो तो महाभारत की राजनीति को छोड़ देने ही से आर्य्यावर्त पराधीनता की बेड़ीयों में जकड़ा गया।

शहाबुद्दीन गौरी पृथ्वीराज चौहान से युद्ध में दो बार हारा, परन्तु पृथ्वीराज ने दोनों बार उसको छोड़ दिया; तीसरी बार जयचन्द की सहायता से गौरी ने फिर आक्रमण किया और पृथ्वीराज को कैद करके मार डाला; पृथ्वीराज ने एक ऐतिहासिक भूल की उसने श्रीकृष्ण के वचनों के अनुसार गौरी को पहली बारही मार डाला होता तो भारत में म्लेच्छोंके पांओं कभी न जमते इसी प्रकार जयमल ने अकबर को उस समय छोड़ा जब कि वह भेष बदल कर जयमल के दुर्ग के अन्दर तालाब पर बैठा था। जयमल ने उसको पहचान लिया और पकड़ कर माताके पास लेगया। अकबर ने तुरन्त पैंतरा बदला और माता को बोला कि तुम मेरी मां हो और जयमल आज से मेरा भाई हुआ। इस पर जयमल ने उसको छोड़ दिया परन्तु वापस जा कर अकबरने उस पर चढ़ाई की और बारह वर्ष किले को घेर रक्खा; और जयमलसिंह दुर्ग की दीवार पर खडा एक बाण से मारा गया। यदि जयमल अकबर को न छोड़ता तो उसकी यह दशा क्यों होती। इन्हीं ऐतिहासिक भूलों ने स्वतन्त्र भारत को परतन्त्र बना दिया। महाभारत इन विषयों में बड़ी शिक्षा देता है।

गीता—सबसे बड़ा और दुर्लभ रत्न जो महाभारत रूप समुद्र में से निकला है वह गीता है। कुरुक्षेत्र में आमने सामने दोनों सेनाएं खड़ी हैं; युद्ध का शंख बजने वाला है, उस समय अर्जुन श्रीकृष्ण को दोनों दलों के मध्य में रथ को खड़ा करने की प्रेरणा करता है। वहां जाकर वह देखता है कि दोनों ओर उसके अपने सम्बंधी मित्र और गुरुजन हैं, इससे उसको मोह होता है, हाथ कांपने लगते हैं और धनुष गिर पड़ता है। वह श्रीकृष्णको कहता कि हे माधव! मैं लड़ना नहीं चाहता; जिनके लिये मैं राज्य की इच्छा करता हूं, उन्हींको मारकर मैं क्या करूंगा, गुरुजनों और सम्बन्धियों की हत्या करके मैं नर्क में जाना नहीं चाहता, इत्यादि अनेक शङ्काओं से दबाया हुआ वह युद्ध से विमुख होजाता है। उस समय श्रीकृष्णने अर्जुनको जो तत्त्व बतलाया है, जिस प्रकार आत्माका वास्तविक रूप दिखलाया है,

उसी का नाम गीता है, और यह एक ऐसा ग्रन्थ है, जो मनुष्यको अंधकार से निकाल दिव्य प्रकाश में लेजाता है, इसके पढ़नेसे धर्म अर्थ काम और मोक्ष चारों पदार्थ मिलते हैं। महाभारत के युद्धमें अठारह अक्षौहिणी दल मनुष्यों के प्राणों की आहुतियां डालकर श्रीकृष्णने यह यज्ञका चरु निकाला है, यह उस यज्ञ का प्रसाद है, जिस के खाने से आर्य जाति अमर होगई है।

पाठक उसी महाभारत को मैंने हिन्दी भाषा में लिखने का प्रयत्न किया है। मेरा यत्न कहां तक सफल हुआ है, यह मैं नहीं कह सकता, हां अपनी ओर से मैंने इसको जहां तक हो सका है, सरल बनाने का यत्न किया है, जिससे थोड़े पढ़े हुए स्त्री पुरुष भी इस को समझ सकें और अपनी गिरी हुई दशा को अनुभव कर के अपने पूर्व पुरुषों के पीछे चलते हुए एक बार फिर उसी उन्नति की अवस्था तक पहुंचें।

इसे लिखते हुए मुझे बहुत से विघ्न पड़े हैं, जिनके कारण कईएक त्रुटियां और भूलें होगई होंगी। आशा है, पाठक मुझे क्षमा करेंगे॥

बालमाता स्ट्रीट
लाहौर।

जयगोपाल

सर्वाधिकार स्वाधीन हैं।
(OUR PICTURES ARE PROTECTED BY COPY RIGHT.)

इस महाभारत ग्रन्थ के सब चित्रों सहित प्रकाशक ने सर्वाधिकार अपने स्वाधीन रक्खे हैं, इस लिए कोई सज्जन न ही चित्रों की नकल करें, और न ही इस ग्रन्थ का किसी भी भाषा में उल्था करे नहीं तो लाभ के स्थान में हानि होगी।

निवेदक—
शामदास "वधवा"

यह महाभारत और सर्व प्रकार के पुस्तक नीचे लिखे पते से पत्र भेजकर मंगावें, और अपना पता पूरा २ और साफ २ लिखें।

पता—

शामदास "वधवा" पुस्तकोंवाला शहालमी दरवाज़ा लाहौर।

❋ महाभारत की सूची ❋

पर्व सूची।

पर्व	पृष्ठ
१—आदिपर्व	१
२—सभापर्व	६०
३—बनपर्व	१०१
४—विराटपर्व	१७३
५—उद्योगपर्व	२२१
६—भीष्मपर्व	२९०
७—द्रोणपर्व	३६५
८—कर्णपर्व	४६५
९—शल्यपर्व	५०४
१०—गदापर्व	५१०
११—सौप्तिकपर्व	५२९
१२—स्त्रीपर्व	५३४
१३—शांतिपर्व	५४२
१४—अनुशासनपर्व	५५३
१५—अश्वमेधपर्व	५६४
१६—आश्रमवास पर्व	५७६
१७—मौसल पर्व	५८७
१८—महाप्रस्थानिक पर्व और स्वर्गारोहण पर्व	५९५

चित्र सूची।

चित्र	पृष्ठ
१—महाभारत युद्ध के नेता भगवान् श्रीकृष्ण	१
२—द्रौपदी स्वयम्बर	५७
३—शिशुपाल बध	७६
४—द्रौपदी चीर हरण	९४
धौम्य आश्रम से जयद्रथ का द्रौपदी को हर कर लेजाना	१५६
६—उत्तर और बृहन्नला	१९९
७—भगवान् श्रीकृष्ण जी विदुर के गृह	२६५
८—सञ्जय और धृतराष्ट्र	२९०
९—अर्जुन की उदासीनता	२९३
१०—विराटरूप	२९८
११—चक्र व्यूह	३८२
१२—उत्तरा अभिमन्यु	३८४
१३—अभिमन्यु बध	३८९
१४—कर्ण बध	४९९
१५—अश्वमेध यज्ञ	५७४
१६—पांडवों का स्वर्गारोहण	५९८

महाभारत

आदि पर्व

❀ पहला अध्याय ❀

एक समय महाराजा जनमेजय अपनी राजधानी हस्तिनापुर के अन्दर राजसिंहासन पर विराजमान थे। उनके चारों ओर राजमंत्री, बड़े बड़े विद्वान् ब्राह्मण और ऋषि मुनि बैठे हुए प्रजा के कल्याण के लिए विचार कर रहे थे, कि उसी समय महर्षि व्यासजी राजसभा में पधारे। व्यासजी को देखकर राजा समेत सारे मंत्री विद्वान् ब्राह्मण और शूरबीर क्षत्रिय उठकर खड़े होगए, और राजा ने हाथ जोड़ कर उन की चरण वंदना करके उन्हें सिंहासन पर बैठाया। महर्षि व्यासदेवजी राजा के इस साधु स्वभाव धर्म भाव और सत्कार को देखकर अतिप्रसन्न होकर बोले, हे राजन्! आप बड़े भले पुरुष हो। इस समय तीनों लोकों में तुम्हारे समान साधु स्वभाव, बीर, पराक्रमी और नीतिमान राजा और कोई नहीं है। मैं तुम्हारे आदर सत्कार और श्रद्धा भावना को देखकर तुम पर अति प्रसन्न हुआ हूं सो तू जिस पदार्थ की इच्छा होवे, मुझ से मांग। व्यास

देवजी का कथन सुनकर राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! आप की दया करके मेरे पास सब कुछ है। धनधान्य और हीरे मोतियों से मेरे खजाने भरपूर हैं। वे चारों वेदों के जाननेहारे ब्राह्मण, शूरवीर और पराक्रमी क्षत्रिय, गोधन और धन सम्पत्ति वाले वैश्य मेरे राज्य में परम सुख से रहते हैं मेरे राज्य में कोई दीन दुखी और भिखियारी नहीं है। कोई चोर व पराई स्त्री की ओर कुदृष्टि से देखने वाला नहीं है। पशु पक्षी आनन्द से विचरते हैं, यह सब आपही का दिया हुआ है। परन्तु पूर्व समय में मैंने अश्वमेध यज्ञ करते समय अपनी मूर्खता से अठारह ब्राह्मणों के बालकों की हत्या करके उनको उसी यज्ञ के अग्नि कुण्ड में डाल दिया था, जिस कारण मुझे ब्रह्महत्या लगी है और उस हत्या के कारण मेरी देह पर कुष्ट हो गया है, सो हे भगवन् ! संसार के सम्पूर्ण सुखों के विद्यमान होते हुए भी इस रोग से मैं अति दुःखी हूं, रम्भा और उर्वशी के समान सुन्दर रानियां, नाना प्रकार के पट वस्त्र और आभूषण, और यह सब राजपाट मेरे लिये विष के समान हैं, सो हे महर्षि! मैं आप के चरणों से यही मांगता हूं, कि किसी प्रकार इस कुष्ट रोग से छुटकारा पाऊं और फिर कञ्चन समान देह को प्राप्त करूं। राजा के इस वचन को सुनकर व्यास जी बोले, हे राजा ! तेरी मनोकामना सिद्ध होगी, और तू कञ्चन के समान देह को प्राप्त करेगा, सो जिससे तेरा यह रोग छूट जाए, वह उपाय मैं तुझे कहता हूं। हे

राजा! नीले रङ्ग के १८ वस्त्र रङ्गाय कर उन वस्त्रों को धारण करके तू नित्य महाभारत सुना कर, तब तेरी यह १८ हत्यायें छूट जायेंगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, और हत्याओं के छूटने की यह निशानी है, कि एक २ पर्व के सुनने से एक एक वस्त्र सफेद होता जाएगा, और इस प्रकार १८ पर्वों के सुनने करके १८ वस्त्र सफेद हो जायेंगे, इस में तनिक भी शङ्का न करना और जो कुछ कथा में आये सब सच करके जानना, ऐसा करने पर तेरी यह ब्रह्महत्या की मारी हुई देह, स्वर्ण के समान चमकने लगेगी। यह कहकर भगवान व्यासदेव वहां से उठ कर बद्रिकाश्रम में चले गये और वहां से अपने परम पुनीत शिष्य वैशम्पायन जी को महाभारत की कथा सुनाने के लिये राजा जनमेजय के पास भेज दिया।

वैशम्पायन को आये देखकर राजा ने उनका बड़ा आदर सन्मान किया और हाथ जोड़ कर कहा कि हे वैशम्पायनजी! मैं आप के चरणों का दास हूं, आप मुझे नित्य महाभारत की कथा सुनाया करें, जिससे मैं इस रोग से छुटकारा पाऊं। तब वैशम्पायनजी बोले—हे राजन्! महाभारत की नित्य कथा सुनने से भगवान शिवजी के दर्शन का पुण्य और विष्णु महाराज का भजन प्राप्त होकर मनुष्य के सब पाप और रोग दूर होते हैं, धनधान्य लक्ष्मी की प्राप्ति होती है, सन्तान की उत्पत्ति और मान प्रतिष्ठा बढ़ती है, तू ध्यान लगाकर के भक्ति

के साथ सुन, मैं तुमें सुनाऊंगा।

वैशम्पायन के यह वचन सुनकर राजा दत्तचित्त होकर आसन पर बैठ गए और वैशम्पायन जी इस प्रकार कथा सुनाने लगे।

दूसरा अध्याय।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा! पूर्वकाल में ययाति नाम का बड़ा प्रतापी राजा हुआ। सारे संसार में उसका चक्रवर्ती राज्य था। उसके दो पुत्र थे। उनमेंसे बड़े का नाम यदु और छोटे का नाम पुरु था। दोनों ही बड़े गुणवान् रूपवान् और योद्धा थे, परन्तु राजा की प्रीति छोटे पुत्र पुरु से अधिक थी। इस करके उन्होंने मृत्युकाल में पुरु को राजसिंहासन पर बैठाया। इन्हीं दोनों पुत्रों के नाम से दो कुल इस भारतवर्ष में यादवकुल और पौरव कुल नाम से अति प्रसिद्ध हुई। पौरव कुल में दुष्यन्त नाम का एक अति पराक्रमी राजा हुआ, जिसका विवाह शकुन्तला नाम की एक अप्सरा की कन्या के साथ हुआ, तिस शकुंतला के गर्भ से पौरवों के कुल को बढ़ाने वाला एक महावीर, निर्भय, तीनों लोकोंको विजय करनेवाला, भरत नाम कर के पुत्र उत्पन्न हुआ। हे राजन्! उस भरत के नाम से इस देश का नाम आर्य्यावर्त से भारतवर्ष हुआ। भरत का पुत्र वितथ हुआ वितथ का भवमन्यु। भवमन्यु का बृहत्त्क्षेत्र।

---

१. शकुन्तला की कथा बड़ी ही रोचक है, जो एक छोटी पुस्तक के रूप में हमारे हां से मिल सकती है!

बृहतक्षेत्र का सुहोत्र। सुहोत्र का हस्ती। हस्ती का अजमीढ़। अजमीढ़ का ऋच्च। ऋच्च का संवरण। संवरण का कुरु। कुरु का जन्हु। जन्हु का सुरथ। सुरथ का विदूरथ। विदूरथ का सार्वभौम। सार्वभौम का जयसेन। जयसेन का अरावी। अरावी का आयुतायु। आयुतायु का अक्रोधन। अक्रोधन का देवातिथि। देवातिथि का ऋक्ष। ऋक्ष का भीमसेन। भीमसेन का दिलीप। दिलीप का प्रतीप। और प्रतीप का पुत्र शन्तनु नाम करके एक महाबलवान राजा हुआ। हे राजा! यह शन्तनु बड़ा धर्मात्मा राजा था। उसके राज्य में सभी प्रजा के लोग बड़े आनन्द से अपना धर्म कर्म करते थे। एक दिन वह राजा अपने मन्त्रियों को लेकर शिकार खेलने के लिये गङ्गा के तट पर आन करके ठहरा। वहां पतितों के तारने वाली गङ्गा महारानी परम सुन्दरी स्त्री के रूप को धारण करके विराज रही थीं, जिसके रूप को देखकर महाराज शन्तनु मोहित होगए, और उसके निकट जाकरके पूछने लगे हे सुन्दरी! तुम कौन हो, कौन तुम्हारा स्वामी है, और किसकी तुम पुत्री हो?

महाराज शन्तनु का यह प्रश्न सुनकर वह सुन्दरी बोली, हे राजन्! मैं गङ्गा हूं। महादेव जी के शाप करके मैं मर्त्यलोक में आई हूं। हिमाचल मेरा पिता है, और यहां कोई अपने योग्य वर की प्राप्ति की इच्छा करके आई हूं। गङ्गा के वचन को सुनकर शन्तनु ने कहा हे

सुन्दरी ! मैं भूमण्डल के सर्व राजाओं में श्रेष्ठ हूं। उत्तर दक्खन, पूर्व और पश्चिम, दिशाओं में मेरा राज्य है, तुम मुझ को अपना पति स्वीकार करो। तब गंगा ने कहा, हे राजन् ! तेरी कामना सिद्ध होय। ऐसा ही होएगा, परन्तु मेरी एक प्रतिज्ञा है, कि मेरे किसी कारज को तुम नहीं टालोगे, और ना ही कोई काम करने से मुझे रोकोगे, सो यदि तुम मेरी प्रतिज्ञा के विरुद्ध कोई बात न करोगे और जैसे मैं करूं तिसे स्वीकार करोगे तो मैं तुम्हारी भार्य्या बनकर रहने को उद्यत हूं, और ज्यूं ही तुमने मेरी प्रतिज्ञा को भङ्ग किया; मैं तुमको छोड़कर के चली जाऊंगी। हे राजा जनमेजय ! महाराज ने गङ्गा की प्रतिज्ञा को स्वीकार किया और उसे अपनी भार्य्या बनाकर अपने गृह में ले आये। कुछ दिन पा करके राजा शन्तनु के घर पुत्र का जन्म हुआ, जिससे उसके मन में अति सुख हुआ। परन्तु गङ्गा ने पुत्र के जन्मते ही राजा से कहा, कि हे राजा ! इस पुत्र को गङ्गा में बहा आओ। अब तो राजा के मन में अत्यन्त दुःख हुआ, परन्तु अपनी प्रतिज्ञा को स्मरण करके कुछ न बोला और पुत्र को उठाकर गङ्गा नदी के प्रवाह में बहा दिया। इसी प्रकार बहाते बहाते सात पुत्र उसने बहा दिये, जब वृद्ध अवस्था हुई तो आठवां पुत्र उत्पन्न हुआ। जब गङ्गा ने उसको भी बहा देने के लिए कहा तो राजा अति दुःख से विलाप करने लगा और गङ्गा से उसकी रक्षा के लिए प्रार्थना

करने लगा। राजा को रुदन करते देख गङ्गा ने कहा हे राजन्! मैंने विवाह समय में तुझ से वचन ले लिया था, अब आप अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग करते हो, अब मैं इस बालक को न बहाऊंगी परन्तु तुम को छोड़कर अपने स्थान को चली जाऊंगी। हे राजन्! तुम शोक न करो यह तुम्हारा पुत्र आठ वसुओं में से आठवां वसु है। यह तीनों लोकों को जीतने वाला, देवता और राक्षसों का पराजय करने वाला, गाङ्गेय नाम से प्रसिद्ध होगा। हे राजा जनमेजय! यह कह कर गङ्गा कैलाश पर्वत को चली गई।

राजा रानी के वियोग से परम दुःखी हो करके अपने गृहको लौटे। महाराज शन्तनु ने इस पुत्रका नाम देवव्रत रखा और उस को बड़े स्नेह के साथ पालन पोषण करने लगे। वह पुत्र द्वितीया के चन्द्रमा समान अपने रूप तेज और गुणों में बढ़ने लगा। उस देवव्रत की स्तुति में कहां तक करूं, उसका विशाल मस्तक अति तेजवान था, चौड़ी छाती, लम्बी भुजाएं और बलवान कांतिवान उसका शरीर देख करके सारे पुरवासी लोग अति आनन्दको प्राप्त होते थे। तिस पीछे एक दिन महाराज ने पुत्र को युवावस्था में प्राप्त हुआ देख करके सारे नगर निवासियों को और पंडित पुरोहितों तथा मंत्रियों को, बुलाकर उन के सन्मुख उसे युवराज बनाया। और इस प्रकार राजा सुख से राज करने लगा।

हे जनमेजय ! एक दिन महाराज शन्तनु यमुनाजी के तट पर एक बन में भ्रमण कर रहे थे, कि अचानक ही उस सारे बन में एक अपूर्व सुगन्धि फैल गई । उस सुगन्धि ने सारे बनको सुगन्धित कर दिया । यह सुगन्धि कहां से आ रही है, यह जानने के लिये राजा यमुना घाट पर आगए, और उन्होंने उस घाट पर एक अति सुन्दरी कन्या को नौका चलाते हुए देखा । उस निर्जन नदी तट पर ऐसी सुन्दर और सुगन्धिवाली युवती को देखकर राजा आश्चर्य हो करके उससे पूछने लगे, हे सुन्दरी ! तू कौन है, क्या तेरा नाम है, किसकी तू कन्या है और इस निर्जन बनमें किस कारण से आई है । राजा की बात सुनकर कन्या ने उत्तर दिया, महाराज ! मेरा नाम सत्यवती है, दास राज मेरे पिता हैं, जाति के हम खेवट हैं । मैं अपने पिता की आज्ञा से इस यमुना घाट पर से यात्रियों को नौका पर पार करती हूं, कन्या के मुख से ऐसा उत्तर पाकर राजा शन्तनु तुरन्त ही दास राज के पास गए और उस से सत्यवती के साथ विवाह करने की इच्छा प्रगट की । दास राज महाराज की यह इच्छा जान परम प्रसन्न होकरके बोला, हे राजन् ! आप के समान चक्रवर्तीराजा मेरीकन्याके वरनेवालेहों, यह सत्य वती के पूर्वजन्मों के पुण्यकर्मों का फल है, मुझे आपकी बात स्वीकार है, परन्तु आप क्षत्रिय हैं उच्च कुलके हैं, मैं खेवट हूं, नीच कर्म करता हूं, मेरी कन्या आपके गृह में किस प्रकार आदर पावेगी? राजाने कहा तेरी इस शंका को मैं सब प्रकार

से दूर करूंगा और तेरी जो इच्छा हो मैं पूर्ण करूंगा। राजा के इस कथनको सुनकर दासराज बोला हे राजन्! जो तुम मेरी सब बातें मानते हो तो मुझसे यह प्रतिज्ञा करो, कि सत्यवती के गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होगा, वही राजसिंहासन पर बैठेगा।

वैशम्पायन जी बोले हे जनमेजय! दासराज की बात को सुनकरके राजा शन्तनु बड़े सोच में पड़ गये, और विचार करने लगे, कि देवब्रत को अधिकारच्युत करके सत्यवती के पुत्र को मैं किस प्रकार युवराज बनाऊंगा? देवब्रत बडा धर्मात्मा, बुद्धिमान् और वलवान् है। मेरी सारी प्रजा और मन्त्रीगण उससे अत्यन्त प्रेम रखते हैं, उसका अधिकार छीनकर दूसरे को देना धर्म विरुद्ध और राजनीति के विरुद्ध है, मैं ऐसी प्रतिज्ञा कभी न करूंगा, यह विचार कर वह दासराज की प्रतिज्ञा को अस्वीकार करके अपनी राजधानी को तो लौट आये, परन्तु सत्यवती के मोह को न छोड सके और उसके चिन्तन में दिन रात अतिदुःख पाने लगे। हे राजा जनमेजय! तब महाराज को दिन प्रतिदिन दुर्बल और उदासीन होते देखकर देवब्रत के चित को अति व्याकुलता हुई। तब उसने राजमन्त्रियों से राजा की उदासीनता का कारण पूछा। मन्त्रियों ने सत्यवती के विवाह और दासराज की प्रतिज्ञा का सारा वृत्तान्त उसको कह सुनाया। उस समय देवब्रत के मनमें अतिदुःख हुआ और वह बारंबार अपने

आपको धिक्कारने लगा, कि मैं कैसा पापी हूं और मेरा कौनसे नर्क में निवास होगा, जो मेरे कारण मेरे पिता को इतना दुःख हुआ । एक राज्य क्या मैं पिता के सुख के लिये सारे संसार का राज्य भी छोड सकता हूं, ऐसा मन में विचार करके देवब्रत उसी बन में पहुंचा और दासराज के प्रति कहा, हे कैवर्त ! तूने महाराज शन्तनु के प्रति जो प्रातिज्ञा कही थी, मैं उसे पूरा करूंगा, और शपथ खाय करके कहता हूं, कि सत्यवती के पुत्र के बिना और कोई राजा न बनेगा । यह सुन करके दासराज बोला, हे विशाल हृदयवाले राजकुमार ! तू सत्य कहता है, परन्तु तेरे गृह में जो पुत्र जन्मेगा, उसके पश्चात् वह राज का अधिकारी होगा, इस कारण तू ही इस कन्या के साथ विवाह कर । हे राजा जनमेजय ! दासराज की बात सुन कर देवब्रत का मस्तक क्रोध से लाल हो गया और वह अपनी विशाल भुजा ऊंची उठा करके इस प्रकार बोला, हे दासराज ! तेरा यह कथन अत्यन्त अनुचित है । जिस कन्या को मेरे पिता ने स्त्री-भावना से देखा है, वह मेरी माता है, पुत्र का माता के साथ विवाह कैसे होसकता है, सो तू इस विचार को छोड और इस कन्या को मेरे पिता के लिये मेरे अर्पण कर, मैं इसके गर्भ से जन्म लेने वाले पुत्र को अपने हाथ से राजतिलक दूंगा और जो तेरी यह शङ्का है, कि मेरे गृह में जो पुत्र होगा, वह फिर राजा बनेगा, सो हे दासराज ! मैं शपथ खाता हूं और धर्म

को साक्षी रख करके कहता हूं, कि मैं सारी आयु विवाह न करूंगा, और जबतक जीवित रहूंगा, ब्रह्मचर्य के कठिन व्रत को पालन करूंगा, और सत्यवती के पुत्रको ही कुरु राज्य का राजा मानूंगा। हे दासराज! पिता की प्रसन्नता के लिये आज मैं इस भीष्म प्रतिज्ञा को तेरे सामने करता हूं, सूर्य्य टल जावे, आकाश टल जावे, पृथ्वी, जल और अग्नि, अपने स्वभाव को छोड़दें, तो छोड़दें, परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा को कभी न छोड़ूंगा, यह सत्य करके जान।

देवराज की इस प्रतिज्ञा को सुनकर सब लोग आश्चर्य रह गये। हे राजा जनमेजय! तब दासराजने अति प्रसन्न होकर सत्यवती को देवब्रतके अर्पण किया और वह उसे रथ में बिठाकर अपने पिताके चरणों में पहुंचा। जब राजकुमार की इस भीष्म प्रतिज्ञा को लोगों ने सुना तो सब के सब उसकी पितृ भक्ति आत्म बलिदान और ब्रह्मचर्य्य व्रत की प्रशंसा करने लगे। हे राजा! ऐसी विकट प्रतिज्ञा करने करके उस दिन से देवब्रत का नाम "भीष्म" पड़ गया। राजा शन्तनु ने उस कन्या से विधि पूर्वक विवाह किया, और अपने पुत्र को प्रसन्न होकर वर दिया, कि हे भीष्म! तू कुँवारा रह कर भी "पितामहां" की पदवी को प्राप्त करेगा और मृत्यु को जीत करके अपनी इच्छा से मृत्यु को प्राप्त करेगा।

तीसरा अध्याय ।

वैशम्पायन जी बोले—हे राजा जनमेजय ! कुछ काल पाकर सत्यवती के गर्भ से एक बालक का जन्म हुआ । कुरुराज शन्तनु पुत्र का मुख देखकर अति प्रसन्न हुए, और कुल पुरोहित को बुलाकर उसका नाम चित्राङ्गद रखा । फिर कुछ वर्ष पा करके एक और पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम विचित्रवीर्य्य रखा । यह दोनों बालक भीष्मजी से अस्त्र शस्त्र विद्या की शिक्षा प्राप्त करने लगे, और इनकी बालक अवस्था में ही महाराज शन्तनु काल वश होगए । पिता की मृत्यु और सत्यवती की युवावस्था देखकर भीष्म जी को अति चिन्ता लगी, वह सोचने लगे, कि माता सत्यवती अभी युवावस्था में है, इनका वैधव्य किस प्रकार कटेगा । यह विचार कर वह स्वयं भूमि पर कुशाका आसन विछाय कर शयन करने लगे और अपनी माता को दिन रात वेदों शास्त्रों और पुराणों की कथा सुनाने में लीन रहने लगे ।

पिता के कालवश होने पर दासराज की प्रतिज्ञा अनुसार भीष्म जी ने चित्राङ्गद को राजतिलक दिया और वह परम पराक्रमी वीर और बुद्धिमान् अपने पिता के समान ही धर्म के साथ राज्य करने लगा ।

कुछ काल पश्चात् उसका छोटा भाई विचित्रवीर्य्य भी युवावस्था को प्राप्त हुआ । अब भीष्म जी को उन के

विवाह की चिन्ता हुई। हे राजा जनमेजय! एक दिन भीष्म जी ने सुना, कि काशीराज की तीन कन्याओं का शीघ्र ही स्वयंबर होने वाला है। भीष्मजी ने उन तीनों कन्याओं का विवाह विचित्रवीर्य्य से करने की इच्छा की, सो वह सत्यवती से आज्ञा लेकर अपनी सेना के साथ काशी पहुंचे। वहां जाकर उन्होंने देखा, कि, सभामण्डप में अनेक देशों के बडे २ राजा महाराजा विराजमान हैं और बीच में वह तीनों अंबा, अंबिका और अंबालिका नाम की राजकुमारियां खडी हैं। तब भीष्मजी ने सभामण्डप में खडे होकर कहा, हे देश देशान्तर के भूपाल लोगो, सुनो! मैंने सारी आयु ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा की हुई है, इस लिये इन कन्याओं के साथ मैं विवाह नहीं कर सकता, परन्तु मेरा छोटा भाई विचित्रवीर्य्य जो इन राजकन्याओं के समान ही अतिसुन्दर रूप और गुणों वाला है, अभी अविवाहित है। उस के साथ इन तीनों का मैं विवाह कराना चाहता हूं, यह कह करके भीष्म जी ने उन तीनों को बड़े आदर के साथ अपने रथ में उठाय कर बैठा दिया और रथ को वेग से हांक कर ले चला। भीष्म जी को इस प्रकार जाते देख सारी स्वयम्बर की सभा में हल चल मच गई और सब राजा लोग अपने अपने शस्त्रों को उठा कर उसके पीछे दौडे, और दोनों ओर से बड़ा भयानक युद्ध होने लगा। उस युद्ध में भीष्म जी वज्र देह समान सब राजाओं पर शस्त्र चलाने लगे और एक एक करके सब को पृथ्वी पर गिरा-

कर अपने रथ को जिन के आगे वायु के वेग से चलने वाले घोड़े लगे थे, अपनी राजधानी में ले आए। हे राजा! अब तीनों राजकुमारियों के विवाह की तैयारियां होने लगीं, परन्तु काशीराज की सब से बड़ी कन्या ने इस विवाह को स्वीकार न किया और हाथ जोड़ करके भीष्म जी से बोली, महाराज! मैं इस राजकुमार से कदाचित् विवाह न करूंगी, क्यों, जो मैं पहले ही अपने मन में शाल्व-राजा को अपना पति मान चुकी हूं, अब दूसरे को पति बना कर धर्म से पतित क्योंकर हो सकती हूं, आप न्यायवान् हैं, क्षत्रिय हैं, धर्मात्मा हैं, जिस प्रकार मेरा धर्म नाश न होवे ऐसा करो।

अंबा की बात सुनकर भीष्म जी ने कहा हे राजकन्या! मैं तेरा धर्म नाश नहीं करूंगा, जब तू एक को मन में वर चुकी है, तो तू उसी के पास आनन्द से रहो, पतिब्रता का धर्म इसी में है, यह कह कर उन्हों ने अंबा को शाल्व-राजा के पास आदर सहित भिजवा दिया, और अम्बिका और अंबालिका दोनों कन्याओं को विचित्र वीर्य्य के साथ विवाह दिया। जब अंबा शाल्व-राजा के पास पहुंची तो राजा ने अंबा को स्वीकार नहीं किया और कहा हे राजकुमारी! स्वयंबर से पहिले मैं तुझ से विवाह करने की इच्छा रखता था, परन्तु स्वयंबर वाले दिन भीष्म ने तेरी बांह पकड कर तुझे रथ में बैठाय लिया। मैं क्षत्रिय हूं, दूसरे से जीती हुई कन्या को मैं अपनी स्त्री नहीं बना सकता, तू भीष्म के पास ही चली जा। राजा की बात सुन अम्बा

के मन में अति दुःख हुआ और वह यमुना के तट पर बैठ कर घोर तप करने लगी। तब ऋषि मुनियों ने उसे कहा हे राजकन्या! तू अपने पिता के घर में जा, यह तपस्या अति कठिन है, तुम से न हो सकेगी। यह सुन करके अम्बा ने कहा हे ऋषि जनों! मेरा घोर निरादर हुआ है राजा शाल्व ने जिसे मैं मनमें पति स्वीकार कर चुकी थी मुझे पराई जानकर त्याग दिया है, इस सारे अपमान का कारण भीष्म है, जो मुझे बल करके ले आया है, अब मैं तपस्या करके अपने प्राण दे दूंगी और अगले जन्म में भीष्म का वध करके अपना बदला लूंगी। वैशम्पायनजी बोले हे राजा! उस राजकुमारी ने वहीं पर तप करते करते अपने प्राण छोड दिये और मर कर फिर राजा द्रुपद के घर में उत्पन्न हुई, जहां उसका नाम शिखण्डी हुआ।

चतुर्थ अध्याय।

हे राजा जनमेजय! सत्यवती और भीष्मजी को इस प्रकार एकान्त में निवास करते देखकर एकदिन चित्र विचित्र दोनों के मन में सन्देह उपजा, कि हमारी माता अवश्य ही भीष्म जी के साथ विषय भोगों को भोगती है, क्यों जो वह सदा ही भीष्मजी के घर में जाया करती है, यह दोनों सूने घर में अवश्य ही कुकर्म करते होंगे। यह सोचकर एक दिन रात्रि के समय अपने सन्देह को

मिटाने के लिये यह दोनों भीष्मजी के घर गये, और चोरी २ झरोखों से अन्दर देखने लगे। उस समय भीष्म जी कुशा के आसन पर ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करके माता को शास्त्रों की कथा और सदाचार की वार्त्ता सुना रहे थे। चित्र विचित्र दोनों ने जब यह देखा तो अत्यन्त लज्जित हुए और पश्चात्ताप करते हुए एक दूसरे को धिक्कार कर कहने लगे, कि हम दोनों घोर पाप के भागी हुए हैं, जो अपनी माता पर सन्देह किया है, सो अब कोई उपाय इस पाप से छूटने का सोचना चाहिए। यह सोच कर प्रातःकाल होते ही वह दोनों भीष्म जी के पास गए और अपनी सारी बात उनको सुनाई और पाप से छूटने का उपाय पूछने लगे। तब भीष्मजी ने कहा हे भाईयो! जो पुरुष अपनी माता की हत्या करते हैं, अथवा अकारण ही माता पर संदेह करते हैं उनके लिए प्रायश्चित्त यही है, कि, वह महाबन में जाकर जण्डी के वृक्ष अथवा सूखे पीपल की खोल में बैठ कर अपनी देह को भस्म कर डालें, तब उनका पाप दूर हो सकता है। और कोई उपाय नहीं। हे राजा जनमेजय! भीष्मजी के इस प्रकार कहने पर चित्र विचित्र दोनों महाबन में चले गए और जण्डी के वृक्ष में अपने आपको भस्म करके इस लोक से स्वर्ग को प्राप्त हुए।

उनके मरने का समाचार पाकर महाबलि भीष्मजी को बड़ा दुःख हुआ। उनकी माता सत्यवती बड़ा विलाप

करने लगी और विचित्र वीर्य्य की दोनों रानियां सिर धुन २ कर रुदन करने लगीं। कुछ दिन इसी प्रकार दुःख और शोक में व्यतीत हो गये। इसके अनन्तर सत्यवती ने अपने मन में धीरज किया और भीष्म से कहा कि हे वत्स! होनहार कभी नहीं मिटती, जो होना होता है अवश्य हो कर रहता है, अब दुःख और शोक को त्याग कर तुम राजपाट को संभालो। विचित्र वीर्य्य की अब कोई सन्तान नहीं है, इस समय यदि तुम राज्य न संभालोगे तो देश के अंदर अराजकता फैल जाएगी, और बड़े पाप होने लगेंगे। माता का वचन सुनकर भीष्मजी बोले हे माता मैंने प्रतिज्ञा की हुई है, कि मैं सिंहासन पर नहीं बैठूंगा सो मेरी प्रतिज्ञा अटल है, वह कभी दूर नहीं होसकती। तब सत्यवती ने भीष्मजी को कहा, हे वत्स! यदि ऐसे ही है तो तू चिन्ता न कर, मेरा एक पहला पुत्र वेद व्यास नाम करके है, जो कुँवारेपन में ही मेरे उदर से पराशर ऋषि के संयोग से उत्पन्न हुआ था, मैं उसका आवाहन करती हूं। यह कह कर सत्यवती ने वेदव्यासजी का स्मरण किया। सत्यवती के स्मरण करने से तत्काल वेदव्यासजी वहां आन करके उपस्थित हुए, और माता के चरणों में भक्तिपूर्वक प्रणाम करके बोले, हे माता! किस कारण तुमने मुझको स्मरण किया है। तब सत्यवती ने कहा, हे पुत्र! तेरे दोनों चित्र विचित्र भाई मृत्यु को प्राप्त हुए हैं, भीष्मजी ने आयु भर ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा की है, अब शन्तनु के वंश में

कोई उनको जल देने वाला भी नहीं रहा, और ना ही इस चक्रवर्ती राज्य को संभालने वाला कोई है, सो कोई ऐसा उपाय कर कि इसका क्षय न हो और आगे वंश बढ़े। माता के वचन को सुनकर वेदव्यासजी बोले, हे माता! विचित्रवीर्य्य की दोनों रानियां अम्बिका और अंबालिका मेरे सन्मुख वस्त्र हीन नग्न होकर चली जावें। उनके इस प्रकार कथन करने पर अम्बिका अम्बालिका और एक उन की दासी तीनों नग्न होकर वेदव्यासजी के सामने से जाने लगीं। प्रथम अम्बिका रानी नेत्रों पर पट्टी बांध कर सन्मुख आई। उसको देखकर वेदव्यासजी ने अपने मस्तक को कम्पायमान किया, फिर अम्बालिका सारी देह पर चन्दन पोतकर आई। उसको देखकर भी उन्होंने मस्तक को कम्पायमान किया, और फिर दासी उनके सन्मुख हंसती खेलती प्रसन्न चित्त होकर माला जपती गई। उन तीनों के चले जाने पर वेदव्यासजी बोले, हे भीष्म! यह जो नेत्रों पर पट्टी बांध कर आई है, इसके नेत्र हीन अंधा पुत्र जन्मेगा और जो चन्दन लेपकर आई है, उसके पांडु रोग वाला पुत्र जन्मेगा और दासी जो हंसती खेलती और माला जपती आई है, उसके उदर से परमात्मा का भक्त और अति बुद्धिमान पुत्र जन्म लेगा।

इतना कहकर वेदव्यासजी चले गये और उन रानियों के एक २ पुत्र उत्पन्न हुआ, जिनमें अम्बिका के धृतराष्ट्र अम्बालिका के पांडु और दासी के गर्भ से विदुर जी ने

जन्म लिया, और तीनों को भीष्म जी पालने लगे ।

पांचवां अध्याय

वैशंपायनजी बोले, हे राजा जनमेजय! कुन्तीभोज नामक एक यादव राजा था। उसकी एक पुत्री थी, जिस का नाम कुन्ती था। उस कुन्ती ने दुर्वासा ऋषि की बड़ी तपस्या की। दुर्वासा मुनि उस पर प्रसन्न होकर बोले, हे कल्याणि! मैं तेरी तपश्चर्य्या से प्रसन्न हुआ हूं और तुम्हें एक मन्त्र प्रदान करता हूं, इस मन्त्र के द्वारा तू जिस पति की इच्छा करेगी, वही तेरे समीप उपस्थित होगा। यह मन्त्र देकर दुर्वासा ऋषि चले गये। दूसरे दिन प्रातःकाल ही कुन्ती नदी-तट पर गई और सूर्य्य देवता का ध्यान करके उस मन्त्र को पढ़ा। मन्त्र पढ़ते ही तत्काल सूर्य्य देवता आनकर उपस्थित हुए और कुन्ती के प्रति बोले, हे सुन्दरि! तुम ने मुझे किस कारण बुलाया है? जो कुछ मांगना होवे सो मांग। तब कुन्ती ने उत्तर दिया, हे सूर्य्य देव! दुर्वासा मुनि ने मुझको एक मन्त्र दिया हैं और कहा है, कि, इस मन्त्र से तू जिस पति की इच्छा करेगी, वह तेरे पास आएगा। मैंने उस मन्त्र को झूठ व सच होने की परीक्षा के लिए तुम को स्मरण किया था। यह सुन कर सूर्य्यदेव बोले, हे सुन्दर नेत्रों वाली! यदि तूने अब मुझ को बुलाय लिया है तो अब मेरे साथ संभोग कर मैं तुम को एक महापराक्रमी, संसार को जीतने वाला पुत्र दूंगा।

कुन्ती बोली, हे देव ! आपका तेज मैं किस प्रकार सहन करूंगी, तुम्हारे स्पर्श से मैं भस्म हो जाऊंगी। कुन्ती के इस भय को दूर करने के लिए भगवान् सूर्य्यदेव ने उस समय अपने तेज को बहुत ही हलका और शीतल कर लिया और कुन्ती के साथ सहवास किया। हे राजन् ! सूर्य्य देवता से कुन्ती को गर्भ हुआ और समय पाय कर कर्ण नाम का महाप्रतापी और सूर्य्य के समान तेज वाला पुत्र जन्मा। तब कुन्ती के मन में बड़ी सोच हुई, कि, इसको मैं क्या करूं, संसार में मेरी बड़ी निन्दा होगी। यह विचार कर उसने उस पुत्र को एक सन्दूक में बन्द कर दिया और उसे नदी के तट पर छोड़ कर आप गृह को लौट आई। परन्तु, उस बालक की मृत्यु होनी विधाता ने नहीं लिखी थी, इस कारण कुछ समय पीछे महाराज धृतराष्ट्र का एक सेवक वहां आय निकला और उस सन्दूक में से रुदन करते हुए बालक को निकाल कर अपने गृह में ले आया, और अपनी राधा नामक स्त्री को सौंप दिया। वह राजाओं के लक्षणों से युक्त बालक द्वितीया के चन्द्रमा के समान दिन प्रतिदिन बढ़ने लगा। हे जनमेजय ! महामति भीष्म जी ने महाराज कुन्ती भोज से उस कन्या को पांडु के निमित्त मांगा, तब उस कन्या (कुन्ती) का विवाह मथुरापुरी में पांडु के साथ हुआ। अब भीष्म जी को धृतराष्ट्र के विवाह की चिन्ता हुई। एक दिन उसने ब्राह्मणों से सुना, कि गंधार देश के राजा

की कन्या अतिसुन्दर, रूपवती और युवती है। भीष्मजी ने उस राजा के पास अपने दूत भेजे और उस कन्या को धृतराष्ट्र के साथ विवाह देने के लिए कहा। गंधार देश के राजा सुबल ने इस बात को स्वीकार कर लिया और अपनी कन्या को धृतराष्ट्र के साथ विवाह दिया। कन्या ने जब देखा, कि उसके पति अंधे हैं, तो तत्काल अपनी आंखों पर पट्टी बांध ली और प्रतिज्ञा की, कि मैं अपने नेत्रों से कभी पट्टी नहीं खोलूंगी और फिर सारी आयु उसने यह पट्टी न खोली। वैशम्पायन जी बोले, हे राजा जनमेजय! गांधारी समान पतिव्रता नारी इस संसार में कोई बिरली ही मिलेगी। पति के पश्चात् सती होजाना कठिन है, पर जीते जी अंधा होकर रहना महा कठिन है, जो कोई नारी अपने पति के साथ इस प्रकार का प्रेम श्रद्धा और धर्म रखेगी, वही इस लोक और परलोक में स्वर्ग सुख को प्राप्त करके मुक्ति को प्राप्त करेगी। पाण्डु और धृतराष्ट्र दोनों का विवाह करके भीष्मजी ने पाण्डु को राजसिंहासन पर बैठाया। एक दिन महाराज पाण्डु घोर बन में शिकार खेलने के लिये गये। वहां क्या देखते हैं कि एक मृग और मृगी परस्पर सम्भोग कर रहे हैं महाराज ने अपने धनुष को कान तक खैंच कर उन दोनों ही सम्भोग करते हुए मृगों को अपने तीक्ष्ण बाणों से मार डाला। और उन गिरे हुए मृगों को जब उठाने के लिये गये तो क्या देखते हैं कि मृग तो वहां कोई

नहीं है पर उसी स्थान पर एक ब्राह्मण और एक ब्राह्मणी बाणों से घायल हुए तड़प तड़प कर प्राण दे रहे हैं। उन को देखकर पाण्डु अत्यन्त दुःख को प्राप्त हुए और हाथ जोडकर बोले हे विप्रो! मैंने मृग जान करके तुम पर बाण चलाया है, मैंने तुम दोनों को वध करके घोर पाप किया है, इस कारण जो मन में होय, वही मुझे दण्ड देवें। राजा की यह बात सुन उन तड़पते हुए ब्राह्मण ब्राह्मणी ने कहा, हे राजन्! जिस अवस्था में तूने हमको मारा है उसी अवस्था में तू भी मरेगा अर्थात् स्त्री के संग सहवास करने पर तेरी मृत्यु हो जायगी।

छठा अध्याय।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय! महाराजा पांडु ने शापकी सारी वार्ता कुंती को सुनाई तो वह अति दुःख को प्राप्त हुई। कुछ काल इसी प्रकार व्यतीत होने पर एक दिन दुर्वासा ऋषि आये। कुन्ती ने इनकी बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ पूजन की। कुन्ती की भक्ति से प्रसन्न होकरके दुर्वासा जी ने कहा हे सुन्दरी! मैं तेरे पर अति प्रसन्न हुआ हूं, तू मुझ से वर मांग। कुन्ती बोली हे महर्षि! आपकी दया से मेरे गृह में अष्ट सिद्धि और नौ निद्धि विद्यमान हैं परन्तु पुत्र के लिये मैं तरस रही हूं। यह सुनकर दुर्वासा जी बोले, तू स्नान करके पवित्र होकरके मेरे पास आ, मैं तुम्हें तुम्हारी इच्छानुसार

वर दूंगा। महर्षि के ऐसा कथन करने पर कुन्ती स्नान करने के निमित्त चली गई। इतने में गांधारी कुन्ती का वेश बनाय कर दुर्वासा मुनि के पास पहुंची और हाथ जोडकर कहने लगी, हे भगवन् मैं स्नान कर आई हूं, अब आप वर दीजिये। दुर्वासा ऋषि ने कहा हे कुल के बढ़ाने वाली ! तेरे घर सौ पुत्र जन्म लेंगे, यह बर लेकर गांधारी अति प्रसन्न होकर अपने गृह को चली गई।

गांधारी के चले जाने पर स्नान ध्यान आदिक कर के कुन्ती भी दुर्वासा के सन्मुख आय करके खडी हो गई और बोली हे मुनीश्वर अब आप मुझको प्रसन्न हो कर वर प्रदान करें। कुन्ती की बात सुनकर दुर्वासा अचम्भे से बोले हे सुन्दरी ! मैंने तुमको सौ पुत्र होने का अभी वर दिया है, फिर तू और क्या मांगती है। तब कुन्ती ने आश्चर्य में आ करके कहा भगवन् ! मैं तो अभी स्नान करके आपके सन्मुख आई हूं, कदाचित् गांधारी आपके पास आई होगी क्योंकि उसके वस्त्र भी मेरे समान हैं, उसने आप से छल किया होगा। यह सुन करके दुर्वासा जी बोले, अच्छा तेरे भी पांच पुत्र होंगे। तब कुन्ती ने कहा हे महर्षि ! मैंने जो आपकी भक्ति कर के वर प्राप्त किया है, पांच पुत्र पाये हैं, और छल करने वाली गांधारी को आपने सौ पुत्र दिये हैं, यह अन्याय है। दुर्वासा बोले हे सुन्दर बुद्धि वाली ! तेरे पांच ही पुत्र युद्ध काल में उस के सौ पुत्रों को मारेंगे, क्योंकि उसने

कपट से वर प्राप्त किया है। और तेरे ही पुत्र इस राज्य के स्वामी बनेंगे। जब दुर्वासा जी चले गये तो कुन्ती ने पति की आज्ञा पायकर धर्म, इन्द्र और पवन इन तीनों को मन्त्र द्वारा बुलाया और उनसे सम्भोग किया, और पांडु की छोटी रानी ने कुन्ती से एक मन्त्र सीखा, और उस मन्त्र द्वारा अश्वनीकुमार देवताओं का आवाहन करके उनके अंश से दो पुत्र प्राप्त किये। इस प्रकार पांडु के पांच पुत्र हुए, जिन में धर्म के अंश से युधिष्ठिर, पवन के अंश से भीमसेन और इन्द्र के अंश से अर्जुन ने जन्म लिया। उधर अश्विनी कुमारों के अंश से नकुल और सहदेव नामक दो पुत्रों ने माद्री के गर्भ से जन्म लिया। हे राजन्! जिस दिन भीमसेन ने जन्म लिया उसी दिन धृतराष्ट्र के गृह में दुर्योधन ने जन्म लिया। कुछ काल इसी प्रकार सुख से बीत गए। एक दिन महाराज पाण्डु ने काम के वश में होकर माद्री के साथ सम्भोग किया, और वह वहीं पर ब्राह्मण के शाप से मर गये। पांडु के मरने पर कुन्ती माद्री और उसके पांचों पुत्र विलख विलख कर रुदन करने लगे और माद्री उनके साथ ही चिता में बैठकर स्वर्ग लोक में चली गई। कुन्ती अपने पांचों पुत्रों समेत धृतराष्ट्र के राजभवन में निवास करने लगी और धृतराष्ट्र भी उनको अपने पुत्रों के समान पालन करता हुआ पांडु के स्थान में राज का काम करने लगा।

अब पांडव और धृतराष्ट्र के पुत्र एक ही स्थान में नाना भोगों को भोगते हुए आनन्द के साथ बाल क्रीडा करते बढ़ने लगे। भीमसेन दौडने में, बाण चलाने में, भार उठाने में और कुश्ती में धृतराष्ट्र के सभी पुत्रों से बढकर था। इस कारण भीमसेन से सभी धार्तराष्ट्र स्पर्धा रखने लगे, और उसको अपना शत्रु मानने लगे। हे राजन्! यह द्वेष जब दिन पर दिन बढने लगा तो दुर्योधन के चित्त में बहुत सी दुष्ट भावनायें उठने लगी। वह मन में विचारने लगा कि यह भीमसेन बड़ा होकर राजपाट को फिर मेरे हाथ से अवश्य छीनेगा, सो जिस प्रकार भी होवे इस को मार डालना ही उचित है, जो इस शूल को अभी से ही नष्ट न किया तो एक दिन हम सबका यह नाश कर देगा। यह विचार कर एक दिन दुर्मति दुर्योधन युधिष्ठिर के पास आया और उस को कहा, हे भाई! चलो गंगा के तट पर उद्यान बन में चलें, वहां जाकर जल-क्रीडा करेंगे। दुर्योधन की बात सुन कर युधिष्ठिर पांचों भाईयों समेत गङ्गा पर पहुंचे। वहां वह अनेक प्रकार की मिठाईयां और फल मेवे प्रसन्न होकर एक दूसरे के मुखमें देने लगे। इस समय को दुर्योधन ने अच्छा जाना और कुछ लड्डुओंको जिन के अन्दर उस दुष्ट बुद्धिने महां कालकूट विष मिलाया हुआ था भीमसेन के मुख में डाला भीमसेन भी इस को भाई की प्रीति समझ कर एक एक करके बहुतसे लड्डू खा गया। तत्पश्चात् सारे पांडव और कौरव प्रसन्न हो करके

गङ्गा में जल-क्रीडा करने लगे। और बहुत समय तक जल-क्रीडा करके वह सब बाहर निकले और अपने अपने वस्त्रों को पहन कर घर चलने को उद्यत हुए। परन्तु भीमसेन अतिशय क्रीडा करके बहुत थक गया था। उसका मस्तक विष से घूमने लगा और वह कुछ काल विश्राम करने के लिए गङ्गा के किसी एकान्त बरेते में लेट गया और ऐसा बेसुध होकर सोया कि उसको संसार की और अपनी कोई खबर नहीं रही। उधर जब सारे राजकुमार चलने लगे तो भीमसेनको न देखकर युधिष्ठिर और उस के भाई उसको ढूंढने लगे परन्तु दुर्योधन ने यह कह कर कि भीमसेन हमसे पहले चला गया है, युधिष्ठिरको भुलावा दिया। सरल हृदयवाला युधिष्ठिर दुर्योधन के कथन को सत्यमान कर सब भाईयों समेत घरको आ गया और माता कुन्ती से पूछा, माताजी! हम से पहले भीम यहां आ गया है, पर यहां भी मैं उसे कहीं देखता नहीं, क्या कारण वह कहां चला गया, वहां तो मैं सब स्थानों पर उसको ढूंढ आया हूं। धर्मराज युधिष्ठिर की बात सुन कर कुन्ती ने अति व्याकुल हो कर कहा पुत्र मैंने भीमको नहीं देखा, और नाही वह मेरे पास आया है, तू अपने छोटे भाईयोंको साथ लेकर शीघ्र उसे ढूंढने जा। माता की बात सुनकर युधिष्ठिर के मन में बडी सोच हुई और वह भाईयों को साथ लेकर ढूंढने चला। युधिष्ठिर के चले जाने पर कुन्ती ने विदुर को बुलाय करके कहा, विदुरजी! भीमसेन कहां चला गया

कहीं दीखता नहीं। गङ्गा से सारे भाई लौट कर आगए हैं, पर अकेला भीमसेन नहीं आया। न जाने मेरा चित्त क्यों व्याकुल हो रहा है। दुर्योधन उसको अपना वैरी समझता है, और क्रूर दुष्ट राज्य का लोभी बडा निर्लज्ज है, इस कारण मेरा मन बडी घबराहट में है। तब विदुर ने उस को धीरज दिया और कहा कि हे कल्याणि! परमात्मा तेरे पुत्र की रक्षा करेगा वह आ जाएगा तू चिन्ता न कर। यह कह कर वह चला गया और कुन्ती गृह में पुत्रकी चिन्ता में मग्न हो गई। उधर गङ्गा के बरेते में पडा हुआ भीम ठंडे वायु के लगने से मूर्छित हो गया था, हे राजन्! दैवयोग से वासुकी नाम नागों का राजा उस स्थान पर आ पहुंचा। और उस ने अपने दौहित्र भीमसेन को बरेते में देखा, यह देखकर उसने सर्प विष को दूर करने वाला रस उसके मुख में निचोडा। उसके प्रभाव से आठवें दिन में भीमसेन को सुधि आई और वह उठ कर बैठ गया। उसको जीवित देखकर वासुकी अति प्रसन्न हुआ और घुटकर गले मिल कर बोला, हे वत्स! इन दिव्य जलों में स्नान करके शीघ्र घर जा, तेरे भाई और माता सब तेरे विछोडेमें व्याकुल हो रहे हैं। तब वह महांबलि वहां से उठकर अपने गृह पर आया और अपनी माता तथा भाईयों से दुर्योधन की सारी कुचेष्टा कह सुनाई। तब युधिष्ठिर ने उसको प्यारे वचनों से शान्त किया और आगे से सावधान होकर रहने की सम्मती दी, इसी प्रकार बाल क्रीडा करते हुए वह राजकुमार सोलह २

वर्षों के हो गए। उनकी किशोर अवस्थाको देखकर धृत-राष्ट्र ने उन सब को कृपाचार्य्यके अर्पण किया और वह उनको धनुर्वेद की शिक्षा देने लगा।

सातवां अध्याय ।

वैशम्पायनजी बोले, हे राजा जनमेजय! एक दिन युधिष्ठिर और दुर्योधनादि सारे राजकुमार नगर के बाहर गेंद खेल रहे थे। दैवयोग से वह गेंद एक कूप में गिर गया। गेंद को कूंए में गिरा देख वह सब राजकुमार उस को निकालने का प्रयत्न करने लगे, परन्तु बहुत यत्न करने पर भी उसे न निकाल सके। इतने में एक वृद्ध ब्राह्मण उस कूप के निकट आया। उसको देख कर बालकों ने कहा, हे वृद्ध! हमारा गेंद इस कूप में गिर पडा है, तू इसको बाहर निकाल। तब वृद्ध ने हंस कर कहा. हे बालको! तुम चक्रवर्ती राजा भरत के वंश में से हो, परन्तु इस गेंद को बाणों से नहीं निकाल सकते, तुमने किसी गुरुसे धनुर्वेद की शिक्षा नहीं पाई, ऐसा जान पडता है। यह कर उस वृद्ध ने वहां से कुछ कुशा के कान्ने इकट्ठे किये और उन को छील कर बाण बनाए। उन बाणों में से एक बाण से उस गेंद को वेध दिया, और दूसरा बाण उस बाण की पिछली ओर मारा। इसी प्रकार बाण पर बाण जोड कर उसने गेंद को बहार निकाल दिया। वृद्ध को बाण-विद्यामें ऐसा कुशल देख

वह राजकुमार आश्चर्य करने लगे और हाथ जोड़कर पूछने लगे, हे महात्मा! आप कौन हैं, आपकी बाण-विद्या को देख कर हम आश्चर्य्य-चकित हो गए हैं, हम अपने दादा भीष्म जी को कहेंगे, कि आप हमको धनुर्वेद सिखाएं। राजकुमारों की बात सुनकर वृद्ध ने कहा, हे कुरुवंश कुमार! मेरा नाम द्रोण है, जाओ अपने दादा के सामने मेरी सारी बात कहो। तब वह राजकुमार भष्म जी के सम्मुख द्रोण की प्रशंसा करने लगे और उनके गेंद निकालने का सारा वृत्तान्त कह कर सुनाया। भीष्मजी भी कुमारों की शिक्षा के लिये किसी योग्य गुरु की खोज में थे। कुमारों के मुख से इस वृत्तान्त को सुन करके वह स्वयं उस स्थान पर आये, जहां द्रोण बैठा था। द्रोण जी को पहचान कर भीष्मजी ने उनको हाथ जोड़कर नमस्कार किया और बोले, हे तपोधन! आप किस कारण से यहां पधारे हैं? सो कहिये। तब द्रोण ने कहा, वज्रदेह! मैं बाल्यावस्था में अस्त्र-विद्या सीखने के लिये महर्षि अग्निवेश के निकट गया। उनके आश्रम में ब्रह्मचारियों के समान शिर पर जटा धारण कर कई वर्ष पर्यन्त गुरु की सेवा करता और अस्त्र-विद्याका अभ्यास करता रहा। उसी गुरुकुलमेंपंचालों का राजकुमार महाबलि द्रुपद भी मेरे साथ अभ्यास करता था। एक ही गुरुके पास पढ़ने से मेरे साथ उसका परम प्रेम और भाइयों कासा स्नेह हो गया। जब हम दोनों विद्या पढ़ चुके और गुरु से बिदा होने लगे, तो उस

समय हमको परस्पर वियोग से अतिदुःख हुआ और हम उसी दुःख को सहन करते हुए रुदन करने लगे। तब द्रुपद ने मुझको कहा, हे भाई! तू फिर भी मुझे मिलना, मैं राजपुत्र हूं, तू ब्राह्मण है। पञ्चाल देश का जब मैं राजा बनूंगा, तू मेरे पास आना, मैं तेरा सङ्कट दूर करूंगा और सारी सम्पत्ति, भोग और ऐश्वर्य्य तेरे अर्पण करूंगा। यह वचन देकर वह अपने राज्य में चला गया और मैं अपने गृह में आया। गृह में आय करके बड़ों की आज्ञा से मैंने विवाह किया। कुछ काल पाय कर मेरे गृह में पुत्र का जन्म हुआ। हे निश्चल! हम ब्राह्मण धन की इच्छा नहीं रखते और अपने तप को ही धन समझ कर उस में लीन रहते हैं।

एक दिन कुछ धनी लोगों के पुत्रों को गौ का दूध पीते देखकर मेरा पुत्र अश्वत्थामा रोने लगा। उसे रोते देखकर मेरा मन अति व्याकुल हो गया और मैं अपनी दरिद्रता पर बारम्बार धिक्कारने लगा, हे भीष्म! तब मैं गौ की प्राप्ति के लिये सारे नगर में घूमा परन्तु किसी ने मुझे गौ दान न दी। तब उन बालकों ने आटे को घोल कर अश्वत्थामा को पिलाय दिया, जिसे पीकर वह प्रसन्न होकर बारंबार "अहह! मैंने दूध पिया है" कहकर नाचने लगा। उसको नाचते देखकर वह बालक उस को घेर कर उसका घृणायुक्त उपहास्य करने लगे, जिसे देखकर मेरे हृदय में बड़ा दुख हुआ। हे भीष्म! उस समय मैंने

अपनी अवस्था पर बहुत पश्चाताप किया, और सोचने लगा कि क्या करूं और किस प्रकार से इस दरिद्रता से छुटकारा पाऊं। तब सोचते सोचते मुझे अपने मित्र द्रुपद की वह प्रतिज्ञा स्मरण हुई जो उसने गुरु से विदा होते समय मेरे साथ की थी। मैं उसकी आस करके उसके पास पत्नी समेत गया और उसको उसकी प्रतिज्ञा स्मरण करा कर उससे सहायता मांगी। मेरी बात सुनकर द्रुपद ने बड़ी घृणा के साथ कहा, अरे ब्राह्मण! तेरी बुद्धि मारी गई है। इस संसार में कभी किसी की मित्रता अजर अमर नहीं होती, भला कंगाल और राजा की मित्रता कैसी। पुरानी बात लेकर तू मुझे अब अपना मित्र कहता है, यह तेरी मूर्खता है। हे भष्मि! द्रुपद की बात से मेरा लज्जा के मारे सिर घूमने लगा और मेरा शरीर पानी पानी हो गया मैं यह कोरा उत्तर सुनकर वहां से लौटा और मन में एक भयानक प्रतिज्ञा की जिसे मैं शीघ्र ही पूरा करूंगा। वहां से चल कर अब मैं यहां पर आया हूं, कहो अब मैं क्या करूं। द्रोण की आत्म कथा सुन कर भीष्म जी ने कहा, हे ब्रह्मर्षि! आपने हम पर बड़ी कृपा की है जो यहां पधारे हैं। आप इन कुमारों को अस्त्र विद्या सिखलाइये, कुरुओं की धन संपत्ति और राज पाट आपही का है। इसके पश्चात् भीष्म जी ने अपने पोते कौरवों को द्रोणाचार्य्य के हाथ सौंपा। उन सबको लेकर द्रोण एकान्त स्थान पर गया और उनसे बोला हे पुत्रो अस्त्र विद्यासीख

लेने पर तुमको मेरा एक कार्य्य करना होगा जो बड़ा ही भयानक और मेरे हृदय को दग्ध कर रहा है। गुरु की बात सुनकर किसी ने उत्तर न दिया पर केवल अर्जुनने "हां करूंगा" ऐसा वचन दिया। हे राजा जनमेजय! अर्जुन से वचन लेकर द्रोणाचार्य्य बड़े प्रेमके साथ उन सबको अस्त्र विद्या सिखाने लगे। जब कुछ समय पाकर वह सब धनुष चलानेमें प्रवीण हुए तो एक दिन आचार्य्यने अपने शिष्यों की परीक्षा लेनेके लिए एक वृक्षकी शाखा पर एक बनावटी पक्षि रख दिया और सबको एकत्र करके कहा पुत्रो! मैं तुम्हारी एक एक करके परीक्षा लेना चाहता हूं, सो जिस समय मैं बोलूं उसी समय पक्षीकी ग्रीवा काटकर नीचे गिराना। यह कह कर सब से प्रथम युधिष्ठिर के हाथ में धनुष दिया। जब युधिष्ठिरने पक्षिका लक्ष्य बांध लिया तो आचार्य्य ने उसे पूछा, बेटा! इस समय तुमे क्या दिखाई देता है? युधिष्ठिरने कहा गुरुजी! पक्षि दिखाई देता है शाखा दिखाई देता है और वृक्ष भी देखता हूं। तब गुरु ने पूछा हे पुत्र कुछ और भी दिखाई देता है? युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, हां भगवन्! आप और यह सब भाई भी दिखाई देते हैं। यह सुन करके द्रोणने उसके हाथसे धनुष ले लिया और कहा, बेटा! जाओ तुम निशाना नहीं मार सकते। युधिष्ठिर के पश्चात् अन्य राजकुमारों को इसी प्रकार खड़ा करके उन से प्रश्न पूछे और उन सबने भी वैसे ही उत्तर दिये। सबसे पीछे अर्जुनकी बारी आई तो द्रोणाचार्य्य ने

हंसते हंसते उसके हाथ में धनुष दिया और कहा पुत्र ! तुम ही मेरे सच्चे शिष्य हो, तुम ही इस लक्ष्य को वीधोगे कहो तुम को क्या दिखाई देता है ? तब अर्जुन बोला, भगवन् ! मुझे न तो वृक्ष दिखाई पड़ता है, न आप और न मेरे भाई ही, मैं केवल इस पक्षि को देख रहा हूं और उस के भी शरीर को नहीं, केवल शिरको ही देखता हूं। इतना कह करके उसनें बाण को चुटकी से छोड़ा ही था, कि पक्षी का सिर कटकर पृथ्वी पर आ गिरा। अर्जुन के ऐसे लक्ष्य भेद को देखकर सारे दर्शकगण प्रसन्न होकर उसकी वाहवा करने लगे, और द्रोणाचार्यजी हृदय में प्रफुल्लित हो करके बोले, हे अर्जुन ! तेरी गुरु भक्ति और अस्त्र विद्या पर मैं अति प्रसन्न हुआ हूं, पुत्र ! इस संसार में तेरे समान दूसरा अनुर्धर न निकलेगा। द्रोणाचार्य्य के शिष्यों में भीमसेन सब से बलवान और गदा युद्ध में प्रवीण समझे गये। नकुल और सहदेव तलवार चलाने में सब से उत्तम निकले। दुर्योधन गदा युद्ध और तलवार दोनों में अति उत्तम रहा। परन्तु अर्जुन सारी बातों में सब से अच्छा रहा। उसके समान सारे ब्रह्मण्ड में धीर वीर विक्रमी उस समय दूसरा न था। इस प्रकार राजकुमारों की परीक्षा लेकर द्रोणाचार्य ने भीष्म को सन्देशा भेजा कि सब राज कुमार अस्त्र विद्या में परांगत होगये हैं, अब आप इनकी महाराज से आज्ञा लेकर अस्त्र क्रीड़ा कराईये। तब एक दिन भीष्मजी ने धृतराष्ट्र से कहा, हे राजन् ! आप के

कुमार विद्या प्राप्त कर चुके हैं, अब अपने सामने उनकी परीक्षा करावें। तब धृतराष्ट्र ने प्रसन्न होकर अखाड़ा बनवाने की आज्ञा दी, और कुमार अस्त्र विद्या देखने का दिन नियत कर दिया।

आठवां अध्याय ।

वैशम्पायनजी बोले, हे राजा! अब मैं तुमको राज कुमारों की अस्त्र विद्या के वृत्तान्त सुनाता हूं, सो तू ध्यान लगाकर सुन। हे राजा! अस्त्र क्रीड़ा के दिन राजा धृत-राष्ट्र गांधारी कुन्ती और दूसरी स्त्रियों समेत अखाड़े में बड़े ठाठ बाट के साथ विराजमान हुआ, और नगर के सारे नर नारी वहां पर इकट्ठे हुए। अनेक प्रकार के बाजे बज रहे थे, और लाखों मनुष्य उस तमाशे को देखने के लिये जब हिलते थे तो ऐसा प्रतीत होता था, जैसे समुद्र में लहरें पड़ती हों। जब अखाड़े के चारों ओर दूर २ तक मनुष्य बैठ गये, तो श्वेत धोती पहने हुए, श्वेत माला और श्वेत चन्दन लगाए द्रोणाचार्य्य जी अखाडे में प्रविष्ट हुए उस समय बाजों की बडी घनघोर हुई। और ब्राह्मणों ने मङ्गलाचार पढ़ा। इसके पश्चात् सारे राजकुमार बडे सुन्दर घोड़ों पर चढ़कर क्रम क्रम से अखाडे में आये। उनके हाथों में दस्ताने, कमरें कसी हुईं, पीठ पर तरकश बांधे हुए और हाथों में धनुष बाण थे, जिस में वह बडे ही सुन्दर प्रतापी और मन को हरने वाले दिखाई पडते थे।

हे राजन्! जब सदा एक दूसरे की स्पर्धा करने वाले बलवान और पराक्रमी दुर्योधन और भीम अखाड़े में उतरे तो उस समय ऐसा प्रतीत होता था, मानों दो पेले हुए हाथी एक दूसरे को मारने के लिये निकले हैं। उस समय उन दोनों के पक्षपाती लोग अलग २ होकर अहह भीम, अहह दुर्योधन का शब्द करने लगे और वह दोनों भी अपनी गदाओं को घुमा घुमा कर मण्डल बांधने लगे। उस समय अखाड़ा इस प्रकार लहराने लगा जैसे समुद्र में बड़ी २ तरंगे उठती हैं। इन दोनों के नेत्र लाल और क्रोधकी दशा को देखकर बुद्धिमान् द्रोण ने अपने प्रिय पुत्र अश्वत्थामा को ललकार कर कहा, हटादे इन महा पराक्रमियों को जो दोनों ही पूरी तरह से सीखे हुए हैं, ऐसा न हो कि अखाड़े में ही तलवारें चल पड़ें।

तब अश्वत्थामाने गदा हाथमें लेकर उन दोनों हाथियों के समान कुमारों को हटा दिया। उनके अखाड़े से चले जाने के पश्चात् आचार्य्य द्रोण बादल के समान गर्जते हुए बाजों को बन्द कराकर बोले, जो मुझे पुत्र से अधिक प्यारा सब शास्त्रों में पारंगत इन्द्र के समान पराक्रमी अर्जुन है वह अब अखाड़े में आवे। गुरु का वचन सुन करके अर्जुन तत्काल गोह के दस्ताने पहने हुए तर्कश पीठ पर डाले हुए हाथमें धनुष लेकर सुनहरी कवच पहन करके सामने आया, उस समय वह ऐसे शोभा देता था मानो मेघों के अन्दर से सूर्य्य निकल आया हो। उसको

अखाड़े में आये देख चारों ओर हर्ष ध्वनि होने लगी बाजे बजने लगे । जब अखाडे में कुछ शान्ति हुई तब अर्जुन अस्त्रों की फुर्ति दिखलाने लगा। उसने आग्नेय अस्त्रसे अग्नि उत्पन्न की, वारुणास्त्रसे जल बरसाया वायुसे अंधेरी चलादी और मेघ उत्पन्न कर दिये। बारंबार अंतर्ध्यान हो कर छिप जाता और फिर प्रगट हो जाता। क्षण में ऊंचा क्षण में छोटा पल भर में रथ के धुर पर और पल भरमें भूमि पर उतर जाता। महावीर अर्जुन ने सूक्ष्म से सूक्ष्म लक्ष्य अनेक प्रकार के अस्त्रों से बींधा। चक्कर खाते हुए लोहे के सूअर के मुख में पांच बाण छोडे। रस्सी के सहारे पर घूमते हुए बैल के सींग की खोल में बाण गाड दिये और अनेक प्रकार के गदा प्रहार दिखलाए । हे जनमेजय! अब अर्जुन अपनी अस्त्र विद्या को दिखला चुका, तो द्वार की ओर से बडी कठोर ध्वनि आई जैसे बिजली की गर्ज होवे है, उस समय सब द्वार की ओर देखने लगे, उसी समय भीड को चीर कर मस्त हाथी के समान बडा ऊंचा सिंह की नाईं गढ़े हुए शरीर वाला वीर करुण अखाडे में प्रविष्ट हुआ। उस महाबाहू ने अखाडे के चारों ओर दृष्टि डाल कर अर्जुन को ललकार कर कहा हे अर्जुन! जो काम तुमने दिखलाए हैं मैं उन सबको तुम से अच्छा करके दिखाऊंगा, यह कह कर द्रोण की आज्ञासे उसने एक एक करके वह सब कर्म करके दिखलाए, उस समय दुर्योधन ने अति प्रसन्न हो कर करण को छाती से लगाया, और कहा हे महाबाहो! तुम धन्य

हो यह सारा कुरुराज्य आप ही का है, तुम यहां ही रहो। तब करण ने छाती उभार कर उत्तर दिया, हे स्वामिन्! आप मेरे परम मित्र हैं, यह सब कुछ आप ही का है मैं अर्जुनसे द्वन्द्व युद्ध चाहता हूं। करण की बात सुन अर्जुन ने क्रोध से उस को ललकारा, और द्रोण से आज्ञा लेकर लडने के लिये उसके निकट पहुंचा। उन दोनों को द्वन्द्व युद्ध के लिए खडे देख कर दोनों पत्तों के लोग अलग अलग हो गए। धृतराष्ट्र के पुत्र करण की ओर खडे हो गए और द्रोण कृपाचार्य और भीष्म अर्जुन की ओर हुए। सारा अखाडा दो दलों में बट गया स्त्रियां भी दो पक्षों में होगई। हे राजन् जब दोनों धनुषधारी अखाडे में खडे हो गये तो कृपाचार्य बोला हे करण! यह कुन्ती का पुत्र पांडु नंदन अर्जुन तेरे साथ युद्ध करेगा परन्तु हे महाबाहो! तुम भी अपने माता पिता का नाम और कुल बताओ और कहो किस राजवंश में से तुम हो। फिर योग्य जान लेने पर युद्ध होगा, क्योंकि कुल और आचार हीन से राजपुत्र युद्ध नहीं कर सकते। हे राजन्! कृपाचार्य्य के ऐसा पूछने पर करण अति लज्जित हुआ और उस का मुख पानी से भीग गया। जब दुर्य्योधन ने कहा हे आचार्य्य! यदि अर्जुन राजा के बिना अन्य किसी के साथ युद्ध नहीं करना चाहता तो मैं इसी स्थान पर इसको अंग देश का राज्य देता हूं यह कह कर उस ने करण को उसी समय राज्यतिलक कर दिया। राज्यतिलक

लेकर जब करण अखाडे में आया तो अधिरथ नामक सूत कांपता हुआ वहां आया और करण को गले लगाकर बोला हे पुत्र आज मैं धन्य हूं, तू ने अंग देश का राज्य पाकर पिता के दारिद्य दुख को दूर किया है । उसके पिता को देख कर भीमसेन करण का उपहास करके बोला हे सूत पुत्र! तेरा कर्म्म युद्ध करना नहीं है तू चाबक पकड़ हे नीच! तू अंग का राज्य भोगने के योग्य नहीं है जैसे यज्ञ की बलि कुत्ते को प्राप्त नहीं हो सकती। भीमसेन के इस प्रकार के तिरस्कार भरे बचनों को सुनकर दुर्योधन कोप से उठ खडा हुआ और भीमसेन के प्रति बोला हे भीम! तुमें ऐसे बचन कहने उचित नहीं, करण क्षत्रिय है, कुण्डल और कवच पहने हुए सारे लक्षणों के युक्त यह इसका मुख सूर्य्य के समान चमकता है, क्या कभी हरनी सिंह को उत्पन्न कर सकती है। मैंने इसको अंग देश का राजा बना दिया है, जो इसको राजा बनाना पसंद नहीं करता तो बह मेरे सन्मुख आए मैं उसकी शक्ति देखूंगा, यह कह कर वह सब को ललकारने लगा। उधर भीमसेन भी खम ठोक कर निकल आया परन्तु उसी समय सूर्य्य अस्त हो गया और अखाडे में बडा हल्ला होने लगा। तब राजा दुर्योधन करण के हाथ में हाथ डालकर अखाडे से चला गया और द्रोण कृप और भीष्म भी पांडवों सहित अपने अपने घरों को चले गए ।

———

नौवां अध्याय ।

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! राजकुमारों को धनुर्विद्या की पूरी पूरी शिक्षा दे करके आचार्य्य द्रोण ने अर्जुन को कहा हे पुत्र! अब तुम युद्ध विद्या में पारंगत हो गए हो, तीनों लोकों में तुम को जीतने वाला इस समय कोई नहीं है, मेरे पास जो कुछ था, मैंने तुम को दे दिया अब मैं तुम से दक्षिणा मांगता हूं। तब अर्जुन दोनों हाथ जोड कर बोला हे गुरो! मेरे पास जो कुछ धन सम्पत्ति राज्य और यह शरीर है सब कुछ आपका है, आप जो कुछ कहें मैं देने को उद्यत हूं। शिष्य की बात सुनकर द्रोण अति प्रसन्न होकर बोले हे पुत्र! पंचाल देश के राजा द्रुपद को पकड़कर मेरे अर्पण कर यही मेरी दक्षिणा है, हे राजन्! तब अर्जुन ने गुरु को प्रणाम करके धनुष को कन्धे पर रखा और भाईयों समेत द्रुपद पर आक्रमण कर दिया। कौरवों को सेना समेत आते देख कर द्रुपद ने तीक्ष्ण बाणों की घोर वर्षा करके उनको मूर्छित कर दिया। कौरव भी उस पर अनेक प्रकार के अस्त्रों का प्रहार करने लगे, परन्तु वह कौरवों के दलों को यमराज के समान मार मार कर नाश करने लगा। अपने दल को नाश होते देख महाबाहु भीमसेन समुद्र के समान गर्जता हुआ हाथ में गदा लेकर पांचालों की महां सेना में ऐसे प्रविष्ट हुआ जैसे समुद्र में मगर मच्छ जाता है। उसन अपनी गदासे हाथियों के दलों

को मार कर नाश कर दिया, हे राजन्! ग्वाला जैसे पशुओं को डंडे से हांकता है, इसी प्रकार शत्रुओं के रथों और हाथियों को हांकता हुआ भीम आगे बढ़ने लगा। दूसरी ओर से द्रोणाचार्य्यका प्यारा शिष्य अर्जुन कालके समान जलते हुए बाणों से पांचालों के रथ घोडे और हाथियों को भस्म करने लगा अपनी सेना को मरते देखकर द्रुपद ललकार कर अर्जुन पर तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करने लगा। परंतु अर्जुन ने अपनी हस्त लाघवता और बिजली की सी फुर्ति से उस के सब बाणों को काट दिया और उसके घोडों को मार कर उसके धनुष को टुकडे टुकडे कर दिया। हे राजन्! पांचाल नरेश द्रुपद घबराकर दूसरा धनुष पकडने लगा तो उसी समय अर्जुन ने तलवार खींचकर सिंह के समान गर्जना की और कूदकर द्रुपद के रथ पर चढ़ गया, और उसको पकडकर रथके डण्डे के साथ बांध दिया। राजा को पकडा हुआ देख सारी पांचाल सेना भाग निकली। हे राजन्! तब मंत्री समेत द्रुपद को बांध कर अर्जुन उसे गुरु के सन्मुख लाया। तब क्षीण हुए २ तेज वाला हार खाकर लज्जित हुआ २ द्रुपद द्रोण से बोला हे राजन्! मैं आप से मैत्री चाहता हूं, आप मुझे प्राण दान देवें। यह सुनकर द्रोणाचार्य बोले, हे राजन्! तुम राजा हो और मैं भिखारी ब्राह्मण हूं, राजाओं की भिखारियों के साथ मैत्री कैसे हो सकती है, तुम डरो मत, एक

आश्रम में पढ़े हुए और एक साथ खेले हुए का मैं बध नहीं करूंगा। तुम ने भिखारी के साथ मित्रता करनी स्वीकार नहीं की थी, इस कारण मैंने तेरे राज्य पर आक्रमण किया। अब मैंने तेरा सारा राज्य ले लिया है, परन्तु तेरे साथ मैत्री चाहने करके आधा तुमें दे देता हूं। द्रोणाचार्य्य के इन बाणों के समान इन वचनों को सुनकर द्रुपद अति लज्जित हुआ कांपने लगा। तब द्रोणाचार्य्य ने उसे आधा राज दे कर उसे विदा किया और अपनी सेना समेत अपनी राजधानी में चला गया।

दसवां अध्याय।

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! पांचाल देश को जीतकर पांचों पांडवों ने अनेक देशों को जीता, जो राजा पाण्डु ने नहीं जीते थे उन सब को जीत कर अपने देश को धन धान्य से भरपूर कर दिया यवन राजा जो कभी नहीं जीता गया था, उसे भी मार कर कंटक दूर किया। जब सारे देश में अपना चक्रवर्ती राज्य स्थापन कर लिया तो इन पांचों भाईयों के बल पराक्रम की सारे संसार में धाक बन्ध गई, हे राजन्! पांडवों के इस प्रकार बढ़ते हुए बल को देखकर धृतराष्ट्र के मन में खटका हुआ। वह राजा ऐसी चिन्ता में डूबा के रात भर उसको नींद नहीं आई। वह मन ही मन पांडवों के नाश का उपाय सोचने लगा। उधर दुर्योधन भीमसेन को बलमें अधिक

और अर्जुन को अस्त्र विद्या में अति कुशल देखकर जलने लगा। इस प्रकार दुर्योधन शकुनि और कर्ण मिलकर पांडवों के मारने का उपाय सोचने लगे, परन्तु पांडव सब कुछ जानते हुए भी अंजान बनकर उनकी गति को देखने लगे। युधिष्ठर अपने सत्कर्म्मों से दया से और दान से प्रजा को प्रसन्न करने लगा उस ने अनेक प्रकार के सुकृत यज्ञों द्वारा ब्राह्मणों को प्रसन्न किया। तब सारे नगर में युधिष्ठर की शोभा होने लगी, घर घर में युधिष्ठर के शुभ कर्म्मों की और साधु स्वभाव की बड़ाई होने लगी जिसे सुनकर ईर्षा से जलता हुआ दुर्योधन धृतराष्ट्र के पास जाकर बोला, हे तात! आप किस विचार में बैठे हो, पुर-वासी आपको और भीष्म को सिंहासन से च्युत करके पांडु पुत्र युधिष्ठिर को राज्य दिलाने की मन्त्रणा कर रहे हैं। परन्तु हे राजन्! राज्य का अधिकार तो आप ही का है, नेत्र न होने करके पांडु को सिंहासन पर बैठाया गया था। अब वह मर चुका है, आपका राज्य आपने फिर पाया पांडवों का इस पर क्या अधिकार है, पिता जी! तनिक सोचिये तो सही, आपके सिंहासन च्युत होने पर हमारी क्या दशा होगी, इस कारण आप पांडवों को किसी प्रकार यदि राजधानी से निकाल कर वारणावत भेजदें तो फिर सारे ही झगड़े समाप्त होजाएंगे। उनके चले जाने से मैं सब कार्य्य ठीक कर लूंगा। दुर्योधन की भेद भरी बातों को सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा, बेटा! तुमने जो कुछ कहा

सत्य है परन्तु मैं क्या करूं, पांडु बडा योग्य था, उसके मेरे ऊपर बहुत उपकार हैं, और उसकी सन्तान भी मेरा पिता के समान आदर करती है, फिर बिना दोष के ही कैसे उनको निकाल दूं तब दुर्योधन ने कहा पिता जी ! आप सचमुच बडे ही भोले और राजर्षि हैं, वह आपको गद्दी से उतार कर स्वयं राज लेने का यत्न करते हैं, और आप उन को निर्दोष कहते हैं, आप इन पांडवों के छल को नहीं समझ सकते। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोले, हे दुर्योधन ! तूं अधीर न हो, मैं भी उनको निकालना चाहता हूं, परन्तु डरता हूं कि कहीं सारे मन्त्री सामन्त और शूर मेरे विरुद्ध न होजावें, इसलिये सब बातों का विचार करके काम करना उचित है। तब दुर्योधन ने हंसकर उत्तर दिया, हे राजन् ! मन्त्री सामन्तों और शूरों को बहुत सा धन देकर प्रसन्न करो। वह सब आपका साथ देंगे, हां भीष्म द्रोण और विदुर कदाचित् धन से प्रसन्न न हों, सो उनका उपाय करना कोई कठिन नहीं है। भीष्म जी दोनों पक्षों में हैं, द्रोण का पुत्र अश्वत्थामा हमारा सखा है, वह अपने पिता को हमारे पक्ष में करेगा, शेष रहे विदुर, सो वह अकेले कर ही क्या सकते हैं। इस कारण आप कोई चिन्ता न करें, और अति शीघ्र पांडवों को वारणवत भेजदें, फिर सारा राज्य हमारे हाथ में आ जाएगा और सारे कंटक दूर हो जाएंगे। हे राजा जनमेजय ! दुर्योधन की बातों से धृतराष्ट्र जाल में फंस गये और पांडवों को वारणावत

भेजने के लिए अवसर देखने लगे। इधर दुर्योधन ने स्वर्ण की थैलियां दे देकर सारे मन्त्रियों को अपने साथ गांठ लिया। जब सब काम ठीक हो गया तो एक दिन धृतराष्ट्र ने पांडवों को सभा में बुलाया, जब पांचों भाई सभा में आकर विराजमान हुए तो एक दुष्ट मन्त्री जिस को पहले ही सिखा रखा था उठकर वारणावत नगर की प्रशंसा करने लगा, और उस नगर की सुन्दरता और रमणीकता इस प्रकार वर्णन की, कि पांडवों के मन में उसके देखने की चाह उत्पन्न होगई, और उन्हों ने धृतराष्ट्र से वारणावत जाने की इच्छा प्रगट की। तब धृतराष्ट्र ने अपने मन के विचारों को दबाकर कहा, हे पुत्र! वारणावत की सब मन्त्री प्रशंसा करते हैं, और तुम्हारी भी इच्छा उसे देखने की हुई है, इस कारण मैं तुम को वहां जाकर कुछ दिन निवास करने की आज्ञा देता हूं। राजा की आज्ञा पाकर पांचों पांडव अति प्रसन्न हुए और वारणाबत जाने की तैय्यारी करने लगे। उधर दुर्योधन आनन्द में मग्न होगया। उसने पांडवों को मार डालने का उपाय सोच रखा था, अब उसे पूरा करने का समय आगया था। वह सभा से उठकर पुरोचन नामक एक मन्त्री के पास पहुंचा और बडे आदर से उसका हाथ पकड कर बोला, हे पुरोचन! संसार भर में मेरे जितने मित्र बन्धु और सलाहकार हैं, उन सब में मैं तुम पर ही विश्वास कर सकता हूं, तुम बडे ही बुद्धिमान् नीतिज्ञ और धर्मात्मा हो, यह विशाल

राज्य केवल हमारा ही नहीं, तुम्हारा भी है, इस कारण जिस प्रकार राज्यकी रक्षा हो तुम को वैसा ही करना उचित है, देखो मैं तुमको अपना विश्वास पात्र समझ कर ही तुम से एक भेद की बात कहता हूं, सो तुम गुप्त रखना। वारणावत में पांडव जाने वाले हैं,वहां उन्होंने कुछदिन निवास करना है। इस कारण तू ने एक तीक्ष्ण गति वाले रथ पर चढ़कर आज ही वारणावत में पहुंच जाना। और एक ऐसा मकान बनाना जो राजाओं के निवासके योग्य और देखनेमें अति सुन्दर हो, परन्तु लाख सन दारू आदि पदार्थों को मिला कर उस गृहको अन्दर बाहरसे भलीभान्ति लीप पोत देना। हे पुरोचन! जिस समय पांडव उस गृह में निवास करने लगें, तब तू ने गुप्त रूप से उस भवन में अग्नि लगा देना, किसीको इस भेद का पता न लगे और सब लोग यही समझे कि दैव इच्छा से अग्नि लग गई है। इतना कहकर दुर्योधन ने पुरोचन को बहुत सा धन देकर उसकी बड़ी श्लाघा की। तब पुरोचन दुर्योधन को "ऐसा ही करूंगा" कहकर वारणावत जाने को उद्यत हुआ। परन्तु मन में उसको दुर्योधन के इस उपाय से अति दुख हुआ और वह नाना प्रकार के तर्क वितर्क करता हुआ एकान्त में जाकर विदुर जी को मिला। उसने दुर्योधन की इस कुचेष्टा का सारा उनको वृत्तान्त सुना दिया, पुरोचन की बात सुनकर विदुर जी की आंखों में आंसु आगए उन्हों ने पुरोचन को रो करके कहा हे पुरोचन तूं ने दुर्योधन के कथन अनुसार लाख का

गृह बनवाना परन्तु उसकी पश्चिम दीवार में एक बड़ी सुरंग बना देना जिस के द्वारा धर्मात्मा पांडव प्राण बचा कर निकल सकें, ऐसा करने पर तुमारा कल्याण होगा। महात्मा विदुर की बात सुनकर पुरोचन उसी समय एक शीघ्र गामी रथ पर चढ़कर वारणावत पहुंचा और वहां एक अति सुन्दर राजाओं के रहने योग्य घर बनाया जिस में लाख दारु आदि अनेक प्रकार के मसाले भरे। फिर विदुर जी के कथनानुसार पश्चिम दीवार में एक बड़ी सुरंग बनाई और उसके मुख पर एक शिला रखकर उस को बन्द कर दिया। इस प्रकार लाक्षा गृह बनाकर पुरोचन हस्तिना पुर को लौटा। पुरोचन के लौटने पर महाराज युधिष्ठर भाईयों समेत धृतराष्ट्र की आज्ञा में वारणावत चलने को उद्यत हुए। उन को जाते देख कर विदुरजी ने यावनी भाषा में युधिष्ठिर को दुर्योधन की सारी कपट चाल कह सुनाई और लाक्षा गृह से निकलने का मार्ग भी बताया, तब महाराज युधिष्ठिर सब को प्रणाम करके और प्रजाजनों को उपदेश दे करके वहां से चलकर वारणावत पहुंचे। वहां जाकर वह सावधानी से लाक्षा गृह के अन्दर निवास करने लगे। एक दिन पांडवों को प्रगाढ़ निद्रा में सोते देखकर पुरोचन ने उस गृह को चारों ओर से आग लगादी। तब वह भवन क्षणमात्र में आग उगलने लगा। तब पांचों पांडव जो सदैव सचेत रहते थे, उठ करके विदुर जी के बताए हुए सुरंग के मार्ग से बाहर निकल गए, परंतु

एक भीलनी अपने पांचों पुत्रों सहित जो रात्रि को दैव योग से उस गृह में आकर सोई थी जलकर भस्म हो गई। लाक्षा गृह के बाहर निकल कर भीमसेन ने पुरोचन को आग लगाते पकड़ लिया और उसी अग्नि में झोंक कर उस को मार डाला।

तब वह पांचों भाई माता कुन्ती समेत बनों और जंगलों को पार करते गंगा के तट पर पहुंचे और नौका पर बैठकर गंगा पार हो करके कोई गुप्त स्थान अपने निवास के लिये ढूंढने लगे। हे राजन् दुर्योधन के भय से उन्हों ने अपना वेष बदल डाला। और बड़े वेग से बन में चलने लगे। भीमसेन इतने वेग से चले कि उसके भाई भागते भागते थककर गिरने लगे। तब भीम ने किसी को कन्धे पर किसी को गोद में उठाया और चलने लगा। इसी प्रकार सारी रात और सारा दिन चलते २ सन्ध्या समय वह एक घोर बन में पहुंचे। उस बन में न कोई खाने को फल फूल और न ही पीने का जल था। सिंह व्याघ्र और रीछ आदिक भयानक जन्तु इधर उधर फिर रहे थे। वायु बड़े वेग से चल रहा था, निद्रा भूख और थकान के मारे पांडवों की बुरी दशा थी। इस समय कुन्ती को बड़ी प्यास लगी परन्तु जब बहुत ढूंढने पर भी कहीं जल न मिला तो वह विलाप करने लगी। भीमसेन माता के रुदन को सहार न सका और उन सब को जो एक पग भर भी आगे न चल सकते थे, उठाकर एक घनी छाया वाले वृक्ष के नीचे

बिठा दिया और स्वयं जल की खोज में निकला। कुछ काल बन में फिरते वह एक सरोवर पर पहुंचा। वह सरोवर निर्मल जल से भरा हुआ नाना प्रकार के जलचरों और पक्षियों से शोभायमान था। सरोवर को देखकर भीम अति प्रसन्न हुआ और इस में आनन्द पूर्वक स्नान करके माता के लिये जल लेकर चला। जब वह लौटकर आया तो क्या देखता है कि थकान के मारे सब भाई और माता अचेत पड़े सो रहे हैं। तब वह अकेला ही सारी रात पहरा देने के विचार से खड़ा होगया। उसी वृक्ष के निकट शाल के वृक्ष पर एक बड़ा भयानक मनुष्य के मांस का भक्षण करने वाला हिडिंब नामक राक्षस रहता था। पांडवों को सोए देखकर उसने अपनी बहन हिडिंबा को बुलाकर कहा हे बहन! आज मेरे सौभाग्य से यह मनुष्य इधर आ निकले हैं, जा उन सब को मारकर यहां ले आ आज उनका मांस खाकर खूब आनन्द करेंगे। तब हिडिंबा तत्काल उस वृक्ष के नीचे आई। आगे भीम पहरा दे रहे थे और उसके चारों भाई व माता सोये पडे थे। भीम का रूप लावण्य और सुन्दर शरीर देखकर हिडिंबा उस पर मोहित होगई। तब उसने अपना राक्षसी वेष बदल डाला और एक अत्यन्त रूपवती कन्या बन गई। इस प्रकार अपना अति सुन्दर अप्सराओं का स्वरूप. बनाकर वह मन्द मन्द चलती हुई भीमसेन के सामने आई और लज्जा से सिर नीचा करके बडे मीठे स्वर से बोली। हे विशाल

नेत्र ! पुरुष श्रेष्ठ ! आप कौन हो, कहां से आए हो और यह सुकुमारी स्त्री कौन है ? क्या तुम को पता नहीं कि इस बन में मेरे भाई का राज्य है। वह तुम्हारा मांस खाने के लिये अधीर हो रहा है और उसी ने मुझको तुम्हें मारने के लिए यहां भेजा है, परन्तु हे युवक ! तुम्हारे रूप और सुन्दरता को देखकर मैं तुम पर मोहित हुई हूं, इस करके भाई की आज्ञा को न मानूंगी तुम मेरी कामना पूरी करो और मेरे साथ गन्धर्व विवाह करो। हे नर श्रेष्ठ ! जल थल आकाश और सब लोकों में मेरा आवागमन है। मैं अभी तुमको उडाकर जहां चाहो लेजा सकता हूं तुम मेरे साथ सुख पूर्वक भोग विलास करो। हिडिंबा की बात सुनकर भीमसेन हंसकर बोले, हे राक्षसी ! माता और भाईयों को त्यागकर मैं अकेला यहां से तेरे साथ किस प्रकार जा सकता हूं, यदि तेरी इच्छा मेरे साथ रहने की होवे तो तुम बिना संकोच रहो, तेरे भाई से मैं नहीं डरता, मेरे सामने तेरा भाई मेरा और तेरा कुछ भी बिगाड नहीं सकता, मैं उस को तेरे देखते २ पल भर में पछाड़ दूंगा।

उधर बहन के लौटने में देर होती देखकर हिडिंब क्रोध से दांत पीसता हुआ आप ही पांडवों की ओर चला। उसे आता देखकर हिडिंबा डर से कांपती हुई भीमसेन से बोली, हे नरोत्तम ! देखो मेरा भाई क्रोध से इधर आरहा है, अब तुम्हारा किसी प्रकार भी बचाव नहीं है, अब भी दासी की बात मानलो, मैं अभी तुम को उठाकर आकाश

में उड जाऊंगी। हिडिंब ने दूर से अपनी बहन की यह बातें सुन लीं, और उसे मनुष्य के वेष में देखकर उसको बडा क्रोध हुआ और उसको मारने के लिये दौडा। तब भीमसेन ने उसको ललकार कर कहा, रे दुष्ट राक्षस! अपनी बहन को मारकर क्यों अबला हत्या का पाप अपने सिर लेता है जो तेरे में बल है, तो आ मेरे साथ युद्ध कर। भीमसेन की बात से हिडिंब को बडा क्रोध हुआ और वह गर्जता हुआ उसकी ओर दौडा। तब वह दोनों एक दूसरे के साथ मस्त हाथियों के समान टकराने लगे। कभी टक्कर कभी मुक्के और कभी लातों से एक दूसरे पर प्रहार करने लगे, अन्त में भीमसेन ने हिडिंब को थका जानकर ऊपर उठा लिया और आकाश में घुमाकर भूमि पर पटक दिया, और गर्दन दबोच कर उसे मार डाला। हिडिंब के भूमि पर गिरने से बडे धडाके का शब्द हुआ मानों कोई बडा भारी वृत्त जडसे उखडकर गिरा हो, जिसे सुनकर पांडवों और माता कुन्ती की नींद खुल गई। हिडिंब को मरा देख वह बडे अचम्भे में आये और भीमसेन की प्रशंसा करने लगे। हे राजन्! उस राक्षस को मारकर वह सब वहां से आगे चले, तब हिडिंबा भी उनके साथ चली। उस रूपवती कन्या को देखकर कुन्ती ने आश्चर्य से उस को पूछा, हे सुन्दरी तुम कौन हो, इस उपद्रव से भरे हुए बन में किस कारण अकेली फिरती हो?

तब हिडिंबा ने बडे नम्र स्वर से कहा, हे माता! यह

बन मेरे भाई हिडिंब नामक राक्षस का है, वह नर मांस का खाने वाला किसी मनुष्य को बिना खाये नहीं छोडता। तुम सब को यहां सोए देखकर उसने मुझे आप के मारने के लिए भेजा, परन्तु हे माता! भीम को देखकर मेरा मन मेरे हाथ से जाता रहा, मैं इस सुन्दर राजकुमार पर मोहित होगई, तब मेरे भाई से भीम का युद्ध हुआ और वह इनके हाथ से मारा गया, अब मैं यहां अकेली हूं, मैंने अपने मन में भीम को वर लिया है, हे माता! आज्ञा दो कि मेरा मनोरथ सिद्ध हो। यह सुनकर माता कुन्ती ने प्रसन्न होकर कहा, पुत्रि! तेरा मनोरथ पूरा हो। तब माता की आज्ञा पाकर भीमसेन ने हिडिंबा के साथ विवाह कर लिया। समय पाकर भीमसेन के गर्भ से एक बालक उत्पन्न हुआ। उस महा बलवान् विकटरूप बालक का नाम घटोत्कच पडा, जिसने कुरुक्षेत्र के युद्ध में पांडवों की ओर से बडी बीरता दिखाई। इसके पश्चात् मृग छाला और वलकल धारण करके पांचाल त्रिगर्त आदि देशों के भयानक बनों और नदियों को पार करके पांडव एक चक्रा नामक नगरी में पहुंचे। वहां वह एक ब्राह्मण के गृह में रहने लगे। दिन भर पांचों भाई भिक्षा मांगते रहते। सायंकाल जो कुछ उनको मिलता माता के सन्मुख रख देते। माता उस सारी भिक्षा के दो भाग कर देती। एक भाग तो अकेले भीमसेन ही खा लेते और आधे भाग को चारों भाई खाते। एक दिन दैव योग से युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल और सहदेव

चारों भाई तो भिक्षा मांगने बाहर गये पर भीमसेन गृह में माता के पास रहे। माता और पुत्र दोनों गृह में बैठे अपने दुख की बातें कर रहे थे कि उसी समय अन्दर से रोने की आवाज आई। तब उस करुणाजनक रुदन को सुनकर कुन्ती अन्दर गई तो क्या देखता है कि स्त्री पुत्र और कन्या को लेकर ब्राह्मण बैठा है, और जोर २ से रोता हुआ इस प्रकार कह रहा है, हाय हाय! मैं बड़ा अभागा हूं, हे प्रिये! मैं बारम्बार तुम से यहां से भाग चलने के लिए कहता था, पर तुमने मेरे कथन को न माना। अब मैं पुत्र के बिना किस प्रकार जीवित रहूंगा। इस प्रकार अपना अपनी कन्या पुत्र और स्त्री का नाम ले ले कर वह रुदन करता हुआ मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तब कुन्ती उनके दुखसे अति दुखित हुइ बड़ी नम्रता से बोली हे बहन तुम क्यों इस प्रकार रुदन करती हो तुम पर कौन सी विपत्ति पड़ी है, सो तुम मुझको कहो मैं तुम्हारा दुख दूर करने का अपने प्राण देकर भी प्रयत्न करूंगी।

तब ब्राह्मणी रोती हुई बोली हे देवी! इस नगर के निकट बक नामक एक राक्षक निवास करता है वही राक्षस इस नगर का राजा है। वह प्रतिदिन आता ह और बारी बारी एक एक गृह से एक एक मनुष्य और एक एक दिनका अन्न खाने के लिये कर लेता है, इस नियम का जो कोई उल्लंघन करता है उसके सारे कुटुंब को वह खा जाता है। कल हमारी बारी है, अब हमने निश्चय किया है कि हम

सब उस राक्षसके पास जावें और एक बारही सारे दुख से छुटकारा पावें ॥

ब्राह्मणी का कथन सुन कर कुन्ती ने कहा हे बहन! तुम राक्षस के भय से दुखी न होवो, मैं तुम सबको इस दुख से छुडाऊंगी। तुम्हारा पुत्र और कन्या दोनों बडे सुशील हैं और तुम्हारे पति तथा तुम्हारे अपने जाने से यह बालक अति दुखी होंगे और रो रो कर मर जाएंगे। इस कारण तुम में से कोई भी वहां न जाओ, मेरे पांच पुत्र हैं उनमें से एक को मैं आज राक्षस के पास भेज दूंगी, उसके जाने से तुम सबकी रक्षा होगी ॥

तब ब्राह्मणी बडी उदास होकर बोली हे देवी! तुम सब हमारे अतिथि हो। अतिथि की पूजा अपने प्राण देकर भी करनी चाहिए, ऐसा वेद शास्त्र और पुराण लिखते हैं, फिर मैं किस प्रकार तुम्हारे पुत्रको राक्षस के निकट भेज सकती हूं। यह सुनकर कुन्ती ने हंसकर उत्तर दिया हे ब्राह्मणी तू डर न, मेरा पुत्र बडा बलवान् है, वह राक्षस को अवश्यमेव मार करके सारे नगर निवासियों का दुख दूर करेगा इससे पहले ही वह एक बडे भयानक राक्षस को मार चुका है, परंतु तुमने यह बात किसी को न कहना, क्योंकि कहने से लोग बड़ा आश्चर्य्य करेंगे। और वह अनेक प्रकार के प्रश्न पूछ पूछ कर हमको तंग करेंगे। इस प्रकार उस ब्राह्मणी और ब्राह्मण को धीरज देकर कुन्ती भीमसेन के पास लौट आई और सारा हाल कह सुनाया।

माता की आज्ञा मानकर दूसरे दिन सूर्य्य उदय होते ही भीमसेन अन्न आदि भोजन सामग्री ले करके बक राक्षस के स्थान पर पहुंचा। वहां जाकर उन्हों ने राक्षस को बड़े कठोर शब्द कहकर पुकारना आरम्भ किया और अन्न आदि भेंट की सामग्री आपही खाने लगे ! यह देखकर राक्षस बड़े क्रोध से दांत कटकटाता हुआ भीमसेन की ओर दौड़ा, और बादल के समान गर्जता हुआ बोला, अरे कौन दुष्ट मेरा अन्न खा रहा है, राक्षस को आते देख कर महा बलि भीमसेनने उसे पकडकर ज़ोर से धक्कादिया। मतवाले हाथियों के समान दोनों टक्करें लडने लगे, दोनों बलियों में भयानक द्वन्द्व युद्ध होने लगा, उनकी रगड से वृक्ष टूट टूट कर गिरने लगे, पृथ्वी डोलने लगी। जब मार खाते २ राक्षस का दम फूल गया तो भीमने उसको ऊपर उठाकर आकाश में घुमाया और बडे बल से भूमि पर पटक दिया और उसकी हड्डीयां चूर २ कर डालीं। तब भयानक चीत्कार करके बकने प्राण छोड दिये ॥

राक्षस की मृत्यु का समाचार नगर में पहुंचा तो लोग मंदिरों में भेंट पूजा लेकर देवताओं को मनाने लगे। चारों ओर से लोग ब्राह्मण के घर आकर पूछने लगे, कि हे ब्राह्मण आज तेरी बारी थी, तूने किस प्रकार बकको मारा, कैसे अपनी रक्षा की तब ब्राह्मण ने सच्ची बातको छिपाकर कहा हे नगर निवासियो ! परमेश्वर सबकी रक्षा करने वाला है, कल हम सब अपने गृह में रो रहे थे, तब एक सूर्य्य के

समान तेजस्वी ब्राह्मण आया और उस ने हमारी रक्षा करने का वचन दिया। उसी ने बक को मारा है, इस में तनिक भी संदेह नहीं ॥

इसके अनन्तर कुछ दिन वहां व्यतीत होने पर एक ब्राह्मण देश देशान्तरों में भ्रमण करता उसी ब्राह्मण के गृह में आकर ठहरा। युधिष्ठिर आदि पांचों भाईयों ने बड़े प्रेमसे उसकी पूजा की जिससे वह अति प्रसन्न हुआ और अपनी देश देशान्तर की सारी यात्रा कहने लगा अनेक देश नगर नदी पर्वत और बनोंका वृत्तान्त कहता हुआ कथा प्रसंग से उसने द्रोण को मारने के लिए राजा द्रुपद के यज्ञ का भी वृत्तान्त सुनाया, तत्पश्चात् त्रैलोक्य सुंदरी द्रौपदी के स्वयंबर का हाल सुनाया। ब्राह्मण की कौतुक से भरी हुई बातें सुनकर पांडवों का चित्त अधीर हो गया, और वह उदास होकर वहां से चलने का विचार करने लगे वह इस प्रकार विचार में मग्न थे कि अकस्मात् महर्षि वेदव्यास जी वहां आगए। उन्होंने भी द्रौपदीके स्वयंबर की तय्यारियों का हाल सुनाया और पांडवों को वहां जाने की सम्मति दी। महर्षि की आज्ञा पाकर वह द्रुपद देश की ओर चले। रास्ते में उत्कोच देशमें धौम्य ऋषि के दर्शन पाकर वह अति प्रसन्न हुए और उन्हीं को अपना पुरोहित बनाकर पाञ्चाल नगर की ओर यात्रा की।

H349.5 J45m H109

ग्यारहवां अध्याय।

द्रौपदी स्वयंबर

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! पांचों पाण्डव धौम्य ऋषि के आश्रमसे चलकर पांचाल नगरमें पहुंचे। वहां पहुंच कर उन्होंने मत्स्यवेध की शर्त पर राजा द्रुपद की कन्या द्रौपदी के स्वयंबर का सारा हाल सुना। तब यह पांचों महावीर धनुषधारी ब्राह्मणों का भेस बनाकर स्वयम्बर के मण्डप में जाकर ब्राह्मणों की पंक्ति में बैठ गये। उस स्वयम्बर में अनेक देशों के राजे महाराजे राजकुमार शूरबीर उस कन्या रत्न के पाने की अभिलाषा में आए हुए थे। दुर्योधन आदिक कौरव भी बडे ठाठ बाट के साथ आए थे, परन्तु उन में से किसी ने भी पांडवों को न पहचाना, कारण कि उनके मन में यह निश्चय था कि पांचों पांडव कुन्ती सहित लाक्षा गृह में जलकर मर चुके हैं। जब सब राजा महाराजा ऋषि मुनि ब्राह्मण सन्यासी और अन्य अतिथि अपने अपने योग्य आसनों पर बैठ चुके तो सब के पीछे श्रीकृष्ण यादव बीरों के साथ में आगए। इस प्रकार सारी स्वयंबर सभा लग जाने पर महाराज द्रुपद अंदर मंडप में आए और उन्होंने सभा के मध्य भाग में जलका एक बडा कुण्ड बनवाया और पास ही एक अत्यंत ऊंचा खंभा गडवाया। उस खंभे के शिखर पर एक स्वर्ण का मत्स्य रखवा दिया। उस मत्स्य के नीचे एक चक्र बडे

वेग से घूमता था। इतना करके राजा द्रुपद ने अपनी भुजा ऊपर उठाकर सारे राजाओं को कहा हे राजाओ राजकुमारो और शूरबीरो! सुनो तुम सब द्रौपदी को जीतने की अभिलाषा से यहां पधारे हो परन्तु द्रौपदी को वही जीतेगा जो इस जल कुण्ड में से देखकर खंभे के शिखर पर रखे हुए मत्स्य की आंखका घूमते हुए चक्र में से बाणका निशाना लगावेगा उसीके कंठमें द्रौपदी जयमाला डालेगी और वही उसका धर्म से पति होगा।

राजा द्रुपदकी प्रतिज्ञा सुनकर अनेक राजा और राजकुमार अपने अपने आसन से उठकर निशाना लगाने लगे, परन्तु निशाना किसी से भी न लगा, वह खंभा इतना ऊंचा था कि कईयों को मत्स्य दिखाई ही न दिया जिनको मत्स्य दिखाई दिया उनको वेग से घूमते हुए चक्र में से उस मत्स्य की आंख दिखाई न दी और जिन्होंने आंख को देख लिया उनका निशाना चूक गया और कई एक तो उस भारी धनुष को उठा कर चढ़ा भी न सके और लज्जित होकर अपने अपने आसनों पर लौट आए। जब कोई भी मत्स्यका निशाना न कर सका और राजाओं से अखाड़ा खाली होगया, तब राजा द्रुपद महा दुःखी होकर बोले, हे भूपतिगण! आज मैंने देख लिया, कि पृथ्वी शूरबीरों से शून्य होगई है, विधाता ने द्रौपदी का विवाह लिखा ही नहीं, ऐसा जान पडता है। हाय! हाय! आज यदि इस संसार में पांडव जीवित होते, तो अवश्य ही

द्रौपदी को इतना दुःख न उठाना पड़ता। महाराज द्रुपद के ऐसे बचन सुनकर ब्राह्मण वषधारी अर्ज्जुन अपने आसन से उठकर एकाएक उस खम्भे के पास आगए। उस समय भगवान् कृष्ण के बिना और किसी ने उसको न पहचाना। तब सब राजाओं के देखते २ अर्ज्जुन ने बड़ी फुर्ति से उस धनुष को उठाया और उस पर बाण जोड़ कर क्षण मात्र में उसको गोल मण्डलाकार करके इस वेग से बाण छोड़ा, कि मत्स्य की आंख को वेध कर वह बाण भूमि पर आगिरा। विप्र-वेष-धारी अर्ज्जुनकी हस्त-लाघवता और लक्ष्य-वेध को देखकर धर्मात्मा राजा लोग, ऋषि, मुनि तथा सन्यासी, ब्राह्मण बड़े हर्ष से शंख बजाने और जोर २ से अपने वस्त्रों को आकाश में लहराने लगे। चारों ओर से जय जयकार होने लगी। तब द्रौपदी का भाई बड़े हर्ष से द्रौपदी को लेकर अर्ज्जुन के निकट आया और गज-गामिनी त्रैलोक्य-सुन्दरी द्रौपदी ने प्रेम में विह्वल हुए हुए नेत्रों के साथ अपनी दोनों भुजाओं को ऊपर उठाकर अर्ज्जुन के कण्ठमें जयमाला डालदी। वैशंपायनजी बोले, हे राजा जनमेजय! यह देखकर शठ और मूर्ख राजा क्रोध से जलने लगे और सब मिलकर अर्ज्जुन की निन्दा करने, तथा उसको अनेक प्रकार से डराने धमकाने लगे, तब महात्मा राजा और ऋषि मुनियों ने उन राजाओं को अनेक प्रकार से समझा बुझाकर शान्त करने की चेष्टा की, परन्तु, वह शठ किसी की बात भी न सुनकर भिखारी

भिखारी कहते हुए अस्त्र शस्त्रों को झनझनाते हुए, अर्जुन पर टूट पड़े। उनकी इस कुचेष्टा को देखकर महाबली भीमसेन को प्रचण्ड कोप चढ़ आया, तब उन्होंने उसी मंडपका एक बड़ा भारी खंभा उखाड़ा और उन राजाओं के झुंड के ऊपर ऐसी मार मारने लगे, जैसे ग्वाला पशुओं को मार २ कर भगाता है। तब तो सब राजा भेड़ों के समान चारों ओर दौडने लगे, कई एक तो वहीं मर गए कईयों की भुजा टांगे और सिर टूट फूट गये, तब घायल हुए हुए राजाओं की हाय हाय की पुकार से सारा मंडप गूंजने लगा। हे राजा जनमेजय! उस दिन भीमके पराक्रम को देखकर दुर्योधनादि कौरवों ने जान लिया, कि पांडव मरे नहीं जीते हैं। तब राजा द्रुपद ने प्रसन्न होकर, द्रौपदी को बडी धूमधाम के साथ पांडवों को अर्पण किया और कन्या के साथ दहेज में असंख्य हाथी घोड़े, रथ, प्यादे, भूषण, वस्त्र तथा रत्न, जवाहर, गौएं, दास, दासियां आदि देकर कृष्ण सहित पांडवों का पूजन किया। इस प्रकार द्रौपदी को जीत कर जब पांडव अपने गृह को गये, तो सहदेव ने सबसे पहले पहुंच कर माता को यह शुभ समाचार सुनाया, कि हे माता! आज हम सब को एक अति सुन्दर सुलक्षणा वस्तु भीख में मिली है। कुन्ती को इस विषय का कुछ भी पता न था, इस करके वह बोली, हे पुत्रो! तुम सारे ही मुझको एक समान प्यारे हो और तुम सबमें परस्पर प्रीति है, सो जो वस्तु आज तुमने प्राप्त

की है, उसको सब मिलकर भोगो। इतने में चारों भाई भी आपहुंचे और माता की यह बात सुनकर बड़े आश्चर्य से चकित हुए। तब माता के कथन को सिरपर धारण करके पांचों ही ने द्रौपदी को धर्मपत्नी बनाया। हे जनमेजय! कुछ काल वहां सुखसे रहकर धृतराष्ट्र के संदेश पहुंचने पर वह सब इन्द्र के समान तेजस्वी माता कुन्ती और द्रौपदी को साथ लेकर इन्द्रप्रस्थ को चले गए।

आदिपर्व समाप्त ।

महाभारत सभा पर्व

पहला अध्याय।

खाण्डव बन दहन

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! एक दिन भगवान् कृष्णजी पांडवों को मिलनेके लिये द्वारका से हस्तिनापुर में आए। श्रीकृष्णको देखकर पांडव बड़े हर्ष को प्राप्त हुए और कुन्ती अर्जुन तथा युधिष्ठिरने उनको बड़े प्रेम के साथ कण्ठ लगाया। भीमसेन ने उनको हृदय से लगाया और नकुल तथा सहदेव ने उनकी चरण बन्दना की। श्रीकृष्ण भगवान् भी उनसे मिलकर अति प्रसन्न हुए और कई मास पर्य्यन्त वहीं सुख पूर्वक टिके रहे। इस प्रकार कुछ काल वहां व्यतीत करने पर एक दिन श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन से कहा, हे अर्जुन गर्मी के दिन हैं, सूर्य्य अपने प्रचण्ड ताप से संसार को तपा रहा है, चलो यमुना के तट पर चलें। तब युधिष्ठिर से आज्ञा लेकर अर्जुन और श्रीकृष्ण जी दोनों अपने मित्रों को साथ लेकर यमुना के तट पर पहुंचे। वहां नाना प्रकार के सुगंधित फूलों वाले बृक्षों से शोभित यमुना के निर्मल और शीतल जल तट पर निवास करके वह परम आनन्द को प्राप्त करने लगे।

एक दिन श्रीकृष्ण और अर्जुन यहां बैठे हुए थे वहां एक ब्राह्मण स्वर्ण के समान कान्ति वाला परम देदीप्यमान

हाथ जोड़ कर सन्मुख आकर खड़ा हो गया। उसको देखकर श्रीकृष्ण जी बोले हे ब्राह्मण तू किस लिये आया है और क्या चाहता है? तब ब्राह्मण ने बड़े दीन भाव से उत्तर दिया महाराज मैं ब्राह्मण हूं, भिक्षा प्राप्ति के लिये आपके पास आया हूं। श्रीकृष्ण बोले! हे विप्र धन धान्य अन्न और संसार के सब पदार्थ ब्राह्मणों के लिये हैं, जिस वस्तु की इच्छा होवे सो तुम कहो। तब ब्राह्मण ने कहा हे महाराज! मैं अग्नि हूं, वायु देवता ने बड़ा भारी यज्ञ किया था, उस यज्ञ में उसने एक वर्ष पर्यन्त निरंतर घृत की धारा मेरे अन्दर डाली थी। वह धारा हाथी की सूंड के बराबर मोटी थी। उसे खा खाकर मुझे अजीर्ण हो गया है और अब मैं इसी रोग से मर रहा हूं, अब आप जिस किस तरह मेरी रक्षा करें। अग्नि देवता की यह बात सुनकर श्रीकृष्ण जी बोले आपका यह अजीर्ण रोग किस उपाय करके दूर होवेगा? अग्नि देवता ने उत्तर दिया,हे नाथ! यदि इस समय इन्द्र के खांडव बन को भस्म करके उसमें उगी हुई बनस्पतियों तथा जीव जन्तुओं का भक्षण करूं, तो मेरा यह रोग दूर हो सकेगा। तब श्री कृष्ण जी ने अर्जुन से कहा हे पार्थ! याचक को द्वार पर आए देख कर जो उसको खाली लौटा देता है उसके सब पुण्य क्षीण होजाते हैं सो तू शीघ्र ही अग्नि देवताकी इच्छा पूर्ण कर तब अग्नि देवता बोले हे श्रीकृष्णजी! मैं इस खांडव बन को स्वयंमेव भस्म कर सकता हूं, परन्तु इसके अन्दर इन्द्रका

परम मित्र सर्पों का राजा तक्षक रहता है, सो जब २ मैंने इस बनको दग्ध करनेका प्रयत्न किया तब २ ही इन्द्र ने जल वर्षा कर मेरा मनोरथ सिद्ध न होने दिया इस कारण मैं आपकी सहायताकी इच्छासे आपके पास आया हूं आप अस्त्र लेकर नतो इन्द्र को वर्षा करने दें और नाही किसी जन्तुको भागने दें। यह बात सुनकर अर्जुनने कहा हे अग्नि हम आपका मनोरथ अवश्य पूरा करेंगे परन्तु हमारे पास न तो कोई ऐसा अस्त्र ही है जो चिरकाल हमारी भुजाओं का वेग सहार सके और नां ही कोई ऐसा दिव्य रथ हैजिस पर चढ़कर हम बहुत चिर युद्ध कर सकें, भगवान् कृष्ण के पास भी कोई ऐसा अस्त्रशस्त्र नहीं है जो उनके चलाने के योग्य हो। अर्जुन का वचन सुनकर अग्नि ने वरुण देवता को स्मरण किया और उनसे सोमराज का प्रचंड गांडीव धनुष और सदा बाणों से भरे रहने वाले दो तरकश और अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित वायुवेग वाले घोड़ों वाला दिव्य रथ अर्जुन को दिया, तथा भगवान् कृष्ण को सुदर्शन चक्र नाम का एक दिव्य अस्त्र दिया। वैशम्पायन जी बोले हेजनमेजय! इन दिव्य अस्त्रोंको लेकर श्रीकृष्ण और अर्जुन अति प्रसन्न हुए और बन के मुख पर धनुष तथा चक्र लेकर खड़े हो गए। तब अग्नि देवता अपनी काली करालीआदि सातों जिह्वाओंसे बनको जलाने लगे। प्रलय के समान भयानक दृष्य हो गया, बनमें जिधर देखो अग्नि की आकाश को छूने वाली धधकती हुई शिखायें

उठ रही थीं, सारा आकाश लाल हो गया था, धुएं और आग की लपेट में आए हुए सिंह भेड़िये रीछ हाथी तथा अन्य लाखों जन्तु विकराल स्वरों से चीखते चिल्लाते अन्धे होकर बनके चारों ओर भागने लगे। परन्तु अर्जुन के गांडीव धनुष और कृष्णके सुदर्शनचक्रने किसी को भागने नहीं दिया और वह सब दग्ध होकर अग्नि के मुख में पड़ गये, प्रलयकाल अग्नि वायु की सहायता पाकर काले मेघों के समान धूंआं छोड़ता हुआ विकराल गर्जना करता हुआ फुंकारे छोड़ने लगा। जब अग्नि की लपटें आकाश को अपने प्रचण्ड ताप से जलाने लगीं तो देवता भी पीड़ित होकर हाहाकार करने लगे। यह देखकर इन्द्र को बड़ा क्रोध चढ़ आया और वह हाथी की शुण्ड के समान जल की धारायें बरसाने लगा। जल की धारा खांडव बन के ऊपर पडती देखकर अर्जुन ने अपने बाणों से आकाश को ढक दिया, जिससे एक भी विन्दु अग्नि पर न पड़ सका और उस बनमें रहने वाले राक्षस पिशाच दैत्य दानव तथा जीवजन्तु सब के सब जल कर मर गए। हे राजन्! इन्द्र की बहुत चेष्टा से एक मात्र तक्षक का पुत्र बचकर भाग गया। तक्षक के गृह में मय नाम का एक दानव रहता था। वह प्रचण्ड अग्नि के संताप से घबरा कर इधर उधर भागने लगा परन्तु चारों ओर आग्नि ही अग्नि होने से वह चिल्ला चिल्लाकर पुकारने लगा हे कृष्ण! हे अर्जुन!! रक्षा करो रक्षा करो। तब अर्जुन ने दया करके उसको बाहर निकाल

दिया। मय दानव अग्नि से बचकर अर्जुन और श्रीकृष्ण के सामने कृतज्ञता के बचन कहने लगा और उनको एक अति सुन्दर दिव्य अनेक आश्चर्य्यों से भरी हुई सभा तय्यार कर देने का बचन दिया।

इस प्रकार खांडव बन को दग्धकरके अग्नि शान्त हुआ और अजीर्ण रोग को दूर करके श्रीकृष्ण और अर्जुन को आशीर्वाद देकर वहां से चला गया। श्रीकृष्ण और अर्जुन भी गांडीव धनुष दिव्य रथ और सुदर्शनको प्राप्त करके बड़े हर्ष पूर्वक इन्द्रप्रस्थ को चले गये। कुछ काल वहां व्यतीत करके श्रीकृष्णजी युधिष्ठिर से आज्ञा लेकर द्वारकापुरी को विदा हुए और शेष पांडव सुखसे हस्तिनापुरमें निवास करने लगे जहां उनको धृतराष्ट्र ने आधाराज्य बांटकर देदिया।

दूसरा अध्याय।

राजसूय यज्ञ।

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! एक समय नारदजी चौदह लोकों में भ्रमण करते हुए इन्द्रप्रस्थ में युधिष्ठिर के पास आए। महर्षि नारद को आए देखकर युधिष्ठिर ने उठकर उनका आदर सत्कार व पूजन किया और उनके आगमन का कारण पूछा। तब नारदजी ने कहा, हे युधिष्ठिर! आपके पिता पाण्डु ने मृगरूप में भोग करते हुए कर्णमाल मुनि को बाण से मार दिया था, उस मुनिके शापसे अब वह नर्क में बहुत दुःख पारहे हैं। यह सुनकर युधिष्ठिर को अतिदुःख हुआ, उन्होंने नम्रतापूर्वक

हाथ जोड़कर कहा, हे प्रभो! यदि हमारे पिता ही नर्क में पड़े हैं, तो फिर हमारा जीना किस काम का ? हे भगवान्! आप कृपा करके ऐसा उपाय कहें, जिसके करने से हमारा पिता नर्कसे छुटकारा पाए। तब नारद जी बोले, हे राजन् आप शीघ्र ही राजसूय यज्ञ करें, उस यज्ञ के फल से आपके पिता शीघ्र ही नर्क से छूटकर स्वर्ग को प्राप्त करेंगे, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। युधिष्ठिर बोले, हे ऋषिराज! उस यज्ञ में किस देवता की पूजा की जाएगी और यज्ञ किस विधि से किया जाएगा ? नारदजी बोले, हे राजन्! बारह योजन प्रमाण अर्थात् अठतालीस कोस लम्बा वा चौड़ा सुन्दर मण्डप बनवाकर उसमें देश देशान्तर से आए हुए राजा लोगों को बैठाइये, धनके बड़े बड़े खजाने उसमें खर्च करने होंगे, अठारह सहस्र ब्राह्मणों को भोजन वस्त्र और धन देकर प्रसन्न करें, ऐसा करने से तेरा मनोरथ सिद्ध होवेगा और कई सहस्र राजा मगध देश के राजा जरासन्ध की कैद में पड़े हुए मृत्यु के दिन गिन रहे हैं, उन सब को छुड़ाना होगा और द्वारकापुरी से श्रीकृष्ण भगवान् को बुलाना होगा, उनके आने से आपके सब काम पूरे होंगे। देवर्षि नारद की बात सुनकर युधिष्ठिर जी ने अपने भाईयों से पूछा, हे महाबुद्धिमान् तेजस्वी भाइयो! यह कार्य्य बहुत बड़ा है, अब इसको किस प्रकार पूरा करना चाहिये? तब अर्जुन ने नम्रता पूर्वक उत्तर दिया, हे महाराज! आप चिन्ता न करें, श्रीकृष्ण जी को

द्वारका से बुलाएं, उनके आने पर सब कार्य्य अपने आप होजाएंगे । मैं लंकापुरी में जाकर स्वर्ण लाऊंगा, मण्डप नकुलजी पास खड़े होकर बनवाएंगे, सहदेवजी द्वारका जाकर श्रीकृष्ण को लावेंगे । अर्जुनकी बात सुनकर भीम ने कहा, हे राजन्! जिसके बंदीखानेमें पड़े हुए कई सहस्र राजा लोग दुःख पारहे हैं, उस पापी जरासन्ध को मारने का काम मैं अपने सिर लेता हूं। तब युधिष्ठिर ने प्रसन्न होकर कहा, हे भाई! यह सब काम पीछे करने के योग्य हैं, मेरी सम्मति में सब से पहले श्रीकृष्ण को द्वारका से लाना उचित है, वह बड़े बुद्धिमान् चतुर और दूरदर्शी हैं । तब सब भाइयों ने युधिष्ठिर की सम्मति की प्रशंसा की और अपने अपने कार्य्योंके पूरा करने की सामग्री इकट्ठी करने में लग गये। सहदेव ने शुभ मुहूर्त में द्वारकापुरी को प्रस्थान किया । अनेक देशों और बनोंको पार करके सहदेवजी द्वारका पहुंचे । वहां श्रीकृष्ण के दर्बारकी ड्योढ़ी पर पहुंचकर उन्होंने द्वारपाल के हाथ अपने आने का समाचार भगवान् कृष्णके पास भेजा । तब श्रीकृष्ण भगवान् ने द्वारपाल को आज्ञा दी, कि तुमजाकर सहदेव को पूछो, कि आप किस कारण से यहां आए हैं । द्वारपाल ने जाकर उसी प्रकार सहदेवको पूछा जिसका उत्तर सहदेव ने भली प्रकार दे दिया, तब आज्ञा हुई, कि ले आओ । सहदेव को मिलकर श्रीकृष्णजी अति प्रसन्न हुए और राजसूय यज्ञका सारा वृत्तान्त सुनकर उसके साथ हस्तिनापुर

पहुंचे। श्रीकृष्णजीको आए देखकर युधिष्ठिर आदि पांडवों के आनन्द का पारावार न रहा। अच्छे २ मणि-मुक्ताओं की भेंट दे करके युधिष्ठिर ने भगवान् को यज्ञ की सारी सामग्री दिखाई और बड़े प्रेम से बोले, हे कमलनयन! आपके सहारे ही हमने यज्ञ आरम्भ किया है, आप कृपा करके अपनी कल्याण-कारी सम्मति देकर हमें कृतार्थ करें। तब कृष्ण भगवान् ने उत्तर दिया, हे राजन्! आप के समान इस पृथिवी पर दूसरा कोई राजा धीर, वीर, धर्मात्मा और विक्रमी नहीं है, आपकी यज्ञ की इच्छा उचित ही है आप चक्रवर्त्ती सम्राट बनने के योग्य हैं इस में तनिक भी संदेह नहीं। परन्तु राजन्! इस यज्ञ में एक बड़ा विघ्न पड़ने की आशंका है, उसको पहले दूर करके फिर यज्ञ करें। हे राजन्! वह विघ्न जरासन्ध नामक मगध का राजा है। इस समय उसके बलके सामने ठहरने वाला कोई राजा नहीं है, सहस्रों छोटे २ राजाओं ने उस के आगे हारकर सिर निवा दिया है और उसकी अधीनता स्वीकार करली है और जिन्होंने अधीनता स्वीकार नहीं की उनको पकड़कर उसने अपने बन्दी घर में डाल दिया है। उसके बिना मारे आपका यज्ञ पूर्ण नहीं हो सकता। हे राजन् जब से उसके जमाई दुष्ट कंस को मैंने मारा है तब से वह हम पर अति क्रुद्ध है और उसी के भय से भयभीत होकर यादवों समेत मैं द्वारका पुरि में निवास करता हूं। इस कारण हे महाराज! यदि चक्रवर्ती राजा

बनना चाहते हो तो पहले उसको मारो और यदि उसके मारने की शक्ति नहीं रखते तो चक्रवर्ती बनने की इच्छा को दूर करो। श्रीकृष्ण की बात सुनकर युधिष्ठिर कुछ व्याकुल से होकर बोले हे ब्रजराज! आपने जो कुछ कहा है सत्य है, जरासंध के पराक्रम को इस से पहले किसी ने मुझे नहीं सुनाया, अब आप ही कहें कि किस प्रकार इस विघ्न को दूर किया जाए तुम नीति में चतुर और दूरदर्शी हो जिस प्रकार भी हो सके भीम और अर्जुन को साथ लेकर इस कंटक को दूर करो। युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर भीम और अर्जुन को साथ लेकर श्रीकृष्ण मगध देश की ओर चले। कुरु और जांगल देशों को पार करके वह मगध में पहुंचे। वहां पहुंचकर श्रीकृष्ण की सम्मति से तीनों ने ब्राह्मणों का रूप बनाया और नगर के अन्दर चले गये। रास्ते में एक बड़े चबूतरे पर तीन बड़ी २ दुंदभियां पड़ी थीं, जोकि एक राक्षस की खाल उतार कर उससे मढ़ी हुई थीं। वहां पहुंचकर अर्जुन और भीम ने चबूतरा तोड़ डाला और दुंदुभियों को फाड़कर वह तीनों राजभवन के द्वार पर पहुंचे। देदीप्यमान और तेजस्वी मुखों वाले इन तीनों को ब्राह्मण समझ कर किसी द्वारपाल ने इनको न रोका और यह बे रोक टोक कई ड्योढ़ियों को पार करके महाराज जरासन्ध के सामने उपस्थित हुए। महाराज इन तीनों ब्राह्मणों को देखकर बड़ी श्रद्धा से उठ खड़े हुए और जल तथा पूजा की सामग्री से उनकी अभ्यर्थना की। यह देख कर

श्रीकृष्णजी बोले हे राजन्! आज हमारा व्रत है इस कारण अर्ध रात्रि से पहले हम कोई वस्तु ग्रहण नहीं कर सकते आप आधी रात के पश्चात् हमारे पास पधारें तब हम फलाहार ग्रहण करेंगे। जरासन्ध ने यह सुन कर तीनों को यज्ञ शाला में बड़े सत्कार से ठहराया और आधी रात्रि बीत जाने पर फलाहार लेकर फिर यज्ञशाला में पहुंचे। परन्तु इस बार भी उसकी पूजा को ग्रहण न करके श्रीकृष्ण जी ने कहा, हे राजन्! हम तुम्हारी पूजा को ग्रहण नहीं कर सकते, क्योंकि हम ब्राह्मण के रूप में वास्तव में क्षत्रिय हैं। तुमने सहस्रों राजाओंको बन्दी करके लाखों मनुष्यों का बध किया है, तेरे इस घोर पाप को देखकर महाराजा युधिष्ठिरने तेरे मारनेके लिये हमें भेजा है, इसलिए या तो सब राजाओंको छोड़कर महाराज युधिष्ठिरकी आधीनता स्वीकार करो अथवा हमसे युद्ध करो। श्रीकृष्ण की बात सुन कर जरासन्ध कड़ककर बोले, हे यादवनाथ! भला ही हुआ जो तुम यहां आगए, आज तेरे इन दोनों साथियों सहित तुमको मारकर अपने जमाई का बदला चुकाऊंगा, सो, हे गोपसखा! तुम तीनों मिलकर मेरे साथ युद्ध करो, अथवा एक एक करके लड़ो, जैसा तुमको रुचे करो, मैं सब प्रकार से तैय्यार हूं। भगवान् कृष्ण बोले हे राजन्! तीन में से जिसके साथ तुम्हारी इच्छा हो युद्ध करो, हम सब तैय्यार हैं। तब जरासंधने महांकाय भीमसेनको अपने जोड़का देखकर ललकारा। इसके पश्चात् दोनों वीर मल्ल

युद्ध करते हुए एक दूसरे से भिड़ गए, नाना प्रकार के दाव पेच करते हुए वह एक दूसरे को धौल मारने लगे। वज्र के समान पड़ती हुई उनकी धौलों से यज्ञ शाला कांपने लगी। अर्ध रात्रिके अन्धकारमें वह दोनों मतवाले हाथियों की तरह टक्करें लड़ने लगे। कभी सांडों की तरह एक दूसरे को धकेलकर पीस देने की इच्छा से वह जोर लगाते और कभी थक २ कर लंबे भयानक सांस लेने लगते इस प्रकार क्रुद्ध सिंहोंकी तरह गर्जते हुए वह भयानक युद्ध करने लगे हे राजन्! सारी रात और दूसरे दिन तक यह भयानक युद्ध होता रहा। इस प्रकार लड़ते २ जरासंध भीमसेन के वज्र समान घूसों और टक्करों से घायल हुआ २ थकने लगा। तब कृष्ण उसको थका देखकर व्यंगसे बोले हे भीम! तेरा शत्रु बहुत थका हुआ है अब उसे अधिक पीड़ा पहुंचाना उचित नहीं। श्रीकृष्ण के इस भेद भरे वचनको सुनकर भीम समझ गये कि अब शत्रु को मार डालने का समय आगया है। उन्हों ने उस समय क्रोधसे गर्जकर पूरा बल लगाकर थकान से मारे हुए जरासंध को ऊपर उठा लिया और अनेक बार घुमाकर पृथ्वी पर पटक दिया और उस की एक जांघ पांओं से दबाकर दूसरी जांघ को जोरसे ऊपर को झटका दिया और उस महा पापी अत्याचारी जरा-संधको चीर कर दो फांक कर दिया। इस प्रकार रक्त के फुवारे छोड़ते हुए उसके मृतक शरीर को वहीं छोडकर तीनों वीर प्रसन्न होकर उस बंदी गृहमें पहुंचे जहां सहस्रों

राजा कैद में पड़े सड़ रहे थे। वहां जाकर जितने राजा कैद थे सबको एक बारगी छोड़ दिया। राजा लोग कृष्ण क हाथों मुक्ति पाकर बड़े प्रसन्न हो करके बोले हे वासुदेव! आपने हमको मृत्यु के मुखसे निकालकर हमें प्राण दान दिये हैं इसके बदले में हम आपका क्या उपकार करें सो कहिए। तब श्रीकृष्ण जी बोले हे भूपति गण! महाराज युधिष्ठिर जी राजसूय यज्ञ करने वाले हैं, इस महान् यज्ञमें आप सब उनकी सहायता करें। तब सब राजाओं ने सहर्ष महाराज युधिष्ठिरकी आधीनता स्वीकार की और यज्ञमें सम्मिलित होने का वचन दिया। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण भगवान् ने जरासंध के पुत्रको राजतिलक देकर उसे जरासंध की गद्दी प्रदान की। इस प्रकार एक महान् विघ्नको दूर करके अर्जुन भीम और कृष्ण रथ पर बैठकर युधिष्ठिर के पास पहुंचे और उनको जरासंध के मारने का सारा वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कह सुनाया जिसे सुनकर युधिष्ठिर अति प्रसन्न हो कर बारंबार भीम अर्जुन और कृष्णकी स्तुति करने लगे। इसके पश्चात् अपने राज्य को दृढ़ करने और अपने अधीन राजों से कर लेकर राजसूय यज्ञ के लिये बहुत सा धन एकत्र करने के विचार से युधिष्ठिर ने चारों भाईयों को उत्तर दक्षिण पूर्व और पश्चिम दिशा में दिग्विजय करने के लिए भेजा। अर्जुनने उत्तर दिशामें जाकरराजा भगदत्तको राजा वृहंत को और सारे कश्मीर देश को अपने वशमें किया। भीमसेन ने पूर्व दिशामें जाकर विदेह पांचाल और चेदि

राज शिशुपाल तथा कौशलराज, बृहद्बल, काशीराज तथा अन्य अनेक राजाओं से रत्न चन्दन अगर वस्त्र मोती मणियां और बहुत सा रत्न स्वर्ण धन लेकर यज्ञ की सामग्री एकट्ठी की। सहदेव ने मथुरा के राजा मत्स्य को किष्किंधा वानर नरेशों को मैत्री और युद्ध करके अपने वश में किया और बहुत सा धन संचय किया नकुल ने काठियावाड़ गुजरात और सिन्ध के निकट के देशों को युद्ध में हराया तथा और बहुत से पश्चिम के राजाओं से अतुल संपत्ति प्राप्त करके राजकोष को भर दिया। इस प्रकार चारों भाईयों की विजय से प्रसन्न होकर युधिष्ठिर ने यज्ञ के लिए एक विचित्र राजसभा बनाने के लिए मय दानव को संदेश भेजा, युधिष्ठिर का संदेश पाकर मय दानव अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार दिव्य सभा के बनाने के लिए तैय्यारियां करने लगा सभा को सजाने के लिए तथा अनेक प्रकार के रत्नों की प्राप्ति के लिए वह कैलाश के उत्तर में मैनाक पर्वत के निकट दानवों के देश में एक बड़े पर्वत पर पहुंचा। हे राजन् उस पर्वत पर विन्दु नाम का एक अति रमणीक सरोवर था। उस सरोवर पर पूर्वकाल में दानवों ने एक बड़ा भारी यज्ञ किया था। उस यज्ञ मण्डप को उन्हों ने लोक लोकान्तर के आश्चर्य्य जनक समान से रचा था, वह सब समान वहीं रखा था, वहां से अपनी आवश्यकता के अनुसार सामग्री लेकर मय दानव इन्द्र प्रस्थ में आया। और शुभ मुहूर्त देखकर पांच सहस्र हाथ लंबा चौड़ा सभा

मंडप बनाया। उस मंडपमें देवताओं दैत्यों और दानवों के ढंगके बहुत ऊंचे स्वर्णमय खंभे बनाए और नाना प्रकार की मणियों से जड़े हुए झिलमिल २ करते हुए छत्तों पर वितान लगाए। सभा के मध्य में बड़ा ही मनोहर स्फटिक की सीढ़ीयों वाला एक विचित्र सरोवर बनाया तथा और अनेक प्रकार के दिव्य दर्शनीय स्थान बनाये जिसको देख कर देखने वालों की बुद्धि चकित हो जाती थी। इस प्रकार दिन रात लगा कर चौदह मास में वह भवन तैय्यार हुआ हे राजन्! ऐसे सभा भवनमें स्वर्ण और हीरों से जड़े हुए ऊंचे सिंहासन पर बैठकर महाराज युधिष्ठिर धृतराष्ट्र के दिए हुए आधे राज्य को बढ़ाने के लिए और चक्रवर्ती राजा बनने के लिए राजसूय यज्ञ की तैय्यारियां करने लगे।

तीसरा अध्याय।

शिशुपाल बध।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! इस प्रकार यज्ञ की सब तैय्यारी पूरी करके युधिष्ठिर जी ने सब राजों ऋषियों तथा ब्राह्मणोंको निमंत्रण भेज दिया, जिसे स्वीकार करके सब लोक इन्द्र प्रस्थ में पहुंचे। उस यज्ञ में अठासी हजार ऋषि सम्मिलित हुए ब्राह्मणों और आचार्य्यों में महर्षि वेदव्यास जी, भारद्वाज जी, गौतम जी, सुमन्त जी, अत्रि, वशिष्ठ, च्यवन, देवल, कण्व, कश्यप, मैत्रेय, विश्वामित्र, भृगु, वामदेव, जैमिनी, पराशर, याज्ञवल्क्य, गर्ग, वैशंपायन, धौम्य परशुराम और मधुच्छेद आदिक बड़े २

मुनीश्वर आए और युधिष्ठिर जी के बुलाने पर गुरु द्रोणाचार्य्य, भीष्म पितामहां तथा कृपाचार्य्य जी पधारे। इनके अतिरिक्त और भी हजारों ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र तथा स्त्रियां आई। युधिष्ठिर के भाई बंधुओं में से स्वयं महाराज धृतराष्ट्र जयद्रथ तथा दुर्योधन अपने भाईयों सहित पधारे। हे राजन्! ऐसे आश्चर्य्य भरे दिव्य यज्ञ मण्डप को देखकर सब राजा लोग विस्मित हो गए। ऐसा सुन्दर मंडप उन्होंने आज तक नहीं देखा था। जब सब लोग आगये तब युधिष्ठिर जी ने नम्रता के साथ यज्ञ में करने योग्य कर्त्तव्य उनको बांट दिये। दुःशासन को भोजन बरताने के काम पर लगाया। अश्वत्थामा को ब्राह्मणों की सेवा पर, संजय को राजाओं की अगवानी पर, कृपाचार्य्य को दान दक्षिणा देने पर, धृतराष्ट्र जयद्रथ और सोमदत्त यह गृहपति बने और राजा दुर्य्योधन राजाओं के उपहार संग्रह करने पर नियुक्त हुए। भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य्य जी सब कार्य्यों को देख रेख करने लगे। जब सब काम बांट चुके तो महाराज युधिष्ठिर जी ने नारद मुनि से पूछा हे महर्षि यज्ञ के आरंभ होने से पहले सर्व श्रेष्ठ क्षत्रिय को अर्घ्य देना शास्त्रों में लिखा है, आप चौदह लोक और नौ खंड पृथ्वी पर घूमने वाले हैं सो हे भगवन् आप ही बतलाएं कि इस समय संसार के संपूर्ण क्षत्रियों में श्रेष्ठ कौन इस अर्घ्य को पाने योग्य है। तब नारद जी बोले हे राजन्! मैं तो सोलहकला संपूर्ण भगवान् कृष्णही को इस अर्घ्य के योग्य समझता हूं।

नारद जी के कथन को सुन कर सब ने भगवान् कृष्ण की जय बुलाई और यज्ञकी पूर्ति की कामना से उनको अर्घ्य दिया गया। भगवान् कृष्ण की पूजा देखकर देवता ऋषि मुनि ब्राह्मण और सब राजे महाराजों ने उनकी पूजा की। परंतु चेदि का राजा शिशुपाल इससे बहुत ही बिगड़ा। क्रोध में आकर वह भरी सभामें खडा होकर कृष्णको और भीष्म पितामह आदिक को दुर्वचन कहने लगा। उस ने कहा हे भीष्म तुमने कौन से गुण इस ग्वाले में देखे हैं इस ने अपने मामा कंस का अन्न खाया और उसी को मार डाला, स्त्रियों में रत रहनेवाला व्यसनी व्यभिचारी कृष्ण अर्घ्य के योग्य नहीं, इसको अर्घ्य देकर सब राजाओं का अपमान किया है, यदि यह अपने आपको बलवान समझता है तो मेरे सामने आवे मैं अभी इसका सिर काटकर इस अपमान का बदला लेता हूं। यह कहकर वह तलवार घुमाता हुआ कृष्ण को ललकारने लगा। शिशुपालके ऐसे दुर्वचन सुनकर भगवान् कृष्ण सब राजाओं के सामने खड़े होकर बड़ी नम्रता से बोले हे राजाओ! यह यादवी पुत्र हमारा बड़ा शत्रुहै, इस दुष्ट को यादव कभी दुख नहीं देते परन्तु यह सदा उनकी बुराई करता है। जब हम प्राग्ज्योतिषपुर में गए तब इसने द्वारका में आग लगा दी। जब भोजराज रैतक पर्वत पर क्रीड़ा कर रहे थे तब इस पापी ने उनको मार डाला। मेरे पिता के यज्ञ में विघ्न डालने के लिए इस पापी ने अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को चुरा लिया, सौवीर देश को जाती हुई बभ्रु

की स्त्री को इस दुष्ट ने धोखे से हर लिया, और अपने मामा की कन्या को भी छल से इस ने चुराया। परन्तु हे राजा लोगो! इतने पाप करने पर भी इस पापी को मैंने क्यों नहीं मारा, सो इसका कारण सुनो, इसकी माता ने मुझ से वर मांगा था कि इस के सौ अपराध में क्षमा करूंगा, मैं उस वर की प्रतिज्ञा में बांधा हुआ इस को क्षमा करता रहा, परन्तु अब इस के अपराध सौ से ऊपर हो गए हैं, अब तुम्हारे सामने इसको मारूंगा। ऐसा कह करके भगवान् कृष्ण ने क्रोध से उस पर सुदर्शन चक्र छोड़ा और बिजली की चमक के समान तुरन्त ही उसका सिर काट लिया। शिशुपाल को मरे देखकर जो उसके पक्ष के राजा थे वह भयभीत होकर इधर उधर छिपने लगे। ऋषि महर्षियों और शेष सब भूपालों ने कृष्ण की प्रशंसा की। इस के पश्चात् शिशुपाल का दाह कर्म करके युधिष्ठिर ने उसके पुत्रको चेदि राज्य का राजतिलक दिया इस प्रकार शिशुपाल का बध करके महाराज युधिष्ठिर ने उस महान राजसूय यज्ञको सुख से पूर्ण किया। जब यज्ञ समाप्ति हो गया तो सब राजे अपने अपने देशों को लौट गये। सब के चले जाने के पश्चात् श्री कृष्ण जी द्वारकापुरी को गये, परन्तु दुर्योधन और शकुनि उस दिव्य सभा को देखने के लिए पीछे रहे। हे राजन्! वहां रहकर दुर्योधन ने एक एक करके सारे विचित्र पदार्थों को देखा। एक बार उसने सभा के मध्य में एक बिल्लौर के बने हुए स्थल को देखा जिस के आस पास नाना प्रकार के

रत्नों के बने हुए कमल फूल पौदे और वृक्ष लगे थे। उसको जल का सरोवर समझ कर दुर्योधन ने अपने वस्त्र उतार दिये और स्नान करने के लिये पांव रखा ही था कि उस का पांओं फिसल गया और वह औंधे मुख गिर पड़ा जिस से उसका मन बुरा होगया, इस के पश्चात् एक दिन एक जल सरोवर में जो कि इस प्रकार बनाया गया था कि स्थल प्रतीत होता था, सचमुच स्थल समझ कर चलता हुआ गिर पड़ा, उसे गिरता देखकर महाबली भीमसेन द्रौपदी तथा अन्य दास लोग हंस पड़े। फिर एक बंद हुए हुए द्वार से टकरा कर उसके मस्तक पर बड़ी चोट लगी। इस प्रकार अनेक स्थानों पर धोखा खाकर दुर्योधन अति लज्जित हुआ और क्रोध से लंबे लंबे सांस लेने लगा। उसको इस प्रकार दुखित देखकर शकुनि बोला हे राजन्! किस कारण आप दुखी हुए २ लंबे सांस लेते हो, सो मुझे कहो। तब दुर्योधन बोला हे मामा! कौनसी बात है जो तुम नहीं जानते, भरी सभा में भीम और द्रौपदी की घृणा युक्त हंसी मेरे कलेजे को बाण की तरह चीर कर निकल गई है, अर्जुन ने अपने शस्त्र बल से सारी पृथ्वी को जीत लिया है, संसार भर का ऐश्वर्य्य आज युधिष्ठिर के पांओं चूम रहा है, जिसे पाकर इनके अभिमानका कुछ ठिकाना नहीं, यज्ञ के आरंभ में कृष्ण ने शिशुपाल का सिर काट लिया परंतु किसी राजा के अंदर इतनी शक्ति न निकली कि वह शिशुपाल के पक्षकी बात करता। पांडवों के ऐश्वर्य्य तेज और प्रताप को देख कर

मेरा हृदय रेते में पड़ी हुई मछली के समान तड़प रहा है दुर्य्योधन की बात सुनकर शकुनि ने उसको धीरज देते हुए कहा हे वत्स ! तेरा कथन सत्य है, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, युधिष्ठिर और कृष्ण आज संसार में सब से अधिक प्रताप वाले हैं द्रुपद जैसे अनेक राजा उन के सहायक हैं, शस्त्र बल से उनको जीतना असंभव है, परन्तु मेरे पास उनको जीतने का एक सहज उपाय है। हे दुर्य्योधन ! युधिष्ठिर जूएका बड़ा प्यारा है, पर वह खेलना नहीं जानता। मैं जूए में बड़ा चतुर हूं पांसे फैंकने में मेरे समान दूसरा कोई मनुष्य नहीं है, सो यदि धृतराष्ट्र को कहकर तू जूए के लिये युधिष्ठिर को निमंत्रण दे तो मैं एक ही दिन में सारा राज पाट धन दौलत जीतकर तुमको दूंगा। इस प्रकार विचार करके दुर्योधन शकुनि सहित हस्तनापुर में लौटा। तब एक दिन समय पाकर शकुनि महाराज धृतराष्ट्र के पास जाकर बोला, हे राजन् ! दुर्योधन बड़ा दुर्बल होगया है, उसका मुख पीला दीन और चिंता ग्रस्त रहता है, आपको उसकी सुधि लेनी चाहिये। शत्रुओं ने उसको अति दुःख दिया है, ऐसा प्रतीत होता है, राजन् ! ज्येष्ठ राजकुमार की शीघ्र ही सुधि लेवें। तब धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को बुला कर बड़े प्यार से पूछा, बेटा ! शकुनि के मुख से पता लगा है कि तुम बड़े दुबले पतले होगए हो,, तुम्हारा मुख चिन्ता से पीला होगया है। हे राजकुमार ! संसारका सारा ऐश्वर्य्य तेरे अधीन है, भाई बंधु दास और अन्य मंत्री मंडल सब

तेरा भला चाहते हैं, फिर तेरे दुखी होने का क्या कारण है, सो तू मुझे बता। तब दुर्य्योधन दीर्घ श्वास छोड़ता हुआ बोला हे तात! युधिष्ठिर के तेज प्रताप और ऐश्वर्य्य को देख कर मेरा मन ईर्षा की अग्नि से जल रहा है, इस राजसूय यज्ञ में देश देशान्तर के राजाओं ने जितने मणि रत्न स्वर्ण चांदी वस्त्र और दिव्य पदार्थ युधिष्ठिर की भेंट किये हैं, मैंने अपने नेत्रों से कभी देखे भी नहीं, हे राजन्! संसार भर के राजाओं ने जैसा उसका आदर किया है, उसे देखकर मुझे ज्वर सा हो रहा है, हे राजन्! मेरा मन जल रहा है, उसकी महिमा और अपनी हीनता देखकर मुझे दो ही प्रकार से शान्ति हो सकती है, या तो उसका राज्य छीन लूं अथवा मर जाऊं तीसरा कोई उपाय नहीं है। हे तात! मामा शकुनि जूआ खेलने में बड़े चतुर हैं, यह उसका सारा राज्य और ऐश्वर्य्य जीतने में समर्थ हैं यदि आप मेरा जीवन चाहते हैं तो इनको युधिष्ठिर के साथ जूआ खेलने की आज्ञा दें, अन्यथा मेरे मरने का शोक सहारने के लिए उद्यत हो जावें। यह सुन कर धृतराष्ट्र ने कहा हे बेटा! महात्मा विदुर हमारे महा मंत्री हैं, उनके ही हाथ में राज्य की बागडोर है, उन से सलाह लिये बिना हम कुछ नहीं कर सकते तब दुर्य्योधन अति निराश होकर बोला हे पिता! विदुर अवश्य ही आपको जुआ खेलने से रोकेगा। परन्तु मैं सत्य कहता हूं कि मैं विष खाकर प्राण दे दूंगा, फिर आप विदुर के साथ भतीजों का दास बनकर इस राज्य का सुख भोगना! हे जनमेजय!

पुत्र के समान प्यारी वस्तु जगत् में दूसरी नहीं होती, दुर्य्योधन के ऐसे वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने उसको धीरज देने के लिए उसकी बात को स्वीकार कर लिया और दास जनों को बुलाकर आज्ञा दी, कि एक हजार खम्भे लगाकर सौ द्वारों वाली स्फाटिक की एक रत्नों से जड़ी हुई द्यूत सभा बनाओ। धृतराष्ट्र की अनुमति पाकर दुर्य्योधन तो अति प्रसन्न हो करके वहां से चला गया। परंतु विदुर से सलाह लिये बिना धृतराष्ट्र से न रहा गया। उन्होंने तत्काल विदुर को बुलाया और उनसे पांडवों का यज्ञ उनका ऐश्वर्य्य सम्मान, और दुर्य्योधन की ईर्षा तथा मरने का निश्चय इत्यादि सब हाल कहकर कौरव और पांडवों के जूआ खेलने के प्रस्ताव को कह सुनाया। धृतराष्ट्र की सारी बात सुनकर विदुर जी बड़े व्याकुल हुए और घबरा कर कहने लगे, हे महाराज! मैं दुर्य्योधन के इस प्रस्ताव को अच्छा नहीं समझता हूं। इस जूए में आपके पुत्रों में फूट की आग धधकने लगेगी, इससे कौरवकुलका क्षयहोजाएगा और सब कौरव व पांडव आपस में लड़ २ कर नाश हो जाएंगे तथा यह चक्रवर्ती राज्य नष्ट भ्रष्ट हो जाएगा इस कारण मैं आप से प्रार्थना करता हूं कि इस कुल को भस्म कर देने वाली जूए रूपी अग्नि को शान्त करने का प्रयत्न करें। धृतराष्ट्र बोले हे महा मंत्री विदुरजी! आप सत्य कहते हैं, जूआ कलह का मूल है, परन्तु दुर्य्योधन अभी बालक है बालकों का मन खेल कूद में बहुत लगता है, और इस

पर वह बड़ा हठी भी है। इस कारण मैंने उसको युधिष्ठिर के साथ जूआ खेलने की विवश होकर आज्ञा देदी है, तुम कोई चिन्ता न करो मेरे द्रोण और भीष्म के होते किसी प्रकार की कलह न होगी। मित्र भाव के साथ भाईयों को खेलने दो, और तुम रथ पर चढ़कर अभी खांडव प्रस्थ को जाओ और युधिष्ठिर को ले आओ।

चौथा अध्याय।

वैशंपायन जी बोले हे राज जनमेजय! धृतराष्ट्र की आज्ञा पाकर महामति विदुर खांडव प्रस्थ में युधिष्ठिर के पास पहुंचे। महाराज युधिष्ठिरने उनका अनेक प्रकार से सत्कार करके धृतराष्ट्र और अपने दुर्योधन आदिक भाईयों का कुशल समाचार पूछा। तब विदुर जी ने सबका कुशल क्षेम कहकर, धृतराष्ट्र का संदेशा सुनाया कि हे धर्म पुत्र! दुर्योधन ने तुम्हारे समान ही सभा बनाई है इसे आकर देखो और मित्र भाव के साथ आकर जूआ खेलो और आनन्द करो। तुम्हारे भाई दुर्योधन ने तुमको जूए का निमंत्रण दिया है। विदुर जी के मुखसे ऐसा संदेशा सुनकर युधिष्ठिर उदास होकर बोले हे क्षत्तः! जूए में हमारा आपस में झगड़ा हो जाएगा, आप इस अनर्थ रूप जूए को क्योंकर पसंद करते हैं, आप बड़े बुद्धिमान वेद शास्त्रों के जानने वाले हैं सो जैसा उचित है वैसा हमको उपदेश देवें। विदुर बोले! हे पृथ्वी नाथ! जूआ सब अनर्थों की जड़ है, यह मैं जानता हूं मैंने इसको रोकने

का प्रयत्न भी किया है, परन्तु फिर भी धृतराष्ट्र ने मुझे तुम्हारे पास भेज ही दिया है, सो हे धर्म पुत्र! जिस में तुम्हारी भलाई हो वैसा सोच समझकर करो। युधिष्ठिर बोले, दुर्योधन के अतिरिक्त और कौन २ खेलने वाले हैं? तब विदुर जी ने कहा हे राजन्! चौपट का सब से बड़ा खिलारी जिसके जोड़का चतुरसिद्ध हस्त और नाना प्रकारकी कपट चालें चलने वाला संसार भरमें कोई नहीं है यह गंधार का राजा शकुनि विविंशिति चित्रसेन तथा कईएक राजा जूएमें सम्मिलित होंगे। तब युधिष्ठिर बोले हे महामति! इस जूए के अन्दर कोई महान् अनर्थ छुपा हुआ है, ऐसा प्रतीत होता है परंतु क्या करूं, सारा जगत दैव के अधीन है, होनहार होकर रहती है, मेरी इच्छा नहीं है परन्तु पितृ तुल्य धृतराष्ट्र और तुमने मुझे बुलाया है, इस कारण मैं आप की आज्ञा को न टालकर वहां जाऊंगा परन्तु उस कपटी शकुनि से अपने आप नहीं खेलूंगा हां यदि वह मुझे जूए के लिए ललकारेगा तो अवश्य खेलूंगा। इस प्रकार निश्चय करके धर्मराज युधिष्ठिर ने यात्रा की सारी सामग्री तैय्यार करवाई और दूसरे दिन दास दासियों तथा भाईयों सहित द्रौपदी को साथ लेकर हस्तिनापुर पहुंचे।

पांचवां अध्याय।

द्रौपदी चीर हरण।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेय! हस्तिनापुर पहुंचकर युधिष्ठिरने महाराज धृतराष्ट्र को नमस्कार किया

और दुर्य्योधनादि भाईयों के साथ गले मिल कर बहुत प्रसन्न हुए। इस प्रकार सब का कुशल समाचार पूछ कर वह द्यूत सभा में पधारे, जहां सब जुआरियों ने उनका स्वागत किया। जब सब राजा लोग अपने २ आसनों पर बैठ गये तब शकुनि युधिष्ठिर से बोला हे धर्म पुत्र! सारी सभा भर गई है, और राजा लोग आपकी बाट देख रहे हैं, सो हे युधिष्ठिर जूआ आरम्भ करो युधिष्ठिर बोले हे राजन्! जूआ एक छल है, महां पाप है, यह कोई क्षत्रियों के योग्य कार्य्य नहीं आप इसको क्यों अच्छा मानते हो? हे शकुनि! इस मन्द कर्म का त्याग करो, राजा का धन प्रजा के हित पर लगाने योग्य है, जूआ खेलने वाला राजा प्रजा की हत्या के पाप का भागी होता है, इस लिए मैं इस अनुचित कर्म की निन्दा करता हूं। हे राजन्! जूआ खेलने में तुम बड़े सिद्धहस्त हो, परन्तु खेल में कपट करना पाप है, छल और धोखे से जीतने वाले को कभी सुख नहीं मिलता, धूर्त मनुष्य दूसरे को ठग कर कभी बडाई नहीं पाता, इस कारण इस खेल को अनुचित समझ कर छोड़ देना ही अच्छा है। शकुनि बोला हे युधिष्ठिर! बलवान् मनुष्य दुर्बल को मारे तो उसे कोई धूर्त व ठग नहीं कहता, पंडित यदि मूर्ख को हरा दे तो उसे कोई शठ नहीं कहता। हम ने तुमें जूए के लिए ललकारा है, यदि तुम हार जाने के भय से हमको कपटी कहते हो तो मत खेलो। यह सुन कर युधिष्ठिर

ने उत्तर दिया हे शकुनि ! मैं जूए को किसी दशा में भी अच्छा नहीं समझता परन्तु यदि कोई मुझे ललकारे तो मैं अवश्य खेलता हूं, क्षत्रिय किसी युद्ध में भी पीठ नहीं दिखाता चाहे वह युद्ध खड्ग का हो अथवा धनका, अच्छा यह तो कहो कि मेरे साथ कौन दांव लगायेगा? युधिष्ठिर की बात सुनकर दुर्य्योधन हंस कर बोला हे भाई ! धन दौलत राजपाट जो कुछ मेरे पास है वह सब दांव पर मैं लगाऊंगा, परन्तु खेलेंगे मेरे बदले मामा शकुनि। युधिष्ठिर ने कहा भाई ! एक मनुष्य के बदले में दूसरे का खेलना उचित नहीं है, परन्तु जूए में भाग्य ही बलवान होता है, उसी के भरोसे मैं खेलूंगा चलो खेलो। लो मैंने यह स्वर्ण का बना हुआ मणियों से जड़ा हुआ हार दांव में रखा, तुम क्या रखते हो ? तब दुर्य्योधन ने उसके बदले में वैसा ही एक हार रखा। तब शकुनिने पांसे फैंके और बड़ी नम्रता भरी चतुराई से कहा देखिये महाराज हम जीते। इस हार से युधिष्ठिर ने गर्मी खाकर कहा, कोई बात नहीं हार उठाओ, लो अबके हमने अपना सारा खजाना और स्वर्ण लगाया। शकुनि ने फिर पांसा फैंका, और तत्काल दोनों भुजाएं उठाकर अट्टहास करता हुआ बोला वह मारा, लगाईये महाराज और क्या लगाते हैं। अब के युधिष्ठिरका मुख लाल होगया बार २ हार खाकर उसका मस्तिष्क घबरा गया इस बार क्रोध खाकर अपने सब दास दासी हाथी घोड़े और रथ लगा दिये परंतु शकुनि ने फिर पांसे फैंके और

सब कुछ जीत लिया, क्योंकि इस कपटी को अपने बनाए हुए पांसे फैंकने का ऐसा अभ्यास था, कि जैसा चाहता था फैंक लेता था इस कारण छल कपट से उसने युधिष्ठिर के सब पदार्थों को जीत लिया।

जब इस सर्वनाशकारी जुए ने ऐसा भयानक रूप धारण कर लिया तब विदुर से चुप न रहा गया वह बोल उठे हे महाराज! आप क्या देख रहे हैं, इस जूए को बंद करें, आप दुर्य्योधन को जीतता देखकर प्रसन्न हो रहे हैं, पर याद रखो आप दो भयानक सांपों का युद्ध देख रहे हैं, अब बहुत हो चुकी, हे धृतराष्ट्र! इस कौरव सभा में मेरे इस नीति के वचन को सुनो इस मूर्ख दुर्य्योधन के पीछे लग कर आप सकल कौरव कुल को डुबो देंगे, आप के पास पहले ही बहुत धन है पांडवों का धन जीतकर आप क्या करेंगे आप इस संसार में पांडवों को ही अपना धन जान कर कीर्ति प्राप्त करें। यह पहाड़िया जूए में धोखा देना जानता है इसे यहां से निकाल दो और पांडवों के साथ व्यर्थ की लड़ाई मत छेड़ो। यह सुनकर दुर्य्योधन को बड़ा क्रोध हुआ वह सभा में उठकर गर्जने लगा, हे विदुर! तुम सदाही पांडवों का पक्षपात करते हो और जिस का निमक खाते हो उसी का बुरा मांगते हो, हमने तुमारी बहुत बातें सहारी हैं, हम अच्छा करें व बुरा तुमको जो हमारे दास हो उपदेश देने के लिये किसने बुलाया है। दुर्य्योधन के कटु वचन सुनकर धृतराष्ट्र भी चुप रह गये

उनको उस समय कुछ न सूझी कि क्या करना चाहिये। उधर युधिष्ठिर जूआ खेलने में इतने मस्त थे कि उन्होंने इस बात चीत की ओर ध्यान ही न दिया। इससे शकुनि को और भी अच्छा अवसर मिल गया, वह और भी उत्तेजना देता हुआ बोला हे युधिष्ठिर पांडवों की सारी धन संपत्ति तुमने हार दी, यदि तुमारे पास और कुछ न हो तो खेल बंद करदें। नीचे लगा हुआ जुआरी भला कब हटता है। यही दशा युधिष्ठिर की थी, वह उठकर बोला, हमारे पास धन की कमी नहीं, यह लो मैं अपने दास दासी और भाइयों के पहरे हुए सब भूषण दांव पर लगाता हूं, परंतु देवगति से इस बार भी वह हार गए। अब तो युधिष्ठिर मानों जूए के मद से मतवाले हो गए उन्हों ने बिना कुछ सोचे विचारे कहा हे शकुनि! हमारे दोनों छोटे भाई हमें अति प्यारे हैं, अबके हम उनको दांव पर रखते हैं, अब तो हर्ष से फूलकर शकुनि ने दोनों हाथों से पांसे मलकर फैंके और वह भी दांव जीत लिया तब वह हंसकर बोला हे युधिष्ठिर! तुम्हारे नकुल और सहदेव दोनों माद्री के पुत्र हमने जीत लिए अब खेल बंद करो। तब युधिष्ठिर क्रोध करके बोले, हे दुर्बुद्धि! यद्यपि नकुल और सहदेव हर गए हैं परंतु भीम और अर्जुन अभी शेष हैं अब के मैं उन को भी दांव पर रखता हूं, हां फैंक पांसे। तब शकुनि ने फिर पांसे फैंके और उन दोनों को भी जीत लिया, अन्त में मतवाला होकर युधिष्ठिर ने अपने आप को भी दांव पर

और दुख की बात है, क्या कभी कोई राजा अपनी स्त्री को भी दांव पर रखता है? हे सूत नंदन! तू सभा में जा और युधिष्ठिर से पूछ कि उन्हों ने पहले अपने आप को हारा था व पहले हमें दांव पर रखा था? द्रौपदी की आज्ञा पा करके विकर्ण सभा में गया और पश्चात्ताप व लज्जा से मुंह लटकाए हुए युधिष्ठिर को कहा हे महाराज! द्रौपदी पूछती है कि पहले आपने अपने आप को हारा है व मुझ को? सो कहिए, परंतु युधिष्ठिर बड़ी चिन्ता में डूबे हुए थे, उन्होंने कुछ उत्तर न दिया। तब दुर्य्योधन ने कहा हे सूत पुत्र! तुम युधिष्ठिर से क्या पूछते हो, वह हमारा दास है बिना आज्ञा बोलने का अधिकार उसको नहीं है, तुम जाओ और द्रौपदी को कहो कि उसने जो कुछ पूछना है यहां आकर पूछे।

दुर्य्योधन की आज्ञा पाकर विकर्ण फिर द्रौपदी के पास गया और दुख से भरे हुए वचन बोला, हे राज पुत्रि! अभिमानी दुर्य्योधन बार २ तुमको सभा में बुलाता है, तुमने जो कुछ पूछना है वहां चलकर पूछो। तब द्रौपदी ने कहा हे विकर्ण! एक स्त्री को भरी सभा में इस प्रकार बुलाया जाना आर्य्य धर्म के विरुद्ध है। धर्म ही सब से बड़ा है, उस सभा में भीष्म विदुर और कृप जैसे धर्मात्मा पुरुष बैठे हैं, इसलिये उन लोगों को पूछ आओ कि इस समय धर्म के अनुसार हमें क्या करना चाहिए, फिर जैसा वह कहेंगे वैसा किया जावेगा। सूत पुत्र विकर्ण फिर सभा में

आया और भरी सभा में द्रौपदी का संदेशा कह सुनाया। परंतु विकर्ण की बात का किसी ने उत्तर न दिया। वह सब दुर्य्योधन के भय से चुपचाप नीचे मुख किये बैठ रहे। सब को चुप बैठा देखकर सूत पुत्र फिर क्रोध से बोला हे धर्मात्मा जनों! कहो द्रौपदी को जाकर मैं क्या कहूं। यह सुनकर दुर्य्योधन ने क्रुद्ध होकर कहा हे दुःशासन! यह सूत पुत्र बहुत ही मूर्ख और कायर है यह भीमसेन से डरता है ऐसा प्रतीत होता है, इस कारण तुम स्वयं जाओ और द्रौपदी को पकड़ कर यहां लाओ। दुर्य्योधन की आज्ञा पाते ही दुःशासन द्रौपदी के भवन में गया और बोला हे द्रौपदी! महाराज दुर्य्योधन ने तुमको जूए में जीत लिया है, इस कारण लज्जा छोड़ कर सभा में चलो। दुःशासन के लाल २ नेत्र देखकर द्रौपदी हिरणी की नांईं सहम गई, उसने सोचा, इस समय गंधारी की शरण जाना चाहिये वह स्त्री होने से अवश्य मेरी रक्षा करेगी, यह विचार कर वह बड़ी शीघ्रता से गंधारी के पास जाने को दौड़ी। परंतु दुष्ट दुःशासन ने दौड़ कर उसको पकड़ लिया और उस के लंबे केशों से उसे खैंचने लगा। थर थर कांपती हुई द्रौपदी ने बड़ी नम्रता से कहा हे दुःशासन! मैं इस समय रजस्वला हूं ऐसी दशा में मुझे सभा में जाना उचित नहीं। तब दुःशासन ने निर्दयता से उसके केशों को झटका देकर कहा तुम हमारी जीती हुई दासी हो, इस कारण एक वस्त्रा रजस्वला हो चाहे नंगी हो तुम्हें सभा में जाना ही होगा।

यह कह कर वह निर्लज्ज उसे केशों से खैंचता महां अनाथों के समान सभा में ले आया । द्रौपदी का ऐसा अपमान देखकर सारी सभा शोक से व्याकुल हो गई । उस के केश जो राजसूय यज्ञ में मंत्रों से पवित्र किये गये थे, इस ससय चारों ओर विखर गये और उसका वस्त्र एक ओर से खसक गया । सभा में इस प्रकार अपना अपमान होता देख द्रौपदी सिंहनी के समान तड़प कर बोली हे नीच पापी! इस सभा में इन्द्र के समान हमारे स्वामी बैठे हैं, फिर क्या समझ कर तूने मेरा अपमान किया है, धिक्कार है तेरे साहस को, धिक्कार है तेरे पुरुषत्व पर और धिक्कार है तेरी कुल पर । परन्तु द्रौपदी की बात का कुछ उत्तर न दे कर पांडव उसी प्रकार नीचे मुख किये बैठे रहे तब द्रौपदी रोती रोती भीष्म से बोली । हे गुरुजन ! इस भरी सभा में आप के बैठे एक स्त्री का अपमान हो रहा है, आप अपने कुल की मर्य्यादा टूटती देखकर भी कैसे चुप हो, मालूम होता है, क्षत्रियों में क्षत्रियत्व नहीं रहा, क्याएक मनुष्य जूए में अपनी स्त्रीको हार सकता है, जब कि वह स्वयंपहले अपने आप को हार चुका है । यह कहकर वह ज़ोर २ से रोने लगी ।

तब सबको चुप बैठे देखकर विकर्ण से न रहा गया और वह गर्जकर बोला, हे राजाओ! भरीसभा में पांचालीका अपमान होता देखकर भी आप सब चुप हैं, मालूम होता है दुर्य्योधन के अन्न ने तुमहारा सब का मुख बंद कर दिया है, परंतु मैं सच कहे बिना नहीं रह सकता । युधिष्ठिर को

द्रौपदी के हारने का कोई अधिकार नहीं था द्रौपदी पांचों की पत्नी है अकेले युधिष्ठिर की नहीं। विकर्ण की बात सुन सारे सभासद उसकी प्रशंसा करने लगे परंतु कर्ण को यह बात अच्छी न लगी। उसने विकर्ण का हाथ पकड़ कर कहा हे विकर्ण! तुम अभी बालक हो, राजनीति को नहीं जानते युधिष्ठिर ने जब अपना सर्वस्व दांव पर रख दिया तब अपनी स्त्री को भी दांव पर रख सकते हैं। अब यह दासी है, इस कारण इसके साथ दासियों का सा व्यवहार करने में कौनसा दोष है? और जो तुम कहते हो कि एक वस्त्र होने से द्रौपदी को लज्जा आती होगी, सो तुमारी भूल है। द्रौपदी पांच मनुष्यों की स्त्री है जिसके वेश्या के समान पांच पति हों उसे लज्जा कैसी देखो पांडव लोग सामने बैठें हैं, जब वह कुछ नहीं कहते तो तुम्हारा बोलना व्यर्थ है। हे दुःशासन! पांडवों के पास जो कुछ था जीत लिया गया है अब इन सब के दुपट्टे छीन लो तब दुःशासन ने एक २ करके सबके सिरसे मुकट उतार लिए। परंतु द्रौपदी एक मात्र साढ़ी पहरे हुए थी, जब दुःशासन उसकी साढ़ी को खेंचने लगा तो वह बारंबार रो रो कर प्रार्थना करने लगी परंतु कोई उसका सहायक न बना। सब ओर से निराश होकर वह रो रो कर श्री कृष्ण भगवान् का स्मरण करने लगी, हे कृष्ण! हे कंसके मारने वाले! हे गज की रक्षा करने वाले! हे भक्तों के रक्षक! इस समय मेरा तेरे बिना कौन है हे नाथ! अपनी दासी की लाज रखो ॥

कबित्त-हाथी जब हिनौरा देकर हरिहुंहंका गयो हौले, हाथ दीनी हरिजी ने बे हाथ पथ मां। हाथी हुं को हन्यो जाके हाजरी हजूर कंस, बंसकी हनंत हेर महावत के हाथ मां। वह भी हाथी यह भी हाथी हाथुं रक्षा हाथुं हाथी, कौन हाथ या कै बूझै बे हाथ पाथ मां। पथिका भुजंग सैन कमल नाभ सोभा मैन जुगल हाथी कारण त्यागी जाई जल नाथमां।

कबित्त—कृष्णा जब ग्रसी क्रूर कुरु मुख मध मेल धूर पूरे वसन ढेर मानों शैल तुल्य हाथी। हाथी की टेर सुन अबेर गरुड़ासन त्याग कमला जब पूछयो मुख "हां" "थी" साथ साथी। हाथी की रच्छा तत्काल करी कालहुं काल, काल रूप कंसको जा मारयो हाथ हाथी। अब मोहे हाथ दै के जो बचाओ दुष्ट हत्यो चाहे: गजके ज्यों बने त्यों बनो मेरो साथी॥

द्रौपदी बोली हे नाथ! जिस समय ग्राह से अति पीड़ित हो करके मन ही मनमें गजने आपको स्मरण किया था, उस समय आपने उसकी अथाह जलमें रक्षा की थी, हे नाथ! उस समय आपने हाथी की रक्षा करने के लिये अपनी लक्ष्मी रूप रुक्मणी का भी त्याग कर दिया था, अब मेरी भी रक्षा करो, हे भगवान् इस समय आप के बिना मेरा और कोई सहायक नहीं है। हे कृष्ण भगवान! देखो जो केश मेरे राजसूय यज्ञ में मंत्रों से पवित्र किये गये थे, उन्ही केशों को पकड़ कर दुष्ट दुःशासन मुझे नग्न

करना चाहता है। हे माधव! हे हरि!! मैं इस समय दुख के समुद्र में डूब रही हूं, हे नाथ इस समय आपही के हाथ में मेरी लाज है, इस समय न मेरा पति न पुत्र न भाई और नां ही कोई और सहायक है। दीनानाथ! अपनी दासी की रक्षा करो। वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय! द्रौपदी की इस करुणा से भरी विनती को घट २ के जानने वाले भगवान् कृष्ण ने सुना। उस समय द्वारका में बैठे रुकमणी के साथ चौपट खेल रहे थे तब पांसे हाथ में लेकर भगवान् ने ज़ोर से फैंके और मुख से कहा "अर्ब खर्ब" यह सुनकर रुक्मणी जी ने आश्चर्य्य से चकित होकर पूछा महाराज! चौपट में चार छे बारह और तीस दाने होते हैं परंतु अर्ब खर्ब का क्या तात्पर्य्य है। तब भगवान् कृष्ण हंसकर बोले हे प्यारी! द्रौपदी इस समय बड़े दुख से रुदन कर रही है, भरी सभा में दुष्ट दुर्य्योधन उसको नग्न करना चाहता है, इस कारण मैंने अर्ब खर्ब वस्त्र उसको दिया है। हे प्राणप्यारी! जब मैंने शिशुपाल को मारा था उस समय मेरी अंगुली कट गई थी तब सब लोग तो वस्त्र लेने के लिये दौड़े परंतु द्रौपदी ने तत्काल अपनी साढ़ी फाड़ कर मेरी अंगुली पर बांधी थी। आज उसको वस्त्र की आवश्यकता है मैंने एक एक तार के बदले एक २ लाख वस्त्र देकर अपना ऋण उतारा है। हे जनमेजय! इधर जब द्रौपदी रो रो कर इस प्रकार भगवान् कृष्ण की प्रार्थना करने लगी तब दुष्ट दुःशासन ने बल से उसकी साढ़ी को खींच लिया तब दुर्य्योधन

ने द्रौपदी की ओर देखकर अपनी जंगा पर हाथ मार कर उसको अपमान सूचक संकेत किया । परन्तु मारने वाले से राखन हार बलि है। दुःशासन के साढ़ी उतारने पर उस के नीचे एक और साढ़ी निकली, तब दुःशासन ने उसको भी खींच लिया। परंतु नीचे एक और निकली तब दुःशासन अति क्रोध से साढ़ियां उतारने लगा, परंतु ज्यों २ वह उतारता त्यों२ और निकलती आती। हे जनमेजय! द्रौपदी की साढ़ियां उतारते २ पर्वत के समान ढेर लग गया और दुःशासन का दस हज़ार हाथी का बल टूट गया और वह थक कर अति लज्जित होकर बैठ गया परन्तु द्रौपदी के चीर न उतरे। यह देखकर सारी सभा आश्चर्य्य रह गई। तब भीम ने क्रोध से उठकर कहा हे सभा जनों सुनो इस पापी दुःशासन ने भरी सभा में द्रौपदी का महा अपमान किया है, मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं दुःशासन के लहु के घूंट पीकर अपने दग्ध हृदय को ठंडा करूंगा और इस नीच दुर्य्योधन ने अपनी जङ्घा पर हाथ मारकर जो अपमान द्रौपदा का किया है, इसका बदला मैं इसकी जङ्घा तोड़ कर लूंगा और यदि ऐसा न करूं तो बीर गति को प्राप्त न होऊं।

छठा अध्याय ।

पांडव बनवास गमन ।

वैशम्पायनजी बोले हेराजा जनमेजय! जब भरी सभा में द्रौपदी का ऐसा अपमान हुआ उस समय देव गति से बड़े २ अपशकुन होने लगे, सभा भवन के बाहर कुत्ते

ज़ोर ज़ोर से भौकने लगे। धृतराष्ट्र और भीष्म आदिक के बाएं अङ्ग फरकने लगे। तब विदुर जी ने धृतराष्ट्र को कहा हे राजन्! तुम्हारे विधाता ने नेत्र बन्द किये हुए हैं परन्तु तुम्हें अपने ज्ञान के नेत्रों से देखना चाहिये, देखो इस समय कैसे २ अशकुन हो रहे हैं। पांडवों का राज्य धन संपत्ति छीन कर और द्रौपदी का अपमान करके दुर्य्योधन ने अच्छा नहीं किया, इससे सारे कौरव कुलका नाश होगा यह निश्चय जानो। तब धृतराष्ट्र ऐसे अशकुनों को देखकर डर गए और द्रौपदी को अनेक प्रकार से धीरज देकर शान्त करने लगे और बोले हे पुत्रि! तेरा अपमान करके दुर्य्योधन ने बहुत बुरा किया है और मेरे हृदय को अति दुःख हुआ है बेटी तू मुझ से जो चाहे वर मांग मैं तुमें दूंगा। तब द्रौपदी ने कहा हे राजन्! यदि आप वर देना चाहते हैं तो मैं यह मांगती हूं कि पांचों पांडवों को छोड़ दिया जाए। तब धृतराष्ट्र ने कहा तथास्तु अर्थात् ऐसा ही होगा। पांचों पांडवों को छोड़ कर धृतराष्ट्र फिर बोले पुत्रि कुछ और मांग परंतु द्रौपदी चुप खड़ी रही और दूसरा वर न मांगा। यह देखकर धृतराष्ट्र ने कहा हे पुत्रि! यदि तू नहीं मांगती तो हम अपने आप देते हैं और युधिष्ठिर की जो कुछ धन संपत्ति राज्य आदि जूए में दुर्य्योधन ने जीता है वह सब हम लौटाते हैं। हे राजा जनमेजय! इस प्रकार सारी संपत्ति दुबारा पाकर युधिष्ठिर आदि पांडव रथों पर चढ़कर जब लौट चले तो शकुनि और दुर्य्योधन को बड़ा दुःख

हुआ तब वह दोनों दुःशासन को साथ लेकर अति व्याकुल हुए २ धृतराष्ट्र के पास पहुंचे और बोले, हे महाराज! आपने यह क्या किया? पांडव सर्प हैं, एक बार इनके दांत तोड़कर फिर इनके दांत उगने का समय न देखिये क्या आप नहीं जानते कि क्रोध से अन्धे होकर पांडव रथोंपर सवार होकर युद्ध की तैयारी करने जारहे हैं? हमने उनका बहुत अपमान किया है, क्या वह इस अपमान को भूल जाएंगे। द्रौपदी का भरी सभा में नग्न करना क्या कम अपमान है और इसका वह बदला न लेंगे? दुर्योधन की इन बातों को सुनकर धृतराष्ट्र डरकर व्याकुल हो उठे और बोले, हे दुर्य्योधन! अब क्या हो सकता है, कोई उपाय तुम ही कहो। दुर्योधन बोला, हे पिता! इसका एक ही उपाय है, कि पांडवों के साथ एक दांव फिर लगाया जावे, परन्तु अब के ऐसी कोई वस्तु न लगाई जाएगी, जिससे उनका अपमान हो, अबके केवल इतनी शर्त हो, कि जो कोई हारे वह बारह वर्ष बनबास करे और एक वर्ष अज्ञातवास करे। इसमें न तो कोई इस समय ही झगड़ा होगा और नां ही आगे कभी झगड़े की सम्भावना ही रहेगी। धृतराष्ट्र को यह बात पसन्द आई और उन्होंने कहा, दुर्य्योधन! तुम शीघ्र ही जाकर पाण्डवों को बुला लाओ। धृतराष्ट्र ने जब दोबारा जूआ खेलने की सम्मति देदी, तब भीष्म विदुर और विकर्ण आदि को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने कहा, महाराज! आप क्या करते हैं, बड़े

कष्ट से यह अनर्थ पहले ही शान्त हुआ है, अब दोबारा फिर झगड़ा खड़ा करना उचित नहीं है। परन्तु पुत्र के मोह में अन्धे हुए २ डरपोक धृतराष्ट्र ने उनकी बात की ओर ध्यान न दिया। तब गांधारी जो पहले ही द्रौपदी के अपमान से दुःखी थी, फिर इस अनर्थ रूप जूए की बात सुनकर बोली, हे स्वामिन्! आपकी बुद्धि कहां गई, दुर्योधन के उत्पन्न होते ही ज्योतषी ने कहा था, कि यह बालक बड़ा उत्पाती, निर्लज्ज और वंश का नाश करने वाला होगा, इसका त्याग करदो। आज वही बात प्रत्यक्ष आपने देखली। द्रौपदी का अपमान करके इस कुलाङ्गार ने सारे कौरव कुल को कलंकित कर दिया है और मेरे हृदय को अथाह शोक समुद्र में डुबा दिया है, बड़े कष्ट से परमात्मा की अपार दया से उसके सतीत्व की रक्षा हुई है, अब फिर यह दुष्ट उनके नाशके लिये जूआ खेलना चाहता है, इसको निकाल दो और अपने राज्य और यश की रक्षा करो। पुत्र के मोह में पड़कर सारे कौरव वंश का क्षय न करो। परन्तु अन्धे धृतराष्ट्र ने गांधारी की बात की ओर ध्यान ही न दिया और दुर्योधन को आज्ञा दी, कि जाओ युधिष्ठिर को बुला लाओ, इन स्त्रियों की बात मत सुनो, इनका हृदय कोमल होता है, राजनीतिको यह क्या समझे। पिता की आज्ञा पाकर दुर्योधन तत्काल युधिष्ठिर के पास गया, उस समय युधिष्ठिर जानेकी तैयारी कर रहे थे। वह बोला, हे युधिष्ठिर ! पिताजी आपको

बुलाते हैं, उनकी आज्ञा है, कि एक बार हम तुम फिर जूआ खेलें । यह सुनकर युधिष्ठिर बोले, हे दुर्य्योधन ! जूआ सबसे बड़ा अनर्थ है, इससे मनुष्य का समूल नाश होजाता है, परन्तु यदि पिताजी की ऐसी ही आज्ञा है, तो मैं अब भी तैय्यार हूं । इतना कहकर युधिष्ठिर दुर्य्योधन के साथ फिर द्यूत-सभा में पहुंचे। तब शकुनि ने कहा, हे युधिष्ठिर ! महाराज धृतराष्ट्र ने जो कुछ तुमको लौटाया है, उसपर अब हम दांव नहीं लगायेंगे । अबके हमारी यह शर्त होगी, कि जो कोई हारे वह बारह वर्ष बनवास भोगे और तेरहवां वर्ष अज्ञात-वास करे, अर्थात् तेरहवें वर्ष में वह ऐसा छिपकर रहे, कि उसका कोई पता न लगा सके और जो पता लग जाए, तो फिर बारह वर्ष बनवास भोगे। शकुनि की ऐसी शर्त सुन कर सारी सभा में हल्ला मच गया, कोई उसको धिक्कार देता कोई युधिष्ठिर को कहता, कि न करो, न करो । परन्तु युधिष्ठिर ने यह सोच कर, कि अब न खेलने से मेरी निन्दा होगी और लोग भीरु कायर और डरपोक कहेंगे, शकुनि की शर्त को स्वकिार कर लिया । तब शकुनि ने पांसे फैंके और उस दांव को भी वह जीत गया इस समय सारी सभा में सन्नाटा छागया और पांचों पांडव बनवास की प्रतिज्ञा में बंध गए। यह देखकर दुर्योधन आदि कौरव बड़े जोर २ हंसने लगे। जब पांचों पांडव राजसी वस्त्रों को उतार कर मृगशाला आदि बनवासियों के वस्त्र धारण करके वहां से चले तो

दुर्योधन उनके पीछे २ चलकर उनकी चाल की नकल करने लगा। दुष्ट दुःशासन ने तो यहां तक निर्लज्जता दिखाई कि वह द्रौपदी को बोला, हे द्रौपदी तू इन जुआरियों का साथ छोड़ और हम में से किसी एक को पति बनाले।

इस पर भीमसेन को बड़ा क्रोध चढ़ा परन्तु क्रोध को रोक कर वह बोला। अरे निर्लज्ज! तेरी बात का उत्तर युद्ध में मेरी गदा देगी। इस समय जो तुम्हारे मन में आवे कहो। तब अर्जुन ने भीम को शान्त करते हुए कहा, हे महाबाहो! आप क्रोध न करें, तेरह वर्ष पश्चात् मेरे तीक्ष्ण बाण सूत पुत्र करण का रक्त पियेंगे।

अर्जुन के पश्चात् सहदेव लाल २ नेत्रों से बोले हे शकुनि! जिन पांसों से तूने हमें इतना दुख दिया है वह बाण बनकर युद्ध में तेरे प्राण लेंगे।

इसके पश्चात् गुरुजनों को प्रणाम करके युधिष्ठिर चारों भाईयों और द्रौपदी को साथ लेकर सिर झुकाए हुए बन की ओर चले गए॥

इति सभापर्व समाप्तः।

अथ बनपर्व।

पांडव बनवास

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय! राजपाट त्याग करके पांडव महां घोर बन में पहुंचे जहां उन्हों ने बहुत दुख उठाया। महांबलि भीमसेन प्रतिदिन बन में फल फूल और जंगली सब्जीयां तथा कन्दमूल लाते और पांचों पांडव उसी फलाहार पर निर्वाह करते। नाना प्रकार के शिकारों को खाने वाले वह लोग नित्य फलाहार और साग पात खाकर बड़े ही दुर्बल होगए। पांडवों की ऐसी चीण दशा को देखकर द्रौपदी को अति चिन्ता हुई। एक बार वह बड़ी चिन्ता में मग्न हुई २ थी कि उसको नारदजी का दर्शन हुआ। तब द्रौपदी ने उनको अपनी सारी दुखकी कथा सुनाई द्रौपदी का दुख सुन कर नारदजी ने उसको एक सूर्य्य देवता का मन्त्र दिया और कहा हे पुत्रि! इस मन्त्र के जपने करके तुमको सिद्धि प्राप्त होगी, अन्न वस्त्र और तेरे मन की समस्त कामनाओं को यह मन्त्र पूरा करेगा। तब द्रौपदी प्रातःकाल उठकर विधि पूर्वक स्नान सन्ध्या आदि करके उस मन्त्र को सिद्ध करने में तत्पर हुई और भगवान् सूर्य्य की स्तुति करने लगी।

तब सूर्य्य नारायणने प्रसन्न होकर उसको अन्नसे भरी हुई एक तांबे की परात प्रदान की, और कहा हे द्रौपदी जब तक तू भोजन न कर लेगी तब तक इस परात का

अन्न कभी नहीं घटेगा, और भोजन कर चुकने के पश्चात् जब इस परात को तू धो लेगी तब यह परात अन्न से शून्य होगी। इसी प्रकार नित्य सवेरे यह परात अन्न से भरपूर होगी। इस परात को प्राप्त करके पांडव अति प्रसन्न हुए, और उस दिन से प्रतिदिन ब्राह्मणों को भोजन जिमाय कर आप खाने लगे, इस कारण वह फिर हृष्ट पुष्ट और बलवान् हो गए। इस प्रकार वह बनवास का समय व्यतीत करने लगे। कई वर्ष इसी प्रकार बीत जाने पर अर्जुन को तीर्थ यात्रा करने की लालसा उत्पन्न हुई। तब युधिष्ठिर से आज्ञा लेकर वह तीर्थ यात्रा को चले गए। रास्ते में उलूपी नाम की नाग कन्या से अर्जुन का विवाह हुआ जिस में से वब्रुवाहन नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई। तत्पश्चात् जगन्नाथ, बद्रिनाथ, केदारनाथ अमरनाथ, गंगा, यमुना, सरस्वती तथा अन्य पवित्र नदियों के दर्शन और पुण्य स्नान आदि कर्म करके फिर उसी द्वैत बन में आन पहुंचे। हे राजन्! एक दिन उसी बन में युधिष्ठिर के पास उनका एक गुप्तचर आया जिसने दुर्य्योधन के सारे राज्य का समाचार आकर सुनाया। उसने कहा हे राजन्! दुर्य्योधन के राज्य में इस समय सर्वत्र सुख और शान्ति है। उसके राज्य में कोई चोर डाकू व्यभिचारी और झूठ बोलने वाला मनुष्य नहीं है। चारों वर्ण अपने अपने धर्म में लगे हुए सुख से जीवन का सुख ले रहे हैं। देश का व्यापार प्रतिदिन बढ़ रहा है। क्षत्रिय लोग प्रजा की रक्षा में तत्पर हैं। दुर्य्योधन ने ब्राह्मणों को

असंख्य स्वर्ण चांदी वस्त्र और अन्न आदिक पदार्थ देकर प्रसन्न कर लिया है। महाराज! नदियों में से अनन्त नहरें निकाल कर उसने किसानों अर्थात कृषिकारों की चिंता को सदा के लिये दूर कर दिया है। सारी प्रजा को वह पुत्र समान समझता है। अपने मित्रों के साथ वह भाईयों के समान बर्त्ताव करता है और भाईयों को अपने समान समझ कर उसने सारे राज्य चक्र को वश में कर लिया है। परन्तु हे राजन्! यह सब आपके भय से किया जा रहा है। प्रजा के हृदय से आपका प्रेम उड़ा देने की यही एक विधि उस ने ग्रहण की है। बनवास से लौट कर फिर आप राज्य प्राप्ति का यत्न करेंगे यही विचार कर वह अनेक उपायों से प्रजा को प्रसन्न रखना चाहता है। हे राजन्! राज्य संपत्ति को स्वतन्त्रता से भोग कर बारह वर्ष बीतने पर भी वह आपके राज्य को लौटाना नहीं चाहता, ऐसा उसकी गति से प्रतीत होता है। दूत के ऐसे वचन सुन कर द्रौपदी को बहुत दुःख हुआ और उस ने अपने विशाल नेत्रों में आंसु भर कर युधिष्ठिर से कहा हे नाथ! दूत के मुख से आपने सब कुछ सुन लिया, क्या आप इसी प्रकार बन में बैठे हुए बड़ी २ जटाएं बढ़ाए हुए अग्निहोत्र ही करेंगे। अथवा अपना राज्य लौटाने का कोई यत्न भी? हे राजन्! आप क्षत्रिय हैं आपका धर्म राज्य पालन है। देखिए यह नकुल और सहदेव जो कामदेव से भी अधिक सुन्दर हैं किस प्रकार मट्टी से मलीन मुख होकर दुर्बल होगए हैं,

यह भीम जो अपने भुजबल से तीनों लोकों को पराजय करने में समर्थ है, उदास हुआ हुआ सिर में राख डाले बड़े हाथी के समान पर्वतों पर डोल रहा है। यह अर्जुन जिसके गांडीव धनुष की टंकार से मनुष्य का तो क्या देवता, राक्षस, किन्नर और गन्धर्वों का भी धीरज छूट जाता है अनाथ के समान उदास हो रहा है। हे नाथ! आपके मस्तक पर छत्र झूलते थे सिंहासन पर बैठे हुए आपके चरणों पर बड़े २ राजा लोग मस्तक नवाते थे प्रातः काल मंगलमय मीठी स्वरों से गन्धर्व लोग आपको जगाते थे, आज भूमि पर लेटे और सिर में राख डाले आप पड़े हैं गीदड़ और लूंबड़ आदि जन्तु अपनी कर्कश चीखों से आपकी निद्रा भंग करते हैं। हे राजन्! इस बाणप्रस्थको छोड़कर अभी क्षत्रियों के उचित कर्म करो, हवन के स्रुवे को छोड़कर धनुष हाथ में लो और जब तक दुर्योधन अपने पांओं पक्के नहीं जमा लेता, तब तक उसको युद्ध में जीत कर अपने गये हुए राज्य को लौटा लो। तब कृष्णा की उत्तेजना भरी बातों का भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेवने भी समर्थन किया और अनेक युक्तियों से युधिष्ठिर को उत्तेजित किया और उनको युद्ध के लिये उभारने लगे। हे जनमेजय! सब की बातें सुनकर युधिष्ठिर ने उन को अपने मीठे वचनों से धैर्य दिया और कहा, हे द्रौपदी! तुम जो कुछ कहती हो सो सत्य है, परन्तु जो प्रतिज्ञा हम कर चुके हैं, उसे तोड़ना धर्म के विरुद्ध है। इस समय

भी दुर्योधन की सभा में और सारे देश में हमारे पक्षके लोग विद्यमान हैं और मुझको पूर्ण विश्वास है कि समय पर वह सब हमारी सहायता करेंगे और यदि हमने इस समय अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी, तो वह सबके सब हमको झूठा और पापी समझकर हमारा साथ छोड़ देंगे। इस प्रकार पाण्डव बैठे विचार कर रहे थे, कि अकस्मात् व्यासदेवजी वहां आगये। उनको देखकर सबने नमस्कार किया और आसन आदि देकर सारा हाल कह सुनाया। तब व्यास-देव जी बोले, हे राजन्! कौरवों से युद्ध करना इस समय उचित नहीं है। कर्ण के पास ब्रह्मशक्ति विद्यमान है। द्रोण, भीष्म और कृप के साथ लड़ने वाला तुम में से मैं एक भी नहीं देखता हूं। इस कारण उनको जीतने के लिये अर्जुन महादेव की तपस्या इन्द्रकील पर्वत पर जाकर करे फिर उनको प्रसन्न करके उनसे शस्त्र ग्रहण करे, फिर निश्चय ही तुम्हारी विजय होगी। यह कहकर व्यासदेव जी चले गये और अर्जुन इन्द्रकील पर्वतपर महादेवकी आरा-धना के लिये गये। हे राजा जनमेजय! वहां जाकर वह घोर तपस्या करने लगे। एक दिन वह अपनी कुटिया में बैठे महादेव का पूजन कर रहे थे और सुगन्धित पुष्पों की माला महादेव की मूर्ति पर चढ़ा रहे थे, कि अकस्मात् एक बड़ा सूअर दौड़कर सामने से निकल गया। उसको देखकर अर्जुन ने अपने गांडीव धनुष को उठाया और एक सरसराता हुआ बाण छोडकर सूअर को बींध दिया।

परन्तु उसी समय एक व्याध ने जो उसी सूअर के पीछे भागा आ रहा था, एक तीक्ष्ण बाण मारा, जो सूअर के पेटमें जाकर घुस गया। तब दोनों ओर से एक ही समय में दो बाण खाकर सूअर वहीं मर गया। परन्तु अर्जुन को व्याध पर बड़ा क्रोध आया। उसने कहा, अरे दुष्ट व्याध ! तूने इस सूअरको बाण मारकर बहुत बुरा किया। जब पहले मैंने बाण मार दिया था, फिर तूने शिकारियों के नियम विरुद्ध बाण क्यों मारा, निस्सन्देह तू मार देने योग्य है। यह सुनकर व्याधने हंसकर उत्तर दिया, मूर्ख ! मैं साधारण व्याध नहीं हूं, मैं इस बन का स्वामी हूं। मेरी आज्ञा बिना तूने इस बनमें इस सूअर पर क्यों बाण छोड़ा। व्याध के उत्तर पर अर्जुन को और भी क्रोध आया और वह लगा अपने पैने बाण उस पर छोड़ने। परन्तु अर्जुन को उस समय बड़ा अचम्भा हुआ, जब उसने देखा, कि उसके सब बाण व्याध के शरीर पर लग कर टूट टूटकर नीचे गिर गये हैं। तब वह तलवार पकड़ कर उस पर झपटा, परन्तु ज्योंही तलवार का आघात उस व्याध पर हुआ, वह भी दो टूक हो गई, फिर तो क्रोधान्ध होकर अर्जुन उसके साथ मल्लयुद्ध करने लगा, परन्तु व्याध को गिराना तो क्या था, अर्जुन से हिला तक भी नहीं। यह देखकर अर्जुन को अति विस्मय हुआ और वह उसकी ओर सिर से पांओं तक देखने लगा। तब उसको उस व्याध के कण्ठ में वह पुष्पमाला दिखाई दी, जो अभी

अभी उसने महादेव की मूर्ति पर चढ़ाई थी। माला को देखकर अर्जुन समझ गया, कि यह साक्षात् महादेव ही हैं। वह तत्काल उनके चरणों पर गिर पड़ा और बड़ी नम्रता से उनकी स्तुति करने लगा। तब महादेवजी बोले, हे अर्जुन! हम तुमपर प्रसन्न हुए और तुमको क्षमा किया हे पुत्र! तुमने हमारी बहुत आराधना की है, कहो क्या चाहते हो? तब अर्जुन ने हाथ जोड़कर कहा, हे नाथ! कौरवों और पांडवोंका भयानक युद्ध होने वाला है, उसके लिये मुझे ऐसे शस्त्र दीजिये, जिनसे मैं वैरियों पर विजय पाऊं। तब महादेवजी ने प्रसन्न होकर अर्जुन को पाशुपत अस्त्र दिया, जिसमें वह तीनों लोकोंपर विजय पाने योग्य होगया। इसके पश्चात् महादेवजी अंतर्ध्यान होगए। और अर्जुन अस्त्र पाकर गन्धमादन पर्वतके रास्ते काम्यक बन जाने को उद्यत हुआ।

इधर अर्जुनके इन्द्रकील पर्वतपर चले जानेपर द्रौपदी उसके विरह में असह्य दुःख उठाने लगी। वह बार बार युधिष्ठिर के पास जाकर रोती और कहती, हे स्वामिन्! आज दो वर्ष से अर्जुन के दर्शन नहीं हुए। हाय! हाय! उसके बिना मुझे एक २ पल एक २ वर्ष के समान व्यतीत होरहा है। हे राजन्! एक राज्य तो क्या मैं सौ राज्य उसके लिये छोड़ सकती हूं। उसके विरह में जलती हुई, मैं असह्य दुःख उठा रही हूं। आज दो वर्ष से उस महाबाहु का कोई पता नहीं आया। जब द्रौपदी इस प्रकार

युधिष्ठिर के सामने रोरही थी, दैवयोग से महर्षि लोमश वहां आ निकले। उन्होंने आकर युधिष्ठिर को अर्जुन का समाचार दिया और कहा, हे युधिष्ठिर ! हम अर्जुन से मिले हैं। उन्होंने इन्द्रकील पर्वत पर महादेवजी की घोर तपस्या की है और उनसे पाशुपत अस्त्र को प्राप्त किया हैं। वहां से देवराज इन्द्र के कार्य्य के लिये वह स्वर्ग में चले गये हैं। इन्द्रका कार्य्य करके वहां उन्होंने अनेक प्रकार के दिव्य अस्त्र प्राप्त किये हैं और अद्भुत गान विद्या की शिक्षा प्राप्त की है। महाराज इन्द्रने उन पर प्रसन्न होकर अप्सराओं और इन्द्राणियों के पहरने योग्य नाना प्रकार के भूषण द्रौपदी के लिये दिये हैं। हे महाराज ! देवराज इन्द्रने यह भी कहा है कि करण के कवच और कुण्डलों से आप न डरो मैं स्वयं उनको तोड़ने का यत्न करूंगा। हे धर्मराज ! आप अधीर न हों। अर्जुन थोड़े ही दिन तक गन्धमादन पर्वत के रास्ते यहां आने वाले हैं।

महर्षि लोमश के मुख से अर्जुन का कुशल समाचार पाकर द्रौपदी और पांडवों को बड़ी प्रसन्नता हुई। इसके पश्चात् युधिष्ठिर ने तीर्थों के दर्शन की इच्छा प्रगट की तब लोमशजी ने कहा, हे राजन् ! हम दो बार सब तीर्थ पर्स आए हैं अब तीसरी बार आपके चाहने पर हमारी भी इच्छा हुई है सो आप चलें, सब तीर्थों और धामों को पर्स कर गन्ध मादन पर्वत पर ही कुछ दिन विश्राम लें, अर्जुन भी उसी रास्ते लौटेंगे वहीं उनका आपके साथ समागम होगा। इस

प्रकार निश्चय करके पांडव द्रोपदी सहित तीर्थ दर्शनों के लिये महर्षि लोमशके साथ चले। हे जनमेजय! वहांसे चल कर वह नाना प्रकारके वार्तालाप करते हुए नैमिषारण्य में गोमती नदी पर पहुंचे। वहां जाकर ब्राह्मणों को बहुत सा भोजन दान देकर उन्होंने गोमती के अति निर्मल जल में स्नान किया। वहां से चलकर अनेक तीर्थों और रमणीक बनों से होते हुए प्रयाग पर पहुंचे, वहां गंगा, यमुना और सरस्वतीके संगम अर्थात् त्रिवेणी में स्नान किया। वहां कुछ दिन निवास करके गया होकर गंगा सागर के दर्शन किये। महर्षि लोमशजी प्रत्येक तीर्थ की उत्पत्ति और उसका माहात्म्य बतलाकर पांडवों की तीर्थ यात्रा और दर्शनों के सुख को बढाने लगे।

वहांसे कलिंगदेशको पार करके वह दक्षिण-सागर पर पहुंचे। वहांसे लौटकर यादवोंके प्रभासक्षेत्रमें आए। यादव लोग पाण्डवोंके आनेका समाचार पाकर उनको लेने के लिये पहुंचे। उनको मिलकर और उनकी ऐसी दुर्दशा देखकर यादव अतिदुःखी हुए। बलदेव तो रो ही पड़े। सात्यकी भी रोये और दुर्योधन तथा भीष्म आदि कुरु-वृद्धों को भर्त्सना करने लगे और कहा, कि हम लोगोंको उचित है; कि दुष्ट कौरवों को नाश करके पांडवों का राज्य उनको लौटा दें। तब श्रीकृष्णजीने कहा हे बलदेव जी! आपने जो बातें कही हैं, वह प्रेम के वशमें हो करके कही हैं सो आप के योग्यही है, परन्तु दूसरेका जीतकर दिया

हुआ राज्य युधिष्ठिर कभी अङ्गीकार नहीं करेंगे । तब युधिष्ठिर बड़ी नम्रतासे बोले, हे भाई ! आपकी दया से हम आपके अनुगृहीत हैं । परन्तु हम अपनी प्रतिज्ञा को किसी प्रकार भी तोड़ नहीं सकते । बनवासका समय पूरा होने पर हम आपकी सहायतासे अवश्य ही राज्य प्राप्त करेंगे। इसके पश्चात् वह लोग उत्तर दिशामें सरस्वती नदीमें स्नान करके सिन्धु देशसे होते हुए काशमीरमें पहुंचे। वहांसे आगे उत्तराखण्डमें बड़े २ दुर्गम पर्वतोंको देखकर द्रौपदी थक कर बैठ गई । तब भीमसेन द्रोपदी को कन्धेपर उठाकर बड़े विकट पर्वतोंपर चलने लगे । इस प्रकार महाकष्टोंको सहन करते वह सब गन्धमादन पर्वत के नीचे पहुंचे । वहां पहुंच कर उन्होंने कुछ दिन विश्राम किया और फिर उस आकाशको स्पर्श करने वाले पर्वत पर चढने लगे। हे राजन् ! अभी वह थोडीही दूर गये होंगे, कि एकाएक बड़े ज़ोर की आंधी चली, जिससे बड़े २ पेड़ टूट टूटकर गिरने लगे । उसभयानक आंधीकी गर्जऔरवृक्षोंकी अरराहटसे डरकर द्रोपदी एक वृक्ष की जड़पर भीमको पकडकर बैठ गई। कुछ देर पीछे मूसलाधार जल बरसने लगा और बिजली कडकने लगी। उस आंधी और प्रलयकालकी वर्षामें इतना अंधकार हुआ, कि भीम युधिष्ठिर आदि एकदूसरे को देख नहीं सकते थे वे सब जहां तहां भागकर प्राण बचाने के लिये छिपगये,कुछदेरबाद आंधीऔर वर्षाबन्द हुई, तोभीम जोर २ से हे युधिष्ठिर ! हे नकुल! इस प्रकार नाम लेलेकर

सब को पुकारनेलगा। तब भीमकी आवाज़ सुनकर सब भाई वहां पहुंचे, जहां भीम मूर्छित द्रौपदीको गोदमें लियेबैठा था। द्रौपदी को आंधीसे टूटी हुई टहनीके समान अचेत पड़ी हुई देखकर युधिष्ठिर को अतिशोक हुआ और वह ठण्डी सांस लेलेकर कहने लगे, हाय! हमारे समान अभागा भी आज संसारमें कोई नहीं, यह द्रौपदी जो दास दासियों में घिरी हुई राजमहलोंमें रहनेके योग्य है, आज किस दशामें मूर्छित पड़ी है। तब नकुलने द्रौपदी को शीतल पत्रोंसे पंखा किया और वह सुधिमें आई। द्रौपदी को धीरज देकर युधिष्ठिरने भीम से कहा, हे महाबाहो! यह गन्धमादन पर्वत अनेक विपत्तियों से भरा पड़ा है। अभी हम थोड़ा ही ऊपर चढ़े हैं। इससे आगे बर्फ़ही बर्फ़ पड़ी है, सो तुम द्रौपदी को अपने कंधे पर उठाओ क्योंकि इसका वहां पांओं प्यादा चलना असंभव है। तब भीम ने कहा, हे महाराज! आप चिंता न करें, हिडिंबाका पुत्र घटोत्कच अद्भुत शक्ति रखता है, मेरे स्मरण करने पर ही वह यहां आसकता है सो मैं उसको बुलाता हूं, यह कह भीमने घटोत्कच का स्मरण किया और वह तुरन्त ही वहां आकर उपस्थित होगया। उसे देखकर भीम ने कहा, हे पुत्र! तेरी माता इस समय बहुत थकी हुई चलने में असमर्थ है, सो तू इसे कन्धे पर उठाकर हमारे साथ चल। तब उस ने द्रौपदी को कंधे पर उठा लिया और वह सब वहां से चलते २ बदरिकाश्रम में पहुंचे। उस रमणीक पर्वत पर पांडवों ने कुछ दिन निवास करके अपनी थकावट दूर की

और निर्मल गंगा के जलमें स्नान करके अति सुख प्राप्त किया। हे राजा जनमेजय! एक दिन द्रौपदी गंगा में स्नान कर रही थी, कि एक सहस्र दलों वाला कमल का सुनहरी फूल बहता बहता उसके निकट आया। उसे बड़ी प्रसन्नता से उठाकर वह भीम से बोली, हे भीम देखो यह कैसा सुन्दर और सुगन्धित फूल है, मैं इसे धर्मराज को दूंगी, तुम यदि मुझे प्यार करते हो तो इस प्रकार के बहुत से फूल मुझे लादो।

तब महांबलि भीम अपनी प्रियतमा द्रौपदी की इच्छा पूरी करने के लिये गंगा तट पर ऊपर २ चढ़ने लगे। कुछ काल पीछे दुर्गम पर्वतों और बनों को पार करके भीम एक केले के बन म पहुचे जहां चलने के लिये कोई पगडंडी न थी। तब अपनी भुजाओं से केलों को उखाड़ते हुए वह आगे चले। वृक्षों के उखड़ने पर उस बन के रहने वाले अनेक बन्दर मृग और लंगूर आदि बनचर चारों ओर भय से भागने लगे इस प्रकार जब वह आगे बढ़ रहे थे तो एकाएक उनको उसी मार्ग पर एक बन्दर लेटा हुआ दिखाई दिया। उसको देखकर भीम बड़े वेगसे गर्जे, जिस से सब जीव जन्तु मारे डरके भागने लगे। उसकी गर्ज सुन कर उस बन्दर ने अपने नेत्र खोले और कहा। अरे? तुम कौन हो जो इस प्रकार कोलाहल करते हो, मैं यहां सुख से सोरहा था परन्तु तुम ने मेरी निद्रा खोलदी है, चलो अपना रास्ता लो, परदेसी जानकर मैं तुमको क्षमा

करता हूं भीमसेन बोले हम अकारण किसी को दुःख देना नहीं चाहते, रास्ते से एक ओर होकर लेटो, ऐसा न हो कि व्यर्थ में मुझे हाथ उठाना पड़े। तब बन्दर बोला भाई हम वृद्ध हैं, हम से अब उठा नहीं जाता तुम हमारी पूंछ पकड़ कर एक ओर हटादो। तब भीमने क्रोधसे चाहा कि उसे पूंछ से पकड़ कर कहीं दूर फैंक दे परंतु उसको बड़ा आश्चर्य हुआ जब उसने देखा कि पूरा जोर लगाने पर भी उस बंदर की पूंछ हिली तक नहीं । तब भीम ने नम्रता पूर्वक कहा हे भाई ! तुम कौन हो और बंदरके वेश में क्यों इस बनमें पड़े हो । तब उस वानर ने हंस कर उत्तर दिया, हम वायुके पुत्र और भगवान् रामचंद्रजी के दास हनुमान हैं। अब वृद्ध हुए परमात्माकी भक्ति में यहीं अपने दिन व्यतीत करते हैं । तुम हमारे ही पिता वायुके संयोगसे उत्पन्न हुए हो, इस कारण हमें तुम पर स्नेह हुआ है। हे भाई! इस मार्ग से जाना मनुष्यों के लिये बड़ा भयानक है, इसी कारण हम ने तुम्हारा मार्ग रोका है। तब भीमने अपने आने का कारण कहा, सो हनुमान जी बोले हे भीम यह सहस्र दल कमल फूल कुबेर के सरोवर में ही उगता है, वह सरोवर यहां से निकट ही है। यह कहकर हनुमान जी तो वहां से चले गये और भीमसेन अनेक पर्वतों को पार करके कुबेर के सरोवर पर पहुंचे। वहां उस प्रकार के लाखों फूल उगे हुए थे। भीम प्रसन्नता से उस सरोवर में उतर गये और बड़े आनंद से उसमें स्नान किया। इसी समय

कुवेर के कुछ सेवकों ने भीमको स्नान करते देख लिया तब वह बड़े अभिमान से बोले, अरे तुम कौन हो जो इस देवताओं के सरोवर को खराब कर रहे हो । तब भीमने उत्तर दिया हमारा नाम भीमसेन है और अपनी प्यारी स्त्री के लिये यह कमल फूल लेने आये हैं । तब यक्षों ने कहा यह सरोवर कुवेर का है,इस में स्नान करने का अथवा फूल तोड़ने का किसीको अधिकार नहीं है,तुम अभी यहांसे चले जाओ अन्यथा तुम्हारे प्राण लिये जाएंगे। यक्षों की बात सुनकर भीमने अपनी गदा उठाई और बोले यह सरोवर एकपहाड़ी नालों के जलसे भरता है इस कारण इस पर प्रत्येक मनुष्य का ऐसा ही अधिकार है जैसा कुवेरको, सावधान यदि फिर मुझे रोका तो यह गदा तुम सबके प्राण लेकर छोड़ेगी। भीम के ऐसे गर्वसे भरे हुए वचन सुनकर सब के सब यक्ष उस पर टूट पड़े। भीम भी उन पर गदा चलाने लगे दोनों ओर से घोर युद्ध होने लगा। इधर भीमसेन के कई दिन तक लौट कर न आने से द्रौपदी बहुत व्याकुल हुई और वह बारंबार युधिष्ठिर को उसके ढूंढने के लिये अनुरोध करने लगी। तब युधिष्ठिर घटोत्कच आदि सबसाथियों को साथ लेकर उसी ओर चले जिधर भीमसेन गये थे। अंत में वह उस सरोवर पर पहुंचे जहां भीमसेन खड़ा दांत पीस रहा था और उसके पास ही बहुत से यक्ष घायल पड़े कराह रहे थे। युधिष्ठिर ने जाकर भीमको गले लगाया और बहुत कुछ समझा बुझा कर उनके क्रोधको शान्त

किया। महाराज कुबेर ने जब युधिष्ठिर का आगमन सुना तो वह स्वयं उनके मिलने के लिए वहां आए और उनका बहुत सत्कार किया और अपने समस्त अनुचरों को आज्ञा देदी कि जबतक अर्जुन न लौटे तबतक पांडव अपनी इच्छाऽनुसार इसी पर्वत पर विहार करें। इसके पश्चात् पांडव बड़े आनंद से उस पर्वत के प्रत्येक बन उपबन नदी नद और सरोवरों में विहार करने लगे और अनेक ऋषि मुनियों के सुन्दर आश्रमों के दर्शनों से प्रसन्न होकर अर्जुन की प्रतीक्षा करने लगे। उधर अर्जुन पांच वर्ष तक स्वर्ग में रहकर देवताओं के दिये हुए अस्त्र शस्त्रों को चलाने में भली भान्ति अभ्यास करके मातलि के साथ विमान पर बैठकर आकाश में उड़ते हुए एकाएक टूटे हुए तारे की नांई गंधमादन पर्वत पर नीचे आए वहां अपने भाइयों को देख कर वह गद्गद प्रसन्न हुए। द्रौपदी तो अर्जुन के दर्शनों से विव्हल हो उठी तब भाई २ परस्पर आलिंगन करके अति प्रसन्न हुए और अपना २ हाल वर्णन करने लगे। अर्जुन ने आदि से अन्त तक अपनी यात्रा का सारा वृत्तान्त सुनाया। महादेव जी का दिया हुआ पाशुपत अस्त्र और देवताओं के दिये हुए अस्त्र दिखलाये और उसके पश्चात् इन्द्र के दिये हुए दिव्य आभूषण द्रौपदी को दिये जिन्हें पाकर वह अति प्रसन्न हुई।

दूसरा अध्याय ।

वैशम्पायनजी बोले, हे राजा जनमेजय ? गन्धमादन पर्वत पर कई एक महीने सुख से विश्राम करके पांडव फिर द्वैत बन में लौटे। वहां वर्षा और शरद् ऋतु के सुहावने दिन व्यतीत करके उन्होंने काम्यक बन की यात्रा की। और वहां पहुंचे। पांडवों के काम्यक बनमें पहुंचने का समाचार पाकर दुर्योधन के मन में बड़ा दुख हुआ, और विचारने लगा कि किस प्रकार उनका नाश किया जाए। हे राजा जनमेजय ! एक दिन दुर्योधन इसी चिन्ता में बैठा था कि महर्षि दुर्वासाजी अकस्मात् वहां आ निकले। उनको देख कर दुर्योधन ने उनका बड़ा सत्कार किया और मन वचन तथा कर्म से बड़ी सेवा की। तब दुर्वासाजी प्रसन्न होकर बोले, हे राजन् ! हम तुम पर अति प्रसन्न हुए हैं कुछ मांगो दुर्योधनने हाथ जोड़कर कहा, हे महाराज ! आप सदा ही हम पर कृपा करते हैं, परन्तु आप यदि कुछ अवश्य देना चाहते हैं तो मैं यह मांगता हूं कि काम्यक बन में जाकर युधिष्ठिर के हां आप भोजन करें और आपके एक सहस्र चेले भी वहीं भोजन पावें। मैं युधिष्ठिर की ओर से ही आप को निमन्त्रण देता हूं, क्योंकि उनको बन में इस समय बड़े दुःख हैं और आपके प्रसाद से उनका कल्याण हो जाएगा। हे जनमेजय ! दुर्योधन की इस छल से भरी हुई वार्ता को सुनकर दुर्वासाजी के मनमें तनिक भी सन्देह न हुआ और वह अपने एक सहस्र शिष्यों को साथ लेकर युधिष्ठिर के

हां काम्यक बन में पहुंचे। दुर्वासा जी को एक सहस्र शिष्यों सहित देखकर युधिष्ठिर के मन में बहुत आश्चर्य हुआ। दुर्वासाजी ने कहा हे पांडु नन्दन! आज आप हमें भोजन देवें, आज द्वादशी का दिन है आपके हां ही द्वादशी उपारने केलिए हम आए हैं। उससमय सब ब्राह्मणों और अतिथियों को भोजन खिलाकर द्रौपती ने परात को जिससे मनोवांछित अन्न और पदार्थ प्राप्त होते थे, धो डाला था, इस कारण उन्हों ने मन में यह बात ठानी कि इन ऋषियों को स्नान करने केलिए भेज दिया जाए और इनके वापस लौटने तक बन से काष्ठ व लकड़ियां इकट्ठी करके चिता बनाकर सब के सब उस में जलकर राख होजाएं, क्योंकि इसके बिना और कोई उपाय नहीं होसकता, इस प्रकार निश्चय करके महामुनि दुर्वासा को शिष्यों समेत स्नान करने के लिए भेज दिया और स्वयं बहुत सा काष्ठ इकट्ठा करके बड़ी चिता बनाकर उस में आग लगादी, परन्तु ज्यों ही वह जलने के लिए उसमें कूदने लगे त्यों ही पीतांबर पहने भगवान् कृष्ण गले में वैजयन्ती माला धारण किये सन्मुख आ खड़े हुए, और द्रौपदी को बोले हे देवी मैं कल्ह से ब्रती हूं, इस कारण मुझे द्वादशी का ब्रत उपारन कराओ। यह सुनकर द्रौपदी बोली, हे दीनानाथ! इस समय मैं परात धो चुकी हूं, और मेरे घर में और अन्न भी नहीं है। हे नाथ आप अन्तर्यामी हो आप से कौनसी बात छिपी हुई है, और हे प्रभु! इस समय दुर्वासा मुनिजी भी अपने

एक सहस्र शिष्यों समेत हमारे हां द्वादशी उपारने के लिए आए हुए हैं, सो इसी कारण हम सब इस जलती हुई चिता में प्रवेश करने के लिए उद्यत हुए हैं, क्योंकि आज पहला दिन है जो हमारे द्वार से अतिथि निराश होकर जाएंगे। महारानी द्रौपदी की बात सुनकर भगवान् कृष्णजी बोले, हे कृष्णा ! तुम अपनी परात को अच्छी तरह देखो कदाचित उसमें कोई एक आध दाना लगा हो। तब प्रभु की आज्ञा पाकर द्रौपदी ने ज्योंही परात को देखा तो उस में एक दाना चिपटा हुआ पाया। उस दाने को लेकर द्रौपदी ने श्री कृष्णजी की भेंट किया, जिस को भगवान् कृष्ण ने विष्णु अर्पण कहकर मुख में डाल लिया मानों व्रत उपार लिया। तब प्रभु भगवान् कृष्ण जैसे ही उस एक किण के से तृप्त हुए, सारा ब्रह्माण्ड तृप्त होगया, दुर्वासा ऋषि और उसके शिष्य तो इतने तृप्त हुए कि उनसे बैठना भी कठिन होगया। तब भगवान् ने भीमसेन को कहा कि जाओ अब दुर्वासा जी को बुला कर ले आओ। श्रीकृष्ण की आज्ञा पाकर भीमसेन दुर्वासा के पास गए और कहा हे महा मुनि भोजन तैय्यार है। आप चलकर द्वादशी का उपारन करलें। तब दुर्वासाने कहा हे भीम ! हम सब इतने तृप्त हुए हैं कि अब भोजन की इच्छा तो क्या उठना भी कठिन होरहा है भीमसेन ने कहा महाराज मुझे आपके ले चलने की आज्ञा हुई है सो आपको अवश्य चलना होगा। परन्तु भीमसेन के बहुत

हठ करने पर भी दुर्वासा जी न माने और उसके शिष्य तो बिना केश आर कौपीनें बांधे ही मारे डरके कि कहीं गुरु जी चलना स्वीकारही न करलें इधर उधर बनमें भाग गए। हे जनमेजय! इस प्रकार भगवान् ने अपने भक्तों की रक्षा की और उनको अग्नि में जलने से बचा लिया जिसके लिये दुर्य्योधन ने यह सब उपाय किया था। इसके पश्चात् कुछ दिन वहां निवास करके श्रीकृष्ण जी द्वारिका को चले गए। इसके अनंतर कुछ दिन पाकर वेद व्यास जी उस महां बन में युधिष्ठिर के पास आए और उसे दुखी देख कर यह उपदेश दिया कि हे राजन्! विपत्ति कालमें घबराना उचित नहीं है, विपत्ति काल में ही मनुष्य की परीक्षा होती है देखो ऐसी २ विपत्तियां पहले भी धर्मात्मा जनों पर होती हैं, और उन्होंने उन विपत्तियों को कैसे सहन किया है, सो मैं तुम को सुनाता हूं, ध्यान देकर सुनो।

अथ तीसरा अध्याय।

नल दमयन्ती की कथा।

हे राजन्! सतयुग में नल नामक एक बड़ा धर्मात्मा राजा हुआ है। वह राजा परम सुन्दर रूपवान बुद्धिमान और परमेश्वर का भक्त था। उस समय भीम नामक एक और राजा कुन्दनपुर में राज्य करता था। उसके गृह में एक परम रूपवती अलौकिक सुन्दरी अति सुशीला दमयन्ती नाम की कन्या थी, जिसको देखकर देवता भी मोहित हो

जाते थे । उसका विवाह राजा नल के साथ स्वयम्बर की रीति से हुआ । हे राजन्! राजा नल का एक छोटा भाई पुष्कर नाम का था, जो दुर्योधन के समान सदा ही बड़े भाई का राज्य धन और ऐश्वर्य देखकर जला करता था। वह शकुनि के समान जुआ खेलने में बड़ा चतुर था। एक दिन उसने अपने बड़े भाई नल को जुआ खेलने के लिये ललकारा । राजा नलने उसकी बातको स्वीकार करके तुरन्त चौपट बिछवा दिया, और लगे पांसा फैंकने । हे राजन्! जूआ खेलते २ राजा नल ने अपने समस्त हाथी घोड़े दास दासियां धन माल खजाना रत्न जवाहर सब कुछ हार दिया और अन्तमें सारा राजपाट भी पुष्कर के आगे हार दिया। तब पुष्कर ने अपने बड़े भाई को राज्य से बाहर निकल जाने की आज्ञा दी । और सारे नगर में डौंडी पिटवादी कि जो कोई नल को अपने गृह में आश्रय देगा अथवा कुछ अन्न वस्त्र की सहायता करेगा, उसका सिर उतार लिया जायगा । पुष्कर की आज्ञा सुनकर सब नगर निवासियों ने मारे भय के राजा नल से मुंह फेर लिया । इधर राजा नल केवल एक धोती पहन कर बन जाने को उद्यत हुआ । अपने स्वामी की ऐसी दुर्दशा देखकर दमयन्ती बिलख २ कर रोने लगी और बहुत रोकने पर भी अपने पति के पीछे २ चलने पर उद्यत हुई। अन्त में राजा नल ने दमयन्ती को साथ लेजाना स्वीकार किया । तब दमयन्ती ने अपने दोनों प्यारे पुत्रों

को अपने पिताके गृहमें भेज दिया और यह दोनों राजा और रानी महाशोकमें डूबे हुए अन्न जल बिना नगर से बाहर निकले। अब आगे २ राजा नल और पीछे २ दमयन्ती दोनों ही एक २ धोती के साथ चलते २ तीन दिन पीछे एक बन में पहुंचे। परन्तु रास्ते में उनको खाने के लिये कुछ न मिला। तब भूख से अति व्याकुल होकर दमयन्ती उस बन में गिर पड़ी। उस समय राजा नलको महा दुःख हुआ, वह दमयन्ती को वहीं बैठाकर निकट ही एक नदी के तटपर गये जहां एक मछुआ जाल से मछ-लियां पकड़ रहा था। उस मछुए से महाराज ने जाकर एक मछली मांग करली, और परमात्मा का धन्यवाद करते हुए दमयन्ती के पास लौटे, और उसे मछली देकर आप स्नान करने चले गये। परन्तु दैवयोग से वह मछली दमयन्ती के हाथ से उछलकर न जाने कहां चली गई। दमयन्ती ने बहुतेरा ढूंढा परन्तु फिर उसे न पा सकी। जब राजा नल स्नान करके लौटे तो मछली के लोप हो जाने का हाल सुन बड़े दुःखी और हैरान होगए। हे राजन्! इस प्रकार भूख से तड़पते हुए उनको रात पड़ गई पर कोई वस्तु खाने को न मिली। अन्त में थकान और भूख से व्याकुल होकर महारानी दमयन्ती वहीं बेसुध होकर सो गई परन्तु राजा नलको निद्रा न आई, और वह जागते हुए अपने पिछले सुखों का स्मरण करने लगे। कभी वह अपनी ओर देखते और कभी चन्द्रमा की चांदनी

में दमयन्ती के मुरझाये हुए कमल के समान मुख को देखते थे । इतने में एक मुरगाबियों का झुण्ड उड़ता २ राजा नलके पास आकर बैठ गया । उस झुण्ड को देख कर राजा ने उनको पकड़ने केलिये अपनी धोती उतारकर उन पर डालदी । उस धोती में अपने आपको फंसे हुए पाकर मुरगाबियां डर से फड़फड़ाकर धोती समेत आकाश को उड़ गईं। राजा नल नंगा ही उनके पीछे २ दौड़ा कि जहां पर धोती गिरेगी उठा लूंगा, परन्तु बहुत दूर उनके पीछे २ आकाश मे आंखें लगाए दौड़ते हुए उनके पांओं को ठोकर लगी और वह औंधे मुख पृथ्वी पर गिर पड़ा और वह मुरगाबियां आंख से ओझल हो गईं । वहां से निराश और अति लज्जित हुआ २ दमयन्ती के पास लौटा, इधर दमयन्ती की निद्रा खुल गई थी और वह घबराकर इस सुनसान बनमें महाराज को आंखें फाड़ २ कर देख रही थी । दमयन्ती उनको नग्न देख अति दुःखित होकर पूछने लगी, हे स्वामिन्! आप इस अर्ध रात्रि में कहां गये थे, और आपकी धोती कहां है । तब राजा ने सारा वृत्तान्त सुनाया जिसे सुनकर दमयन्ती बहुत रोई और विधाता को कोसने लगी कि हाय देव! तू बड़ा निर्दयी है, तुझे तनिक भी दया नहीं आई, राज छूटा, पुत्र छूटे, घर छूटा अब एक धोती थी वह भी तूने छीनकर मेरे महा-प्रतापी स्वामी को नग्न कर दिया है । तब उसने अपनी आधी धोती फाड़कर राजा को दी और इस प्रकार विलाप

करते करते रात बिताई। हे राजा जनमेजय! वृक्षों के पत्ते जड़ें और कन्दमूल खाखाकर वह दोनों अपने दिन व्यतीत करते हुए महा दुःख भोगने लगे। एक दिन दमयन्ती महा दुःख से दुःखी होकर रोने लगी। तब राजा नल उसको धीरज देते हुए बोले, हे कल्याणि! तू उदास न हो, देख यह दक्षिण की ओर कई रास्ते और पगडण्डियां चली गई हैं, जिसके पीछे आवन्तक नामक पर्वत दूर तक फैला हुआ दिखाई देरहा है, इस पर्वत के पीछे समुद्र है। हे प्यारी! इस पर्वत माला के साथ सिद्धों और मुनियों के आश्रम दूर तक चले गये हैं, और यही रास्ता विदर्भ देश को चला जाता है। हे सुलोचना! तू इसी रास्ते से अपने पिता के घर चली जा। महाराज के इस प्रकार कहने पर महारानी दमयन्ती बहुत व्याकुल हुई दीनता से बोली, हे प्राणनाथ! मैं आपको इस विपत्ति कालमें जबकि आप से राजपाट पुत्र धन और वस्त्र तक छूट गया है किस प्रकार इस घोर बनमें अकेले छोड़कर चली जाऊं? हे नाथ! मैं छाया के समान आपके पीछे २ चलकर आपके दुःखोंको दूर करती हुई आपके साथ रहूंगी क्योंकि स्त्री के समान दुःख दूर करने वाली औषधि संसार में दूसरी कोई नहीं है। हे महाराज! मैं आप से त्यागने योग्य नहीं हूं। आप मुझे विदर्भ देश का रास्ता बार बार क्यों बताते हैं। हे प्राण प्यारे! यदि आप की इच्छा मुझे विदर्भ देश में भेजने की ही है, तो आप

भी मेरे साथ चलें, वहां मेरे पिता भीम जी आप का भली प्रकार आदर सत्कार करेंगे। हे राजन्! आप सुखपूर्वक अपने सुसराल में वास करें। यह सुनकर राजा नल ने कहा, हे प्रिये! तुम्हारे पिताका जो राज्य है, सो निस्संदेह मेरा ही है, परन्तु इस समय मैं बड़े सङ्कट में फंसा हुआ हूं, इस कारण मेरा वहां जाना उचित नहीं है। हे सुन्दरि! जूएमें सब कुछ हारकर कङ्गाल हुआ हुआ दीनावस्थामें तेरे पिताके गृहमें मैं नहीं जाऊंगा। हे प्यारी! जिस समय धन-युक्त होकर मनुष्य अपने सुसरालमें जाता है, तब ससुर, सास और साले आदिक सब कोई उसका आदर सत्कार करते हैं और वही मनुष्य जब निर्धन हुआ हुआ दीन होकर जाता है, तो सुसरालमें उसका कोई मान नहीं करता, किन्तु उलटा अपमान होता है। इस कारण हे प्रिये! मैं तेरे पिताके गृहमें जाने योग्य नहीं हूं।

इस प्रकार बात-चीत करते और एक दूसरेको धीरज देते हुए थककर सो गए। हे राजा जनमेजय! अर्धरात्रि के समय जब दमयन्ती घोर निद्रामें बेसुध पड़ी हुई थी, राजा नल उठकर बैठ गए और दमयन्तीको छोड़कर चले जानेका विचार करने लगे। कभी विचारते हैं, कि इसको यहीं बनमें छोड़ जाएं और कभी सोचते हैं, कि नहीं, इस को किसी ग्रामके निकट छोड़ना उचित है, कभी यह विचार करते हैं कि इसको छोड़ जानेसे सुख होगा, अथवा दुःख, इस प्रकार बहुत सोच विचार करके अन्त में राजा नलने

यही निश्चय किया कि इसको इसी बनमें छोडनेसे भलाई होगी । सो ऐसा निश्चय करके वह वहांसे उठे और अपनी परमप्यारी दमयन्ती को वहीं छोड़कर चल पड़े । परन्तु थोड़ी दूर जाकर मोह के वश हुए हुए फिर लौटे और उस को इस प्रकार निश्चिन्त होकर सोती देख बिलख बिलख कर रोते हुए मनमें कहने लगे कि हा ! आज यह राजेश्वरी कंकड़ और धूलमें लेटी हुई है, कभी वह समय था जब सूर्य भी इसका मुख नहीं देख सकता था । हाय ! मैं इसको अकेली छोड़कर जाता हूं । जब यह जागेगी, तो क्या कहेगी । मेरे वियोगमें पागल हो जायेगी, इस महाबनमें जिसमें सिंह, व्याघ्र और रीछ आदि हिंसक जन्तु भरे पड़े हैं, कौन इसकी रक्षा करेगा, क्या खाएगी और कहां जाएगी । इस प्रकार तर्कना करता हुआ राजा नल बार बार जाता और फिर लौटकर वहीं आजाता, अन्तमें बहुत रुदन करता हुआ वह दुःखोंका मारा उसको वहीं छोड़कर चला गया । हे धर्मपुत्र युधिष्ठिर ! जब राजा उसको छोड़कर कई कोस आगे निकल गया तब दमयन्ती की निद्रा खुली और अपने पास अपने स्वामिको न पाकर डर से कांपती हुई घबरा कर हे नाथ ! प्राणपति ! हे प्यारे ! इस प्रकार जोर जोरसे राजा नलको पुकारने लगी । परन्तु बारम्बार पुकारने पर भी जब उसको कोई उत्तर न मिला तो वह बिलख बिलखकर इस प्रकारके करुणा-वचन कहती हुई रोने लगी । हाय प्रीतम ! हा स्वामी ! आप किस कारण

इस दासीको त्याग करते हो? हे प्यारे! मैं हत-बुद्धि हुई मारे डरके मरी जारही हूं। हे सुशील! आप धर्मके जानने हारे और सदा सच बोलने वाले हो, फिर किस कारण मुझ दीन दुखिया दासीको त्यागकर चले गए हो? हे नर-शार्दूल यदि कहीं छिपे हो तो आजाओ। तुम्हारी हंसीसे मेरे प्राण निकले जारहे हैं। हे प्राणपति! आपके वियोग में मछली की नाईं मैं तड़प रही हूं। इस प्रकार वह अकेली बन में विलाप करती हुई अपने स्वामी को चारों ओर आंखें फाड़ फाड़कर देखने लगी। परन्तु राजाको कहीं न देखकर दुःख से व्याकुल हुई हुई मूर्छा खाकर भूमिपर गिर पड़ी। जब कुछ काल पश्चात् उस को सुधि आई तो क्रोध और शोक से पागल हुई राजाको ढूंढने के लिए इधर उधर दौड़ने लगी। हे धर्मपुत्र! शोकसमुद्र में डूबी हुई दमयन्ती उस हिंसक जन्तुओं से भरे हुए कंटीले बनमें चलने लगी। उस की आधी धोती कांटों से उलझ उलझकर जहां तहां से फट गई, पांओं में कांटोंसे रक्त बहने लगा। परन्तु पतिके दर्शनों की लालसा में लीन हुई हुई को अपने शरीर का भी ज्ञान न था कि मैं कहां जारही हूं। इतनेमें एक बड़ा भयानक अजगर अपनी विकराल जिह्वा फैलाए उस पर झपटा। उसे देखकर दमयन्ती ने एक चीख मारी और ज़ोर ज़ोरसे स्वामीको पुकारने लगी, हे नाथ! शीघ्र आओ शीघ्र आओ, तुम्हारी दासी को यह अजगर निगलना चाहता है। हे धर्मपुत्र! इस प्रकार जब दमयन्ती चीख

चीखकर पुकार रही थी, उसी समय एक व्याध जो जन्तुओं का शिकार करने इसी बनमें आया था, उसका रोना सुन कर वहां आपहुंचा और अपना धनुष चढ़ाकर अजगरकी ओर दौड़ा और दमयन्तीको उस से घिरा हुआ देखकर अपने तीक्ष्ण बाणसे उसका सिर काट दिया। सर्प के मर जानेपर व्याध खुशी खुशी दमयन्तीके पास आकर बोला, हे सुन्दरी! तुम कौन हो और इस घोर बनमें अकेली किस कारण घूमती हो ? हे युधिष्ठिर! व्याध के इस प्रकार पूछने पर दमयन्ती ने अपना सारा हाल उसे कह सुनाया। तब दमयन्ती के कोयल के समान मधुर-स्वर और उस के कार्तिक की पूर्णमाशी के समान मुख को देखकर वह व्याध कामासक्त होगया और अनेक प्रकार की मीठी मीठी बातें करके उसको रिझाने लगा। व्याध की बहकी बहकी बातें सुनकर दमयन्ती उसके भाव को समझ गई और बड़े क्रोध से बोली, अरे दुष्ट! तू अपनी इस नीच भावना को छोड़ कर चला जा, हे पापी यदि मैं सर्प करके मारी जाती तो अच्छा था, परन्तु तेरी बातों ने मेरा हृदय दग्ध कर दिया है। तब व्याध ने अकेली जानकर दमयन्ती को पकड़ लिया और उसके साथ बलात्कार करने पर तुल गया। परन्तु दमयन्ती ने मारे क्रोध के झटका देकर अपनी भुजा उससे छुड़ाली और नागिनी के समान फुंकारती हुई बोली, हे दुष्ट व्याध ! तेरी बातों को सुनकर मेरा मन क्रोध से जल रहा है, परन्तु तू ने

मुझे अजगर के मुख से बचाया है, यही जानकर मैंने तुम्हें शाप नहीं दिया, परन्तु अब तूने अपना कलङ्कित हाथ लगाकर मेरे पति महाराज नल का घोर अपमान किया है,इस कारण मैं तुम्हें शाप देती हूं,कि तेरी इसी समय मृत्यु होवे। हे धर्म पुत्र! सती दमयन्ती के मुख से शाप के निकलते ही वह व्याध तत्काल पृथ्वी पर गिर पड़ा और वहीं मर गया। व्याध को मरे हुए देखकर दमयन्ती परमात्मा के आगे हाथ जोड़ कर बिनती करती हुई वहां से झींगुर, झिल्ली, उल्लू आदि जीवों के कर्कश स्वरों से गूजते हुए अगले बनमें प्रविष्ट हुई। वह बन सिंह, व्याघ्र, बघेले, हाथी, शूकर, मृग, बन्दर और लंगूरों से भरा पड़ा था। जहां तहां उसमें सर्प, बिच्छु और अनेक प्रकार के विषैले जीव-जन्तु रेंग रहे थे, जो बन चारों ओर के डाकुओं का आश्रय था, जिसमें साल, चिनार, बोहड, पीपल, सेमर आदि अनेक प्रकारके छायावाले तथा कांटेदार बृक्ष लाखों ही एक के साथ एक मिलकर खड़े थे, जिस की घनी छाया में से सूरजकी किरण भी नहीं आसकती थी, दिन के समय भी मारे अन्धकार के रात प्रतीत होती थी, ऐसे गह्वर बन में पहुंचकर दमयन्ती डरसे कांपती हुई अपने पति को ढूंडने लगी, परन्तु बहुत काल तक सारे बनमें पत्ते पत्ते को देखकर भी जब उसने अपने पतिदेव को न पाया तब हारकर एक शिला पर बैठ गई और विलाप करने लगी, कि हे महाबाहो! आप मुझे इस निर्जन बन में छोड़ कर

कहां चले गये हैं, हे नाथ! इस भयानक बन में हिंसक जन्तु मुझे देख देखकर गुर्राते हैं और खाने को दौड़ते हैं, आप क्यों नहीं मेरी रक्षा करते? हे बीर! मैं आपके दर्शनों की लालसामें पागलों की नाईं बन २ छान रही हूं, परन्तु आपका हृदय न जाने क्यों इतना कठोर होगया है! हे धर्मपुत्र! इस प्रकार विलाप करती हुई वह उस शिला परसे उठकर फिर उत्तर दिशाकी ओर चली और चार दिन पर्य्यन्त चलकर पांचवें दिन एक अति रमणीक तपस्वियों से भरे हुए बनमें पहुंची, वहां कुछ दिन ऋषियों और मुनियों के आश्रमों का दर्शन पा, वियोग से तपे हुए अपने हृदयको शान्त करके वह फिर अगले बनमें चली। हे धर्मपुत्र! उस बनमें बहुतसे सौदागर देश देशान्तरों से बहुतसा माल खरीदकर चले आरहे थे, जब दमयन्ती को उन्होंने इस बनमें अकेले पागलों की नाईं खुले केश आधी धोती लपेटे देखा, तो वह भयभीत होकर अपने सरदार के पास आए। तब सौदागरों का सरदार दमयन्ती के पास आकर बोला, हे देवी! तुम कौन हो, किसकी पुत्री हो? और इस बनमें किस कारण अकेली फिरती हो? क्या तुम इस बनकी देवी हो? अथवा कोई यक्षणी हो? हे सुन्दरि! हम सब तुमको नमस्कार करते हैं, कल्याणि! हमको वर दो, कि हम सब कुशल पूर्वक अपने २ घरों को पहुंच जावें। सौदागरों के सरदार की यह वात सुनकर दमयन्ती बोली, हे भाई! मैं न देवी हूं, न यक्षणी और

न किन्नरी हूं। मैं विदर्भ देश के राजा भीम की पुत्री और निषध देशके राजा नलकी स्त्री हूं। विपत्तिकी मारी अपने पतिको बन बनमें ढूंढ रही हूं, हे भाई! तुम दूर २ से घूमते चले आरहे हो, यदि कहीं नल को देखा हो, जो मेरे ही समान आधी धोती लपेटे हुए हैं, तो मुझे बताओ। तब सरदार ने कहा हे सुन्दरी हम ने नल नाम के किसी मनुष्य को नहीं देखा। यह सुनकर दमयन्ती ने सरदार को पूछा कि तुम्हारा यूथ यहां से किधर जाएगा? तब सरदार ने उत्तर दिया हे भीम नन्दनी! यह सब माल चंदेरी के राजा सुबाहु का है और हम सब वहीं जा रहे हैं।

अथ चौथा अध्याय।

व्यासदेवजी बोले हे युधिष्ठिर! सौदागरों के सरदार की इतनी बात सुनकर मन में पति के दर्शनों की इच्छा रखती हुई दमयन्ती उन सौदागरों के यूथ के साथ २ चलने लगी। जब चलते २ सूर्य्य अस्त हो गया तो वह सब एक सरोवर के तट पर ठहर गये और उन्हों ने रात्रि व्यतीत करने के लिए वहीं पड़ाव डाल दिया। दमयन्ती भी जंगली जीवों के भय से वहीं ठहर गई। हे धर्मराज! वह सौदागर लोग अपने २ भोजन पका और खाकर, घोड़ा गधा और बैलों को चारा डालकर सुख से रात्रि के समय अपने घरों बाल बच्चों और स्त्रियों की बातें करते हुए सो गए। बेचारी दमयन्ती भी जिस ने कई दिनों से

रानीने अति प्रसन्न होकर कहा, हे कल्याणि! तुमने जो कुछ कहा है, वह सब उचित ही है और मैं इसे स्वीकार करती हूं।

अथ पांचवां अध्याय ।

इतनी कथा सुनाकर श्रीवेदव्यासजी बोले, हे राजा युधिष्ठिर! इधर तो दमयन्ती चन्देरी रानी के महलों में निवास करने लगी, और उधर राजा नल दमयन्ती को त्यागकर महा बनोंमें भटकते अनेक दुःखों को सहन करने लगे। घोर वर्षा और सूर्य्य की प्रचण्ड धूपमें घूमते २ उनका मुख जो कि पहले गौर वर्ण था, ऐसा सांवला हो गया, कि उनका पहिचानना कठिन होगया। प्रतिदिन के अनाहारने उनके मोटे शरीर को सुखाकर कांटा कर दिया, मुख की आकृति बदल गई और वह महा दीन होगये। इसी दीन अवस्था में चलते २ वह राजा ऋतुपर्ण की अयोध्या नामक नगरी में पहुंचे, और वहां जाकर महाराज से बोले, कि हे राजन्! मेरा नाम बाहुक है, मैं सारथी का काम जानता हूं, रथ चलाने में मेरे समान संसार में दूसरा कोई मनुष्य नहीं है, इसके अतिरिक्त राज्य के अन्य कार्य्यों में भी आप मेरी सम्मति ले सकते हैं, क्योंकि बाल्यावस्थासे लेकर मैं राजाओं के पास ही सेवा करता रहा हूं। रसोई मेरे समान कोई दूसरा नहीं बना सकता और सब प्रकार की शिल्प विद्याएं मैंने सीखी हैं, इस कारण आप मुझे अपनी सेवा में रखलें, आप गुणों को परखने वाले प्रसिद्ध हैं, यही सुन

कर मैं आपके पास आया हूं। यह सुनकर महाराज ऋतुपर्ण बोले, हे बाहुक! मैं तुम्हें देखकर प्रसन्न हुआ। घुड़साल के लिए मुझे एक चतुर मनुष्य की आवश्यकता थी, सो तुम मेरे अश्वपाल नियुक्त हुए, मेरे दोनों पहले अश्वपाल आज से तुम्हारे सहायक होंगे। इतनी कथा सुना कर व्यासदेवजी बोले हे धर्मपुत्र! उस दिन से राजा नल अश्वपाल बनकर घुड़शाल में रहने लगे। वहां दिन भर घोड़ों को देखते उन के रोगोंकी चिकित्सा करते और अनेक उपाय से उनको तेज़ चलने की शिक्षा देते थे, परन्तु रात्रिके समय अपने मलीन कंबलपर बैठकर जब वह कोठड़ी में सोने लगते उस ससय यह दोहे नित्य पढ़ा करते-

दोहा—तू कुलवन्ती तप्त हृदय, भूख प्यास रही झाल।
नग्न शरीरी थकी भी, अति सुन्दर मुख बाल॥
मुझ मन्द भागी पुरुष को, करती होगी याद।
जो अर्ध निशा को त्याग कर, दन्हिा तुझे विषाद॥
रानि खानि सकल गुण, रूप यौवनकी रास।
न जाने किस ठौर तू, करती होगी वास॥
मैं दुखिया अति दीन, हीन छबि सहुं कष्ट इत।
चिन्ता इक तव नार, और न चेतहुं राज्य वित॥

हे धर्म पुत्र! सुबाहु के मुख से प्रति दिन यह दोहे सुन कर एक दिन उसके सहायक अश्वपाल ने पूछा कि सारथि! आप प्रतिदिन यह दोहे पढ़ कर किसको स्मरण करते हो? तब बाहुक ने उत्तर दिया कि हे भाई! किसी

अभागे की एक परम प्यारी स्त्री थी वह उसको बनमें साथ लाया और उसे सोती हुई को त्यागकर चला गया। उसको पति परायणा नारी भूख प्याससे व्याकुल हुई उसको बन बनमें ढूंढती फिरती है और उसके वियोगकी अग्नि में जल रही है और उसका पति उसके बिछोड़ेमें मर रहा है वह रात्रि के समय अकेला उसके विरह में यह दोहे गाता है, ऐसा एक मनुष्य मैंने देखा है, उसीके दोहे मैं बोलता हूं।

अथ छठा अध्याय।

इतनी कथा सुना कर वेदव्यास जी बोले हे युधिष्ठिर इधर तो राजानल दिनरात अपनी परम प्यारी दमयंतीको चिंतन करता हुआ अश्वपाल बनकर अपने विपत्ति के दिनों को गिनने लगा और उधर दमयंतीके पिताने जब यह सुना कि राजा नल जूएमें राज पाट हारकर दमयंती समेत कहीं बनमें चला गया है तो उसके कष्टका पारावार न रहा। उस ने उसी समय बड़े चतुर गुप्तचरों को जो जातिके ब्राह्मण थे अपने पास बुलाया और उनको कहा कि हे विप्र! तुम सब इसी समय देश देशान्तरों बनों उपबनों और जहां तहां नगरों और गाओंमें जाओ और राजा नल तथा दमयंती की खोज करो। जो कोई तुममें से उनका पता पावेगा, उस को मैं एक हजार गौ स्वर्ण के भूषणों वाली दूंगा। हे धर्मपुत्र! राजा भीमकी आज्ञा पाकर वह सब ब्राह्मण चारों दिशाओं में जाकर ढूंढने लगे। उन्होंने प्रत्येक बन, नदी,

पर्वत, नगर और गाओं छान मारे, परन्तु राजा नल का कहीं पता न मिला। अन्तमें दैवयोगसे सुदेव नामक एक ब्राह्मण चन्देरी देशकी राजधानी चेदिपुर में जा निकला, और सारी नगरीको देखते देखते वह राजमहलमें पहुंचा। वहां उसने देखा, कि महाराज ऋतुपर्णकी कन्या सुनंदा के पास एक अतिसुन्दरी लावण्यवती परन्तु साधारण और मोटे वस्त्र पहरे शीतसे कुम्हलाई हुई कमलिनीके समान बैठी है। उसे देखकर ब्राह्मणने विचारा कि, यद्यपि इस सुन्दरीके वस्त्र दासियोंके से हैं, परन्तु इसके मुखपर महा-रानियोंका तेज और ऊंचे कुल की गम्भीरता झलक रही है, इसलिए यह दासी नहीं, अवश्य ही कोई राज-लक्ष्मी है, जो अपने विपत्तिके दिन इस वेशमें गुप्तरूपसे बिता रही है, और इस रूपकी किसी कन्याको मैंने पहले भी कहीं देखा है, परन्तु बुढ़ापेके कारण स्मरण इस समय नहीं होता अथवा यही महाराज भीमकी कन्या दमयन्ती है, क्योंकि यद्यपि युवावस्था होनेसे इसके रूप और आकारमें बहुत परिवर्त्तन आगया है, परन्तु अभी तक वह चेहरा मोहरा सर्वथा लोप नहीं हो गया। मैंने इसे बाल्यावस्था में बहुत देर तक अपनी गोद में खिलाया है। हे धर्म पुत्र युधिष्ठिर! जब सुदेव ब्राह्मण दमयन्ती को देखकर इस प्रकार मन में तर्कना कर रहा था, उधर दमयन्ती भी उसकी ओर एक टक लगाए विचार कर रही थी, कि हो न हो यह वही वृद्ध ब्राह्मण है, जिसको मैंने अपने पिता के गृहमें

कई बार मङ्गल उत्सवों में पूजा कराते देखा है, परन्तु यह यहां किस कारण से आया है। इस प्रकार जब दोनों के नेत्र चार हुए, तो ब्राह्मणने दमयन्ती के निकट जाकर पूछा, हे देवी! तुम कौन हो ? किसकी तुम कन्या हो ? तुम्हारा क्या नाम है और तुम्हारे स्वामी कौन हैं ? हे पुत्रि ! तुम्हारे चेहरे मोहरे को देखकर मुझे सन्देह होता है कि जिसकी खोज में मैं देश देशमें घूम रहा हूं, वह भीम-कन्या दमयन्ती कदाचित् तुम ही हो। ब्राह्मण के वचन सुनकर दमयन्ती के नेत्रों से आंसू निकल आए और वह रोकर बोली, हां ब्राह्मण देव! आपका विचार ठीक है, मैं ही अभागिन भीमकन्या दमयन्ती हूं और पति से त्यागी हुई असह्य दुःख उठाती हुई अपनी मृत्यु की प्रतीक्षा कर रही हूं। दमयन्तीके वचन सुनकर ब्राह्मण के नेत्रोंमें भी आंसू भर आए और वह उसके सिर पर प्यार देकर बोला, हे पुत्रि ! तू मत रो, तेरी दुर्दशा देख कर मेरा हृदय दुःखसे फटा जारहा है हे, बेटी! तेरे पिता की आज्ञा पाकर तुम्हें ढूंढता हुआ अनेक बनों, पर्वतों और नदियोंको पार करता मैं सौभाग्यसे तुझे यहां देखता हूं, अब जो कुछ पिछे होचुका, उसका सोच करना व्यर्थ है। हे पुत्रि! भाग्यसे ही सब दुःख और सुख होते हैं। अब तू शीघ्र ही अपने पिताके गृहको चल, जो तेरे वियोगसे अति दुःखी हो रहे हैं। इस प्रकार दमयन्ती को सब प्रकार से धीरज देकर ब्राह्मणने चंदेरीकी महारानीको दमयन्ती

का सारा हाल सुनाया, जिसे सुनकर वह अति दुःखसे बोली, हे पुत्रि! तू मेरी भाञ्जी है, तेरी मां और मैं दोनों सहोदरा बहन हैं। मैं एक वार तुम्हें देख चुकी हूं, परन्तु अब तू युवावस्था को प्राप्त हुई है। इस कारण मैं तुम्हें पहचान नहीं सकी। इतना कहकर उसने दमयन्ती को गोदमें बैठा लिया। और फिर एक बड़ी सुन्दर पालकी और १६ कहार और कुछ सिपाही साथ देकर दमयन्ती को विदा किया।

हे राजन् दमयन्ती जब अपने पिता के घर पहुंची, तो माता को देखकर बहुत रोई और अपने सारे दुःखों को उसके सामने कहा, जिसे सुनकर उसकी माता भी विलख विलख कर रोई और, फिर उसे प्यार देकर बहुत कुछ धीरज दिया। इसके पश्चात् महाराज भीमदेव ने ब्राह्मणों को बुलाकर आज्ञा दी, कि हे विप्रगण! तुम सब शीघ्र ही जाकर राजा नलको ढूंडो और जो कोई उसका पता लाएगा, मैं उसे धन धान्य से पूर्ण कर दूंगा। यह कहकर राजाने ब्राह्मणों को रणवासमें भेजा, कि वह दमयन्ती से पूछलें, कदाचित् वह कोई उसका ठौर ठिकाना व चिन्ह बतलाए। तब सब ब्राह्मण दमयन्ती के पास आकर कहने लगे, कि हे पुत्रि! हम राजा नलकी खोज में जाते हैं, तूने अपनी ओर से कुछ कहना हो तो कहो। यह सुन कर दमयन्ती बोली, हे विप्रगण! आप लोग सब देशों में जा कर यह दोहे पढ़ना, किः—

भूखी प्यासी सोगई अरु लीनों वस्त्र फार ।
संग लीनी त्याग दीनी निरअपराधन नार ॥
अर्ध नंगी वह अर्धङ्गी उठी सोकर दीन ।
तव दरस विन तड़पती है जल बिना जिम मीन ॥
वह बिलापिन मरे तव बिन देखे प्रीतम सोच ।
देहि आधा वस्त्र देहि आय कर दुःख मोच ॥

जिसका अर्थ यह है कि हे प्राणपति ! आपने गृह-त्याग के समय मुझे साथ लिया और बिना अपराध के ही त्याग दिया । भूखी प्यासी सोई हुईका आधा वस्त्र लेकर आप चले गए। और जब आपकी दासी सोकर उठी तो आपको न देखकर ऐसे तडपने लगी, जैसे जल के विना मछली तड़पती है । हे नाथ ! वह विलाप करती हुई मर रही है, हे प्यारे आप विचार करो, उसको अपने हाथ से आधा वस्त्र देकर उसका दुःख दूर करो हे ब्राह्मणो ! इन दोहों को जहां जाओ वहीं पढो, जो मनुष्य इनको सुनकर कुछ दुःखी हो अथवा सुनकर आप की ओर बार २ देखे, ठंडे सांस लेवे, उसका पूरा पता लो और फिर लौट कर मुझे उसका सारा हाल बताओ । हे महाराज युधिष्ठिर जी ! दमयन्ती के इस प्रकार समझाने पर वह ब्राह्मण वहां से विदा हुए और राजा नल को चार कूंट में ढूंडने लगे ।

अथ सातवां अध्याय ।

व्यासदेव जी बोले हे राजा युधिष्ठिर ! राजा नल की

खोज में गए हुए ब्राह्मणों को जब बहुत दिन व्यतीत हो गए, परन्तु किसी ने भी लौटकर उसका पता न दिया। तब महारानी दमयन्ती पति के वियोग में अति दुःखी होने लगी। उसने खाना, पीना त्याग दिया। उसको न दिन को सुख और न रात्रि में निद्रा आती थी। वह क्षण २ में पतिकी याद में तड़पने लगी। उसकी माता ने उसे बहुत समझाया और अनेक प्रकार से धीरज दिया परन्तु उस सती नारी का हृदय एक क्षण भी शान्ति न पाता था। एक दिन वह अकेली बैठी रुदन करती हुई भगवान् से प्रार्थना कर रही थी कि हे अन्तर्य्यामी भगवान्! आप सब के हृदयों को जानने वाले हे प्रभु मैं अपने पति के चरणों के दर्शनों की प्यासी दिन रात मछली की नाईं तड़प रही हूं। हे नाथ इस दासी के संकट काटो इस प्रकार वह विकल हो कर रो रही थी कि उसी समय प्रहलाद नामक एक ब्राह्मण वहां आ पहुंचा। उसने दमयन्ती को रोते देखकर कहा हे पुत्रि! उदास मत हो मैं तेरे पति राजा नल का पता लेकर आया हूं। हे राज कन्या! बहुत से देश और नगर ढूंडता २ मैं अयोध्या नगरी में पहुंच कर और उस के चौक २ और गली २ में आप के बताए हुए दोहे पढ़ने लगा परन्तु किसी मनुष्य ने भी उनका उत्तर न दिया इसके पश्चात् हे पुत्रि! जब मैं राज महल को देखता हुआ महाराज ऋतुपर्ण की घुड़शाला में घोड़े रथ आदिक देखने गया और वहां पर भी वही दोहे पढ़े तब बाहुक

नामक एक मनुष्य ने जो अयोध्या नरेशका अश्वपाल है, रंग का सांवला और महां विरुप सा है, महाराज का सारथि और घोड़े हांकने में बड़ा प्रवीण है मेरे मुख से कहे गये दोहों को सुनकर उसने लंबे लंबे सांस लिये मानों इन दोहों के साथ उसका कोई विशेष सम्बन्ध था उस समय उस के नेत्रों से आंसु निकल रहे थे तब वह मेरे पास आया और आंसु पोंछ कर बोला हे विप्र! सती साध्वी और कुलवंती नारी अपने मूर्ख पति से त्यागी हुई भी उसके वियोग में अत्यन्त दुःख सहन करती है और ऐसी अवस्था में भी उसपर क्रोध नहीं करती धन्यहै उसको ऐसी कुलवंती स्त्री संसार में दुर्लभ है। हे राजकुमारी मैं उसकी यह भेद भरी बात सुनकर तुरंत ही वहां से चला आया हूं। इस लिए तुम शीघ्र ही अपने पिता को कहला भेजो। हे राजा युधिष्ठिर! प्रहलाद ब्राह्मण की बात सुन कर दमयन्ती तत्काल अपनी माता के पास गई और सारा हाल उसको सुना कर बोली हे माता! सुदेव नामक ब्राह्मण को इसी समय अयोध्या नगरी में भेजो जो जाकर मेरे पति को वहां से ले आवे उसके यहां आने का उपाय यह है कि ब्राह्मण के हाथ महाराज ऋतुपर्ण को संदेशा भेजो कि दमयन्ती का पति चिरकाल से कहीं चला गया है और बहुत खोज करने पर भी उसका कहीं पता नहीं लगा इस कारण दमयन्ती का दोबारा विवाह करने को निश्चय किया गया है और आपको भी स्वयंबर में सम्मिलित

होने का निमंत्रण दिया गया है। हे माता! यह उपाय पिता जी को भी न कहना और ऐसा गुप्त रखना कि किसी को भी इसका पता न लगने पावे। हे राजा युधिष्ठिर इस प्रकार दमयन्ती ने माता के साथ सलाह करके सुदेव ब्राह्मण को कई एक बातें समझाकर महाराज ऋतुपर्ण के पास भेजदिया। तब वह ब्राह्मण दमयन्ती का संदेशा लेकर अयोध्या पहुंचा और राज दर्बार में जाकर महाराज ऋतुपर्ण से बोला हे राजन्! महाराज भीम की पुत्री दमयन्ती का स्वयंबर परसों प्रातःकाल होना नियत हुआ है। अनेक देश देशान्तरों के राजा वहां आयेंगे आपको भी महाराज ने स्वयंबर में सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया है। तब महाराज ऋतुपर्णने ब्राह्मण को मणिरत्न काञ्चन आदि से सत्कार किया और दूसरे दिन स्वयंबर में पहुंचने का वचन करके उसको विदा किया।

अथ आठवां अध्याय।

इतनी कथा सुनाकर वेदव्यास जी बोले हे राजा युधिष्ठिर दूसरे दिन प्रातःकाल ही महाराजा ऋतुपर्ण ने बाहुक (नल नाम वाले) को बुलवाकर दमयन्ती के स्वयंबर का सारा समाचार कहा जिसे सुनकर राजा नलका हृदय फट गया आंखें पथरा गईं और माथा नाना प्रकार के विचारों से घबरा उठा, परन्तु क्या करे और किस को अपना हाल सुनावे निदान मन ही मन अपनी हृदय

पीड़ा को दबाकर उसने निश्चय किया कि कल प्रातःकाल महाराज को लेकर वहां अवश्य पहुंचूंगा और अपने नेत्रों से देखूंगा कि किस प्रकार पतिव्रता दमयन्ती अपना दूसरा विवाह करेगी। इस प्रकार मन में विचार कर के बाहुकने दीनता के साथ हाथ जोड़ कर महाराज ऋतुपर्ण को कहा हे राजन्! मैं आपको पाहुंचा दूंगा आप विश्वास रखें। इतना कह कर घोड़शाला में जाकर उस ने दो अति दुबले पतले वायु के समान तीक्ष्ण गति वाले घोड़े चुन लिये जो सिन्धु देश से आए हुए थे। उन घोड़ों को देखकर महाराज क्रोधित होकर बोले कि हे बाहुक ! क्या तुम मेरे साथ ठट्ठा कर रहे हो अथवा छल कर रहे हो! भला तुम ही कहो यह दुबले अधमरे घोड़े कई सौ कोस किस प्रकार एक दिन रात में पहुंच सकेंगे और मैं इतनी दूर क्योंकर विर्दभ देश में पहुंच सकूंगा यह सुनकर बाहुक बोला हे राजन् यही घोड़े ठीक समय पर वहां पहुंच सकेंगे आप शंका न करें। इतना कहकर बाहुक ने दोनों घोड़ों को रथ के आगे जोड़ दिया। हे राजा युधिष्ठिर! तब महाराज ऋतुपर्ण तुरंत उस रथ पर सवार हुए और आगे सारथि के स्थान पर राजा नल जो इस समय बाहुक कहलाते थे हाथ में रासें पकड़ कर बैठ गए और रथ को हांकने लगे। बाहुक का घोड़ों को एड़ी लगाना था कि वह पवन से बातें करने लगे। उन के पेट भूमि के साथ लगते थे। उन के खुरों से उड़ी हुई धूल से

अंधेरी छा रही थी। राजा ऋतुपर्ण वाहुक की चतुरता देखकर मन ही मन बहुत प्रसन्न हुए। जिस प्रकार आकाश में उड़ने वाले पक्षि अति शीघ्र अपने स्थान पर पहुंच जाते हैं उसी प्रकार बहुत थोड़े समय में राजा नल ने नदियां पर्वत बन और झीलों को पार किया। इस प्रकार गरुड़ पक्षि की नांई वेगसे चलते हुए रथमें से महाराज ऋतुपर्ण का वायु के झकोले से दुपट्टा गिर गया। तब महाराज ने जल्दी से कहा हे बाहुक रथको खड़ा करो मेरा दुपट्टा गिर गया है। तब बाहुक ने उत्तर दिया राजन्! आपका दुपट्टा यहां से चार योजन पीछे रह गया है कौन लावेगा, अब वह दुपट्टा आप को नहीं मिल सकता। बाहुक के इतना कहते कहते रथ एक बहेड़े के पेड़ के पास जा ठेहरा। तब बाहुक की विद्या पर अति प्रसन्न होकर महाराज ऋतुपर्ण बोले कि हे बाहुक! आप बड़े चतुर हो परन्तु मेरी भी एक विद्या देखो सब मनुष्य सब विद्याएं नहीं जान सकते। सकल विद्या संपन्न तो एक परमात्मा ही है। हे बाहुक! इस वृक्ष पर जितने फल और पत्ते हैं मैं अक्ष विद्या द्वारा सब बतला सकता हूं, देखो इस पेड़ की इस शाखा पर एक लाख दस सहस्र पत्ते हैं और इस में दस सहस्र फल हैं इस में तनिक भी संशय नहीं है तब बाहुक ने कहा हे राजन्! जब तक मैं इन पत्तों और फलों को गिन न लूं तब तक रथ खड़ा रहे। यह कहकर बाहुक ने रथ से उतर कर उस

शाखा के फल पत्ते गिने तो एक भी न्यून अधिक न निकला। यह देखकर बाहुक ने आश्चर्य्य चकित होकर कहा हे राजन्! आपकी बुद्धि अपार है कृपा करके यह विद्या मुझे सिखलाओ और इस के बदले में अश्वविद्या मैं आपको सिखलाता हूं। तब राजा ऋतुपर्ण ने प्रसन्न होकर अक्षविद्या बाहुक को दी और उससे अश्व विद्या को प्राप्त किया। इसके अनंत्तर बाहुक ने फिर रथ को चलाया और उसी प्रकार वायु के समान रथ पर चलते हुए वह सायंकाल को कुंदनपुर के द्वार पर जा पहुंचे।

अथ नवमां अध्याय।

इतनी कथा सुनाकर वेद व्यास जी बोले हे राजा युधिष्ठिर! महाराज ऋतुपर्ण जब कुंदनपुर के द्वार पर पहुंचे तो पहरेदारों ने तुरंत जाकर महाराज भीम को उनके आने की सूचना दी। इधर दमयन्ती ने भी जब सुना महाराज ऋतुपर्ण आगए हैं तो वह जान गई कि मेरे पति अवश्य साथ आए होंगे, परंतु यह विचार करके कि पहले अपने नेत्रों से उनको देख लेना चाहिए तब इस भेद को पिता के सामने प्रगट करना उचित है, वह महल की अटारी पर जाकर रथ की ओर देखने लगी। वहां उस ने महाराज ऋतुपर्ण के पास खड़े हुए सारथी के रूप में अपने पति के दर्शन किये। इतने में महाराज भीम भी अपने मंत्री मंडल के साथ महाराज ऋतुपर्ण के स्वागत के लिए वहां आ पहुंचे। और

बड़े आदर सहित उनकी कुशल पूछ कर उनके अकस्मात् आने का कारण पूछा। तब राजा ऋतुपर्ण ने दमयंती के स्वयंबर और ब्राह्मण की ओर से उस में सम्मिलित होने के निमंत्रण का सारा हाल बताया जिसे सुनकर महाराज भीम बड़े विस्मित हुए। परन्तु इस का कोई उत्तर न देकर उन्होंने यह कहा कि हे महाराज! यद्यपि मुझे इस विषय में कुछ भी पता नहीं है कि आपको इतना कष्ट किस ने दिया है परन्तु यह काम मेरी कन्या दमयंती का है ऐसा प्रतीत होता है, इस लिए हे राजन्! आप निस्संकोच होकर मेरी राजधानी को अपना घर समझें और कुछ दिन यहां निवास करके मेरी नगरी को पवित्र करें इतने अवसर में मैं सब बातका महारानी से पता लूंगा। यह कह कर महाराज भीम राजा ऋतुपर्ण को बड़े सत्कार के साथ एक विशाल और अति मनोहर महल में ले गये जहां राजा ऋतुपर्ण कुछ दिन केलिए विश्राम करने लगा। इधर दमयंती ने अपनी केशनी नाम की दासी को कहा कि हे सखि! तुम जाकर राजा के सारथी वाहुक का पता लो, यह राजा नल ही है इसका मुझे पूरा २ निश्चय हो चला है, क्योंकि क्षत्राणी स्त्रियों का हृदय कभी किसी पर पुरुष को देखकर इस प्रकार बिकल नहीं होता जैसा कि इन्हें देख कर मेरा हो रहा है। इस लिये हे केशनी! तू उसके पास जाकर वही दोहे पढ़ जो पहले ब्राह्मण ने पढ़े थे। और जो कुछ उसका उत्तर वह कहें मुझे आकर सुना। दमयंती की आज्ञा पाकर

केशनी ने बाहुक के पास जाकर वही दोहे पढ़े और कुछ इधर उधर की बातें भी कीं जिसको दमयंती अपने महल पर चढ़कर बड़े उत्सुक नेत्रों से देखती रही। केशनी ने दोहे पढ़कर कहा हे बाहुक! किस कारण आप यहां आए हैं, मेरी स्वामिनी दमयंती इस बात को जानना चाहती है। यह सुन कर बाहुक ने कहा हे सुंदरी! महाराज ऋतुपर्ण को ब्राह्मण ने संदेशा दिया कि कल प्रातःकाल ही दमयंती का दूसरा स्वयंबर होगा, ऐसा संदेशा पाकर चार सौ कोस प्रतिदिन चलने वाले शीघ्रगामी घोड़ों के रथ पर सवार होकर महाराज यहां पहुंचे हैं और मैं उनका सारथी हूं। तब केशनी ने फिर पूछा हे बाहुक! आप राजा ऋतु पर्ण के पास कब से नौकर हो और यह काम आपको कैसे मिला है? बाहुक बोले हे कल्याणी! मैं अश्वविद्या में अति प्रवीण हूं, देश देशान्तरों में घूमता फिरता सौभाग्य से अयोध्या में पहुंच गया और महाराज का सारथी बना।

दसवां अध्याय।

केशनी बोली हे बाहुक! महारानी दमयन्ती अपने पतिराजा नल के वियोग में अति दुखित हो रही है। उस ने देश देशान्तर में उस की खोज के लिए ब्राह्मणों को भेजा। उन ब्राह्मणों में से एक ने अयोध्या पुरी में जाकर जब यह दोहा पढ़ा—

दोहा—संग लीनी त्याग दीनी निरपराधन नार।
भूखी प्यासी सो गई, लीन्हे वस्त्र उतार॥

तो आप ने इस दोहे को सुन कर ठण्डी सांस ली। इस से उस ब्राह्मण द्वारा और इस समय आप के रंग रूप से भी यही जान पड़ता है कि आप बाहुक रूप में स्वयं राजा नल ही हैं, सो हे बाहुक! यदि मेरा विचार सत्य है तो आप मेरी बातों का साफ़ साफ़ उत्तर दें। केशनी के ऐसे वचन सुनकर महाराज नल का हृदय विह्वल हो उठा और उन्होंने बड़ी कठिनता से अपने आप को संभाल कर कहा हे दासी! जो सतवंती नारी अपने पति के हाथ से दुःख पाकर भी उससे प्रेम करती है और उसकी आज्ञा पालन करती है सचमुच उसने त्रिलोकी को जीत लिया है, हे दासी! यद्यपि राजा नल अपनी मूर्खता से राज पाट हार कर अपनी निर्दोष स्त्री को घोर बन में अकेली छोड़ गया परन्तु धन्य है उस की स्त्री दमयन्ती को जिस ने अपने अवगुण हार पापी पति का प्रेम नहीं त्यागा। इतना कहते कहते राजा नल का कण्ठ रुक गया नेत्रों में आंसु भर गए और बहुत रोकने पर भी अन्त में वह रो उठे। बाहुक को रोते देख केशनी दमयन्ती के पास गई उसे सारा हाल कह सुनाया कि हे कल्याणी! वह बाहुक आप का नाम लेते ही रो पड़े हैं। दासी की बात सुन कर दमयन्ती अत्यन्त शोकातुर होकर बोली हे केशनी! तू एक बार फिर वहां जा और उनकी हरएक चेष्टा को अच्छी तरह देख कर यहां आ। दमयन्ती की आज्ञा पाकर केशनी तुरन्त वहां पहुंची और चुपचाप एक कोने में बैठ कर बाहुक के

प्रत्येक कार्य्य को देखने लगी, और कुछ देर पीछे लौट कर दमयन्ती से बोली कि हे कल्याणी! बाहुक के अश्व सम्बन्धी और भोजन सम्बन्धी कामों को देखकर मैं आश्चर्य्य चकित होगई हूं। ऐसे उत्तम पदार्थ देवता लोग ही बना सकते हैं, मनुष्य को ऐसी रसायन विद्या दुर्लभ है, हे भामिनी! अब जो आज्ञा हो सो करूं। दासी की बात सुन कर दमयन्ती बोली हे सखि! वह राजा नल ही हैं अब मुझे निश्चय होगया है क्योंकि उनके समान दिव्य भोजन बनाने वाला संसार में दूसरा नहीं है, परन्तु तू अब फिर जा और जहां राजा ऋतुपर्ण की रसोई बन रही है वहां से बाहुक के हाथ का बना हुआ कोई पदार्थ ले आ। तब केशनी रसोई घर में पहुंची, वहां बाहुक राजा के लिए भोजन बना रहा था उस से थोड़ा सा साग लेकर उसने दमयन्ती को दिया। उस साग को दमयन्ती ने बार बार देखा और फिर चखा तो मन में निश्चय हुआ कि इस साग के बनाने वाले मेरे पति देव ही हैं इस में तनिक भी संदेह नहीं क्योंकि मैंने उनके हाथ का बनाया हुआ साग कई बार खाया है, और मैं उनके स्वाद को पहचानती हूं हे राजा युधिष्ठिर! इस प्रकार निश्चय करके वह प्रफुल्लित्त होकर उठी और हाथ मुख धोकर अपने दोनों बालकों को केशनी के साथ करके बोली हे सखि! इन को बाहुक के सन्मुख लेजा। तब केशनी इन्द्रसेन और इन्द्रसेना दोनों को लेकर बाहुक के सामने आई। उस समय राजा नल अपने पुत्र और

पुत्री को देख कर अत्यन्त दुःखी हुए और रोकर केशनी से बोले हे कल्याणि ! यह दोनों बालक तो मेरे ही बालकों के समान प्रतीत होते हैं, क्योंकि इन को देख कर मेरे नेत्रों से हठात् आंसु बह निकले हैं, परन्तु हाय शोक ! आज यह बालकों का जोड़ा राजा नल का है, कल किसी और का होजाएगा। यह वचन सुन कर केशनी बिना कुछ उत्तर दिये दोनों बालकों सहित दमयन्ती के पास आई और उसका सारा हाल सुनाया तब दमयन्ती ने अपनी माता को सारा वृतान्त सुनाया और कहा कि हे माता ! केशनी को भेजकर मैंने सब तरह से परीक्षा करली है, यह बाहुक अवश्यमेव मेरे पति ही हैं। अब यदि आप आज्ञा दें, तो मैं स्वयं अपने नेत्रों से देखकर अपने मन का संशय निवृत्त करलूं। तब महाराज भीम ने अपनी पुत्री का भाव समझ कर उसको आज्ञा देदी। तब पिता की आज्ञा पाकर दमयन्ती ने केशनी को संदेशा देकर राजा नल को अपने पास बुलाया, सो वह दमयंती को देखते ही प्रेमवश होकर रोने लगे। बहुत रोकने पर उनके नेत्रों से आंसुओं की धारा बहने ही लगी। उस समय उनके मुख पर प्रेम, दुःख, शोक, पश्चाताप और लज्जा के भाव एक साथ टपक रहे थे, और उनका हृदय एकाएक व्याकुल हो उठा था। इधर दमयन्ती अपने पति को अति दीन दुर्बल और महाविरूप देखकर घोर दुःख को प्राप्त हुई २ रुदन करने लगी। कुछ समय तक

रोकर जब दोनों का मन हलका, हुआ, तो दमयन्ती ने हाथ जोड़ कर कहा, हे स्वामिन् ! यह सब स्वयम्बर की बात केवल आप को मिलने के लिए एक उपाय था जो परमेश्वर की कृपा से सफल हुआ है। हे धर्मपुत्र! चिर-काल से वियोग की अग्नि में जलते हुए वह दोनों इस समय प्रेमके आंसुओं से शान्त होने लगे। तब दमयन्ती को पाकर राजा नल अति प्रसन्न होकर अपने देश को लौटे और अपने भाई पुष्कर को बोले कि हे भाई! तुम से हारकर मैंने बहुत कष्ट उठाए परन्तु उस में तुम्हारा कोई दोष नहीं यह सब भाग्य की बात है, दैव जो चाहता है कराता है, इस कारण दैव को प्रबल मानता हुआ मैं एक बार फिर तुम्हारे साथ चौपड़ खेलकर अपने भाग्य की परीक्षा करना चाहता हूं, अब के यदि मैं हार गया तो जब तक जीता रहूंगा तुम्हारा दास बनकर रहूंगा और यदि तुम हार गए तो सब राजपाट जो इस समय तुम्हारा है वह मेरा होगा। हे राजा युधिष्ठिर! इस वचन को स्वीकार करके वह दोनों भाई फिर चौपड़ खेलने लगे। परन्तु राजा नल अब वह पहले राजा नल न थे वह महाराज ऋतुपर्ण से अक्षविद्या सीख कर बहुत चतुर हो चुके थे अब उन्होंने बाजी जीतली और पुष्कर अपने बड़े भाई के पास सब कुछ हार गए। तब राज्य और धनको पाकर महाराज नल और महारानी दमयन्ती सुख से रहने लगे।

इतनी कथा सुनाकर व्यासदेवजी बोले हे धर्मपुत्र!

जिस प्रकार राजा नलपर विपत्ति आई थी उसी प्रकार तुम पर भी आई है इस कारण तुम धीरज रखो, यह समय सदा एक सा नहीं रहता, अच्छे दिन नहीं रहे तो बुरे भी नहीं रहेंगे। यह संसार चक्र के समान सदा घूमता रहता है इस में मनुष्य कभी ऊंचे जाता है और कभी नीचे आता है जो मनुष्य सुख और दुःख में एक समान रहता है वही पंडित है वही ज्ञानी है और वही मुक्त है। इस प्रकार उपदेश देकर व्यासदेव जी वहां से चले गए।

ग्यारहवां अध्याय।

वैशम्पायनजी बोले हे जनमेजय! एक दिन पांचों पांडव बन में आखेट के लिए गए हुए थे, कि पांडवों के आश्रम पर जहां द्रौपदी अकेली बैठी थी सिन्धु देश के राजा जयद्रथ अपनी सेना सहित आ पहुंचे। शिकार की दौड़ धूप से थके हुए वह आश्रम को देखकर अति प्रसन्न हुए और अपने रथ से उतर कर द्रौपदी के सन्मुख आकर बोले हे सुन्दरि! तू कौन है और इस निर्जन बन में अकेली क्यों बैठी है? तब द्रौपदी ने कहा हे राजन्! मैं राजा द्रुपद की कन्या हूं कृष्णा मेरा नाम है। पांडवों की पत्नी होने का मुझे सौभाग्य प्राप्त है। इस समय वह शिकार खेल कर आते ही होंगे आप अपनी सेना सहित यहां विश्राम करें। और उनके आने पर जलपान करके इस आश्रम को पवित्र करें। हे राजन्! द्रौपदी के विशाल नेत्र और दिव्य

सुन्दरता को देखकर राजा जयद्रथ उस पर मोहित हो गया और उसकी कोयल की सी बाणी ने तो मानों उसे बेसुध ही कर दिया। वह कामातुर हुआ २ द्रौपदी से बोला हे सुन्दरि! तुम्हारे इस प्रकार बोले हुए मीठे बचनों से ही तृप्त हो गया हूं आओ मेरे साथ रथ पर चढ़ो और सिन्धु देश की महारानी बनकर सुखसे जीवन व्यतीत करो हे माधुरि! तेरी इन्द्राणी की सी सुन्दरता इस बन में नष्ट होने के योग्य नहीं। इन्द्र के नन्दन बन में महकने वाला फूल इस बन में सड़ता हुआ देखकर मेरा कलेजा छलनी हो गया है। पांडवों की लक्ष्मी अब छिन गई, वह अब कंगाल हैं, बन में भटक २ कर मर जाना ही विधाता ने उनके भाग्य में लिखा है, तू अब उन निर्बुद्धियों का पीछा छोड़ दे, सुन्दरी! सिन्धु और सोवीर देश पर राज्य करती हुई तू मेरे हृदय पर शासन करेगी।

ऐसी हृदय को दग्ध कर देने वाली बातें जब द्रौपदी ने जयद्रथ के मुख से सुनी, तो वह तिऊड़ी चढ़कार परे हट गई और निरादर करती हुई सिंधुराजको बोली, हे निर्लज्ज! गीदड़ होकर सिंह की बलि खाना चाहता है, धिक्कार है तेरे साहस पर। तूने यह शब्द नहीं कहे, परन्तु पर्वत की कन्दरा में सोए हुए सिंह को लात मार दी है। जयद्रथ बोला, हे द्रौपदी! तेरे उन सिंहों को मैं जानता हूं, मैं उनसे तनिक भी डरता नहीं। अब तू अपने आप मेरे रथ पर सवार होजा, नहीं तो मैं बलात् तुझे बांध कर ले

जाऊंगा। यह सुनकर द्रौपदी ने क्रोध से दांत पीसते हुए उत्तर दिया, हे नराधम! तेरी मौत तेरे सिर पर गर्ज रही है, ऐसा प्रतीत होता है। जब तू महापराक्रमी अर्जुन के गाण्डीव धनुष से छूटे हुए बाणों को देखेगा, उस समय तू अपने किये पर पश्चाताप करेगा! वैशम्पायनजी बोले, हे राजा जनमेजय! द्रौपदी के बाणों के समान बचनों को जयद्रथ और न सहार सका। उसने क्रोध से द्रौपदी को पकड़ लिया, और बलसे उठाकर रथमें बैठा लिया। रथ में बैठी हुई द्रौपदी ने धौम्यको प्रणाम किया। तब धौम्य वेग से उस रथ के पीछे प्यादों के मध्य में दौड़ने लगे, परन्तु वायु-वेग से चलते हुए रथ को वह न पा सके, और क्रोध व निराशा से दांत पीसते वापस लौटे।

उधर पाण्डव अनेक मृग, भैंसे, हरिण तथा शशक आदिक मारकर जब अपने आश्रम में लौटे, तो उन्होंने द्रौपदी की दासी की कन्या को रोते देखा। उसी समय अर्जुन रथ से छलांग मारकर उस कन्या के पास गया। तब रोती हुई दासी की कन्या बोली, हे राजन्! सिन्धु देश का राजा जयद्रथ रोती और दुहाई देती हुई द्रौपदी को बल-पूर्वक हरकर लेगया है। अभी वह बहुत दूर नहीं गया होगा, शीघ्र उसका पीछा करो, ऐसा न हो, कि वह कोमलाङ्गी हृदय की वेदना से प्राण त्याग दे। उस कन्या की बात सुन युधिष्ठिर क्रोध से सर्प की तरह फुंकारते, धनुष की टङ्कार करते हुए चारों भाइयों सहित जयद्रथ के

पीछे दौड़े। जब उन्होंने जयद्रथ की सेना के घोड़ों के खुरोंसे उड़ती हुई धूलको देखा, तो उनके क्रोधका पारावार न रहा। वह वायुके समान वेगसे दौड़ते हुए जयद्रथ की सेनापर इस प्रकार टूट पड़े, जैसे बाज कबूतरों के झुंड पर पड़ता है। उसी समय पांचों भाइयों ने जयद्रथ को ललकारा। हे राजन्! पाण्डवों को देखकर सिन्धु देश के लड़ाकोंके धीरज छूट गए सिंह के समान गर्जते हुए भीम ने अपनी गदा से उनको भूमिपर पछाड़ना आरम्भ किया। उसने जयद्रथके हाथी, घोड़े और प्यादों को मारमार कर चूर्ण कर दिया। अर्जुन ने सिन्धुराज के पांच सौ पहाड़ी योधाओंको अपने बाणोंसे मार गिराया। महाराज युधिष्ठिर भीम, नकुल और सहदेव भी बिजलीके समान चारों ओर से शत्रुओंकी सेनाको दग्ध करने लगे। हे राजन्! उस घोर संग्राममें पांडवोंके हाथसे मार खा २ कर जयद्रथ की सेना व्याकुल होकर हाहाकार करने लगी। अपनी सेनाकी ऐसी दुर्गति देखकर जयद्रथनेचुपकेसे द्रौपदीको रथसेउतारदिया और स्वयं भागकर सेनाके मध्यभागमें जाछुपा। भागतेहुए जयद्रथकोदेखकर अर्जुनभीमसेबोले हेमहाबाहो! शत्रुओं के बहुत से वीर मारे गये वह देख जयद्रथ द्रौपदी को छोड़कर गीदड़ की नाईं रथ पर भागा जा रहा है, उसी को पकड़ना होगा। अर्जुन की बात सुनकर भीम ने युधिष्ठिर को कहा हे राजन्! पांओं प्यादा आती हुई द्रौपदी को लेकर नकुल सहदेव के साथ आप आश्रमको लौटजाएं और उसे

धीरज दें, मैं उस कुत्ते सिंधुराजको पकड़कर वहीं आता हूं। मैं इस नीच को जीते जी न छोडूंगा चाहे यह पाताल में भी घुसजाए। यह सुनकर युधिष्ठिर बोले हे भीम! सिंधुराज चाहे कैसा भी नीच होवे परन्तु दुःशाला और गांधारी का स्मरण करके उसे मार डालना उचित नहीं है। तब द्रोपदी क्रोधसे आंसु बहाती हुई बोली हे महाबाहो! उस पापी को अवश्य ही मार डालना, स्त्री और राज्य को हरने वाला वैरी युद्धमें दीनता से प्रार्थना करने वाला भी मार डालने के योग्य है। इस प्रकार युधिष्ठिर और द्रोपदी की आज्ञा पाकर भीम और अर्जुन जयद्रथ के पीछे दौड़े। उस समय जयद्रथ अवसर पाकर एक कोस दूर निकल गया था। परन्तु अर्जुन ने एक कोस दूरसेही अपने बाणोंसे उसके घोड़ों को मार गिराया। अपने घोड़ों को मरा हुआ देखकर जयद्रथ घबराकर उस ओर भागा जिधर घना बन था। परन्तु भीम ने दौड़कर उसको केशों से पकड़ लिया और झटका देकर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। भीमने अपनी लातों के प्रहार से उसकी हड्डियोंको तोड़ डाला और उसे दबाकर जानसेमार डालने का यत्न करने लगा। तब अर्जुनने उसे रोका और महाराज युधिष्ठिरकी बात याद दिलाई। तब भीमने उसकेहाथपैरबांध कर उसके सिर पर अपने पैने बाण से पांच चोटियां बनाई और उसको अपने रथपर डालकर युधिष्ठिर के सामने ले आया। उसे देखकर युधिष्ठिर ने द्रोपदी से कहा हे प्रिये भीमने उसकी पांच चोटियां रख दी हैं अब यह दास हो

गया है इसे छोड़ देना उचित है तब द्रौपदी ने युधिष्ठिरकी आज्ञा पाकर भीमको कहा हे महाबाहो! अब यह राजा का दास हो गया है इसे छोड़दो तब भीमने उसके बन्धन खोल दिये। जयद्रथ उस समय घोर अपमान में डूबा हुआ था उसको सुधि न थी कि वह कहां है उसकी ऐसी अवस्था देखकर युधिष्ठिर ने दया करके कहा हे जयद्रथ! तुम दास नहीं हो, हमने तुमको छोड़ दिया परन्तु फिर कभी ऐसी चेष्टा न करना। यह सुनकर जयद्रथ लज्जा से मुंह लटकाए चुपचाप वहां से चला गया।

अथ बारहवां अध्याय।

सावित्री की कथा

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय! जब जयद्रथ चला गया तो महाराज युधिष्ठिर अपनी बेबसी को देखकर शोक में डूब गये। वह अपनी अपने भाइयों की और द्रौपदी की अवस्था पर विचार करते २ घोर चिंता में मग्न थे, कि इतने में मार्कण्डेय मुनि वहां पर आ पहुंचे। उन्होंने राजाको शोकमें मग्न देखकर बहुत उपदेश दिया और कहा कि हे धर्मपुत्र! क्षत्रिय होकर विपत्ति से घबराना धर्म नहीं है, देखो रामचन्द्र ने १४ वर्ष बन में कितने कष्ट उठाए और महाराजहरिश्चन्द्र चंडाल के घरमें बिकगये पुत्र और स्त्री से वियुक्त हुए परन्तु उन्होंने धीरज नहीं छोड़ा। यह सुनकर युधिष्ठिरने कहा हे महामुनि! मुझे न अपना शोक है न भाइयों का और न राज्यका मुझे केवल द्रौपदी

का दुःख है जुएमें दुष्टोंने हमें जीत कर अपना दास बना लिया और द्रौपदी ने हमारा उद्धार किया फिर बन में जयद्रथने इसको बल से हर लिया, क्या कोई इसके समान सती व पतिब्रता नारी भी होगी जिसने पतिके हाथ से इतना दुख पाया हो? मार्कण्डेय बोले हे राजन्! मद्र देश में अश्वपति नाम करके एक राजा हुआ है। वह बड़ा धर्मात्मा सच्चा जितेन्द्रिय दानी और प्रजाका प्यारा था। उसके गृहमें कोई संतान न थी, जिससे वह सदा दुखी रहा करता था। उस ने संतान उत्पत्ति के लिए सावित्री मंत्रका जप किया, उस जपसे परमेश्वरकी कृपासे उसकी रानी को गर्भ हुआ और कुछ काल पाकर उस गर्भ से एक चन्द्रमुखी कन्या का जन्म हुआ। सावित्री के जापसे उत्पन्न होने करके ब्राह्मणोंने उसका नाम सावित्री रक्खा। हे राजन्! जब वह कन्या किशोर अवस्था को प्राप्त हुई, तो उसके पिता को उसके विवाह की चिन्ता हुई। हे राजन्! पतली कमर, मृग के समान विशाल नेत्रों वाली और स्वर्ण से घड़ी हुई उस कन्या को देखकर लोग समझते थे, कि यह कोई देवकन्या है। उसके तपे हुए स्वर्ण के समान तेज वाले शरीर को देखकर कोई उसको वरने का साहस न करता था। तब अपनी पुत्री के योग्य कोई वर न देख कर राजा अतिदुःखित हुआ। अपने पिताको दुःखी देखकर जब सावित्री ने उन से पूछा, तो राजाने कहा, हे पुत्री! तेरे अब विवाह देने का समय है, और मुझ से कोई तेरे वरने को नहीं

कहता, इस कारण तू आप ही अपने गुणों के सदृश पति को देख। तब पिता की आज्ञा पाकर सावित्री लज्जा से मस्तक झुकाए रथ पर सवार होकर वृद्ध मन्त्रियों सहित तपोबन में पहुंची। वहां कुछ काल ऋषियों, मुनियों और उन के आश्रमों में विद्या पढ़ने वाले विद्यार्थियों के दर्शन करती हुई वह अपने गृह में लौटी। तब उस को पिता ने कहा, हे कल्याणि! विस्तार से अपनी सारी बात कहो, यह महर्षि नारद जी संसार के सकल मनुष्यों को जानने वाले हमारे भाग्य से आज यहां आए हैं। पिता की आज्ञा पाकर सावित्री बोली, हे राजन्! शातव देश में धर्मात्मा क्षत्रिय राजा द्युमत्सेन नाम से प्रसिद्ध थे, वह पीछे अन्धे हो गए। उनके एक पुत्र था, जो आयु में अभी छोटा था। उनके अन्धे होने पर एक निकटवर्त्ती राजाने उनका देश छीन लिया। वह राजा अपनी स्त्री और पुत्र को लेकर तपोबन में चले गए और वहां घोर तपस्या करने लगे। उनका पुत्र सत्यवान् जो राज महल में जन्मा है और पत्तों की कुटिया में पला है वह मेरे योग्य पति है, उसे मैंने अपने मन से वर लिया है। तब राजा ने नारद जी को पूछा कि हे महर्षि! आप सकल संसार को जानने वाले हैं कृपा करके उस बालक सत्यवान् के गुणों का वर्णन करें। नारद जी बोले हे राजन्! सत्यवान् सूर्य्य के समान तेजस्वी बृहस्पति के समान बुद्धिमान् इन्द्र के समान पराक्रमी और पृथिवी के समान सहनशील है उसका रूप कामदेव से

अधिक सुन्दर और दान करने में राजा शिवि से बढ़कर है। परन्तु एक दोष है जो उसके सब गुणों को दबा लेता है और वह यह कि एक वर्ष के अन्दर अन्दर उस की मृत्यु होगी। यह सुनकर राजा बोले हे सावित्री! तुम जाओ और कोई दूसरा वर ढूंडो, उसका एक ही दोष सारे गुणों का नाश करने वाला है। पिता की बात सुनकर सावित्री ने कहा हे पिता जी! कन्या एक ही बार दी जाती है दो बार नहीं, दीर्घायु हो व अल्पायु गुणवान् हो व निर्गुण एक बार जब मैंने उसको मन से वर लिया अब दूसरा मैं न वरूंगी। तब नारद जी बोले हे राजन्! तेरी कन्या धर्म के गूढ़ तत्त्वों को जानती है इस कारण अब इसी का मनोरथ पूरा हो इतना कहकर नारद जी तो चले गए और राजा अश्वपति तपोबन में द्युमत्सेन के आश्रम में पहुंचे और उन को बोले हे राजर्षि! यह सावित्री मेरी कन्या है इसे सत्यवान् के साथ विवाह कर अपनी पुत्र बधु बनाइये। तब द्युमत्सेन ने कहा हे राजन! हम राज्य से भ्रष्ट हुए २ बन में तपस्वियों की भान्ति वास करते हैं, यह तेरी कन्या राज महलों में पली हुई बन के दुःखों को किस प्रकार सहन करेगी। यह सुनकर अश्वपति बोले, सुख दुख को मैं और मेरी कन्या समझते हैं आप निश्चिन्त रहें हे राजन्! मैं सब कुछ समझ सोच कर यहां आया हूं। इस प्रकार दोनों ने निश्चय करके आश्रम वासी ब्राह्मणों को बुलाकर सावित्री के साथ सत्यवान् का विवाह कर दिया और अश्वपति यथायोग्य

दहेज देकर परम प्रसन्न हो अपने घर गया। सत्यवान् उस त्रैलोक्य सुन्दरी सर्व गुणों वाली सुशीला सावित्रीको पाकर अति प्रसन्न था और सावित्री मनोवाञ्छित भर्त्ता को पाकर हर्ष से फूली न समाती थी। हे राजन्! सावित्री के पिता जब घर लौट गए तो उसने सारे भूषण उतार दिये और भगवे वस्त्र पहर लिए। वह नम्रता से, सेवा से और तपस्या से सब को प्रसन्न रखने लगी। सास सुसर की सेवा, पति के साथ प्यार और मीठे वचन समझ सोच कर काम करना और ईश्वर भक्ति आदि गुणों से उस ने सबको मोह लिया। परन्तु इतना करने पर भी उसका मन चिन्ता में डूबा रहता था वह ऊपर से सदा प्रसन्न रहती थी परन्तु नारद ऋषि की बात प्रतिक्षण उसके हृदय में खटकती रहती थी। जूं जूं दिन व्यतीत होते जाते थे त्यूं २ उसकी व्याकुलता बढ़ती जाती थी। जब सावित्री ने जाना कि आज से चौथे दिन उसके स्वामी की मृत्यु होगी तो उस ने अनाहार ब्रत धारण किया और तीन दिन तक खड़े रहने की प्रतिज्ञा की। पति की मृत्यु के दिन से पहली रात उस ने बड़े दुःख से व्यतीत की। दूसरे दिन प्रातःकाल ही उस ने हवन किया और फिर तपोवन के सब ब्राह्मणों ऋषियों और मुनियों को प्रणाम किया। हे भारत ! सावित्री की नम्रता और सुशीलता को देखकर सबने उसे आशीर्वाद दिया कि पुत्रि! तू सदा सुहागिन रहेगी। इसके पश्चात् जब भोजन करने का समय आया तो सास सुसरने उसे भोजन

करने के लिए कहा तब सावित्री ने उत्तर दिया कि मैं सूर्य्यास्त होने के पश्चात् जब मेरी मनोकामना पूरी हो जाएगी तब भोजन करूंगी, यही मेरा संकल्प है। हे जनमेजय उसी समय सत्यवान् कन्धे पर कुल्हाड़ा रख कर यज्ञ के लिए लकड़ियां काटने बन को चले। तब स्वामी को बन में जाते देखकर सावित्री बोली हे नाथ! आज मैं आप के साथ बन को चलूंगी आपका अकेले जाना उचित नहीं कृपा करके मुझे अपने साथ चलने की आज्ञादें। सत्यवान बोले हे प्रिये! यदि अनाहार ब्रत से तू थकी नहीं तो मेरे साथ चल सकती हो परन्तु पिता जीसे इसकी आज्ञा ले लो। तब उस पति परायणा ने सास सुसर को हाथ जोड़कर कहा कि मेरे स्वामी यज्ञ के लिए लकड़ियां काटने बनको जा रहे हैं मैं भी उनके साथ जाना चाहती हूं मुझे आज उनको अकेले भेजना योग्य नहीं है। तब उन दोनों से आज्ञा पाकर सावित्री ऊपर से हंसती और अन्दर से दुखित हुई पति के साथ गई। बनमें जाकर सत्यवान ने बहुतसी लकड़ियां काटीं, जिस से उसको थकान प्रतीत होने लगी। तब वह थकान से दुखी हुआ २ मस्तक पकड़ कर सावित्री से बोला हे प्रिये। लकड़ियां काटते २ मैं थक गया हूं और मेरे सिर में घोर पीड़ा होने लगी है। इतना कहकर वह भूमि पर लेट गया। सावित्री ने उदास होकर उस निर्जन बनमें अपनी जंघा पर पति के सिर को रक्खा और भूमि पर बैठ गई। हे

जनमेजय! क्षणमात्र में ही सत्यवान अचेत हो गए। सावित्री अपने प्यारे पति की अन्तिम अवस्था को देख देख कर रोने लगी। उसी समय सावित्री ने देखा कि एक बड़ा भयानक पुरुष निकट आकर खड़ा हो गया है जिस के सिर पर मुकट है, लाल वस्त्रों वाला सूर्य्य के समान तेजस्वी काले दांत वाला लाल लाल नेत्रों से सत्यवान की ओर घूर रहा है। उसे देख सावित्री ने धीरे २ पति के सिर को नीचे रख दिया और हाथ जोड़ खड़ी होकर कांपती हुई बोली हे देव! आप कौन हैं और क्या चाहते हैं? सावित्री की बात सुन कर वह भयानक मनुष्य बोला हे सावित्री मैं यम हूं। इस तेरे पति के श्वास पूरे हो चुके हैं, मैं इसे बांध कर ले जाऊंगा यही मेरा काम है, हे कल्याणि! यह जीव बड़ा धर्मात्मा गुणवान और ईश्वर भक्त है इसी लिये मैं स्वयं इसे लेने आया हूं। इतना कहकर यमने सत्यवान की देह से अंगूठे के बराबर सूक्ष्म शरीर को वलात् निकाल लिया और फांस से बांध कर ले चला। तब सत्यवान की देह जिस में से जीव निकल गया था चेष्टा हीन हो गई, कान्ति और तेज उड़ गया। यमराज उसको बांध कर दक्षिण की ओर चले और सावित्री भी उनके पीछे पीछे चलने लगी कुछ दूर आगे जाकर यम बोले हे सावित्री! तूने पति का ऋण चुका दिया तू और आगे नहीं जा सकती अब तू लौट जा और इसका क्रिया कर्म कर। यह सुनकर

सावित्री बोली हे देवेश! जीते व मरने पर जहां पतिजाए स्त्री उस के पीछे चलती है यही धर्म है, इस कारण मैं इस के साथ जाऊंगी आप पतिव्रता स्त्री को साथ चलने से रोक नहीं सकते हे यम ! स्त्री का यही एक धर्म है। यह सुन कर यम राज बोले ! हे मीठे स्वर वाली! तेरी पति भक्ति को देख मैं प्रसन्न हुआ हूं सो तू सत्यवान के जीवन के बिना जो इच्छा हो वर मांग। तब सावित्री बोली हे यम भगवान्! मेरा श्वसुर अन्धा है उसको नेत्र मिलें और वह राज्य भ्रष्ट होकर बनवास भोग रहा है, फिर अपने राज्य को प्राप्त करे। यम ने कहा हे कल्याणि जो तुमने मांगा वही मैंने दिया अब तू लौट जा क्योंकि तू बहुत थकी हुई प्रतीत होती है। सावित्री बोली हे देव! पति मेरे साथ होने करके मैं थकावट प्रतीत नहीं करती, इस संसार में पतिही मेरे जीवन का सहारा है। हे यमराज! सत्संगति संसार में सबसे उत्तम वस्तु है, अपने पति और आप जो सत्पुरुष हैं उन्हें छोड़ कर मैं पीछे नहीं लौट सकती। तब यम बोले हे सुंदरी! तेरा वचन और मन शास्त्रों के गूढ़ तत्त्वों से युक्त है इस लिये सत्यवान् के जीवन के बिना कोई दूसरा वर मांग। सावित्री बोली मेरे पिता एक बलवान् राजा हैं परंतु उनके कोई संतान नहीं, उनके सौ पुत्र हों। तब यम बोले हे कल्याणि! ऐसा ही होगा अब तू अपने घर को लौट जा तू बहुत थकी हुई है।

सावित्री बोली हे यमदेव! सज्जनों का सब लोग विश्वास

करते हैं, सब संसार उनके साथ प्रेम करता है। मैं आप पर विश्वास करती हूं और प्रेम मुझे पति के पीछे खींच कर ऐसे लिए जा रहा है जैसे आप मेरे पतिको। तब यम बोले हे सावित्री! जैसा वचन तूने कहा है संसार में किसी प्राणी ने ऐसा नहीं कहा, मैं तेरे प्रेम पर प्रसन्न हुआ, इस लिए सत्यवान के जीवन के बिना कोई और वर मांग। सावित्री बोली हे यम! यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो मेरे पति के वीर्य्य से मेरे सौ पुत्र हों जो हमारी वंश को उज्वल करें। तब यम बोले हे राजकुमारि! तेरा मनोरथ सिद्ध होगा तेरे सौ पुत्र महा प्रतापी होंगे। हे कोमलाङ्गि! अब तू लौट जा तू बहुत थकी हुई है। यह सुनकर सावित्री हाथ जोड़ कर बोली हे देव! आपने सत्यवान के वीर्य्य से मेरे सौ पुत्र होने का वर दिया है, इसे पूरा करो, भगवन्! मेरे पतिके जीवन के बिना किस प्रकार उनके वीर्य्य से सौ पुत्र होगा सो उनको जीवन दान देकर अपने वचन को मिथ्या न होने दो। तब यम आश्चर्य्य से हंसते हुए बोले हे राजकुमारि! संसार में तेरे समान सुन्दरी रूपवती पतिव्रता सुशील और चतुर स्त्री दूसरी नहीं है तूने अपनी चतुराई से मुझे जीत लिया, हे कल्याणि! तेरी मनोकामना पूरी हो और तेरे हृदय का इष्टदेवता तेरा पति जी उठे। इस प्रकार वर देकर यमराज अन्तर्ध्यान हो गए। यमके अंतर्ध्यान होने पर सावित्री वहां आई जहां उसके पति मृत्तक पड़े थे। उसने अपने पति के शिरको अपनी गोद में रखा और भूमि

पर बैठ गई। अब सत्यवान फिर चेतना पाकर प्रेम से बार २ सावित्री को देखता हुआ बोला हे प्यारी! मैं बहुत काल सोया रहा हूं तू ने मुझे जगा क्यों न दिया और वह काले दांतों वाला भयानक पुरुष कहां है जो मुझे खैंचता था। तब सावित्री प्रफुल्लित होकर बोली हे स्वामिन! बहुत काल तक तुम मेरी गोद में सोए रहे, प्राणियों को मारने वाला यम राज अब चला गया है, अब आप बहुत विश्राम कर चुके चलो आश्रममें चलें बहुत रात्रि बीत गई देखो चारों ओर गाढ़ा अंधेरा छा रहा है, माता पिता आपकी राह देखते होंगे। तब सत्यवान सोकर उठे हुए मनुष्यके समान बैठ गए और भूमि आकाश तथा बनमें चारों ओर देखते हुए बोले हे प्रिये! घर से तेरे साथ निकला था, लकड़ियां काटते २ मेरे सिर में पीड़ा होने लगी, उस पीड़ा को न सहता हुआ मैं तेरी गोद में सो गया, हे सुभगे! यह सब कुछ मुझे भली भान्ति स्मरण है। इस के पीछे मुझे इतनी गहरी निद्रा आई कि मैं न चाहता हुआ भी सो गया स्वप्न में मैने एक बलवान पुरुष को देखा, इसके पीछे मैं ज्ञान शून्य हो गया और मुझे कुछ पता न रहा कि मैं कौन हूं क्या हूं और कहां हूं, ऐसी प्रगाढ़ निद्रा मैंने कभी नहीं देखी। हे प्रिये! यदि तुम इस हालको जानती हो तो कहो कि क्या मैंने स्वप्न देखा अथवा सत्य ही कोई आया था। यह सुनकर सावित्री बोली हे स्वामिन्! इस समय रात्रि बहुत चली गई है, कल आपको जो कुछ बीती है सुनाऊंगी।

इतना कहकर सावित्री ने अपने बाल बांधे और कुल्हाड़ा कंधे पर रखकर पतिको अपनी भुजाका सहारा देकर चली। हे राजन्! उसी समय राजा द्युमत्सेनको नेत्र मिल गए और वह आश्चर्य्य से चारों ओर देखने लगा। अपने पुत्र सत्यवान को आश्रम में न पाकर वह अपनी स्त्री सहित सारे आश्रमों में उसको ढूंडने लगे। रात्रि के अंधकार में कांटों से उनके वस्त्र फट गए और पाओं से रुधिर निकलने लगा। थोड़ी देर पीछे सावित्री अपने पति के साथ आश्रम में हंसती हुई प्रविष्ट हुई। तब सब आश्रम वासियों ने उनको बधाई दी। फिर उन्हों ने सत्यवान को पूछा हे राजकुमार आज किस कारण से इतनी देर करके आए हो आपके माता पिता आपके वियोग में अति दुखसे आपको ढूंडते रहे। सत्यवान बोले, मैं सिर की पीड़ा से चिरकाल तक सोया रहा, यही मेरी देरी का कारण है। तब महर्षि गौतमजी बोले हे राजपुत्र! तुम्हारे पिताके अकस्मात् नेत्र खुल गए इसका कारण जानते हो तो बताओ। तब सावित्री बोली हे विप्रो! सुनो मैं इसका रहस्य बतलाती हूं। महर्षि नारद जीने मेरे पति की मृत्यु आज के दिन होगी ऐसा बतलाया था, इसी कारण तीन दिन तक अनाहार ब्रतधारण करके आज मैं इनसे अलग नहीं होती थी। जब मैं और यह बन में लकड़ीयां काट रहे थे उसी समय इनके सिर में पीड़ा होने लगी। फिर यह अचेत होकर सोगए, उसी समय यमने आकर इन के शरीर से जीवात्मा को निकाल

लिया। जब वह इस जीवको बांध कर दक्षिण दिशामें चलें, मैं इनके पीछे २ चली। तब यमने मुझे आगे चलने से रोका, मैंने उस बलवान देवता की स्तुति की, जिससे प्रसन्न होकर उन्होंने मुझे तीन वर दिये। नेत्रोंकी प्राप्ति और अपने खोए हुए राज्य का मिलना, यह वर मैंने अपने श्वसुर के लिए मांगा। अपने पिताके लिये सौ पुत्र, यह दूसरा वर मांगा। सत्यवान से मेरे सौ पुत्र हों, यह तीसरा वर, बिना मेरे पतिके जीवन के पूरा होना असंभव था, जिसे पाकर मेरे पति फिर जी उठे।

हे राजन्! इस प्रकार सावित्री ने अपने पति श्वसुर और पिता के दुःखों का उद्धार करके दोनों कुलो को तार दिया।

अथ तेरहवां अध्याय।

वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय! बनमें निवास करते हुए पांडवों को १२ वर्ष व्यतीत होगए। यह लंबा समय धर्मकीरक्षाके लिए उन्होंने बड़े कष्टसे व्यतीत किया। अब वह तेरहवां अज्ञातवास का वर्ष कहीं छिपकर बिताने के लिए तैय्यारियां करने लगे तब युधिष्ठिर ने हाथ जोड़कर सब ब्राह्मणों व ऋषियों से आज्ञा मांगी कि हे मुनिगण! अब अज्ञातवास का वर्ष आगया है, इसमें हम को बड़ी सावधानी से काम करना होगा, क्योंकि कौरव यदि हमारा पता पा जाएंगे तो धर्मानुसार हमको फिर १२ वर्ष बनवास भोगना पड़ेगा, इतना कहकर आंखों में आंसू भरे हुए युधिष्ठिर ने

ऋषि मुनियों से विदा मांगी। और वहां से पुरोहित धौम्यको साथ लेकर बहुत दूर एक निर्जन बन में बैठकर सब सलाह करने लगे। भली भान्ति विचार करनेके पश्चात् सबने मत्स्य देशमें राजा विराट के हां ही रहनेका निश्चय किया। ऐसा निश्चय करके अर्जुन रोते हुए बोले हे धर्मराज! आपकी अवस्था देखकर मेरा हृदय फटा जा रहा है, सुख संपत्ति और राजाओंके योग्य ऐश्वर्य्य से रहने के योग्य आप किस प्रकार दूसरों की दासता स्वीकार करोगे। यह सुन कर धर्मराज बोले भाई आप शंका न करें मैं अपना नाम कंक ब्राह्मण रखूंगा हाथ में सुनहली गोटें और बगलमें चौपड़ दबाकर विराट के हां जूआ खेलने का काम करूंगा। तब भीम बोले मैं अपना नाम वल्लभ बताऊंगा और भोजन बनाने के काम पर लगूंगा, क्योंकि इस के बिना मेरा पेट भरना कठिन है। यदि कोई विशेष हाल पूछेंगे, तो कह दूंगा, कि मैं राजा युधिष्ठिर का रसोइया और पहलवान था। तब धर्मपुत्र अर्जुन की ओर देखकर बोले, जो पराक्रमी अग्नि के समान तेजस्वी है, जिसकी भुजाओं पर धनुष की डोरी का चिन्ह है, वह विशाल हृदय वाला अर्जुन किस तरह अपने आपको छिपाएगा? यह सुनकर अर्जुन बोले हे धर्मावतार! आपने सत्य ही कहा है। मेरे लिए यह हट्टा कट्टा शरीर छिपाना सहज नहीं, परन्तु माथे पर वेणी बांध हाथों और भुजाओं में बाजुबन्द व कङ्कण पहण कर मैं अपने आपको बृहन्नला नामक हीजड़ा नाचने

वाला कहूंगा, और इस प्रकार विराट के रणवास में अपना समय बिताऊंगा। तब नकुल ने कहा हे महानुभाव! मैं घोड़ों की विद्या भली भान्ति जानता हूं, सो विराट की घुड़शाल में अश्वशाल की नौकरी करूंगा। इसके अनन्तर सहदेव बोले, हे राजन्! मैं गौओं को दुहना पालना और शुभ अशुभ लक्षण जानता हूं, मैं अपना नाम तन्त्रीपाल रक्खूंगा, और इसी सेवापर अपने दिन बिताऊंगा। इतना सुनकर द्रौपदी बोली, हे स्वामिन्! मैं विराट की रानी के केश गूंथने पर दासी का काम करूंगी, और सैरिन्ध्री मेरा नाम होगा। हे राजन् इस प्रकार सलाह करके पांचों पांडव धौम्य को अपना रथ आदिक देकर विराट के मत्स्य देश की ओर चले। वहां से सैंकड़ों कोस दूर नदी, नाले दुर्गम पर्वत और घने बनों को पार करते हुए वह मत्स्य देश में पहुंचे। वहां पहुंचकर युधिष्ठिर ने कहा, हे भाइयो! हमने गुप्त रहकर दिन काटने हैं, इसलिये अपने सब शस्त्रों को यहीं उतार कर कहीं छिपा दो। तब सब ने अपने २ शस्त्रों को इकट्ठा करके एक कम्बल में बांधा और एक शमी के वृक्ष के ऊपर उनको बांध दिया, कि देखने वाला यही समझे, कि कोई मुर्दा वृक्ष पर लटक रहा हो। हे राजन्! इतना करके वह सब अलग अलग विराट की नगरी को चले गए।

इति श्रीमहाभारते बनपर्व समाप्त।

विराट पर्व

अथ पहला अध्याय।

मेघनाद बध।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! अपने शस्त्रों को एक जण्ड के वृक्ष पर लटका कर पांडव द्रौपदी सहित अलग २ विराट के दरबार में पहुंचे। तब सब से पहले युधिष्ठिर हरित मणियों से जड़े हुए स्वर्ण के पांसों को वस्त्र में लपेट कर चौपड़ बगल में दबाए हुए महाराज विराट के सन्मुख आए। हे जनमेजय ! मेघों से ढके हुए पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान तेजस्वी मुख वाले युधिष्ठिर को देखकर महाराज समझ गए कि यह अवश्य ही कोई महानुभाव पुरुष है। तब युधिष्ठिर बोले हे राजन् मैं ब्राह्मण हूं कंक मेरा नाम है, अजीविका के लिए मैं यहां आया हूं पांसे फैंकने में मैं बडा सिद्ध हस्त हूं। यह सुनकर विराट बोले हे विप्रवर ! तुम्हें देखकर मैं प्रसन्न हुआ आज से तुम मेरे खिलाडी हुए। इस के पश्चात् ऊंचे कंधों वाला भीम शेर की गति से झूमता हुआ हाथ में कडछी चिमटा और एक छुरी लेकर महाराज के पास आकर नम्रता से बोला हे राजन् ! मैं रसोइया हूं, वल्लभ मेरा नाम है मैं अति उत्तम व्यञ्जन बनाना जानता हूं, पहलवानी भी करता हूं और हाथी तथा शेरों से भी लड़ना जानता हूं, यह सुनकर विराट बोले हे वल्लभ !

मुझे एक चतुर रसोईये की आवश्यकता थी, आज से तुम मेरे प्रधान रसोईये हुए। इसके पश्चात् काले काले विशाल नेत्रों वाली द्रौपदी ने अपने केशों को बाएं कंधे पर डाल एक वस्त्र पहन सैरिंध्री का वेश बना कर दुःखिया की भान्ति इधर उधर डोलना आरम्भ किया। तब राजा विराट की प्यारी रानी सुदेष्णा ने उसे महल के झरोखे मे देखा। ऐसी रूपवती स्त्री को देख कर उस ने उसे ऊपर बुलाकर पूछा हे कल्याणि तू कौन है और यहां कैसे आई है। द्रौपदी बोली, महारानी! मैं सैरिंध्री हूं, बालों को संवारना, सुगन्धित और उबटन लगाना तथा मालाओं का गूंथना जानती हूं। मेरा नाम मालिनी है और जीविका के लिए यहां आई हूं। यह सुन कर सुदेष्णा बोली हे भद्रे! तू आज से मेरी दासी हुई परन्तु राजगृह के मनुष्य कभी २ बड़े दुराचार कर बैठते हैं इस लिए संभल कर रहना। तब द्रौपदी बोली, हे कल्याणि! गंधर्व मेरी रक्षा करने वाले सदा मेरे निकट रहते है, यदि किसी ने मेरा अपमान किया तो वह उन के क्रोध से न बच सकेगा, इस लिये तुम निश्चिन्त रहो, परन्तु मैं किसी का जूठा न खाऊंगी और न ही जूठे बरतन मांजूंगी और न किसी पुरुष के पांओं दबाऊंगी। तब सुदेष्णा ने उसे सब प्रकार से धीरज दिया और उसे अपनी दासी बना लिया। सहदेव भी ग्वालों का सा वेष बनाकर और उन्ही की बोली बोलता हुआ विराट की सभा में आया। उसने कहा। हे राजन्! मैं गौओं का

स्वभाव औषधि व उनका पालन करना जानता हूं, पहले मैं युधिष्ठिर के हां नौकर था, परन्तु अब आजीविका के लिए आपकी शरण आया हूं। उसे देख कर विराट बोले सत्य है तुम्हारा तेजस्वी मुख राजाओं के निकट बैठने योग्य है, लक्षणों से तुम कोई राजकुमार प्रतीत होते हो जाओ आज से तुम मेरे प्रधान ग्वाले हुए। इस के अनन्तर विशाल वक्षस्थल और ऊँचे कन्धों वाला अर्जुन स्त्रियों का सा वेश बनाए हाथ में बाजूबन्द कड़े और कानों में कुण्डल धारण कर वेणी बांधे विराट की सभा में आया। उस महाकाय स्त्री रूपधारी अर्जुन को देखकर विस्मय को प्राप्त हुए विराट बोले, तुम कौन हो और क्या चाहते हो। यह सुनकर अर्जुन बोले राजन्! मैं हीजड़ा हूं बृहन्नला मेरा नाम है, नाचना गाना सिखाने का काम करता हूं, पहले मैं महराज युधिष्ठिर के रणवास में नृत्य सिखाता था, उनके बन में जाने पर आजीविका के लिए आपके हां आया हूं, तब विराट ने प्रसन्न होकर अपनी अद्वितीय सुन्दरी राजकुमारी उत्तरा को गाना और नाचना सिखाने के लिये उसे अन्तःपुर में भेज दिया। इसके अनन्तर नकुल राजा की अश्वशाला में जाकर सब घोड़ों को देखने लगा। उसे घोड़ों की जांच करता देख महाराज विराट ने देखकर पूछा तुम कौन हो, क्या तुम घोड़ों की पहचान रखते हो? तब नकुल बोला, राजन्! घोड़ों की वंश, स्वभाव तथा उनको सिधाना जानता हूं

और उन की गति को बढ़ा सकता हूं और चिकित्सा भी कर सकता हूं । तब विराट ने उसको बहुत मान देकर अपना प्रधान अश्वपति नियत किया। हे राजा जनमेजय! इस प्रकार वह पांडव द्रौपदी सहित अपने अपने कार्य्यों को पूरा करते हुए गुप्त वेश से विराट की नगरी में रहने लगे । हे जनमेजय! इस प्रकार पांडवों को चार मास व्यतीत हो गए । पांचवें मास के आरंभ में विराट नगरी में एक बड़ा भारी मेला था । उस मेले में एक बहुत बड़ा राजसी दङ्गल हुआ, जिस में लड़ने के लिए दूर २ से पहलवान आए। उनमें मेघनाद नामक एक पहलवान हाथी के समान आकार वाला खम्भ ठोंकता हुआ अखाड़े में आकर ललकारने लगा, उसको देख कर किसी पहलवान का साहस न हुआ कि उस के साथ लड़े, सब अपने २ स्थान पर दुबक कर बैठ गए। जब वह जोर जोर कर गर्जता हुआ अपनी विजय की घोषणा करने लगा। तब महाराज ने अपने रसोइये भीमसेन को जिसने अपना नाम वल्लभ बताया हुआ था, बुलाया । भीमसेन अपने भेद को छिपाने के विचार से लड़ना नहीं चाहता था, परन्तु राजा की आज्ञा पाकर वह अखाड़े में खम्भ ठोंकता हुआ निकला । दोनों पहलवान हाथियों के समान एक दूसरे से भिड़ गए। कभी वल्लभ मेघनाद को और कभी मेघनाद वल्लभ को धकेलकर पीछे हटाने लगा। जब दोनों बहुत देर तक लडकर हांप गए, तब एक दूसरे से

टक्करें लडाने लगे, अन्त में जब भीमसेन ने मेघनाद को थका हुआ पाया, तो उसने उसे कलाजङ्ग मारकर ऊपर उठा लिया और जोर से भूमि पर पछाड दिया और ऊपर से इस बल से दबाया, कि मेघनाद की हड्डियां चूर चूर करदीं और उसकी पीठ पर गोडा देकर दबाकर प्राण निकाल दिये। भीमसेन की विजय देखकर चारों ओर से वाह वाह होने लगी। महाराज विराट ने उसको बहुतसा इनाम दिया, और नगर-निवासियों में उसका यश फैल गया।

दूसरा अध्याय।

कीचक बध।

वैशम्पायनजी बोले, हे राजा जनमेजय! मेघनाद के मारे जाने से एक मास पश्चात् तक द्रौपदी सुदेष्णा के महल में सुख पूर्वक काम काज करती रही। एक दिन कीचक नामक महाराज के साले ने किसी काम के लिये आई हुई द्रौपदी को देखा। उस रूप की खानि मृगनयनी को देखकर वह काम-वश होगया। उसे देखकर उसका हृदय उसको पाने के लिए लोचने लगा। तब उस ने सैरिन्ध्री के निकट जाकर कहा, हे प्रणयनि! तुम्हारा रूप और यौवन देखकर मेरा दिल हाथ से जाता रहा है, सुन्दरि! तुम दासी कहलाने के योग्य नहीं, तुम मेरे हृदय पर शासन करने योग्य हो। तुम मेरे महल में रह कर सहस्रों सुन्दरियों पर राज्य करो। कामासक्त कीचक

की बात सुनकर द्रौपदी बोली, राजन्! मैं नीच-जाति में उत्पन्न हुई सैरिन्ध्री हूं, पटरानी तो क्या तुम्हारे छूने योग्य भी नहीं हूं, और तिसपर मैं व्याही हुई होने करके किसी अन्य की स्त्री नहीं बन सकती। यह सुनकर कीचक बोला, हे लावण्यलते! तुम्हारे रूप-पाश में फंसा हुआ मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है, तुम मुझे अपना दास समझो, हे पतली कमर वाली! संसार के सारे सुख और एश्वर्य्य तुम्हारी एक बार हां कहने पर तुम्हारे पाओं में लोटनेलगेंगे, इतना कहते कहते कीचक ने द्रौपदी की भुजा पकडली, और खैंचकर अन्दर लेजाना चाहा उस समय द्रौपदी की आंखें क्रोध से लाल होगईं, उस ने जोर से झटका देकर अपनी भुजा छुडाली, जिससे कामान्ध कीचक पृथिवी पर गिर पडा। द्रौपदी वहां से भागकर रणवास में आगई, और इस प्रकार उस सती ने दुष्ट के हाथों अपने सतीत्त्व की रक्षा की। दूसरे दिन कीचक अपनी बहन सुदेष्णा के निकट जाकर बोला, हे बहन! सैरिन्ध्री तुम्हारी दासी रूप और यौवन में अपसराओं के सामान है, उस ने मेरे मनको हर लिया है, तुम उसको किसी प्रकार मेरे महल में भेजो, सुदेष्णा! मैं उसके बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। यदि तुम इस कार्य में मेरी सहायता न करोगी, तो अपने भाई को थोडे दिनों में मरा हुआ देखोगी। भाई की बात सुनकर सुदेष्णा ने उसे बहुत समझाया। अनेक युक्तियों से उसे इस काम से हटाने का यत्न किया, परन्तु जब

किसी प्रकार भी वह न माना, तो हार कर उसकी बात को स्वीकार किया और कहा कि किसी उत्सव के दिन तुम अच्छे अच्छे व्यञ्जन और बढ़िया शराब तैय्यार रक्खो, मैं सैरिन्ध्री को तुम्हारे पास भेजूंगी। हे जनमेजय! कुछ दिन पाकर कीचक ने सब काम तैय्यार करके सुदेष्णा को सन्देशा भेजा सुदेष्णा ने द्रौपदी को एक स्वर्ण का कटोरा देकर कहा, हे दासी! भाई कीचक के हां से शराब ले आओ। यह सुनकर द्रौपदी हाथ जोडकर बोली, महारानी! कीचक का हृदय मेरी ओर से मलिन है, वह कामी और लोलुप मनुष्यों की तरह मेरी ओर घूरता रहता है, मुझे उस से भय लगता है, इसलिये मैं न जाऊंगी, तुम्हारे हां सैंकडों दासियां हैं, उन में से किसी एक को भेजकर मंगवा सकती हो। दासी के बचन सुन कर सुदेष्णा ने घूरकर कहा, सैरिन्घ्री! जब मैं तुमको भेजती हूं, तो फिर डर काहेका, वह तुम्हें खा नहीं जाएगा जाओ जल्दी जाकर शराब लाओ। बेचारी द्रौपदी हाथ में प्याला लेकर हिरणी की तरह सहमी हुई कीचक के महल में गई। उसे देखकर कीचक जो शराब से मतवाला हुआ २ था बोला प्यारी! आओ मेरे पलंग पर बैठो और इस दास को अपनाकर सुख लूटो। द्रौपदी धड़कते हुए दिल से बोली, राजन्! सुदेष्णा को प्यास लगी है, मैं उसकी आज्ञा से शराब लेने आई हूं। तब कीचक ने उसकी ओर हाथ बढाते हुए कहा, हे मृगनयनी! उसके

पास बहुतसी दासियां हैं, कोई दूसरी इस काम को कर लेगी, तुम मेरे गृहमें रहकर सारे राज्य को भोगो, तुम्हारा रूप दास्य-कर्म के योग्य नहीं। तब द्रौपदी ने उसको धिक्कारते हुए कहा, मूर्ख ढीठ ! बार बार रोका हुआ भी तू इस बात से नहीं रुकता, मृत्यु के मुख में आए हुए की तरह तू अपने भले बुरे को नहीं पहिचानता। गन्धर्व मेरे रक्षक हैं, यदि उनको पता लग गया, तो तेरी रक्षा तीन लोक में भी न होगी। द्रौपदी के अपमान-भरे बचन सुन कर कीचक ने उसे पकडना चाहा, परन्तु द्रौपदी वहां से भाग खडी हुई, शराब में मतवाला कीचक उस के पीछे इस प्रकार झपटा, जैसे बाज कबूतरी पर झपटता है। उस ने भागती हुई द्रौपदी को राजदर्बार में जा लिया और बालों से पकड उसके एक लात जमाई और दांत पीसता हुआ चला गया। बेचारी द्रौपदी के दुःख, लज्जा और क्रोध की उस समय थाह नहीं थी, उसने युधिष्ठिर और भीम की ओर करुणा-दृष्टि से देखा। भीमसेन द्रौपदी के अपमान को न सहते हुए कीचक की ओर तमतमाए नेत्रों से देखने लगा। युधिष्ठिर ताड गए, कि भीमसेन क्रोध से जल रहा है, ऐसा न हो कि इसी समय कीचक पर टूट पड़े, और हमारा भेद खुल जाए। उन्होंने सैरिन्ध्री की ओर देखकर कहा, हे दासी ! तेरा यहां रोना वृथा है, तुम्हारे पहले हुए २ झगड़े को कोई नहीं जानता तू राज महल में जा गंधर्व तेरी रक्षा करेंगे फिर भीम की ओर

देखते हुए बोले वल्लभ ! क्या रसोई के लिए लकड़ी काटने के लिए वृक्ष की ओर देख रहे हो, राजदर्बार में कोई वृक्ष काटने योग्य नहीं है, बाहर जाकर बनमें से काट लो। भीम युधिष्ठिर के संकेत को समझ गए और द्रौपदी रोती और दुखसे लंबे सांस लेती राज महलमें चली गई वह दिन उसने बड़े शोक और क्रोधसे बिताया। जब रात हुई तो सर्पिणी की फुंकार मारती हुई वह चुपके चुपके भीमसेन के गृह में पहुंची, और सोते हुए उसको जगाकर बोली, हे नाथ ! उठो उठो कैसे बेसुध होकर सो रहे हो। अपनी प्रिया द्रौपदीकी आवाज सुनकर भीम उठ कर पलंग पर बैठ गए और बोले हे प्रिये ! कहो किस कारण से इस अर्द्ध रात्रिके समय आई हो ? तब द्रौपदी रोकर भीमसेन को लिपट गई और आंसुओं का प्रवाह बहाती हुई बोली, हे शत्रुओं के नाश करने वाले ! विराट का साला कीचक मुझे बार २ दुख देता है और अपनी स्त्री बनाना चाहता है, मैंने उसको बहुत समझाया परन्तु वह दुष्ट अपनी इस दुर्भावनाको नहीं छोडता हे वीर शिरोमणि ! कल तुम्हारे और युधिष्ठिर के सामने उस ने मुझे लात मारी मैं क्या करूं, समय को पहचान कर मैंने उस समय चुप रहना ही उचित समझा, परन्तु अब और अपमान मैं नहीं सहन कर सकती, ऐसे दुष्ट को यदि आप न मारेंगे तो अपने धर्म की रक्षा के लिए मैं हलाहल विष खाकर मर जाऊंगी। यह सुनकर भीम ने

उसको दिलासा दिया और कहा कि हे प्राण वल्लभे ! उस नीचने जो कुछ किया वह मैंने अपनी आंखों देखा, मैं चाहता था कि उसी समय उसके प्राण निकाल लूं परन्तु भाई की आज्ञा ऐसी न थी इस कारण वह जीता निकल गया अब तुझे और अपमान न सहना पड़ेगा। मैं उसका बध करके तेरा मनोरथ पूरा करूंगा। हे प्रिये! आज उसके कथन को तूने स्वीकार करना और यह जो नगर के बाहर नाच घर है, जिसमें दिन को कन्याएं नाचती हैं, और रात्रिको शून्य पड़ा रहता है, वहां उसे मिलने की प्रतिज्ञा करना। वहां तेरे स्थान पर मैं उसे मिलूंगा, और उस पापी का वध करके अपने जलते हुए हृदय को ठण्डा करूंगा। अब तू शीघ्र यहां से चली जा ऐसा न हो कि कोई देखले और हमारा बना बनाया काम बिगड़ जाए। इस प्रकार निश्चय करके द्रौपदी राज महलमें आई और कीचक की मृत्यु की घड़ियां गिनती हुई सो गई। दूसरे दिन कीचक फिर द्रौपदी के पास आकर बोला, हे सैरिन्ध्री ! देख, तू मेरी स्त्री बनकर बहुत सुख प्राप्त करेगी, इस दास्य कर्म से मुक्त होकर राजेश्वरी कहलाएगी। और यदि तू अब भी मेरा कहा न मानेगी तो समझले कि इस राजमें कोई तेरा बचाने वाला नहीं है, महाराज तेरी एक भी बात न सुनेंगे, यह तूने कल देख ही लिया है, मैं तुझे बलात् पकड़कर लेजाऊंगा, और अपनी कामना सिद्ध करूंगा। कीचक की बात सुन कर द्रौपदी ने धीरे से उत्तर दिया। हे सेनापति ! तुम्हारी

बात मुझे स्वीकार है परन्तु सब के सामने तुम्हारा मुझे बुलाना उचित नहीं इससे मेरी निन्दा होती है, इसलिये आज रात को तुम नाच घर में आना मैं वहीं तुम से एकान्त में मिलूंगी, परन्तु सावधान मेरा भेद खुलने न पावे। द्रौपदी के मुख से ऐसे वचन सुनकर कीचक का मन मोर के समान झूमने लगा वह आनन्द से मस्त हुआ २ वहां से चला गया और अपने शरीर को नाना प्रकार के भूशणों से अलंकृत करने उत्तम उत्तम सुगन्धियों से वस्त्रों को सुबासित करने और शराब व मांस आदिक पदार्थों को तैय्यार कराने में लग गया। जब रात्रि हुई तो वह शराब के मद में मतवाला हुआ हुआ अन्धेरे में नाच घर की ओर चला। उधर भीमसेन पहले ही वहां पहुंच गये थे। कामन्ध कीचक भीमसेन को नारी वेष में देखकर बोला, देखो प्यारि! मेरे गृह सैंकड़ों सुन्दरियां हैं परन्तु उन सब को छोड़कर मैं तुम्हारे लिए यहां आया हूं। स्त्रियां सदैव कहा करती हैं कि हमारे समान सुन्दर मनुष्य संसार में दूसरा नहीं देखा। यह सुनकर भीमसेन ने धीरे से कहा, हे प्यारे! तुमने भी कभी ऐसा स्पर्श सुख आज तक न उठाया होगा। इतना कहते ही भीमसेन ने कीचक के मुख पर ज़ोर से मुक्का मारा और झपट कर उसको केशों से पकड़ लिया। भीमसेन के मुक्के से कीचक का मस्तक चकरा गया, उसने समझ लिया कि मुझसे छल किया गया है। वह बड़ी कठिनाई से सम्भला और बड़े बल से

बालों को छुड़ाकर भीम से लड़ने लगा। आधी रातके अन्धेरे में दोनों बीर भयङ्कर युद्ध करने लगे। एक दूसरे को हाथियों के समान धकेलने लगे। लड़ते २ कीचक ने भीम को जोर से लात मारी, जिससे वह भूमि पर गिर पड़ा। तब उसे टांग से पकड़ घसीटकर आंगन में ले आया, परंतु भीम ने इस की कुछ भी परवा न क़ी और टांग छुड़ाने का यत्न करने लगा, परन्तु कीचक ने उसको उसी टांग के बल नाच घर में चारों ओर घसीटना आरम्भ किया। अपने आप को इस प्रकार बेबसी से मार खाता देख भीम को बहुत क्रोध चढ़ा। उसने झटका देकर टांग को छुड़ाया और उठ कर कीचक को भूमि पर पटक दिया, जिससे वह घायल हुआ २ उठने के योग्य न रहा, तब भीम उसको बालों से पकड़कर पृथिवी पर रगेदने लगा, जिससे उसको बहुत कष्ट हुआ और वह पीड़ा से चिल्लाने लगा। तब भीम ने उसका गला इतने बल से दबाया कि वह मूर्छित हो गया उसे पृथ्वी पर अचेत पड़ा देखकर भीम ने उस को मुक्के मार मार कर मार डाला।

कीचक के मरने पर भी भीम का क्रोध ठण्डा न हुआ उस ने उसकी देह को बार २ पृथिवी पर रगड़ा और उस के हाथ पाओं और सिर उस के पेट में घुसेड़ दिये। इस से उसकी आकृति ऐसी बिगड़ गई कि यह पहचानना भी कठिन हो गया कि यह मनुष्य की लोथ है व किसी पशु की।

कीचक को मार कर भीमसेन द्रौपदी के पास गये और उसे नाचघर में लाकर दीपक जलाकर उसकी लोथ दिखलाई और कहा हे प्यारी ! देख इस दुष्ट कामी की कैसी दुर्दशा हुई है, तेरे अपमान करने वाले की यही गति होगी। तब भीम और द्रौपदी उस मरे हुए पापी को पाओं से ठोकर मारकर चले गए। सवेरा हुआ तो नाच घर के रक्षकों ने कीचक को मरा हुआ देखा जहां तहां रुधिर जमा हुआ था। ऐसी भयानक हत्या को देखकर रक्षक डरते कांपते महाराज विराट के पास आए और उनको कीचक की मृत्यु का समाचार दिया। यह सुनकर महाराज और उनका समस्त मन्त्री-मण्डल नाचघर में पहुंचा। कीचक के अन्य सम्बंधी और उसकी बहन सुदेष्णा भी रोती पीटती वहां पहुंची। कीचक की लोथ देखकर सब आश्चर्य्य चकित थे कि किसने इतने बलवान पुरुष को ऐसी दुर्दशा से मारा है इसकी भुजाएं टांगे और सिर पेट में घुसे हुए हैं, यह किसी मनुष्य का कर्म नहीं निस्सन्देह इस को मारने वाला कोई देवता अथवा राक्षस है। तब मन्त्रियों में से एक बोला कि सैरिंध्री के अपमान का यह फल है। कीचक ने उसे कामान्ध होकर दुख दिया जब वह सभा में आई सो उस ने उसे लात मारी, जिसके बदले में उसके रक्षक पांच गंधर्वों ने इस का बध किया। निस्सन्देह गधर्वों के बिना कीचक का बध करना किसी मनुष्य की शक्ति में नहीं है। यह सुनकर

कीचक के साले क्रोध में उन्मत हुए २ सैरिन्ध्री की ओर लपके। उन्होंने उसको केशों से पकड़ कर कीचक की लोथ के साथ बांध दिया और इस प्रकार कहने लगे कि सचमुच इस पापिन डायन का ही यह भयंकर कर्म है। इसी के लिए कीचक की मृत्यु हुई है। भाईयो ! इस को कीचक की लोथ के साथ ही जलादो। तब वह सब द्रौपदी को बांधकर कीचक की लोथ के साथ शमशान भूमि की ओर चल पड़े। अपने आपको बलसे लेजाई जाती देख द्रौपदी रो २ कर कहने लगी हे गंधर्वो ! मैं निष्पाप हूं इस पापी ने अपने किये का फल पाया अब यह मुझे बल से पकड कर लिये जाते हैं मेरी रक्षा करो रक्षा करो।

द्रौपदी की करुणा भरी पुकार सुनकर भीम के हृदय में आग की ज्वाला उठने लगी। उस के नेत्रों में रोषका धूआं छा गया वह चुपके से वहां से निकला और रसोई शाला में जाकर अपना वेष बदला। वहां से छिपे छिपे दूसरे मार्ग से शमशान भूमि में पहुंचा। उसने देखा कि कीचक की चिता पर उसकी प्राणप्यारी द्रौपदी बैठी रो रही है। चारों ओर कीचक के सम्बन्धी उसको धिक्कारते हुए आग लगाने के यत्न में हैं। भीम के क्रोध का उस समय पारावार न रहा। उस ने झटके से एक भारी वृक्ष को उखाड़ा और गर्जता हुआ उन पर लपका। भीम को इस प्रकार अकस्मात् आते हुए देखकर लोग घबराकर इधर उधर भागने लगे परन्तु उस पवन पुत्र से बचकर

कहां जा सकते थे। उसने चारों ओर वृक्षको घुमाना आरम्भ किया, जिस से बीसियों मर गए सैंकड़ों घायल होगए और शेष गंधर्व आगया गंधर्व आगया त्राहि माम् त्राहि माम् की पुकार करते वहां से प्राण बचाकर भाग गए। तब भीमसेन ने द्रौपदी को चिता से नीचे उतारा और आप फिर उसी रास्ते नगर में अपने रसोई घर में पहुंचा।

हे राजन्! जब भीम ने इस प्रकार सैंकड़ों मनुष्यों को मारकर और घायल करके द्रौपदी की रक्षा की तो राज गृह में बड़ा भय छा गया। द्रौपदी की ओर मारे डर के कोई आंख भी न उठाता। दास दासियां उससे दूर रहने लगीं। यह देखकर सुदेष्णा ने द्रौपदी को बुलाकर कहा कि हे सैरिन्ध्री! अब तू यहां से चली जा, तेरे रक्षक गंधर्व बडे उग्र हैं उनके भय से सब दास दासियां कांपती हैं तब द्रौपदी हाथ जोड़कर बोली महाराज! मैं थोड़े दिन यहां और रहूंगी तब अपने आप यहां से चली जाऊंगी गंधर्वों से डरने की कोई आवश्यकता नहीं वह बिना दुख दिये कभी किसी को कुछ नहीं कहते, और यदि वह कुछ दिन और आपकी नगरी में रहे तो इस राज्य की अत्यन्त भलाई करेंगे। इस के अनंतर पांडव द्रौपदी सहित फिर सुख से दिन काटने लगे।

तीसरा अध्याय ।

इतनी कथा सुनाकर वैशंपायनजी बोले हे जनमेजय! जब सेनापति कीचक की मृत्यु का समाचार सारे देश देशान्तरों और राजे महाराजों तक पहुंचा तो दुर्योधन करण और शकुनि बड़े प्रसन्न हुए और सब बैठकर विचार करने लगे कि किस प्रकार हमारा राज्य और खजाना बढ़े। तब शकुनि ने कहा हे राजन्! राजा विराट का साला सेनापति कीचक गंधर्वों के हाथों मारा गया है यह समाचार पांडवों की खोज में गये हुए हमारे दूतों ने सुनाया है इस कारण हमें अपने राज्य और धन को बढ़ाने का यह समय उचित है, पांडवों के १२वर्ष बीत गये अब तेरवां वर्ष वह कहीं छिप कर व्यतीत कर रहे हैं। हमारे दूतों ने उन की खोज में महां घोर बनों ऊंचे २ पर्वत-शिखरों गुफाओं तथा प्रत्येक गांओं व नगर के कोने २ छान मारे हैं परन्तु कहीं भी उनका पता नहीं लगा ईश्वर जाने वह मरगए हैं व जीतेहैं, परंतु आप को उन से लड़ने के लिए अभी से तैय्यार रहना उचित है। हे दुर्योधन! इसलिये आप विलंब न करें और कीचक की मृत्यु से लाभ उठावें। शकुनि के पश्चात् करण ने भी अभिमान से सिर ऊंचा करके कहा राजन्! पांडवों की व्यर्थ खोज न करें वह अब बन में दुख सह सह कर मर गए होंगे और जीते भी हों तो क्या परवा है, इस समय शकुनि की सम्मति ही ठीक है। राजा को कभी भी संतोष नहीं

करना चाहिये । संतोषी राजा शनैः शनैः नाशको प्राप्त होता है, इस कारण शीघ्र ही विराट का धन, राज्य और गौएं छीन कर अपने यश को बढ़ावें । तब दुर्योधन अति प्रसन्न होकर बोला हे वीर शिरोमणि ! आपने जो कुछ कहा है समय के अनुकूल ही है, भीष्म द्रोण और हम सब सारी सेना को लेकर आज ही विराट पर आक्रमण कर देंगे ।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! इस प्रकार निश्चय करके दुर्योधन ने त्रिगर्तराज सुशर्मा को जो कि विराट का पुराना शत्रु था बहुत सी सेना देकर विराट नगर पर भेजा और स्वयं करण शकुनि अश्वत्थामा द्रोणाचार्य्य भीष्म पितामह कृपाचार्य्य तथा अन्य सेनापतियों सहित बहुत बड़ी सेना लेकर दूसरी ओर चढ़ दौड़ा । हस्तिनापुर से चलकर दूसरे ही दिन त्रिगर्तराज सुशर्मा विराट की सीमा पर जा पहुंचा और सहस्रों गौओं को बलात घेर कर ले चला । तब महाराज का प्रधान गोप तत्काल महाराज विराट के पास आया और हाथ जोड़कर बोला, महाराज ! त्रिगर्त राज सुशर्मा हमारे सैंकड़ों ग्वालों को मारकर आपका अपमान करके सहस्रों गौओं को लिये जारहा है । यह सुनकर महाराज ने मतस्यों की प्रतापी सेना को एकत्र किया और अपने साथ बल्लभ तन्त्रिपाल तथा ग्रन्थिक और भेष बदले हुए पांचों पांडवों को लेकर त्रिगर्त राज के साथ लड़ने के लिये नगर से बाहर

निकला। नगर से बाहर निकलकर थोड़ा दिन शेष रहते ही उन मत्स्य वीरों ने त्रिगर्त सेना को जा लिया। दोनों ओर के वीर एक दूसरे के साथ जुट गये। उस समय धूल इतनी उड़ी कि शत्रु और मित्र की पहचान न रही, धूल से अन्धे होकर पक्षि गिरने लगे और आकाश में उड़ते हुए बाणों से सूर्य्य ढक गया। बाणों से कटे हुए अंग ओलों की नांईं भूमि पर गिरने लगे और पृथिवी पर कुण्डलों वाले सिर बिछ गए। बहुत देर तक लड़ने पर भी एक दूसरे को कोई पीछे न हटा सका। जब अन्धेरे और धूल ने आकाश और भूमि को अन्धकारमय कर दिया तब दोनों सेनाएं कुछ देर के लिए ठहर गईं। कुछ देर पीछे रण में उन्मत्त हुए २ क्षत्रियों को प्रसन्न करता हुआ चन्द्रमा उदय हुआ। चन्द्रमा की चांदनी में फिर भयानक संग्राम होने लगा। उस समय त्रिगर्त राज सुशर्मा ने रथ समूहों को साथ लेकर महाराज विराट पर आक्रमण किया। उसने विराट के घोड़ों और सारथि को मारकर उसे जीता ही पकड़ लिया जब महाराज विराट पकड़े गये। तो त्रिगर्तों ने ऐसे जोर से आक्रमण किया कि पीड़ित हुए हुए मत्स्य चारों ओर भागने लगे। यह देख कर युधिष्ठिर शत्रुओं के नाश करने वाले भीमसेन से बोले हे महाबाहो! सुशर्मा महाराज विराट को पकड़ कर लिए जा रहा है, उस की रक्षा करो। हे भीम! जिस का अन्न एक वर्ष से हम खा रहे हैं, जिस के राज्य में हम

ने बेखटके वास किया है, उसका ऋण चुकाने का समय आ गया है। यह सुनकर भीम एक बड़े वृक्ष को उखाड़ने चला। तब धर्मपुत्र युधिष्ठिर बोले हे नर शार्दूल! वृक्ष को उखाड़ कर ऐसा भयानक युद्ध न करो, इस समय साधारण शस्त्रों से ही लड़ना उचित है, ऐसा न हो कि शत्रु तुम्हें पहचान जाए। तब भीम अपना धनुष लेकर सुशर्मा के रथके पीछे दौड़ा नकुल और सहदेव उसके पीछे २ चले। दौड़ते हुए रथ पर भीम ने ऐसे वेग से बाण छोड़े कि उसके धुरे टूट गए। तब सुशर्मा शीघ्र ही दूसरे रथ पर चढ़कर तीक्ष्ण बाणों से भीम पर प्रहार करने लगा। तब पवन समान वेग से दौड़ता हुआ भीम सुशर्मा के निकट पहुंच गया और बाणों से उसके घोड़े मार गिराए! फिर गदा हाथ में लिए रुद्र रूप धारण किये भीम सुशर्मा पर ऐसे झपटा जैसे शेर मृग पर झपटता है। उस ने उस को बालों से पकड़ लिया और भूमि पर गिराकर धूल में रगड़ना शुरू किया। सुशर्मा इस से पीड़ित होकर मूर्छित हो गया। तब धूल से भरे हुए उस को रथ पर डाल कर भीम युधिष्ठिर के पास लाया। होश में आये हुए सुशर्मा ने जब अपने आपको युधिष्ठिर और विराट के सन्मुख देखा तो बहुत भयभीत हुआ। धर्मपुत्र युधिष्ठिर उसे देखकर हंसे और बोले कि यह महाराज विराट का अब दास हो चुका है, इसे छोड दो। उन से छोड़ा हुआ त्रिगर्त राज सुशर्मा अति लज्जित हुआ और मत्स्य राज

विराट से क्षमा मांग सिर झुकाए वहां से चला गया। महाराज विराट इस विजय को प्राप्त करके अति प्रसन्न हुए। उन्होंने पांचों पांडवों को बहुत सा धन स्वर्ण और मणि माणिक्यादि देकर पूजा की और कहा कि तुम्हारे ही बलसे आज मैं जीवित हूं इस लिए आप ही मेरे देश के स्वामी हैं। तब युधिष्ठिर आदि पांचों पांडव हाथ जोड़ कर बोले हे राजन्! आप ही के प्रताप से हमने विजय पाई है। आपके आदर से हम बहुत प्रसन्न हुए, महाराज! अब अपने प्रिय बंधुओं और मित्रों को विजय का समाचार भेजिये और अपने दूतों द्वारा नगर में जय घोषणा कराईये। तब दूत रात भर चलकर प्रातःकाल नगर में जय घोषणा करने लगे।

इधर दूत अभी घोषणा ही कर रहे थे कि विराट के पूर्वी सीमा के ग्वाले दौड़े २ नगरी में आए और आकर विराट के राजकुमार को बोले कि हे राजपुत्र! पश्चिम सीमा पर कौरवों की भारी सेना ने आप के सहस्रों पशु छीन लिये हैं। हे शूरबीर! युद्ध के लिये जाते हुए महाराज आप को अपना स्थान दे गए हैं। हे रिपुदमन! दर्बार में महाराज सदा ही आप की प्रशंसा किये करते हैं कि मेरा पुत्र मेरे सदृष है, बीर है और कुल को ऊंचा करने वाला है। हे वीर शिरोमणि! शीघ्र जाकर कुरुवों का नाशकरें और अपने पशुओं का उद्धार करके मत्स्य देश का यश बढ़ाएं। स्त्रियों के मध्य में बैठे हुए राजकुमार उत्तर को जब

ग्वालों ने यह वचन कहे तो वह अपनी श्लाघा करता हुआ बोला हे गोपजनों ! आप घबराएं नहीं मेरे होते, कुरु आप का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते, मैं अभी धनुष लेकर उन का नाश करूंगा, परन्तु इस समय मुझे एक चतुर सारथि चाहिये । यदि मुझे ऐसा सारथि मिल जाए तो आज कौरव अपने पाप का फल पाए बिना नहीं रह सकते ।

राजकुमार के इस बचन को सुनकर अर्जुन मन ही मन प्रसन्न हो एकान्त में द्रौपदी को बोले हे प्रिये ! तुम उत्तर को जाकर कहो कि बृहन्नला अर्जुन का पक्का सारथि रह चुका है, वह यदि तुम्हारा सारथि बन जाए तो कौरव निश्चय ही हार जाएंगे तब द्रौपदी उठकर राजकुमार के पास गई और लज्जा के साथ धीरे २ बोली हे शत्रुओं के नाश करने वाले ! यह जो हाथी के समान बड़े डील डौल वाला बृहन्नला है, यह अर्जुन का सारथि रहा है इस सारथि के साथ अर्जुन ने सारे संसार के राजाओं को जीता था, यदि यह तुम्हारा सारथि बन जावे तो सारे कौरवों को जीत कर पशुओं की रक्षा हो सकती है । यह सुनकर उत्तर ने बृहन्नला को बुलाकर कहा, हे बृहन्नले ! कौरव हमारे पशु छीन कर लिये जा रहे हैं, सैरिंध्री कहती है कि तुम अर्जुन के सारथि रह चुके हो, इसलिये आज तुम हमारे सारथि बनो । तब अर्जुन ने हंसकर कहा हे राजकुमार ! हम तो नपुंसक हैं नाचने गाने का काम करते हैं, युद्ध विद्या को हम क्या जानें परन्तु हम आप की आज्ञा भंग नहीं कर सकते इस लिये

जैसा कुछ होगा हम करेंगे। इतना कहकर अर्जुन ने जान बूझकर राजकुमार के दिये हुए कवच को इस ढंग से उलटा पुलटा पहना कि वहां बैठी हुई सब स्त्रियां हंसते २ लोट पोट हो गईं। तब राजकुमारी उत्तरा ने अपने हाथों से उसे सूर्य्य के समान चमकता हुआ कवच पहनाया। राजकुमार उत्तर और अर्जुन सब कवच पहर कर और शेर की ध्वजा को ऊंचे करके चले तो उत्तरा और दूसरी राजकुमारियां कहने लगी हे बृहन्नले ! युद्ध में कौरवों को जीतकर उनके सुन्दर २ वस्त्र उतार लाना हम उन की गुड़ियां बनाकर खेलेंगी। तब अर्जुन ने हंसकर कहा हे पुत्रियो ! यदि राजकुमार ने उनको जीत लिया तो हम अवश्य ही उनके वस्त्र ले आएंगे। यह कहकर अर्जुन ने नाना ध्वजा पताकाओं से सजे हुए रथ पर उत्तर को बैठा कर आप घोड़ों की बागें पकड़ रथ को युद्ध क्षेत्र की ओर हांका। जब रथ राजधानी के बाहर हुआ तो उत्तर शेखी से बोला हे बृहन्नले ! रथ को जल्दी कौरवों के निकट ले चलो। थोड़ी दूर आगे जाकर उत्तर ने अथाह समुद्र की नांईं उमड़ती हुई कौरव सेना को देखा। इतनी बड़ी सेना को जिसकी उड़ाई हुई धूल से आकाश और पृथिवी अन्धकारमय हो गई थी, देखकर उत्तर का हृदय कांप गया। सहस्रों हाथी घोड़ों प्यादों तथा महा धनुर्धारी कर्ण दुर्योधन भीष्म द्रोण कृपाचार्य और अश्वत्थामा आदि सेनापतियों के ऊंचे २ वायु में उड़ते हुए झंडों ने उसका धीरज छुड़ा

दिया। और वह भयभीत हुआ २ अर्जुन से बोला हे बृहन्नले! यह सेना तो बड़ी भयंकर है इस अनगिणत सेना से मैं तो क्या देवता भी लड़ने में असमर्थ हैं। सागर की तरह उमड़ी हुई इस कौरव सेना में मेरा रथ एक नौका के समान डूब जाएगा। हे बृहन्नले! इस समुद्र के समान सेना को जिसमें दुर्योधन, कर्ण भीष्म, अश्वत्थामा आदि बड़े २ संसार विजयी महारथी मगर मच्छों की तरह घूम रहे हैं मैं मछली की तरह खाया जाऊंगा, इन को देख कर मेरे रोंगटे खड़े हो गये हैं, दिल धड़क रहा है और मस्तक चकरा गया है, पिता त्रिगर्तों के साथ सारी सेना लेकर लड़ने गये हैं और मुझे अकेला छोड़ गये हैं सो मैं बालक इनसे लड़ने में समर्थ नहीं हूं इसलिए हे बृहन्नले! शीघ्र लौट चलो।

यह सुनकर बृहन्नला बोली, हे राजकुमार! यह समय भागने का नहीं है। इस प्रकार भयभीत होकर शत्रुओं के हर्ष का कारण न बनो। अभी तक कौन सा उन्होंने ऐसा काम किया है जिस से तुम इतने डर गये हो। तुम ने महल में स्त्रियों के सामने अपनी प्रशंसा की थी कि हम अभी जाकर कौरवों को जीतेंगे अब किस मुंह से भाग कर वहां जाओगे, इस में आप की निंदा होगी और सारथि होने के कारण मेरी भी। यह सुन कर उत्तर बोले, गौएं तो क्या कौरव चाहे हमारा सब कुछ छीन लें, सभी स्त्रियां और पुरुष चाहे मुझ पर हंसें पर मैं इन से किसी

प्रकार भी लड़ने को तैय्यार नहीं । इतना कह कर वह धनुष को वहीं छोड़ और रथ से कूद कर भागने लगा। उसे भागते देख अर्जुन उस के पीछे भागने लगे। उस समय अर्जुन की लंबी बेणी डोलने लगी और लाल वस्त्र उड़ने लगे, जिसे देख कर कौरव लोग हंसने लगे। अर्जुन ने सौ ही कदम पर जाकर भागते हुए राज कुमार को पकड़ लिया और उठा कर रथ पर बैठा दिया। तब उत्तर घबरा कर बोला हे बृहन्नले ! तुम हमारे रथ को लौटा ले चलो हम तुम्हें बहुत सा इनाम देंगे । अर्जुन बोले हे राजकुमार ! यदि तुम युद्ध नहीं कर सकते तो आओ रथ को हांको मैं इनके साथ लडूंगा । हे राजपुत्र ! क्षत्रिय हो कर तू युद्ध से फिसलता है, संसार में एक ही बार मृत्यु आती है, युद्ध में मरा हुआ क्षत्रिय सूर्य्य लोक का भेदन करके अमर-पद को प्राप्त करता है। हे शत्रुओं को प्रसन्न करने वाले ! मत डर, मैं इस दुर्जय सेना के साथ युद्ध करूंगा। यह सुन कर राजकुमार बोला हे बृहन्नले ! तू नपुंसक है नाचना गाना तेरा काम है, युद्ध विद्या को तू नहीं जानता, तुझ हीजड़े पर विश्वास करके मैं किस प्रकार अपने प्राण गवाऊं । इस महा सेना को जिस में भीष्म कर्ण दुर्य्योधनादि महारथि इन्द्र को भी जीतने की सामर्थ रखते हैं अर्जुन के सिवा दूसरा कोई भी जीत नहीं सकता। तब अर्जुन ने हंस कर कहा हे राजपुत्र ! यदि अर्जुन ही इन्हें जीत सकता है तो तू मुझे अर्जुन समझ। मैं अपने

बाहु बल से तेरी रक्षा करूंगा। यह सुन कर राजकुमार बड़े आश्चर्य्य से अर्जुन की ओर देखता हुआ बोला, हे बृहन्नले! अर्जुन के दस नाम हैं, यदि तुम अर्जुन हो तो बतलाओ कि वह दस नाम कौन कौन से हैं और किस कारण से यह नाम पड़े हैं? तब अर्जुन बोले हे उत्तर! जिस कारण से मेरे दस नाम हुए हैं सो मैं तुमको कहता हूं सुनो, अर्जुन, फाल्गुण, पार्थ, किरीटी, श्वेतवाहन, वीभत्सु, विजयी, कृष्ण, सव्यसाचि और धनञ्जय यह मेरे दस नाम हैं। हे राजकुमार अत्यंत पवित्रता रखने के कारण मेरा नाम अर्जुन हुआ। फाल्गुण नक्षत्र में जन्म लेने से मेरा नाम फाल्गुण हुआ। पृथा मेरी माता कुन्ती का पहला नाम है उससे उत्पन्न होने के कारण मेरा नाम पार्थ प्रसिद्ध हुआ। इन्द्रलोक में जाकर जब मैंने असुरों का संहार किया उस समय इन्द्र ने मुझे किरीट अर्थात् मुकुट दिया तब से मेरा नाम किरीटी हुआ। मेरे रथ के घोड़े श्वेत होने के कारण मुझे श्वेत वाहन कहते हैं। युद्ध में मैं शत्रुओं को भय देता हूं इस कारण मुझे वीभत्सु कहते हैं। सर्व युद्धों में मैंने विजय प्राप्त की है, सो मेरा नाम विजयी होने का यह कारण है। मेरा रंग कृष्ण अर्थात् सांवला है इसलिये मुझे कृष्ण कहा गया और दाएं तथा बांएं दोनों हाथों से बाण चलाने करके मेरा नाम सव्यसाचि है और सब देशों से बहुत सा धन जीतने के कारण मुझे धनञ्जय कहते हैं।

तब राजकुमार बोले कि हे महाबाहु! इतने बड़े योद्धा हो करके भी तुम ने नपुसंक का वेष धारण किया, इस क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध वेष का कारण भी कहो? अर्जुन हंसकर बोले हे कुमार! सुनों, जब मैं निवात कवचों को मारने के लिए इन्द्र-लोक में अस्त्र शस्त्र विद्या सीखने के लिए गया, तो वहां उर्वशी नाम की अप्सरा मेरे रूप और यौवन को देखकर कामातुर हो गई और मेरे साथ संभोग की चाहना करने लगी, परन्तु मैंने उसकी ओर अभिमान से आंख उठा कर देखा भी नहीं। तब उस ने बारंबार मेरे सामने अपनी मनोकामना प्रगट की परन्तु मैंने स्वीकार न किया तब उस ने लज्जित होकर क्रोध से मुझे शाप दिया कि तूने पुरुष होकर मेरा निरादर किया है, इसलिये एक वर्ष पर्य्यन्त नपुंसक रहेगा। सो उसके शाप को पूरा करने के लिये मैं आप के महल में एक वर्ष पर्य्यन्त नपुंसक होकर रहा हूं। यह सुनकर राजकुमार फिर बोले हे बृहन्नले! तुम्हारी बात सत्य प्रतीत होती है, परन्तु अपने मन में पूरा निश्चय करने के लिए मैं एक बात और पूछता हूं, कृपा कर के यह कहिए कि अर्जुन के चार भाई युधिष्ठिर भीम नकुल और सहदेव और हैं और एक उनकी स्त्री द्रौपदी है। वह चारों द्रौपदी सहित कहां हैं? तब अर्जुन ने उत्तर दिया कि राजकुमार! यह जो कंक नामक ब्राह्मण है वही महा प्रतापी सत्यब्रती युधिष्ठिर हैं और कीचक के बध करने वाला बल्लभ नामक महाबलि रसोइया भीमसेन है। और

महाराज की घुड़शाल में जो प्रधान अश्वपति ग्रन्थिक नामक है वही नकुल है तथा ग्वालों में जो सब से प्रधान बनाया गया है वह तन्त्रीपाल सहदेव है और हे कुमार! रानी के महल में सैरिन्ध्री नाम की दासी हमारी परम प्यारी स्त्री द्रौपदी है। अर्जुन के मुख से यह सुनकर उत्तर राजकुमार अति प्रसन्न होकर बोला हे महाबाहो! अब मेरा भय दूर हो गया। मेरे भाग्य धन्य हैं जो आपके दर्शन हुए हैं। हे नाथ! मैं आप से अपने किए हुए दोष की क्षमा चाहता हूं, जहां आप हैं वहां मुझे भय का कोई कारण नहीं, मैं आपका सारथि बनूंगा। इतना कहकर उत्तर ने घोड़ों की वागें संभाली और रथ को हांकने लगा। तब अर्जुन बोले हे राजपुत्र! यह जो सामने शमी का वृक्ष दिखाई दे रहा है। रथ को उधर ही ले चलो। जब रथ वहां पहुंचा तो अर्जुन ने उत्तर को कहा कि इस पेड़ पर चढ़कर यह जो गठड़ी सी लटक रही है इसे उतार लाओ। कुमार ने कहा कि हे पार्थ! यह तो एक मुर्दा लटक रहा है इसे मैं क्योंकर स्पर्श करूंगा। तब हंस कर अर्जुन बोले नहीं यह मुर्दा नहीं इसमें पांडवों के सब शस्त्र छिपाकर रखे हुए हैं। इसी में महादेव और इन्द्र के दिये हुए अस्त्र हैं और शत्रुओं को कंपाने वाला मेरा प्यारा गांडीव धनुष भी इसी में है। तब उत्तर पेड़ पर चढ़कर सब शस्त्रों को उतार लाया। वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! जब सब अस्त्र शस्त्रों से सज कर अर्जुन कौरव सेना की ओर चले तो भीष्म द्रोण आदि आचार्य्यों

ने उसे पहचान लिया और उस समय महा अशकुन भी होने लगे। यह देखकर भीष्म से द्रोण कहने लगे कि हे पितामह ! यह स्त्री वेषधारी ऊंचे कंधों वाला योद्धा अर्जुन है ऐसा प्रतीत होता है, इसलिए आज हमारी कुशल नहीं प्रतीत होती, यह जो नाना प्रकार के अशकुन हो रहे हैं, उन से जान पड़ता है कि अर्जुन आज हमें जीता न छोड़ेगा क्योंकि हम लोगों में कोई भी ऐसा नहीं है जो उसका मुकाबला कर सके। इतनी बात सुनकर कर्ण बोले हे आचार्य्य ! अर्जुन की स्तुति और हमारी निंदा आप सदैव किया करते हैं परंतु दुर्य्योधन और मैं जब दोनों मिलकर लड़ेंगे उस समय अर्जुन पीठ दिखा कर रण से भागेगा। यह सुनकर दुर्य्योधन बोला, हे कर्ण ! यदि यह नारी वेष धारी सचमुच ही अर्जुन है तो फिर बिना युद्ध किये हमारा प्रयोजन सिद्ध हो गया, क्योंकि तेरहवें वर्ष से पहले ही हमने उसको पहचान लिया इस से पांडवों को फिर बारह वर्ष बनवास भोगना पड़ेगा। उधर यह इस प्रकार बातें कर रहे थे। कि उधर अर्जुन ने अपने स्त्री वेष को उतार डाला और शस्त्रों के साथ रखे हुए सूर्य्य के समान चमकते हुए कवच को पहना। फिर गांडीव धनुष लेकर उसकी भयानक टंकार की और शत्रुओं के कलेजे हिला देने वाले देवदत्त शंख को पूर कर रथ को कौरवों की ओर बढ़ाया, यह देखकर द्रोणाचार्य्य बोले, देखो इनके रथ की गति से पृथ्वी डग मगा

रही है, इस धनुष की टंकार को और शंख की ध्वनि को हमने अनेक बार सुना है जिसे सुन कर सारे सैनिक सहम गये हैं हे कौरव गणों ! यह अर्जुन ही है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, इसलिये गौओं को अलग करके सावधानी से युद्ध की तैय्यारी करो नहीं तो आज कुशल नहीं है। तब दुर्य्योधन भी कुछ डर कर बोले कि हे आचर्य्य! पाण्डवों के तेरह वर्ष पूरे हो गए हैं कि नहीं, इस बातको भली भान्ति गिन लो। लोग समझते थे कि अभी तेरह वर्ष पूरे नहीं हुए परन्तु हमें अब शंका हो गई है पितामहां इसका पूरा पूरा हिसाब लगावें यदि अभी तेरह वर्ष पूरे नहीं हुए तो हमारे बिना लड़े ही पौ बारह हैं और यदि हो चुके हैं तो भी हम अवश्य लड़ेंगे चाहे यह अर्जुन हो अथवा स्वयं यम-राज हो, और जो कोई सैनिक चाहे वह रथी हो चाहे पैदल हो व घुड़सवार हो युद्ध से मुंह मोड़ेगा वह मेरे बाण का निशाना होगा इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। इसलिये व्याकुलता छोड़कर अब शीघ्र ही निश्चय करो कि युद्ध किस ढंग से करना होगा तब कर्ण अभिमान से बोले! हे महारथियो! आप क्यों डरते हैं, हम अर्जुन से किस बात में कम हैं, हम प्रतिज्ञा करते हैं, कि आज यदि यह अर्जुन है तो इसे मार कर हम अपनी प्रतिज्ञा पूरी करेंगे। कर्ण की अपने मुंह अपनी बड़ाई करना किसी ने भी अच्छा न जाना और कृपाचार्य्य तो कर्णकी आत्म श्लाघासे आग बगूला हो गए उन्होंने कहा कि हे कर्ण ! कुटिलता करना और बुरे

रास्ते में डालना तो तुम अच्छी तरह जानते हो परन्तु देश और राज्य की कल्याण किसमें है, इसकी तुम्हें कुछ भी परवा नहीं। हमारा विचार तो यह है कि इस समय अर्जुन से युद्ध करना उचित नहीं है। इस शूरबीरने अकेले ही सारे कुरु देशकी रक्षा की है, पांच वर्ष तक कठिन तपश्चर्य्या करके साक्षात महादेव के दर्शन किये हैं। हे अभिमानी! तुमने आज तक कौनसा काम अकेले किया है, जो अर्जुन को युद्ध के लिये ललकारते हो वृथा डींगें मारने से काम नहीं चलेगा, यदि युद्ध ही करना है, तो शीघ्र आगे बढ़ो। अश्वत्थामा बोले, हे सूतपुत्र! यह चौपटका युद्ध नहीं है, धोखेसे जीतलोगे, यहां अर्जुन के तीक्ष्ण बाणों से बचना कठिन है। तब आपस की तू तू मैं मैं देखकर भीष्म पितामह को बहुत दुःख हुआ। वह सबको शान्त करते हुए बोले, हे महारथियो! युद्ध के समय जब कि शत्रु सन्मुख खड़ा ललकार रहा हो, आपस में झगड़ा करना महा अमङ्गल है। कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा ने ठीक ही कहा, परन्तु कर्ण की बात न समझकर ही वह क्रोध में आगये हैं। उन्होंने तो केवल महारथियों का साहस बढ़ाने के लिये यह वचन कहे हैं। परन्तु दुर्य्योधन को उचित न था, कि वह आचार्य्य पर दोष लगाते। अब जो हुआ सो हुआ, सब एक दूसरे को क्षमा करो और यह विचार करो, कि युद्ध कैसे करना होगा। हमारी तो सम्मति यह है कि द्रोणाचार्य्यजी इस

युद्ध में मुख्य सेनापति हों, और उनके कथनाऽनुकूल ही सब काम किया जाए । यह सुनकर अश्वत्थामा बोले, हम भी झगड़ा बढ़ाना नहीं चाहते । पिताजी ने तो एक उदार योद्धा के समान शत्रु की प्रशंसा की थी, उनके हृदय में कोई पक्षपात नहीं है । तब दुर्य्योधन ने द्रोणाचार्य्यसे क्षमा मांगी, जिससे प्रसन्न होकर आचार्य्य बोले, हे भीष्म ! हम आप के कथनाऽनुसार ही काम करेंगे, क्यों कि दुर्य्योधन की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है, इस कारण पहले हिसाब लगाकर देखलें, कि तेरह वर्ष पूरे होचुके हैं, या नहीं, क्योंकि अर्जुन बालक नहीं है, जो इस तरह समय से पहले ही अपने आपको प्रकट कर देंगे । तब भीष्म पितामह ने सारा हिसाब लगाकर कहा, कि नक्षत्रों की गति में अन्तर होनेके कारण वर्ष में कुछ दिन बचे रहते हैं, जिससे पांच वर्ष के पश्चात् दो महीने बढ़ जाते हैं, इस कारण यदि साधारण हिसाब लगावें, तो पाण्डवों के ठीक तेरह वर्ष पूरे हुए हैं, और यदि नक्षत्रों की गति से देखें, तो पांच महीने ऊपर होगये हैं । यही कारण है, कि अर्जुन ने आज अपने आपको प्रकट कर दिया है । अब रही युद्ध की बात सो धर्म के अनुसार करना चाहिये, चाहे उसमें जय हो व पराजय । हमारी सम्मति तो यह है, कि सारी सेना चार भागों में बांट दीजाय । एक भाग की रक्षा में दुर्योधन हस्तिनापुर को लौट जायें । दूसरा दल गौओं को लेकर जाए, शेष दो भागों से अर्जुन

के साथ युद्ध किया जावे। भीष्म की बात को सबने स्वीकार किया। दुर्य्योधन और गौएं हस्तिनापुरको रवाना हुई और शेष दो भाग व्यूह रचने में लग गए। द्रोणाचार्य्य मध्य-भाग में खड़े हुए । अश्वत्थामा बाईं ओर और कृपाचार्य्य दाईं ओर खड़े हुए। इस प्राकार व्यूह बनाकर सबके आगे कर्ण हुए, और युद्ध का शङ्ख पूरा गया। युद्ध का शङ्ख सुनकर अर्जुन ने गांडीव की भयानक टंकार की, और दो पैने बाण छोड़े, जो आचार्य्यके पैरों तले आकर गिरे, फिर दो बाण और छोड़े, जो उनके कानों के पाससे सनसनाते हुए निकल गए। यह देखकर आचार्य्य बोले, यह देखो गाण्डीव की भयानक टंकार होरही है, और हमारे प्यारे शिष्य ने पहले दो बाणों से नमस्कार की है, और पिछले दो बाणों से कुशल समाचार पूछा है। इसके अनन्तर अर्जुन ने उत्तर को दुर्य्योधन के पीछे रथ ले चलने के लिये कहा। उत्तर ने जिधर दुर्य्योधन दौड़े जारहे थे, उधर ही घोड़े दौड़ाये। यह देखकर कर्ण उनको रोकने के लिये रास्ते में मस्त हाथी की तरह खड़े होगए। अर्जुन ने क्रुद्ध होकर पहले तो विकर्ण को रथ से नीचे गिरा दिया, फिर कर्ण के भाई को मार डाला। अपने भाई को मरा देख कर्ण को महाक्रोध चढ़ा। वह सन्मुख आकर युद्ध करने लगे।

कर्ण और अर्जुन का युद्ध देखने के लिये सब कौरव लोग एक ओर खड़े हो गये। अर्जुन बड़े वेग से बाणों की वर्षा करने लगे परन्तु कर्ण ने रास्ते ही में सब

को काट कर अपने पैने बाणों से उनके घोड़ों को घायल कर दिया। तब सब कौरव लोग शंख और भेरीयां बजा बजा कर कर्ण की प्रशंसा करने लगे। इससे अर्जुन क्रुद्ध सर्प की नाईं फुंकार मारने लगे। उन्हों ने सहस्रों बाण मार कर कर्ण के रथको ढक दिया और एक तीक्ष्ण बाण से उसको घायल कर दिया। इसके अनन्तर तीक्ष्ण अस्त्रों से कर्ण की भुजा सिर जंघा और ग्रीवा को घायल कर दिया। बाणों का तीक्ष्ण प्रहार न सहते हुए कर्ण युद्ध के मैदान को छोड़कर भाग गए। कर्ण को भागते देख दुर्योधन अपनी सेना सहित वापस लौटा और अर्जुन की ओर दौड़ा एक ओर से कृपाचार्य्य ने अर्जुन को अपने बाणों से पीड़ित करना आरम्भ किया तब अपने आपको शत्रु के घेरे में देखकर अर्जुन ने पहले कृपाचार्य्य की सेना पर धावा किया। कृपाचार्य्य ने अर्जुन के बाणों को खण्ड खण्ड करके पहले उनको घायल किया। इससे अर्जुन ने उत्तेजित होकर कृपाचार्य्य के घोड़ों को अपने बाणों से बींध डाला। इससे आचार्य्य के घोड़े भड़क कर इस प्रकार उछलने लगे कि वह रथ से बाहर गिर पड़े। गिरे हुए शत्रु को मारना उचित न समझ कर अर्जुन ने अपने धनुष को रोक लिया। पर ज्यों हीं उठ कर रथ पर चढ़े उसी समय अर्जुन ने अपने तेज बाणों के प्रहार से उन के धनुष को काट डाला और सारथि को मार दिया। कृपाचार्य्य को इस संकट में पड़े देखकर दूसरे योद्धाओं ने उन

को वहां से हटा दिया और स्वयं अर्जुन से युद्ध करने लगे। इस के पश्चात् अर्जुन गुरु द्रोणाचार्य्य के सन्मुख हुए गुरु शिष्य का भयानक युद्ध देखने के लिये सब लोग एक ओर हट गए। सारी सेना में बड़े जोर की शंख-ध्वनि होने लगी। गुरु को देख अर्जुन ने उनको नम्रता से प्रणाम किया और बोले हे गुरो! बनवास में हमें बड़े २ दुख दिये गये हैं, इस कारण अब हम कौरवों के शत्रु हैं, हम पर रोष न करना। हे गुरो पहले आप बाण चलावें। अर्जुन के कथन पर आचार्य्य ने बाण चलाया जिसे अर्जुन ने रास्ते ही में काट गिराया। इसके पश्चात् गुरु शिष्य की भीषण लड़ाई होने लगी। दोनों ही दिव्य अस्त्र चलाने में सिद्ध हस्त थे दोनों ही महांवीर थे, योद्धा थे अनुभवी थे और महारथी थे। सब लोग आश्चर्य्य से उनके अद्भुत कामको देखने लगे। दोनों योद्धा एक दूसरे के प्राण लेने पर तुले बैठे थे। अर्जुन का रण चातुर्य, उसकी फुर्ति, दक्षता, निशाना मारना आदि देख कर आचार्य्य को आश्चर्य्य हुआ। अर्जुन शनैः २ क्रोध में आकर दोनों हाथों से इतनी फुर्ति और तेजी से बाण चलाने लगे कि कब बाण उठाता है और कब फैंकता है यह कोई भी नहीं देख सकता था। अर्जुन के शर-समूह से द्रोणाचार्य्य ऐसे ढक गये जैसे बादलों के नीचे सूर्य्य ढक जाते हैं। यह देखकर कौरवों की सेना में हाहाकार मच गया। तब अश्वत्थामा अर्जुन की ओर दौड़े, इस से उन का ध्यान आचार्य की ओर से हट

गया इस अवसर को पाकर द्रोणाचार्य वहां से हट गए।

द्रोणाचार्य के हट जाने पर अश्वत्थामा और अर्जुन का युद्ध छिड़ गया। अवसर पाकर तेजस्वी आचार्य पुत्र ने गांडीव की डोरी को काट डाला, यह देख कौरव लोग उसकी वाह वा करने लगे। परन्तु अर्जुन ने तुरंत ही दूसरी डोरी चढ़ा दी और अश्वत्थामा को अपने तीक्ष्ण बाण समूह से अत्यंत पीड़ित किया और इतने बाण बरसाये कि उनको रोकते रोकते अश्वत्थामा के सारे अस्त्र शस्त्र समाप्त हो गये। इस अन्तर में कुछ विश्राम ले कर्ण फिर युद्ध क्षेत्र में आए और अर्जुन को ललकारने लगे। अर्जुन ने अश्वत्थामा की ओर से मुंह फेर कर कर्ण की ओर मुख किया और बोले हे सूतपुत्र! तुम कौरवों की सभा में सदा ही डींग मारा करते हो कि हमारे बराबर योद्धा संसार भर में नहीं हैं, सो आज हम तुमारी सारी शेखी निकाल देंगे। तुमने जो २ अपमान हमारे किये हैं जितनी गालियां दी हैं और जो २ कुकर्म किये हैं, आज उन सब का बदला हम चुका देंगे। रे नीच जिस क्रोध को बारह वर्ष तक हमने बनवास में रोके रखा है आज उसे प्रत्यक्ष देख अर्जुन के शब्दों से क्रुद्ध हुआ २ कर्ण बोला, हे अर्जुन! क्षत्रिय लोग मुंह से बकबक नहीं किया करते, यदि कुछ बल है, तो करके दिखाओ। मूर्ख तुम अपने आप को स्वतन्त्र समझते हो, परन्तु यह तुम्हारी भूल है, पहले तुम अपनी प्रतिज्ञा में बन्धे थे, और अब मेरे बाणों के

वश में हो, मैं युद्ध में तुम्हारी कामना अवश्य ही पूरी करूंगा। यह सुनकर अर्जुन ने कहा, हे अधिरथके पुत्र! तुम्हारे समान निर्लज्ज पुरुष मैनें सारे संसारमें नहीं देखा, अभी तुम मेरे बाणों से पीड़ित होकर रण-भूमि से भाग गये थे, परन्तु अब फिर आकर उसी प्रकार शेखी मारते हो। इतना कहकर श्वेतवाहन अर्जुन ने ऐसे तेज बाण बरसाए, कि वह कवच फोड़कर कर्ण की देह में घुस गए। उन्होंने उस के धनुष की डोरी को काट डाला। तब कर्ण ने क्रोध से दूसरा धनुष लेकर ऐसा बाण मारा, कि अर्जुन की मुट्ठी ढीली होगई। परन्तु तत्काल ही सम्भल कर अर्जुन ने ऐसी बाणों की वृष्टि की, कि कर्ण उस बाण-वृष्टि के अन्दर छिप गया। तब कौरवों की सेना कर्ण की सहायता के लिये आगे बढ़ने लगी, परन्तु उनके आने से पहले ही वीर अर्जुन ने कर्ण के घोड़ों को मार गिराया, और एक तीक्ष्ण बाण कर्ण की छाती में ऐसा मारा, कि वह मूर्छित होकर गिर पड़ा। जब मूर्छा खुली, तो अत्यन्त पीड़ित हुआ २ रण-भूमि को छोड़कर भाग गया। अब दुर्य्योधन ने समझ लिया, कि अर्जुन से लड़कर जीतना कठिन ही नहीं असम्भव है, सो उसने भाइयों के साथ मिलकर अर्जुन पर आक्रमण किया। परन्तु अर्जुन ने बाणों की वृष्टि करके उन सबको इस प्रकार तितर-बितर कर दिया, जैसे सूर्य्य मेघों को अपनी प्रखर रश्मियों से कर देता है। जब वह सब भाग गये तोमहावीर अर्जुन भीष्मजी के सन्मुख हुए। भीष्मजी ने यह देखकर कि इन

साधारण बाणों से अर्जुन पर विजय पाना कठिन है, इस लिए दिव्य अस्त्र चलाने आरम्भ किये। इधर अर्जुन भी दिव्यास्त्रों से उनका उत्तर देने लगे। यह देखकर आकाश में देवता लोग भी आश्चर्य्य चकित होकर दादा और पोते के इस भयानक युद्ध को देखने लगे। अन्त में क्रुद्ध होकर पितामह ने अर्जुन पर आग्नेय अस्त्र छोड़ा, जिससे युद्ध क्षेत्र के वृक्ष लता जलने लगे पृथिवी तप कर वाष्प उगलने लगी और उस अग्नि से जीव जन्तु घबरा कर मरने लगे। यह देखकर अर्जुन ने वारुणास्त्र छोड़ा, जिससे आकाश में एकाएक चादर की तरह काले काले मेघ छागये और हाथी की सूंड के बराबर मोटी जल की धाराएं बरसने लगीं जिससे युद्धक्षेत्र में पानी ही पानी होगया जहां २ अग्नि लगी हुई थी वह बुझ गई। तब तो भीष्मजी क्रोध से सन्तप्त होकर अर्जुन पर बाणों की वर्षा करने लगे परन्तु अर्जुन ने अपने बाणों से उन सब को मार्ग में ही काट गिराया और एक ऐसा बाण ताक कर पितामह की छाती में मारा कि वह घोर मूर्छा को प्राप्त हुए। तब सारथि उनको युद्ध क्षेत्र से हटाकर अलग लेगया। पितामह के हट जाने पर पहले हारे हुए सब योद्धा मिलकर अर्जुन से लड़ने लगे। तब अर्जुन ने अपने आपको शत्रुओं से घिरा हुआ पाकर मोहनास्त्र चलाया, जिससे भीष्म द्रोण, कर्ण, कृप, अश्वत्थामा आदि महारथी पैदल घुड़ सवार तथा हाथी घोड़े सब के सब मूर्छित होकर युद्ध के मैदान में सो गए। उन सबको अचेत पड़ा हुआ देखकर अर्जुन को राज कुमार

उत्तरा की बात याद आई। उन्होंने उत्तर से कहा हे राज-कुमार! यह देखो कौरव लोग सुधि हीन पड़े हैं, इसलिये रथ से उतर कर इन सब महारथियों के सुन्दर सुन्दर रंग बिरंगे वस्त्र उतार लो, परन्तु सावधान भीष्म पितामह से बचकर जाना क्योंकि वह इस अस्त्र का तोड़ जानते हैं। तब राजकुमार उत्तर रथसे उतर सारी सेनामें बे खटके घूमने लगा। उसने बहुत से बढ़िया बढ़िया वस्त्र उतार लिये। वस्त्रों को लेकर अर्जुन ने उत्तर को कहा कि हे राजकुमार! अब हमारी पूरी पूरी विजय हुई। अब नगर में चलकर अपनी विजय की सूचना देकर गृहजनों की चिन्ता दूर करनी चाहिये, यह कहकर अर्जुन और उत्तर युद्ध क्षेत्र से नगर को लौटे। इतने में कौरव सेनाके भी कुछ २ होश ठिकाने आए। अर्जुन को जाते देखकर दुर्योधन बोला हे महारथियो! किस नींद में सोए हो वह देखो अर्जुन गौओं को छुड़ाकर जीता जागता वापस जारहा है, सब मिलकर उस पर आक्रमण करो, और ऐसा मारो कि हमेशा की चिन्ता दूर हो जाए। दुर्योधन की बात सुनकर भीष्म हंसकर बोले, तुम्हारी अक्ल पर पत्थर पड़ गये हैं, मूर्ख! जिस समय तुम सब मूर्छित पड़े थे, अर्जुन चाहते तो तुम सब को मार कर आज ही पुराना वैर चुका लेते, परन्तु धर्म के विरुद्ध जानकर ही उसने तुमको नहीं मारा परन्तु तुम अभी भी डींग मारते हो। चलो लौट चलो। इसी में कुशल है। पितामह की बात सुनकर दुर्योधन

लज्जित होगया और फिर कुछ न बोला। तब नगर में वापस जाते हुए अर्जुन ने उत्तर को कहा हे राजकुमार! अब तुम नगर में जाकर इस भेद को मत खोलना कि मैं अर्जुन हूं। यद्यपि अब हमारे तेरह वर्ष पूरे होचुके हैं, परन्तु उचित समय आने पर हम स्वयंमेव अपने आप को प्रगट कर देंगे। उत्तर ने कहा हे महाबाहो! कौरवों की महा पराक्रमी सेना को मैंने हरा दिया है, इस बात पर किसी को भी विश्वास न होगा परन्तु फिर भी मैं आपकी आज्ञा काउल्लंघन न करूंगा और इस बात को छिपाए रखूंगा। उत्तर को समझा बुझाकर अर्जुन बोले हे कुमार! अब ग्वालों को नगर में भेजकर अपनी विजय का समाचार भेजो। हम यहां से तीसरे पहर चलेंगे, क्योंकि हमें फिर बृहन्नला का वेश पहरना पड़ेगा। तब राजकुमार उत्तर की आज्ञा से ग्वाले नगर की ओर चले। अर्जुन ने फिर वही स्त्रियों का वेश धारण कर और कुछ देर विश्राम करके नगर की ओर प्रस्थान किया।

उधर महाराज विराट पांडवों की सहायता से त्रिगर्तों को जीत कर बड़े आनंद से राजधानी में आए और शीघ्र ही रणवास में पहुंचे। अन्तःपुर में यह समाचार पाकर कि राजकुमार अकेले ही कौरवों से लड़ने गये हैं उन्हें बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने उसी समय अपनी सेना को आज्ञा दी और उत्तर की सहायता के लिये उसे रवाना कर दिया। परन्तु अभी सैनिक नगर से बाहर भी न

निकलने पाये थे कि ग्वाले लोगों ने आकर उत्तर की विजय और कौरवों की पराजय का समाचार दिया । यह सुन कर विराट बड़े प्रसन्न हुए और ग्वालों को बहुत सा धन देकर मंत्री से बोले, कि राजपुत्र अकेले ही कौरवों की भयंकर सेना को हरा कर कुशल पूर्वक आ रहे हैं यह सुन कर हम बहुत प्रसन्न हुए हैं, सारे नगर में राज-कुमार की जय–घोषणा करो सड़कें और बाजार नाना प्रकार की ध्वजा पताकाओं फूलों और अनेक प्रकार की सामग्री से सजाओ । राजकुमारियों को भी कहो कि वह महल के सिंह द्वार पर आकर कुमार का स्वागत करें। जब महाराज विराट की आज्ञा से सब सजावट हो गई तो उन्हों ने द्रौपदी को कहा हे सैरिन्ध्री ! आज विजय उत्सव है तुम शीघ्र ही पांसे लाओ हम कंक से जूआ खेलेंगे ।

चौथा अध्याय ।

पांडवों का प्रगट होना ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! जब सैरिन्ध्री पांसे ले आई तो महाराज विराट युधिष्ठिर को बोले हे कंक ! आओ जूआ खेलें । युधिष्ठिर बोले महाराज ! मैंने सुना है जूआ बहुत बुरा कर्म है, हर्ष में आये हुए जुआरिये के साथ भी कभी जूआ न खेले । देखिये जूए में परम प्रतापी युधिष्ठिर ने अपना सब कुछ हार दिया और कैसे कैसे दुःख उठाए परन्तु फिर भी मैं आपकी आज्ञा भंग न

करके जैसा आपको पसंद है वैसा करता हूं। तब वह दानों जूआ खेलने लगे। खेलते खेलते महाराज विराट ने कहा हे कंक ! देखो मेरा पुत्र कैसा वीर है, उसने कौरवों को अकेले ही मार भगाया है। तब युधिष्ठिर बोले हे राजन् ! जिसका सारथि बृहन्नला हो वह कौरवों को क्या स्वयं इन्द्र को भी जीत सकता है। युधिष्ठिर का उत्तर सुन कर विराट बोले हे ब्राह्मण ! तेरा काम वेद पढ़ना और अग्निहोत्र करना है, क्षत्रिय धर्म को तू नहीं जानता। राजकुमार उत्तर की वीरता को तू न समझ कर नपुंसक की प्रशंसा करता है, भीष्म द्रोण कर्ण आदिक महारथियों को मेरा पुत्र क्या नहीं जीत सकता ? ब्राह्मण जान कर मैं तुम्हें क्षमा करता हूं, परन्तु यदि जीवन चाहता है तो फिर कभी ऐसा न कहना। युधिष्ठिर ने फिर कहा राजन् ! जहां भीष्म कर्ण दुर्योधन कृपाचार्य्य आदि वीर हों उनको जीतना बृहन्नला ही का काम है दूसरे का नहीं। हे राजन् ! बृहन्नला के समान योद्धा इस जगत में न कोई हुआ है और न होगा। जिसको युद्ध का नाम सुन कर हर्ष होता है, जिस ने देवताओं को पीड़ा देने वाले राक्षसों को मारा है हे राजन् ! ऐसे बृहन्नला के सारथि मिल जाने पर राजकुमार उत्तर क्यों न विजय प्राप्त करेगा। तब राजा विराट को बड़ा क्रोध चढ़ आया वह बोले हे कंक ! तुझे बार बार रोका है परंतु तू फिर भी वही बातें कहे जाता है, यह कह कर उसने जोर से युधिष्ठिर के नाक पर पांसे दे मारे।

युधिष्ठिर की नाक से रुधिर की धारा बहने लगी पर उसने उसे पृथिवी पर न गिरने दिया और अपने हाथों पर ले लिया। यह देख कर द्रौपदी तत्काल जल से भरा हुआ कटोरा ले आई और सारे रुधिर को कटोरे में ले कर बोली हे राजन्! यह कंक नाम का ब्राह्मण महा तेजस्वी मारने के योग्य नहीं था, इस का रुधिर जिस भूमि पर गिरेगा उस देश का भयानक नाश होगा अन्न का अकाल पड़ेगा और बारह वर्ष तक वर्षा न होगी, इस लिये इस के रुधिर को मैं कटोरे में लेती हूं। इतने में राजकुमार उत्तर भी विजय पताका उड़ाता हुआ नाना प्रकार के सुगंधित पदार्थों से सुवासित, बाजों से नगर में प्रविष्ट हुआ। नगर निवासियों ने उसका बड़े उत्साह और आदर के साथ स्वागत किया। इसके पश्चात् वह राजदरबार के द्वार पर आकर खड़ा हुआ और महाराज को अपने आने की शुभ सूचना दी। उसके अन्दर आने की सूचना पाकर युधिष्ठिर ने पास खड़े हुए सूत को कान में कहा कि उत्तर को अकेले अन्दर लाना, बृहन्नला को साथ न लाना हे सूत! मेरे नाक से बहता हुआ रुधिर यदि उसने देख लिया तो भयानक नाश होगा, क्यों कि जो कोई मुझ पर चोट करेगा उसे वह जान से मार डालेगा यह उसकी प्रतिज्ञा है।

तब सूत महाराज विराट की आज्ञा से उत्तर को अंदर ले आया। महाराज का ज्येष्ठ पुत्र उत्तर आया और प्रणाम करके अपने स्थान पर बैठ गया। परंतु जब राजकुमार ने

कंक के नाक से रुधिर गिरता देखा तो आश्चर्य रह गया। वह वहां से उठ कर पिता के पास जाकर बोला कि हे पिता जी! इसको किस ने मारा है, ऐसा उग्र पाप किस ने किया है? विराट बोले बेटा! इस पापी को मैंने मारा है, इस का इतनी देर हमने यूं ही आदर किया, यह इसके योग्य नहीं था। कौरवों पर तुम्हारी विजय का समाचार सुन कर जब मैं तुम्हारी प्रशंसा करने लगता तभी यह नपुंसक बृहन्नला की उपमा करता था, यही इसकी ताड़ना का कारण है। उत्तर ने कहा पिता जी! आपने बहुत बुरा किया शीघ्र ही इनको प्रसन्न करें, ऐसा न हो कि ब्रह्म शाप आपका कुल सहित विध्वंस करदे। पुत्र के कथन पर विराट ने नाना प्रकार के कोमल वचनों से युधिष्ठिर को प्रसन्न किया और क्षमा मांगी। युधिष्ठिर बोले राजन्! हमने तुमको पहले ही क्षमा कर दिया था, हम जानते हैं कि शक्ति वाला दुर्बल को मारता है और स्वामी सेवक को बिन दोष के ही कभी कभी मारता है। जब रुधिर बहना बन्द हो गया तो युधिष्ठिर के संकेत से बृहन्नला को भी बुलाया गया। वह सभा में आकर पहले महाराज विराट और फिर कंक को प्रणाम करके बैठ गया। तब महाराज अर्जुन के सामने उत्तर की प्रशंसा करने लगे और बोले कि हे कुल की ध्वजा ऊंची करने वाले! आज तुमने कौरवों को जीत कर मेरा नाम रख लिया है और संसार को बता दिया है कि क्षत्रियों में हमारा कुल सर्वश्रेष्ठ है।

हे मत्स्यावतंस! लाखों निशाने मार कर एक में भी न चूकने वाले महा अभिमानी कर्ण को तुम ने किस प्रकार हराया, संसार में जिसके बराबर दूसरा योद्धा नहीं है उस भीष्म को तुमने क्योंकर जीता, यादवों और कौरवों के गुरु द्रोणाचार्य्य के साथ तुम्हारा कैसा युद्ध हुआ, जो विशाल बाहु अपने बाणों से पहाड़ों को भी खण्ड खण्ड कर देने की शक्ति रखता है उस दुर्य्योधन के साथ तुम कैसे लड़े हे पुत्र! आज तू ने मेरे हृदय को शीतल कर दिया है और मेरे चारों ओर सुख का वायु बह रहा है। पिता की बात सुन कर राजकुमार बोला हे तात! मेरी क्या सामर्थ्य थी जो कौरवों की भयंकर सेना को विजय करता। न मैंने उनको जीता और न ही मैंने गौएं छुड़ाईं। यह सब काम एक गन्धर्व का है जिसने समय पर आकर सहायता दी। तब विराट आश्चर्य्य से बोले, कि वह गन्धर्व कहां है। राजकुमार ने कहा हे तात! वह उसी समय चले गये और दो तीन दिन तक प्रगट होंगे। इसके अनन्तर अर्जुन ने कौरवों के छीने हुए वस्त्र अन्तःपुर में जाकर कन्याओं को दिये जिन्हें पाकर वह अति प्रसन्न हुईं।

तीसरे दिन उत्तर के साथ विचार करके पांचों पांडवोंने राजाओं के योग्य वस्त्र और भूषण पहने और महा तेजस्वी अग्नि के समान देदीप्यमान मुख वाले युधिष्ठिर को आगे करके राज सभामें गये और राजासनों के ऊपर बैठ गए। कुछ देर पीछे राज दरबार का कार्य्य करने के लिये महाराज

विराट सभा भवन में आए। वहां पांडवों को राजासन और सिंहासन पर बैठे देखकर उनको बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने भवें टेढ़ी करके युधिष्ठिर से पूछा, हे कङ्क! मैंने तुम्हें चौपड़ खेलने के लिय अपने पास रक्खा था, आज तुम मेरे सिंहासन पर कैसे बैठ गये, इस ढिठाई का क्या कारण? तिसपर अर्जुन मुसकरा कर बोले, यह तो इन्द्र के आसन पर भी बैठने के योग्य हैं। यह चारों वेदों के जानने वाले त्यागी, परम सत्याग्रही और दृढव्रती हैं, इन्होंने अपने भुज-बल से पृथवी के सारे राजों से कर लिया है। हे राजन्! यही चक्रवर्ती महाराजाधिराज महाराज युधिष्ठिर हैं। विराट आश्चर्य्य से उनकी ओर देखते हुए बोले, यदि यह युधिष्ठिर हैं, तो इनके चारों भाई और त्रैलोक्य-सुन्दरी द्रौपदी कहां है? तब अर्जुन ने उंगली का इशारा करते हुए कहा, राजन्! यह जो आपका रसोईया बल्लभ है, यही महा-बली भीमसेन है, जिसने अपने बल से मेघनाद को पछाड़ा और कीचक को मारा था। जो आपकी घुड़शाल में अश्व-पाल है वह शत्रुओं का नाश करने वाला नकुल है, गौओं का अधिकारी महारथी सहदेव है, और सुदेष्णा की दासी जिसके कारण कीचक मारा गया, वह त्रैलोक्य-सुन्दरी द्रौपदी है, और महाराज जिस बृहन्नला ने आपकी पुत्री को नाचना गाना सिखाया है, वह मैं अर्जुन हूं। राजन्! हमने आपके हां परमसुख पाया है, और जिस प्रकार बच्चा गर्भ के अन्दर गुप्त रहता है, इसी प्रकार हमने भी

अपना अज्ञात-वास आपके हां पूरा किया है। इसके अनन्तर राजकुमार ने उठकर अर्जुन की प्रशंसा की, और कहा, हे तात्! कौरवों की सेना का भयानक नाश करने वाले गन्धर्व यही अर्जुन हैं। इन्होंने कौरवों की सेना को इस प्रकार फाड़ा है, जिस तरह सिंह मृगों के झुण्ड को। इनके एक एक बाण से बड़े बड़े हाथी गिरकर दांतों को पृथवी में गाड़कर मर गए। हे तात! गौओं को जीतने वाले यही हैं। भीष्म, द्रोण, कर्ण, दुर्य्योधन, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा को भूमि पर सुलाने वाले यही हैं, इनकी शङ्ख-ध्वनि ने मेरे कान बहरे कर दिये हैं। उत्तर की बात सुनकर विराट गद्‌गद् प्रसन्न होकर युधिष्ठिर को बोले, हे महाराजाधिराज! मेरे धन्यभाग्य हैं, मुझसा भाग्यवान् आज संसार में दूसरा कौन है। आपके बनवास की समाप्ति देखकर मैं प्रफुल्लित होगया हूं। आपका अज्ञात-वास भी पूरा हुआ। आप ही ने त्रिगर्तराज सुशर्मा के हाथ से मेरी रक्षा की। इसके बदले में मैं आपको क्या देसकता हूं, परन्तु मैं चाहता हूं, कि पांडवों और मत्स्यों का यह मैत्री-सम्बन्ध कभी न टूटे। हे राजन्! इसके लिये मैं राजकुमारी उत्तरा को अर्जुन के अर्पण करता हूं। विराट की बात सुनकर युधिष्ठिर ने अर्जुन की ओर देखा। तब अर्जुन बोले, आपकी बात उचित है, मत्स्यों और पाण्डवों का सम्बन्ध अटल हो, यह मैं भी चाहता हूं, परन्तु राजन्! मैं अन्तःपुर में उत्तरा को पुत्री के समान

गाना बजाना सिखाता रहा हूं, और वह भी मुझे गुरु और पिता कह कर पुकारती रही है, इस लिये आप उत्तरा का मेरे पुत्र अभिमन्यु के साथ विवाह करें। हे राजन्! मैं उत्तरा को स्नुषा के रूप में ग्रहण करता हूं। तब युधिष्ठिर बोले, दूरदर्शी अर्जुन ने बहुत ही उचित कहा है। मैं इसमें कोई शङ्का नहीं देखता हूं, कृष्ण का भाञ्जा परम रूपवान् वीर अभिमन्यु उत्तरा के योग्य ही है। तब विराट ने युधिष्ठिर के कथन को स्वीकार किया, और कहा हे भारत! मेरी सारी कामनाएं सिद्ध हुईं, जिस का अर्जुन सम्बन्धी है, उसे संसार में और क्या चाहिये। उत्तरा और अभिमन्यु का विवाह पक्का करके पाण्डव राजधानी से चलकर विराट के उपप्लव्य नगर में पहुंचे, और अभिमन्यु के विवाह की तैयारियां होने लगीं।

विवाह में सम्मिलित होने के लिये पाण्डवों के सारे मित्र राजाओं को बुलाया गया। द्वारका से श्रीकृष्णजी अभिमन्यु को साथ लेकर, और बलदेव सारी यादव-सेना को लेकर आये। महाबली द्रुपद पाञ्चाल-सेना के साथ और शिखण्डी द्रौपदी के पांचों पुत्रों को लेकर एक अक्षौहिणी सेना को लिये हुए पहुंचे। महाराज विराट ने देश देशान्तरों से आये हुए राजाओं का दिल खोलकर सत्कार किया। पाण्डवों के लिये श्रीकृष्ण जी ने अगिणित माणि, रत्न, भूषण और वस्त्र द्वारका से साथ लाकर पाण्डवों को दिये। तब विवाह का मङ्गल-कार्य्य आरम्भ हुआ। नाना

प्रकार के शङ्ख, भेरी, ढोल आदि बाजे बजने लगे, छत्तीस प्रकार के व्यञ्जन तैयार हुए, नाच, नटों के खेल और गन्धर्वों के गाने होने लगे। फिर विवाहमण्डप में सुदेष्णा आदि नारियां सुन्दर २ रेशमी वस्त्र और बहुमूल्य भूषणों से सजकर उत्तरा को लाईं। परन्तु अत्यन्त सुन्दरी द्रौपदी के रूप के सामने वह सब ऐसी थीं, जैसे चन्द्रमा के सामने तारे। तब ब्राह्मणों ने विधिपूर्वक विवाह कराया, और उन को बहुतसा धन दक्षिणा में दिया गया।

इति विराट-पर्व समाप्त ।

अथ उद्योग पर्व

पाण्डवों का परस्पर विचार ।

पहला अध्याय ।

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! अभिमन्यु का विवाह हो चुकने पर दूसरे दिन सवेरे पांडव और उनके पक्ष के सारे राजे महाराजे सभा मण्डप में बैठकर विचार करने लगे कि अब किस प्रकार पांडवों का कल्याण हो। उस समय सब राजाओं के विचार सुनकर श्रीकृष्णजी बोले हे भूपतिगण! पाण्डवों का बारह वर्ष का उग्र बनवास समाप्त हुआ और तेरहवां वर्ष भी इन्होंने छिपकर व्यतीत कर दिया है। आप सब जानते ही हैं कि इसमें दुर्योधन ने कैसी कैसी कुटिल चालें चली हैं। शकुनि ने छल कर के युधिष्ठिर को जीता। इनकी राज्य सम्पत्ति छीनली और बनवास कराकर महा दुःख दिये। परमात्मा की कृपा से पांडवों ने सारे दुःखों को पार किया, अब वह धर्म के अनुसार अपने राज्य को पाने के अधिकारी हुए हैं। इस लिये अब कोई ऐसा उपाय सोचो जिस में पांडव अपने राज्य को फिर पाएं और दोनों पक्षों में किसी प्रकार का झगड़ा भी न हो। धर्मराज युधिष्ठिर अपने अधिकार से अधिक एक गज भी भूमि नहीं चाहते। यह केवल उतना ही चाहते हैं, जितना कि इन्होंने अपने बाहुबल से दूसरे राजाओं से

जीता है। दूसरी ओर कौरवों के लोभ और उनकी पर-धन हरण की लालसा को भी देखना है, इन दोनों बातों को विचार करके निश्चय करो कि किस उपाय से न्याय पूर्वक इनकी समस्या हो। इतने दुःख सहन करने के बाद भी यदि दुर्योधन ने इनका राज्य देने में आना कानी की तो यह दृढ़ ब्रती अवश्य ही धृतराष्ट्र के पुत्रों का बध करेंगे। यदि आप यह सोचें कि वह बहुत हैं और यह थोड़े हैं तो आप सब मिलकर न्याय और सत्य का पक्ष लें और पांडवों के लिये लड़ें। हे नृपतिवृन्द! मेरी तो इस समय यही सम्मति है कि यदि बिना युद्ध किये दुर्योधन पांडवों को उनका आधा अथवा चौथा भाग ही दे देवे तो पांडव उसी में सन्तोष करें क्योंकि मैं सारे कुरुकुल की रक्षा चाहता हूं। यह सुनकर पांचाल देशके राजा महाराज द्रुपद बोले हे कृष्ण! युधिष्ठिर ने अपने प्रतिज्ञा किये हुए बारह वर्ष पूरे कर दिये हैं, अब दुर्योधन को उनका छीना हुआ राज्य लौटाना चाहिये, वह ऐसा न करेगा, तो मेरी तलवार उसका रक्त पीकर शान्त होगी। कुरुकुल नष्ट हो चाहे बच जाए इस बात की मुझे कुछ परवा नहीं है। क्षत्रिय का कर्म सत्य और न्याय पर प्राण देदेना है, चाहे एक कुल नहीं सारा संसार नष्ट हो जाए। परन्तु इसके लिये हमें बड़े बल की आवश्यकता है। इसलिये हे यादव श्रेष्ठ! मैं अपने पुरोहित को दूत बनाकर धृतराष्ट्र की सभा में भेजता हूं, वह वहां जाकर युधिष्ठिर का संदेश देवे और

उससे उसका पूरा राज्य मांगे, यदि पुत्रमोह से अंधा हुआ२ वह न माने तो आधा मांगे यदि इतना भी न माने तो पांच भाईयों के लिये पांचही गांव मांगे, इससे युधिष्ठिर की धर्म परायणता और धृतराष्ट्र तथा दुर्योधनकी अन्याय परायणता संसार देखेगा। इसलिये हे कृष्ण! जबतक मेरे पुरोहित हस्तिनापुर से लौटकर नहीं आते तबतक महाराज युधिष्ठिर सब राजाओं के पास अपने दूत भेजें, यह समय हमारे बल बढ़ाने का है। हे भूपतिगण! दुर्योधन को हमारी एक २ बात का समाचार पहुंचता है। हमारे पहुंचने से पहलेही वह सब राजाओं के पास पहुंचने का प्रयत्न करेगा, और क्षत्रिय लोग पहले शरण आए हुए के पक्ष में होते हैं इस लिये दुर्योधन के पहुंचने से पहले अपने दूतों को भेजो।

महाराज द्रुपद की युक्ति पूर्ण और तत्त्व की बात सुन कर सब राजाओं ने ठीकहै ठीक है, यह कहा। इस के अनन्तर पुरोहित को धृतराष्ट्र की सभा में भेजने का निश्चय करके सब लोग अपने २ देशों को चले गये। श्री कृष्ण भी उसी समय द्वारका को चलेगये और इस प्रकार यह विवाह कार्य्य बड़े उत्सव के साथ समाप्त हुआ॥

दूसरा अध्याय।

दूत गमन।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय! श्रीकृष्ण और दूसरे राजाओं के चले जाने पर महाराज युधिष्ठिर और विराट युद्ध की तैय्यारी करने लगे। उन्होंने सब राजाओं

के पास अपने दूत भेजे। युधिष्ठिर का समाचार पाकर सब राजे महाराजे और राजकुमार उपप्लव्य नगर में आने शुरू हुए। और वहां बड़ी सेना एकत्र हुई। पांडवों ने उपप्लव्य नगर में भारी सेना एकत्र की है, यह समाचार पाकर दुर्योधन ने भी सब राजाओं के पास अपने दूत भेजे। तब पांचाल नरेश महाराज द्रुपद ने महाराज युधिष्ठिर की आज्ञा से अपने बुद्धिमान् वृद्ध पुरोहित को धृतराष्ट्र के दरबार में भेजा और कहा कि हे पुरोहित! धृतराष्ट्र समझते हैं कि दुर्योधन ने पांडवों को जुए में जीता है, इसलिये वह कभी पांडवों का पक्ष नहीं लेंगे, महात्मा विदुर ने उनको अपने नीति युक्त वचनों से कई बार समझाया परन्तु उन्हों ने सुना अनसुना कर दिया। और आज तक मोहान्ध हुआ हुआ वह पुत्रों के पीछे चलता है। शकुनि ने धन युद्ध अर्थात् जुए के लिए युधिष्ठिर को ललकारा, जिसे क्षत्रिय धर्म के अनुसार युधिष्ठिर कभी स्वीकार न कर सकते थे और न किया। जुए में शकुनि बड़ा चतुर और सिद्ध हस्त है, उसने भोले भाले धर्म परायण युधिष्ठिर का सर्वस्व हर लिया। हे पुरोहितवर्य्य! इस प्रकार जान बूझकर ठगकर अब वह अपने आप कभी राज्य न देंगे। परन्तु आप बुद्धिमान् नीति को जानने वाले और धर्म युक्त मीठा बोलने वाले हैं। आप जाकर धृतराष्ट्र और उनके भीष्म आदिक सभासदों के हृदयों को नर्म करने का यत्न करें। महात्मा विदुर बड़े नीतिज्ञ और धर्मात्मा हैं, वह अवश्य ही आप की बात

करेंगे, और भीष्म पितामह द्रोणाचार्य तथा कृपाचार्य को आप के पक्ष में लाने की चेष्टा करेंगे, क्योंकि वह भी पांडवों का हृदय से कल्याण चाहते हैं, उस समय सम्भव है धृतराष्ट्र भी युधिष्ठिर की बात मान लें। यह कहकर युधिष्ठिर ने पुरोहित को हस्तिनापुर भेज दिया। इतनी कथा सुनाकर वैशम्पायन जी बोले हे राजन! जब पुरोहित चला गया तो गांडीवधारी अर्जुन श्रीकृष्ण को लाने के लिये स्वयं द्वारका गये।

अपने जासूसों से यह समाचार पाते ही कि अर्जुन श्री कृष्णजी के पास द्वारका गये हैं, दुर्योधन भी एक पवन गति घोड़े पर सवार होकर द्वारका की ओर दौड़े। दुर्योधन और अर्जुन एक ही समय में द्वारका पहुंचे और एक साथ ही महाराज कृष्ण के महल में गये। श्रीकृष्ण उस समय सो रहे थे। यह देखकर दुर्योधन जल्दी से उन के सिरहाने जाकर बैठ गया, फिर अर्जुन पायताने बैठकर उन के जागने की प्रतीक्षा करने लगे। थोडी देर बाद जब श्री कृष्ण जागे तो तुरन्त ही दुर्योधन ने उठकर उनको प्रणाम किया। श्रीकृष्ण ने दुर्योधन और अर्जुन दोनों की कुशल पूछी दुर्योधन ने हंसकर कहा हे यादव शिरोमणि! आप मेरे और अर्जुन के एक जैसे सम्बन्धी और मित्र हैं, इस युद्ध में आप मेरी सहायता करें, मैं यहां पहले आया हूं, इसलिये धर्मानुसार आप को मेरा ही पक्ष लेना बनता है। श्रीकृष्ण बोले हे कुरुकुल अवतंस! आप पहले आये

हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं परन्तु मैंने पहले अर्जुन को देखा है, इसलिये मैं दोनों की सहायता करूंगा। हे दुर्योधन! पहले छोटों की कामना पूरी होनी चाहिये, अतएव अर्जुन ही पहले अपनी बात कहे। परन्तु अपनी २ बात कहने से पहले मैं दोनों को सुना देना उचित समझता हूं कि मैं इस युद्ध में किसी की ओर होकर नहीं लडूंगा, मैं आज आपके सामने अटल प्रतिज्ञा करता हूं। मेरी नारायणी सेना जिनका एक२ गोप मेरे ही समान बलवान् पराक्रमी और युद्ध में न दबने वाला है सब एक पक्ष में होकर लड़ेगी और मैं दूसरी ओर बिना शस्त्र के अकेला हूंगा। इन दोनों बातों में से अर्जुन जो चाहे मांग ले, क्योंकि धर्मानुसार अर्जुन पहले मांगने का अधिकारी है। कृष्ण का वचन सुनकर अर्जुन नम्रता पूर्वक हाथ जोड़कर बोले हे नारायण! मुझे धन कोष सेना अस्त्र शस्त्र किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं, मैं केवल आप को मांगता हूं। तब दुर्योधन ने बड़े हर्ष से नारायणी सेना को लिया, और कृष्ण को खाली जानकर अर्जुन की बुद्धि पर हंसता हंसता बलदेव के पास गया और उन से भी सहायता मांगी। बलदेवने भी कहा कि हे दुर्योधन! मैं इस युद्ध को सारे देश का दुर्भाग्य समझता हूं, इसलिये न तो मैं अर्जुन का साथ दूंगा और न तुम्हारा। परन्तु इतना कह देना अपना धर्म समझता हूं कि यह युद्ध धर्म युद्ध हो और क्षात्र धर्म के विरुद्ध कोई चेष्टा न होने पावे। तब दुर्यो-

धन अति प्रसन्न होकर वहां से फूला फूला हस्तिनापुर को लौटा। उधर युधिष्ठिर का पत्र पाकर मद्रदेश का राजा शल्य बड़ी भारी सेना लेकर पांडवों की सहायता के लिये हस्तिनापुर की ओर चला। जब दुर्योधन ने यह समाचार सुना तो उसने शल्य के विश्राम के लिये रास्ते में बड़े बड़े सुन्दर नाना प्रकार रत्न-जटित महल, चित्र विचित्र और सुन्दर बाग़ीचे बनवाए उसकी सेनाके लिये पक्की छावनियां घोड़ों के लिये अस्तबल बनवाये और उत्तम उत्तम खान पान की सामग्री से उन विश्राम के स्थानों को भरपूर कर दिया। महाराज शल्य जहां जहां जिस स्थान पर पड़ाव डालते, दुर्योधन के कर्मचारी उनकी देवताओं की सी पूजा करते थे। जब बहुत से पड़ाव पार करके वह हस्तिनापुर के निकट एक पड़ाव पर पहुंचे तो वहां उन्हों ने इन्द्र के प्रसादकीतरह सजेहुए महलमें सम्पूर्ण सुखसामग्रीको पाया इससे वह बहुत ही प्रसन्न हुए और एक कर्मचारी को बोले कि मैं युधिष्ठिर पर अति प्रसन्न हूं जिसने मेरा देवताओं से भी अधिक आदर किया है। हे कर्मचारियो ! जिस ने यह भवन तैय्यार किया है वह कहां है, मैं उसे पुरस्कार दूंगा। तब शल्य को प्रसन्न हुआ देख कर दुर्योधन जो उसी महल में छिपा हुआ था, शल्य के सन्मुख आया। उसे देख कर शल्य समझ गया, कि यह सब आदर-सत्कार दुर्योधन की ओर से है। तब प्रसन्न होकर शल्य बोले, हे कुरुकुल-प्रदीप ! तुमने मेरा बहुत

आदर किया, अब मांगो क्या मांगते हो, मैं तुम्हें वही दूंगा। दुर्योधन बोला, हे मामा! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो आप इस युद्ध में मेरी सेना के नायक बनो, यही मैं मांगता हूं। दुर्योधन की बात सुनकर शल्य कुछ विचार करके बोले, बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा, तुम अब बेखटके हस्तिनापुर जाओ, मैं युधिष्ठिर को मिल कर तुम्हारे पास आता हूं। दुर्योधन ने कहा, हे मामा! आप युधिष्ठिर के पास जाओ, इसमें मुझे कुछ भी शङ्का नहीं है, परन्तु शीघ्र आना, और अपने दिये हुए वर को भूल न जाना, हे राजन्! हम अब आप ही के भरोसे हैं। शल्य दुर्योधन को वर देकर, अपने आने की सूचना देने के लिए युधिष्ठिर के पास गये। राजा शल्य को देख कर महाराज युधिष्ठिर ने बड़ी भक्ति और श्रद्धा से हाथ जोड़ कर नमस्कार किया। युधिष्ठिर को देख कर शल्य बड़े स्नेह से उनको गले मिले, और फिर उनका कुशल-समाचार पूछ कर बोले, हे धर्मपुत्र! आपके दूत से समाचार पाकर हम अपनी सेना सहित आपकी ओर आए। रास्ते में दुर्योधन ने हमारे लिये बड़े ही सुन्दर महल, बाग़, बग़ीचे और घुड़शालाएं बनवाईं, और सब प्रकार की सुख-सामग्री एकत्र की। परन्तु दुर्योधन की इस कुटिल चाल को न समझ कर, आपकी ओर से हमारा सत्कार किया गया है, ऐसा हम समझते रहे, परन्तु हस्तिनापुर के निकट आकर जब हम बड़ी उत्तम रीति से सत्कार किये

गये, तब हमने प्रसन्न होकर ऐसे सत्कार करने वाले को वर देने की प्रतिज्ञा की। उस समय उसी महल में छिपा हुआ दुर्योधन हमारे सन्मुख आया, और मुझ से अपनी सेना का सेनापति बनने का वर मांगा, जिसे उसने प्राप्त किया। हे धर्मपुत्र ! भाग्य से ही यह सब कुछ हुआ और न चाहते हुए भी मैं उस प्रतिज्ञा में धर्माऽनुसार बांध लिया गया। मैं तुम्हारा कल्याण हृदय से चाहता हूं, तुमने निर्दोष होने पर भी बहुत कष्ट सहन किये हैं, इस लिये अब तुम कहो, मैं तुम्हारे लिये क्या करूं ? यह सुन कर युधिष्ठिर बोले, हे मामा ! जो कुछ आपने किया, वह धर्मानुसार ठीक किया। दुर्योधन को सेवा का फल मिलना चाहिये, और आपको देना चाहिए। परन्तु हम भी आपके ही भरोसे हैं। दुर्योधन की कुटिलता को आप जानते हैं, और उसने जो जो दुःख हमें दिये हैं, वह जगत् में प्रसिद्ध हैं। आप अपने वचन को पूरा करें, और उनके नायक बनें। परन्तु उसकी कुटिलता का फल देने के लिये एक काम हमारा करें। हे पूज्य मामा ! कर्ण ने अर्जुन के मारने की प्रतिज्ञा की है, इस लिए जब कर्ण अर्जुन के साथ युद्ध करे, उस समय आप कर्ण के सारथी बन अर्जुन की प्रशंसा और कर्ण की दुर्बलता वर्णन करके उसके हृदय को निर्बल करें, और उसके साहस को तोड़ने का प्रयत्न करें। तब शल्य ने ऐसा ही होगा; कह कर फिर उसे गले लगाया, और फिर दुर्यो-

धन की ओर प्रस्थान किया । इसके अनन्तर महारथी युयुधान हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिकों से सजी हुई अपनी प्रबल सेना को लेकर महाराज युधिष्ठिर के पास आया । इसी प्रकार महाबली धृष्टद्युम्न अपनी एक अक्षौहिणी सेना लेकर वहां पहुंचा, जिसमें अनेक देशों से आए हुए बड़े बड़े ऊंचे, लम्बे और अनेक प्रकार के भयानक अस्त्र शस्त्र चलाने वाले योद्धा थे मगध-नरेश जरासन्ध का पुत्र जयत्सेन अपनी जगद्विख्यात एक अक्षौहिणी सेना लेकर पहुंचा । महाराज द्रुपद की सेना और उनके पुत्रों की अलग अलग सेनायें बड़े बड़े शूर-वीरों के साथ पृथ्वी को कंपाती हुई, महाराज युधिष्ठिर के शिविर में पहुंचीं, और महाराज विराट अपने गठीले और शूरवीर पहाड़ी जवानों दलों के दल लेकर वहां आये । इस प्रकार सात अक्षौहिणी सेना अपने २ झण्डों को आकाश में उड़ाने वाली, उपप्लव्य नगर के बाहर समुद्र की तरह तरङ्गें मारने लगी । इसी प्रकार दुर्य्योधनकी सहायताके लिये महाबलवान् चीन देशका राजाभगदत्त एक अक्षौहिणी सेना लेकर आया, जिसे पाकर दुर्योधन अति प्रसन्न हुआ । हे राजा जनमेजय ! राजा भगदत्तकी वह सेना भीलों और बड़े शूरवीर चीनी जवानों के साथ सजी हुई थी जिसकी रंगबिरंगी वर्दियां फूले हुए कनेरके बनके समान शोभा देने लगीं।इसके अनंतर कृतवर्मा, भोज और अन्धक जातिके शूरवीरोंकीएकअक्षौहिणीसेना लेकर पहुंचा, जिसके

समान युद्ध-विद्या में कुशल दूसरी कोई सेना न थी। सिन्धु देश के राजा जयद्रथ भी नदियों को पार करते और पर्वतों को कंपाते हुए अपनी दुर्जय सेना को लेकर दुर्योधन के हां आए। इसके साथ ही शकों और यवनों की एक अक्षौहिणी सेना लेकर कम्बोज का राजा आया। मद्र देश का राजा शल्य अपनी न दबने वाली एक अक्षौहिणी सेना सहित उपस्थित हुआ और भूरिश्रवा भी अपनी अतुल पराक्रमी सेना सहित वहां आया। इसके अनंतर और २ देशों के बड़ी २ सेनाओं को लेकर राजे महाराजे युद्ध में सम्मिलित होने के लिये आए। हे राजन्! इस प्रकार सब मिलाकर दुर्योधन की सेना ग्यारह अक्षौहिणी हो गई, जिसे देखकर उसका उत्साह दुगना हो गया। जब दोनों ओर की सेनाएं इकट्ठी हो गईं तो महाराज द्रुपद का पुरोहित धृतराष्ट्र की सभा में पहुंचा। ब्राह्मण को आए देखकर धृतराष्ट्र भीष्म विदुर आदि ने उनका सत्कार किया। इसके अनंतर पुरोहित ने बड़े २ कौरव सरदारों को लक्ष्य करके कहा हे सभासदो! आप लोग परंपरा से चला हुआ मनु आदि राजर्षियों से कहा हुआ राज-धर्म अच्छी तरह जानते हैं। परन्तु फिर भी इस समय उसको याद दिलाने की बड़ी आवश्यकता है इसी लिये मैं इस विषय में कुछ कहना चाहता हूं हे कुरुवीरो! महाराज धृतराष्ट्र और पांडु दोनों एक ही पिता के पुत्र हैं, इस कारण दोनों ही पिता की संपत्ति के समान अधि-

कारी हैं, परन्तु धृतराष्ट्र के पुत्र पांडवों को निकाल कर सारे राज्य के अधिकारी बन बैठे हैं और बने रहना चाहते हैं, इसका क्या अर्थ है? आप सब जानते हैं कि आपने पांडवों को कैसे कैसे दुःख दिये हैं। भरी सभामें द्रौपदी के चीर उतारे गये और उन्होंने इस घोर अपमान को सहन किया फिर बन में उनको असह्य दुःख मिले। इसके अनंतर वह विराट नगरीमें छिपकर अपना समय व्यतीत करते रहे वहां उन्होंने पशुओं से भी अधिक पीड़ा सहन की। परन्तु फिर भी वह पहले किये गये दोषों को भूल कर मेल मिलाप ही करना चाहते हैं। वह नहीं चाहते कि कुरुवंश का नाश हो, इसलिये वह केवल वही मांगते हैं जो उनका अपना हक़ है। इसलिये आपको भी यही उचित है कि समय को विचार कर उनका भाग उनको देदें, जिससे दोनों का कल्याण हो और वृथा ही लाखों प्राणियों की हत्या न हो।

दूत के वचन सुनकर महा पराक्रमी वृद्ध भीष्म पितामह बोले हे दूत! पांडव कुशल से हैं, यह सुनकर हमारा हृदय अति प्रसन्न हुआ। इतने दुःख सहन करके भी वह धर्मात्मा मेल करना चाहते हैं, यह कुरुवंश का सौभाग्य है। उनको अपना पैतृक राज्य मिलना चाहिये, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है, मैं इस बात के पक्ष में हूं और हृदयसे चाहता हूं कि धनुर्धारियों में श्रेष्ठ अर्जुन के साथ युद्ध में भयानक नाश न हो वृद्ध भीष्मका वचन सुन

कर घृतकी आहूति डाले हुए अग्नि के समान उठकर कर्ण बोला, हे ब्राह्मण ! जो कुछ तुम ने कहा, इसे कौन नहीं जानता, इन बृथा और सार-हीन बातों को बार बार दोहराने से क्या लाभ। युधिष्ठिर ने जीतने के लालच से जुआ खेला, और वह सब कुछ बुद्धि खोकर हार गया। फिर अपनी प्रतिज्ञा में बन्धे हुए उन्होंने बनवास किया। बनवास में उन्हें बहुत दुःख हुए इस में किसी को संदेह नहीं, परन्तु इस में दुर्योधन का क्या दोष है। विप्र वर ! अज्ञातवास के दिनों वह हम से देखे गये, अब वह धर्मानुसार बारह वर्ष और बनवास भोगें और फिर लौट कर दुर्योधन के आश्रय रहकर जीवन के दिन पूरे करें। इस समय उनका अपना राज्य मांगना धर्म के आधार पर नहीं किन्तु विराट और कृष्ण के भरोसे पर है। हे विप्रवर ! यदि पांडव धर्म को छोड़ कर दूसरों के भरोसे हम से लड़ेंगे तो उनको मेरी ओर से कह दो कि कर्ण तुम्हारी इन धमकीयों का उत्तर रण में अपने तीक्ष्ण बाणों से देगा। यह सुनकर भीष्म बोले हे सूत पुत्र ! दूत के सामने तुम्हारा शेखी मारना शोभा नहीं देता, क्या तुम उस समय को भूल गये हो जब कि अकेले अर्जुन ने महारथियों को अपने गांडीव धनुष से हराया था। तब महाराज धृतराष्ट्र कर्ण को फटकारते हुए बोले, पितामहां ने जो कुछ कहा है, हम उससे सहमत हैं इसी से हमारा, पांडवों का और प्राणिमात्र का भला है। हे दूत ! आप जाएं, मैं मेल

मिलाप के लिये संजय को पांडवों के पास भेजूंगा, इतना कह कर उन्होंने दूत को बहुत से रत्न आदि पदार्थ देकर सत्कार पूर्वक वहां से विदा किया ।

तीसरा अध्याय ।

संजय का पांडवों के पास जाना ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय दूत के चले जाने पर महाराज धृतराष्ट्र ने संजय को दर्बार में बुला कर कहा हे संजय ! पांडवों के दूत के मुख से मालूम हुआ है कि वह उपप्लव्य नगर में ठहरे हैं, तुम अभी उनके पास जाओ और मेरी ओर से सब को अशीर्वाद देकर कुशल पूछो, और उनको कहो कि हम तुम्हारे दुःखों से दुःखी हैं, अब उनका और हमारा शीघ्र मेल हो जाना चाहिये। हे संजय ! पाण्डु के पुत्र सत्यवादी परोपकारी और निर्दोष हैं। मैं ढूंढने पर भी उन में कोई दोष नहीं देखता हूं, मैं उनको किस तरह बुरा कहूं वह लोभ लालच और विषय वासनाओं से रहित सदा धर्म और नीति के अनुसार ही काम करते हैं। हे संजय! सब कौरव उनको अपने मित्र समझते हैं और उनके वियोग में व्याकुल हैं, सिवा इस दुष्ट मन्द बुद्धि इर्षा रखने वाले दुर्योधन और क्षुद्र अभिमानी हित अहित को न समझने वाले कर्ण के जो सदा ही उन के हृदयों को अपनी कुचेष्टाओं से जलाते रहते हैं। हे संजय मैं अर्जुन भीम नकुल सहदेव विराट और उन के साथियों में से किसी से नहीं डरता जितना कि युधिष्ठिर के क्रोध

से, वह बड़ा तपस्वी ब्रह्मचारी और अग्नि के समान शुद्ध है, उसके संकल्प से हमारा नाश अवश्य होगा और उस का संकल्प अवश्य पूरा होगा। हे संजय ! उसके क्रोध को मैं ही जानता हूं तुम शीघ्र वहां जाओ और जिस प्रकार होसके उन सब को समझा कर इस होने वाले युद्ध की अग्नि को ठंडा करो। तब महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा पाकर संजय रथ पर सवार हो पांडवों के पास उप-प्लव्य नगर में पहुंचे। वहां युधिष्ठिर को देख सञ्जय अति प्रसन्न हुए और उनको प्रणाम करके बोले हे धर्म पुत्र ! परमेश्वर की अपार दया से हम आपको कुशल पूर्वक देखते हैं, किसी प्रकार का आप को कष्ट नहीं आप को सब प्रकार की सहायता प्राप्त है। हे राजन् ! आपको वृद्ध महाराज धृतराष्ट्र आशीर्वाद देते हैं और कुशल पूछते हैं, कहिए आप, आपके भाई अर्जुन भीम नकुल सहदेव और द्रुपद नंदिनी द्रौपदी सब कुशल से हैं? युधिष्ठिर बोले हे संजय ! परमात्मा की दया और बड़ों के आशीर्वाद से हम सब कुशल पूर्वक हैं, हे संजय ! बहुत दिनों के बाद महाराज का कुशल समाचार और आपके दर्शन पाकर हम अति प्रसन्न हुए। कहो हमारे पितामहां भीष्म कुशल से हैं और इस समय तक हमारे ऊपर जो उनका स्नेह था वह जाता तो नहीं रहा, हे संजय ! हमारे गुरु द्रोणा-चार्य्य और कृपाचार्य्य हमें भूल तो नहीं गये, क्या धृतराष्ट्र अपने पुत्रों को मेल मिलाप की सम्मति देते

हैं ? हे संजय! कौरव लोग गांडीव धनुष के विषम टंकार को भूल तो नहीं गए ? संजय बोले हे धर्मराज ! वह सब आनन्द से हैं, अब महाराज धृतराष्ट्र ने आपको जो संदेश भेजा है उसे कृपा करके सुनिये । महाराज धृतराष्ट्र हृदय से चाहते हैं कि किसी प्रकार आपस में मेल मिलाप हो जाए और यह कुरु कुल के नाश करने वाली अग्नि जो दोनों दलों में प्रचण्ड हो रही है ठंडी हो, आप भी कृपा करके उन की बात को स्वीकार करें। हे राजन्! आप धृतराष्ट्र के पुत्रों पर सदा ही दया किया करते हैं और उनके अपराधों को ध्यान में नहीं लाया करते । हे राजन्! इस समय भी लाखों प्राणियों की हत्या न होने देना आप ही के हाथ में है, सो ऐसा प्रयत्न करो जिस से यह अग्नि प्रचण्ड न होने पावे । देखो एक ओर महा पराक्रमी गांडीवधारी अर्जुन और बलवान् भीम तथा कृष्ण जैसे नीति चतुर हैं और दूसरी ओर बज्र देह भीष्म और धनुष धारियों में श्रेष्ठ द्रोण कृप कर्ण और शल्य आदिक योद्धा हैं, दोनों में से चाहे कोई हारे परन्तु नाश कुरु वंश का ही है जिससे हम को और आप को पीछे बड़ा खेद होगा, इस लिये कोई ऐसा उपाय करो जिससे मेल हो जाए । युधिष्ठिर बोले हे संजय ! युद्ध में दोनों पक्षों को हानि है इस को प्रत्येक दूरदर्शी मनुष्य जानता है । परन्तु कौन युद्ध चाहता है और किसको द्वेष की अग्नि जला रही है, हे संजय ! यह आंखें खोल कर

देखो। दुर्योधन ने परम पूजनीय महात्मा विदुर के वचन का भी अनादर कर दिया और अपने हठ पर अड़ा है, और महाराज धृतराष्ट्र पुत्रों के मोह में फंसे हुए उनका पक्ष लेते हैं। हे सूत! धृतराष्ट्र और उसके पुत्र सारे संसार में अपना राज्य चाहते हैं, और कोई अन्य पुरुष उनको एक आंख नहीं सुहाता। कुरुवंश का क्षय तो उसी दिन होगया, जिस दिन विदुर के कथनाऽनुसार न चल कर दुर्योधन की मूर्खता की प्रशंसा की गई। हे सूत ! ऐसी अवस्था में मेल किस प्रकार होसकता है, और हमारे हृदय को कैसे शान्ति मिल सकती है । हे दूत! बन में हमने जो कष्ट भोगे हैं वह सब लोग जानते हैं, परन्तु मैं कुरु वंश के कल्याण के लिए उन सब को भूलता हूं, और हृदय से चाहता हूं कि हमारा कौरवों के साथ मेल हो। परन्तु इन्द्र प्रस्थ में मेरा राज्य हो, जो कि हमारा अपना कमाया हुआ है और दुर्योधन मुखिया बन कर हस्तिना पुर में शासन करे। संजय बोला, हे धर्मपुत्र! तुम्हारे काम सदा ही धर्म से युक्त होते हैं, आपको इस समय भी धर्म पर चलना उचित है। हे युधिष्ठिर! यदि लोभ में फंसा हुआ दुर्योधन आपको कुछ नहीं देता तो आपको युद्ध करके नर हत्या का पाप अपने सिर लेना उचित नहीं है। आप भोग मार्ग को त्याग कर मोक्ष मार्ग पर चलें चाहे उस में भिक्षा मांगनी पड़े, हे राजन्! उस युद्ध की इच्छा को छोड़ दें जिस में तुम्हारे गुरु द्रोणाचार्य्य अपने पुत्र

सहित मारे जाएं और पितामह भीष्म की मौत हो। इस लिये हे भारत! मैं कहता हूं कि आप इस पापी क्रोध को छोड़ कर शान्त रहें।

युधिष्ठिर बोले, हे संजय! तुम सोच विचार कर देखो कि मैं धर्म करता हूं व अधर्म, यदि मैं सन्धि का त्याग करके जान बूझ कर युद्ध करता और नर हत्या का पाप करता हूं तो श्रीकृष्ण जी इसका निर्णय करें और जो हमारे लिए उचित है कहें, मैं उनका पालन करूंगा।

तब श्रीकृष्ण जी बोले, हे संजय! मेरे लिये कौरव और पाण्डव दोनों समान हैं, मैं जैसे पाण्डवों को फलता फूलता देखना चाहता हूं वैसे ही कौरवों के भी कल्याण की इच्छा करता हूं। परन्तु जब कोई बल से किसी का धन राज्य व स्वत्त्व छीने तो उस समय क्षत्रियों की तल- वारें म्यानों से बाहर निकलती हैं और रक्त की नदियां बहती हैं। इस समय धृतराष्ट्र समेत सारे कौरव अपने आपको बलवान समझ कर पांडवों के राज्य को दबाए बैठे हैं। जब डाकू लोग बल से किसी का धन छीन लेते हैं तो लोग उनकी निन्दा करते हैं और उनको पकड़ कर मार देते हैं। अब तुम ही कहो, कि कौरवों और डाकुओं में क्या भेद है। हे संजय! दूसरे का हक्क छीन ने वाले के साथ युद्ध करना धर्म है। जिस प्रकार कौरव राज्य के स्वामी हैं उसी प्रकार पांडव भी हैं, पिताके दोनों ही पुत्र हैं फिर एक तो पाप करता हुआ राज्य को भोगे

और दूसरा भिक्षा मांगकर जीवन गुजारे यह कहां की नीति है और कैसा धर्म है हे संजय! जूए में कौरवों ने कैसे कैसे दुर्वचन कहे जिसे एक साधारण मनुष्य भी कहता हुआ शरमाता है, परन्तु यदि अब भी धृतराष्ट्र मेल करना चाहता है तो यह उसकी शुभ इच्छा है। मैं स्वयं कौरव सभा में जाना चाहता हूं, यदि मैं बिना युद्ध के शान्ति करा सका तो मेरा यह काम बड़े पुण्य का होगा और कौरव भी मृत्यु की फांसी से बच जायेंगे हे संजय! कौरवों के बीहड़ बन में पांडुके पुत्र शेर हैं। शेर बनकी रक्षा करते हैं और बन शेरों की रक्षा करता है; इसलिये युद्धकी अग्निसे बन और शेर दोनोंको मत जलाईये इसी में कल्याण है। पांडव मेल के लिये तैय्यार हैं, और युद्धके लियेभी धृतराष्ट्र दोनोंमेंसे जो चाहे करे इसलिये हे संजय! धृतराष्ट्र को जाकर सब कुछ ठीक २ कहदो। इसके अनन्तर विदा होते हुए संजय को युधिष्ठिर बोले हे संजय! धृतराष्ट्र को अपने पुत्रों के बल पर बहुत भरोसा है और सचमुच दुर्योधन और कर्ण आदि वीरों के समान संसार में कोई बलवान नहीं है, यह मैं मानता हूं, परन्तु सबसे बड़ा बलवान धर्म है और वह मेरे साथ है, इस लिये युद्ध में मुझे अपनी विजय का पूरा २ विश्वास है। हे दूत! जिधर धर्म होता है उधर ही परमेश्वर होता है, और परमेश्वर पंडितों को मूर्खों से और बलवानों को निर्बलों से हरा देता है यदि वह धर्म पर चलने वाले हों। इसलिये

अपनी ओर से निर्भय हुआ हुंआ मैं तुमको यही कहता हूं कि तुम मेरी ओर से सब कुरुओं का कुशल समाचार पूछ कर धृतराष्ट्र को कहना कि हे रिपुदमन! आपके ही बल से पांडवों ने आधा राज्य प्राप्त किया था। अब आप ही उनको नाश मतकरो। हम आपके हाथ के लगाए हुए पोदे हैं उन्हें अपनी कृपाके जल से सिंचन करो। इसके अनंतर पितामा भीष्म से कहना कि हे दादा! कोई ऐसा उपाय करो जिससे आपके पोते आपस में मिलकर प्रेमसे रहें, और महात्मा विदुर से कहना कि हे तात! आप नीतिको जानने वाले हैं इसलिये न्याय से जो कुछ हमारा है हमें दिलादें। इसके अनंतर हे संजय द्वेष की आग से जले हुए दुर्योधन को कहना कि हे भाई! निरपराध द्रौपदी को सभा में बुलाकर तुमने उसे अपनी जांघ पर बैठने का इशारा किया वह हमने सहन कर लिया, दुःशासनने तेरी सलाहसे द्रौपदी के केश खैंच और भरी सभा में उसको नग्न करने का उद्योग किया सो भी हमने सहन किया और मृग चर्म पहरा कर बन में जो जो कष्ट तुमने हमको दिये वह सब हमने सहे, परन्तु फिर भी हम कुरुओं का नाश नहीं चाहते, इस लिये हे भाई! पराए धनका लालच छोड़ कर अब हमें हमारा भाग दे दो और यदि इतना नहीं तो पांच भाईयों के लिये पांच गांव ही दे दो जिससे हमारे जीवन का निर्वाह हो और परस्पर प्रेम बना रहे। मैं मेल के लिये तैय्यार हूं और युद्ध के

लिये भी। दोनों बातों के लिये समर्थ हूं।

चौथा अध्याय।

विदुर नीति

वैशंपायन जी बोले हे जनमेजय! पांडवों के शिविर से चल कर संजय तेज रथ पर सवार हो हस्तिनापुर पहुंचा और वहां से सीधा राज भवन में गया जहां महाराज धृतराष्ट्र उत्तमासन पर विराज मान थे। महाराज को नमस्कार कर आसन पर बैठ कर संजय बोला हे राजन्! मैं आपकी आज्ञा से पांडवों को मिलकर आया हूं। धर्म पुत्र युधिष्ठिर अपने भाईयों और द्रौपदी सहित कुशल से हैं। उन्होंने आपको हाथ जोड़ कर नमस्कार किया है और दुर्य्योधन आदि भाईयों की कुशल जान कर अति प्रसन्न हुए हैं। हे राजन्! पांडव बड़े धर्मात्मा दृढ़ व्रती धीर वीर और विक्रमी हैं, वह न्याय पूर्वक अपना भाग मांगते हैं, और यदि पूरा नहीं तो नर-हत्या न हो इस विचार से पांच गांव ले कर ही शान्त रहना चाहते हैं, इस लिये शीघ्र ही उनको संतुष्ट करके मेल कीजिये! हे राजन्! उनके बल और पराक्रम को देख कर मैं आप को यही सलाह देता हूं कि उनसे शीघ्र मेल करो नहीं तो महावीर अर्जुन और गदाधारी भीम कुरुवंश को नाश कर देंगे, इस में तनिक भी संदेह नहीं है। नम्र और शुभ गुणों वाला युधिष्ठिर मेल और युद्ध दोनों के लिये

तैय्यार है, परन्तु बिना उनको कुछ दिये युद्ध अवश्य होगा, यह सुन कर धृतराष्ट्र बोले हे सञ्जय! तुम ने जो कुछ कहा है सत्य है, युधिष्ठिर सर्वगुण सम्पन्न और धर्मात्मा है, मैं जिस प्रकार भी मेल हो ऐसा यत्न करूंगा। तुम दूर से थके हुए आए हो अब विश्राम करो कल प्रातःकाल राजसभा में पांडवों का हाल जो कुछ तुमने सुना है और देखा है विस्तार से कहना।

तब सञ्जय वहां से विदा हुए और धृतराष्ट्र ने महामति विदुरको रात्रि के समय बुलाया क्योंकि उनके सिवा उनको किसी पर विश्वास न था जो सत्य २ कह सुनावे।

महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा पाकर विदुर जी राज भवन में पहुंचे और अन्दर जाकर सोच में पड़े हुए राजा से बोले हे महामति! मैं विदुर उपस्थित हूं आज्ञा करें। धृतराष्ट्र बोले हे विदुर! सञ्जय पांडवों से मिलकर आया है और वह मेरी निन्दा और पांडवों की प्रशंसा करके अभी गया है, कल राज-सभा में वह युधिष्ठिर का संदेश सुनाएगा। हे बुद्धिमान्! युधिष्ठिर ने क्या कुछ कहा है यह अभी मैंने विस्तार से नहीं सुना परन्तु मेरा कलेजा धड़क रहा है और बहुत यत्न करने पर भी नींद नहीं आती इस लिये हे तात् जिस से मुझे शान्ति हो और सुख की नींद सोऊं ऐसा कल्याण युक्त वचन कहो यह। सुन कर विदुर बोले हे राजन्! जो दुर्बल है, जिसके पास पूरे साधन नहीं और बलवान शत्रु से टक्कर लेता है एक

उसको दूसरे चोर को तीसरे कामी को और चौथे जिस का धन लुट गया है, नींद नहीं आती। हे राजन्! आप इन में से कौन से दोष के दोषी हैं यह विचारें, आपने दुर्य्योधन करण और शकुनि को आगे करके पांडवों का धन हरण किया है, किस तरह आप को नींद आवे। हे राजन्! जो अच्छे कर्मों का सेवन करे, दुष्ट कर्मों का त्याग करे, परमात्मा पर विश्वास करे वही पंडित है। जो विद्या हीन होकर अपने आप को विद्वान समझे, कंगाल होकर बड़े बड़े राजाओं वाले मनोरथ करे, और निकम्मा बैठकर बड़ी बड़ी वस्तुओं को प्राप्त करने की इच्छा करे वह मूर्ख है। हे राजन्! जो न चाहने वालों के साथ प्यार करे और चाहने वाले से घृणा करे और बलवान से शत्रुता करे वह मूर्ख कहलाता है। जो बिना बुलाए किसी के घर जाए, बिना पूछे बोल उठे, दूसरे को दोष दे और स्वयं वैसा काम करे वह मूर्ख है। हे राजन्! क्षमा वाले को लोग डरपोक समझते हैं, यह मूर्खता है। इस संसार में दो कर्म करने वाला मनुष्य चमकता है, एक तो मीठा बोलने वाला और दूसरा धूर्तों की पूजा न करने वाला। हे राजन्! ईर्षा करने वाला, सदा दयावान, क्रोधी, असंतोषी, बात बात पर शङ्का करने वाला और दूसरे के भरोसे जीने वाला यह सदा दुखी रहते हैं। हे नराधिप! राजा को यह सात दोष त्याग देने चाहिये, स्त्री का संग बहुत शिकार खेलना, शराब, कठोर वचन, कठोर दण्ड

और धन को बिगाड़ना। संसार में आठ गुण पुरुष को ऊंचा करते हैं, बुद्धि, अच्छा कुल, इन्द्रिय को वश में रखना, शूरबीरता शास्त्र का ज्ञान, थोड़ा बोलना, यथाशक्ति दान देना और कृतज्ञता। हे राजन्! मतवाला, आलसी, पागल, थका हुआ, क्रोधी, भूखा, ओछा, लोभी, भयभीत और कामी, यह सब धर्म को नहीं जानते, इस लिये बुद्धिमान इन की संगति न करे। सब संसार में शान्ति चाहने वाला, कोमल स्वभाव, दूसरों का आदर करने वाला और शुद्ध भावना वाला पुरुष अपनी जाति में रत्न के समान चमकता है। हे धृतराष्ट्र! पुरुष को चाहिये कि जिस का नाश न चाहे उसे बिना पूछे भली सलाह दे चाहे वह उसे कड़वी लगे व मीठी। इस लिये मैं कुरु वंश की भलाई के लिये यही कहता हूं कि पांडु पुत्रों को जिन्हें तुमने ही पाला है और तुम ने ही शिक्षित किया है, उनको उनका भाग देकर सुखी हो। हे भारत! जो काम छल कपट से सिद्ध हो उन में मन मत लगाओ राजा को चाहिये कि प्रजा से इस प्रकार धन लेवे जैसे भौरा बिना हानि पहुंचाए फूलों से रस ले लेता है। जो मन वचन और कर्म से जगत कल्याण चाहता है जगत उसको प्रसन्न करता है। जो राजा धर्म पर चलता है उसके लिए भूमि धनसे भरी हुई उसका ऐश्वर्य्य बढ़ाती है और जो धर्म को छोड़ कर अधर्म पर चलता है उसकी भूमि सुकड़ती जाती है जैसे आगमें डाला हुआ चमड़ा। जो यत्न दूसरे

के राज्यको नष्ट करने में किया जाता है वही यत्न अपने राज्यको पालन करने में लगाना चाहिए राजाको चाहिए कि धर्म से राज्यको प्राप्त करे और धर्म से पाले धर्मात्मा राजा न तो लक्ष्मी को छोड़ता है और न लक्ष्मी उसे छोड़ती है हे राजन्! निर्धन लोग सदा स्वादिष्ट भोजन खाते हैं भूख स्वाद उत्पन्न करती है और वह धनवानों को नहीं लगती। संसार में धनवानों को भूख नहीं लगती और निर्धन लोग लकड़ीयां भी पचा लेते हैं। हे धृतराष्ट्र शराब भंग आदि मदों में धनका मद सब से बुरा है, क्योंकि धनका मतवाला बिना गिरे होश में नहीं आता। पापियों के साथ भी संगति करने वाला ऐसे नाश हो जाता है जैसे सूखे ईंधन के साथ गीला भी जल जाता है। दौलत शुभ कर्म्मों से प्राप्त होती है, चतुराई से बढ़ती है और इन्द्रियों को वश में रखने से टिकती है। हे राजन्! वह सभा नहीं जिसमें वृद्ध नहीं वह वृद्ध नहीं जो धर्मका उपदेश नहीं देते, वह धर्म नहीं जिसमें सत्य नहीं वह सत्य नहीं जिसमें कपट मिला हुआ है। पाप जितना जितना किया जाता है उतनी उतनी बुद्धि नष्ट होती जाती है, और नष्ट बुद्धि पुरुष फिर पाप में ही लगता है, हे राजन्! न किसी को गालीदे न अनादर करे न नीच की सेवा करे न घमंड करे न मित्र द्रोह करे न आचार से पतित हो और न कठोर वचन कहे। मनुष्य जैसों के पास बैठता है वैसा ही हो जाता है। धन आता

है और चला जाता है, धनके नाश होने से मनुष्य का नाश नहीं होता इस लिए आचरण की यत्न से रक्षा करनी चाहिए क्योंकि जिसका आचरण नष्ट हो गया उसका सर्वस्व नष्ट हो गया। हे राजन्! जिनकी आपस में फूट है, वह न धर्म करते हैं, न संसार में सुख पाते हैं, न उनका मान है, न उन्हें शान्ति की बात अच्छी लगती है, आपस में फूट हुए सिवा अपने नाश के और कोई भलाई नहीं करते। ब्राह्मण, गौएं, सजातीय, बालक और स्त्रियां तथा जिनका अन्न खाया हो और जो शरणागत हो, इन सब का कभी बध नहीं करना चाहिए। इसलिए हे भारत! आप पांडवों की रक्षा करें। हे राजन् बुढ़ापा रूपको हरता है, आशा धीरज को हरती है मृत्यु प्राणोंको हरती है, पर निन्दा धर्म को, काम लज्जा को, दुष्ट की सेवा शीलको, क्रोध मनुष्य की शोभा को, और अभिमान मनुष्य का सर्वस्व हर लेता है, इसलिये अभिमान त्याग कर जो जिसका भाग है उसको दो। प्रिय कहने वाले मनुष्य बहुत मिलते हैं, परन्तु कड़वे पर हितकारी बचन का कहने वाला और सुनने वाला कोई विरला ही मिलता है। जुआ सदा ही परस्पर वैर भाव फैलाता है इस लिए बुद्धिमान जी बहलावे के लिए भी कभी जुआ न खेले। हे राजन्! जो अपना भला चाहते हैं, उनको अपने ज्ञातियों की बृद्धि करनी चाहिए। अपने ज्ञातियों के साथ इकट्ठा खाए एकट्ठा बातचीत करे प्रेम करे और कभी झगड़ा न

करे। इस संसार में ज्ञातिके लोग ही तारते और ज्ञातिके लोग ही डुबाते हैं, इसलिए हे राजन्! दुर्योधन का पक्ष छोड़ कर पांडवों से मेल करो।

वैशंपायन जी बोले हे राजाजनमेजय! इस प्रकार महात्मा विदुरने रात्रि भर धृतराष्ट्र को राजनीति का उपदेश किया। रात्रि बीत जाने पर कुरु पक्षके सभी राजे महाराजे राजकुमार और स्वयं महाराज धृतराष्ट्र संजय के वचन सुनने के लिए राज सभा में आए। बड़ी धूम धाम से सभा भवन भर गया और सब लोग स्वर्ण चांदी हाथी दांत और नाना प्रकार के रत्नों से मण्डित आसनों पर अपने अपने अधिकार के अनुसार बैठ गए कुछ देर बाद द्वारपाल ने आकर निवेदन किया, कि महाराज! दूत सञ्जय शीघ्र गति रथपर सवार आरहे हैं, इसके अनंतर आज्ञा पाकर संजय सभा भवन में आ गए। और सबको विधि पूर्वक प्रणाम करके बोले हे कौरव गण और राजा लोगो! हम महाराज की आज्ञासे पांडवों से मिल कर आ गए हैं, आप सब ध्यान से वहां का वृत्तान्त सुनिए। धर्मराज युधिष्ठिर के पास जाकर महाराज धृतराष्ट्र का संदेशा हमने कहा। उसे सुन कर पहले तो पांडवों ने आप सब का कुशल समाचार पूछा और सब को यथा योग्य प्रणाम तथा आशीर्वाद आदि कहा।

इतना कह कर सञ्जय ने आदि से अंततक युधिष्ठिर और श्री कृष्ण ने जो जो बातें कहीं थीं सब एक-एक

करके सुनादीं पांडवों ने युद्ध के लिये जो जो तैय्यारियां की थीं उन सबका वर्णन भी विस्तार से किया और जो जो राजे महाराजे उनकी सहायता के लिए जितनी सेना और युद्ध सामग्री लेकर आए थे सब कुछ बताया।

सञ्जय के मुख से सारा हाल सुनकर महाराज धृत-राष्ट्र अपने हृदय के वेगको न संभाल सके और किसी की परवा न करके बोले, हे राजा लोगो तथा कुमारो! संजय की बात सुन कर मुझे निश्चिय हो गया है कि युद्ध में हमारी हार होना निश्चित है, क्योंकि पांडवों के पास जैसी युद्ध सामग्री है और जितनी सहायता उन्होंने प्राप्त की है उसके मुकाबले में हमारे पास कुछ नहीं के बराबर है। अर्जुन ने साक्षात् महादेव और इन्द्र से दिये अस्त्र प्राप्त किये हैं और उनके चलाने की शिक्षा पाई है, और भीमसेन का मदमत्त हाथी की तरह बल किसी से भी पार पाने योग्य नहीं है। इन सब बातों को देख कर हम यह समझते हैं कि दुर्योधन ने उनसे युद्ध की ठानकर उचित काम नहीं किया। यदि युद्ध होगया तो कौरवों का नाश हो जाएगा, यह हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। इस लिये हमारा यह विचार है कि पितामह भीष्म महात्मा विदुर और द्रोणाचार्य जी जो सम्मति देवें उसी के अनुसार काम करना आवश्यक है। पांडवों ने युद्ध के बन्द करने के लिये केवल पांच गांव मांगे हैं, उनका यह प्रस्ताव धर्म के अनुसार ही है, उनकी बात मान लेनी

चाहिए और पांच गांव देकर मेल कर लेना चाहिए इसी में कल्याण है।

यह सुन पितामह भीष्म, द्रोण, कृप तथा विदुर आदि सभीने महाराज धृतराष्ट्र के विचार की सराहना की। सबने यही कहा कि महाराज धृतराष्ट्र ने सत्य कहा है उनकी सलाह मान लेनी चाहिए इसी में भला है, परन्तु दुर्योधन को उनकी बात बहुत ही बुरी लगी उसका हृदय मानों जलकर कोयला हो गया वह बोला हे तात्! आप क्यों अकारण डर गए हैं, हम पांडवों से किस बात में कमज़ोर हैं, जो आप हार जाने के डर से इतना व्याकुल हो रहे हैं। क्या भीष्मपितामह के अतुल पराक्रम के सामने वह कभी ठहर सकते हैं? उन्होंने अकेले ही संपूर्ण राजों को हरा कर पहले कैसा अद्भुत बल दिखलाया था, क्या आप उसे भूल गए हैं? द्रोणाचार्य कृपाचार्य और अश्वत्थामा हमारी ओर हैं, किस में समर्थ है जो उनका मुकाबला करे शत्रु लोग हमरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। हे तात! जिस भीमको आप अजेय समझते हैं, वह गदा युद्ध में हमारे सन्मुख खड़ा होनेके भी योग्य नहीं है लड़ना तो कहां रहा। इसके सिवा भूमंडल के प्रायः बड़े बड़े सारे राजे महाराजे अपनी बलवान सेनाओं के साथ आपके पास विराजमान हैं फिर आप ही कहें कि पांडव किस प्रकार हमसे बच सकते हैं। हे तात्! युधिष्ठिर हमारे बल से भयभीत हो कर पांच

गांव मांगता है और इसी पर मेल करना चाहता है । आपने हमारे बलको भली भान्ति नहीं तोला इसीलिए आप शत्रुओं की बारंबार प्रशंसा करते हैं, परन्तु पिता जी ! जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं मैं पांच गांव तो क्या पांडवों को इतनी भी भूमि नहीं दूंगा जितनी की सूई के अगले भाग से छिद सकती है । युधिष्ठिर और उसके भाई सर्प के समान हैं उनका धर्म व्रत बिल्ली के समान है जिसके पांओं की कोमल गद्दिओं के अन्दर तीक्ष्ण नख छिपे हैं ।

दुर्योधन की बात सुन कर धृतराष्ट्र बड़े दुखित हुए और लंबी सांस लेकर बोले हे कौरव लोगो ! हमारे नाश की घड़ी निकट आगई है, ऐसा मालूम होता है, हम बारंबार रोकर कहते हैं कि इस हठको छोड़दो परन्तु हमारे मूर्ख पुत्र लड़ाई की इच्छाको नहीं छोड़ते। हमें जो कुछ होना है साफ दिखाई दे रहा है। दुर्योधन! सारी पृथिवी पर तुम्हारा अधिकार नहीं हो सकता इस दुष्ट भावना को छोड़ दो। पांडवों को राज्यका भाग देदो यही उचित है और इसी में तुम्हारा कल्याण है । पांडव लोग बड़े धर्मात्मा हैं, जो प्रस्ताव उन्होने हमारे सामने रखा है वह न्याय संगत है हमारे बलसे भयभीत होकर उन्होने पांच गांव मांगे, ऐसा नहीं हैं, किन्तु वह दीर्घ दर्शी कुरु कुल का नाश न चाहते हुए युद्ध से हटते हैं । जो कुछ हमने उन पर अत्याचार किये हैं उन सबको युधिष्ठिर भूलते हैं इस में उसकी धर्म बुद्धि पाई जाती है । उन की इस धर्म

परायणता को देखकर सारा संसार उनकी सहायता करेगा और हमारे पक्षके लोग भी हृदय से हमारी निंदा करेंगे। हे वत्स! यदि तुम इस पाप युद्ध में प्रवृत हो गए तो सारी जाती जड़ मूल से नष्ट हो जाएगी यही सोचकर हम दिन रात मन ही मन जलते रहते हैं। हमारी व्याकुलता इतनी बढ़ गई है कि रात भर हमें नींद भी नहीं आती इस लिए जिस प्रकार हो सके शीघ्र सन्धि करो।

पिता की बात सुनकर दुर्योधन उठ खड़ा हुआ और बोला हे तात्! बारंबार कहने पर भी आप न जाने क्यों हमारी हार की शंका करते हैं, संसार के सारे राजे भी यदि एक ओर हो जाएं तो भी अकेला कर्ण सबको अपने अस्त्र बल से हरा सकता है हे राजन्! युद्ध होने दो, जब पांडव पक्ष के बड़े बड़े वीरों की मृत्यु के समाचार आप सुनेंगे फिर आप समझेंगे कि मैं व्यर्थ डींग ही नहीं मारता था।

दुर्योधन की बात अभी समाप्त भी न हुई थी कि कर्ण बीच ही में बोल उठे, हे राजन्! दुर्योधन जो कुछ कहते हैं, सब सत्य है, धनुष धारियों में सब से श्रेष्ठ इस समय महात्मा परशुराम जी हैं, हमने उन्हीं से सब अस्त्र विद्या सीखी है इसलिए पांडवों के बड़े बड़े योद्धाओं को मारने का बीड़ा हम उठाते हैं। आप देखेंगे की किस तरह हम उस अभिमानी अर्जुन का सिर धड़ से अलग करते हैं और भैंसेके समान मोटे भीम की हड्डियां तोड़ते हैं।

कर्ण के इन अहंकार से भरे हुए आत्म श्लाघा के

वचनों को सुनकर जो लोग वहां बैठे हुए थे उन्हें बहुत बुरा मालूम हुआ, भीष्मपितामह का मुख तो मारे क्रोध के जलने लगा वह बोले हे सूत पुत्र! तुम्हारा काल तुम्हारे सिर पर गर्ज रहा है, उसने तुम्हारी बुद्धि हर ली है, रे मूर्ख! तुम्हारा व्यर्थ का बकवास सारे कुरु कुल को दग्ध करके छोड़ेगा। तुम जो इसबात का अहंकार करते हो कि हम अकेले ही पांडवों का संहार करेंगे सो तेरी कोरी मूर्खता है तुम्हें ऐसी बेसिर पैर की अहंकार से भरी हुई बात कहते शर्म नहीं आती? रे शठ! पांडवों के बलके सामने तू ऐसे है जैसे आंधी के सामने तिनका। उन्हों ने जैसे दुष्कर कर्म किये हैं, उनके बराबर तुमने क्या किया है? विराट नगर में जब अर्जुन ने तुम्हारे सामने ही तुम्हारे भाई को मारा था उस समय तुम्हारी धनुष विद्या कहां थी। दुर्बुद्धि! जब अर्जुन ने युद्ध में संपूर्ण कौरवों को मार २ कर मूर्छित कर दिया था और सारे कपड़े उतार कर ले गया था उस समय तुम्हारी वीरता कहां थी यदि उस दिन वह तुम पर दया न करता तो आज इस सभा में हम में से एक भी दिखाई न देता। इस समय तुम बिना सींग पूछके बैलके समान डकार रहे हो, परन्तु उस समय को भूल गए हो जब बन में गंधर्वों ने तुम सबको मार मार कर बांध लिया था और पांडवों ने ही आकर तुमको मुक्त किया था। रे मोहान्ध! तुम बार बार अहंकार से भरी हुई झूठी उत्तेजना देकर दुर्योधन

आदि कुरुओं को कुमार्ग के गढ़े में डाल रहे हो तुम्हारी मूर्खता के भरोसे ही कौरव लोगों को ऐसा पाप करने का साहस हुआ। तुम जो कहते हो कि हमने धनुष धारियों में श्रेष्ठ परशुराम जी से अस्त्र विद्या सीखी है, इसलिये हम अजेय हैं, सो ठीक नहीं क्योंकि कपट से ब्राह्मण वेश धारण करके जब तुम उन से शिक्षा पा चुके उस समय उनको तुम्हारे छल का पता लग गया था और उन्होंने शाप देकर तुम्हारी सारी अस्त्र विद्या को निष्फल कर दिया था। मुझे निश्चिय है कि तुम्हारे जैसे पापी के भरोसे पर यदि कौरव लोग युद्ध करेंगे तो उनका अवश्य ही नाश होगा।

भीष्म पितामह के इन वाक्यों से कर्ण जल भुनकर राख हो गया, उन्होंने क्रोध से अपने सारे अस्त्र शस्त्र फैंक दिये और बोले, हे पितामह! आपने इस सभा में मुझे जो कठोर वचन कहे हैं और जैसा अपमान किया है उसका फल सुन लीजिए। आज से हम अपने सब अस्त्र शस्त्र छोड़ते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि जब तक आप जीते रहेंगे हम कभी इनको स्पर्श नहीं करेंगे। आप के मर जाने पर हम इनको धारण करेंगे और अपने प्राण देकर भी कौरवों की रक्षा करेंगे। हे पितामह! सब कौरव जानते हैं कि हमने कभी कोई पाप नहीं किया हम ने वही किया जो कुछ महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा और इच्छा थी परन्तु आपने अकारण हमारा हृदय दग्ध किया

है, अब यह युद्ध में वीरोंके रक्त से फिर हरा होगा।

यह कह कर महावीर कर्ण दांत पीसते हुए सभा भवन से बाहर निकल गए। कर्ण को जाता देखकर सभा में मृत्यु का सा सन्नाटा छा गया, सब एक दूसरे की ओर उदास हुए हुए देखने लगे। दुर्योधन का चेहरा भी उतर गया। धृतराष्ट्र ने जब ऐसी उदासी देखी तो उस दिन की सभा को विसर्जन किया ॥

पांचवां अध्याय ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! संजय के कहने पर भीष्म आदि वृद्धों ने दुर्योधन को बहुत कुछ उपदेश दिया परन्तु वह सब की बात का अनादर करके अपने हठ पर तुला रहा। यह सब समाचार गुप्तचरों द्वारा जब युधिष्ठिर के पास पहुंचा तो उन्हों ने श्री कृष्ण को एकान्त में बुला कर कहा हे मधुसूधन! इस समय आपकी सम्मति लिए बिना हम कुछ नहीं कर सकते, विपत्ति पड़ने पर जैसे आप यादवों की रक्षा करते हैं वैसे ही इस समय हमारी रत्ता करें हे वासुदेव! धृतराष्ट्र के दूत संजय से जो कुछ हमने सुना उससे तो यही जान पड़ता है कि धृतराष्ट्र शान्ति तो चाहते हैं परन्तु हमें कुछ नहीं देना चाहते। मुझे तो आज तक यह भरोसा था कि तेरह वर्ष के बनवास के पश्चात धृतराष्ट्र हमें हमारा राज्य अवश्य लौटादेंगे, इसीलिये हमने इतने दुःख सहारे और

अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ी, परन्तु अब उनके मनका भाव स्पष्ट नजर आरहा है कि वह हमें मांगने से कुछ न देंगे। हे केशव ! युद्ध होने पर कौरव और पांडव दोनों पक्षों का नाश होगा, यही सोच कर हमने आजीविका मात्र के लिए केवल पांच गांव मांगे परन्तु लालची दुर्योधन ने यह भी नहीं माना। हे मुरारि ! हम न्याय से अपना राज्य प्राप्त करने का अधिकार रखते हैं, इस लिये अब अधिक दुःख हम क्यों उठावें। अब अपने ज्ञातियों को भीख मांगते मैं नहीं देख सकता, इससे तो युद्ध में मर जाना ही अच्छा है। इस कारण हे चक्रधर ! अब क्षात्र धर्म को दिखलाने का समय आगया है और उसके लिये मैं तैय्यार हूं। हे चतुर चूड़ामणि ! यह विचारने की बात है, इस लिये मैं आप से सलाह चाहता हूं क्योंकि आप दोनों पक्षों के प्यारे हैं और दोनों का कल्याण चाहते हैं। युधिष्ठिर की बात सुनकर कृष्ण बोले हे राजन् ! मैं आप के सामने उपस्थित हूं, जो कुछ आप की आज्ञा होगी हम वही करने के लिए उद्यत हैं परन्तु मेरी सम्मति तो यह है कि युद्ध होने से पहले हम एक बार स्वयं धृतराष्ट्र के पास जाएं और शान्ति के लिए अन्तिम उद्योग कर देखें हम वहां आपके अधिकार का पूरा पूरा खयाल रखेंगे यदि फिर भी उन्हों ने न माना तो जगत् में आप की कोई भी निंदा न करेगा और फिर युद्ध में शत्रुओं को कठोरता से दण्ड दिया जाएगा।

युधिष्ठिर ने कहा हे मधुसूदन! हमारा विचार तो यह है कि आप कौरव सभा में न जाएं। उनकी बुद्धि पाप में प्रवृत्त है। राज्य के लोभ में वह अंधे हो रहे हैं। आप अवश्य ही न्याय और युक्ति संगत बात कहेंगे परन्तु हमें निश्चय है कि दुर्योधन कभी आप की बात को न मानेगा और उल्टा आपका अपमान करेगा, और दूसरे सभासद भी उसी की हां में हां मिलायेंगे क्योंकि वह सब उसका अन्न खाते हैं। हे पुरुषोत्तम! यदि वहां आपपर कोई आपत्ति आगई तो हमारा वह दुख एक राज्य क्या सारे संसार का राज्य पाने से भी दूर न होगा, और ऐसा होना संभव भी है क्योंकि दुर्योधन के मनको मैं भली भान्ति जानता हूं आप को कैद करने के लिए वह नीच अवश्य कोई न कोई कुचक्र रचेगा। यह सुनकर श्रीकृष्ण बोले हे धर्मपुत्र! मैं दुर्योधन की नीच वृत्ति को अच्छी तरह जानता हूं परन्तु फिर भी मैं हस्तिनापुर जाना ही उचित समझता हूं। आप हमारे लिये कोई शंका न करें, यदि कौरव लोग अपनी मूर्खता से मुझ पर हाथ उठावेंगे तो मैं उनको उसी समय दण्ड दे दूंगा, मेरे पास उनको शिक्षा देने की काफी शक्ति है।

युधिष्ठिर बोले हे यादव शिरोमणि यदि आप वहां जाना आवश्यक समझते हैं तो मैं आप को नहीं रोकता परमेश्वर आपका मनोरथ सिद्ध करे। आप के आने तक हम युद्ध के लिए पूरी सामग्री एकट्ठी करलेंगे, यदि कौरव अपने हठ पर तुले रहे तो फिर अवश्य युद्ध होगा।

श्रीकृष्ण जब चलने लगे तो भीमसेन बोले हे यादव दुर्योधन महाक्रूर नीच और मायावी है उसके बराबर का दुष्ट तीनों लोक में नहीं है, सोच समझ कर काम करना तो उसके स्वभाव में ही नहीं। वह चाहे मर जाए परन्तु अपनी बात से कभी पीछे नहीं हटेगा। इस लिये युद्ध के बिना अपना हक्क पाने की मैं आशा नहीं रखता। परन्तु इस समय दोनों ओर की युद्ध की तैय्यारी देखकर मैं तो यही समझता हूं कि यह महां युद्ध संसार में सबसे बड़े भरत वंश को जड़ से नाश करने के लिए होगा। इस कारण ! हे मधुसूदन ! यदि किसी उपाय से दुर्योधन को शान्त करके मेल हो जाय तो अच्छा है, और हम लोगों को भरत कुल की रक्षा के लिये यदि झुकना भी पड़े तो हम उसके लिये भी तैय्यार हैं।

भीमसेन के मुख से ऐसे वचन सुनकर श्री कृष्ण के आश्चर्य्य का ठिकाना न रहा। उनके मुख से शान्ति के वचन निकलना ऐसा ही था जैसे ज्वाला मुखी पर्वत का बर्फ उगलना और सूर्य्य का जल बरसाना तब श्रीकृष्ण ने भीमसेन की बात का साफ साफ तात्पर्य्य समझने के लिए कहा हे वृकोदर ! बनवास में तुम प्रतिदिन युद्ध की बातें करते और क्रोध से सर्प की तरह फुंकारे मारते रहते थे, क्या अब उन सब दुखों को भूल गए हो, क्या भरी सभा में द्रौपदी का अपमान भूल गए हो, क्या दुर्योधन की जंघा तोड़ने और दुशासन का रक्त पीने का वचन याद

नहीं रहा ? हे नरशार्दूल! इस कुममय की बात को सुनकर मैं आश्चर्य्य में डूब गया हूं, कहीं दुर्योधन की विशाल सेना को देखकर डर तो नहीं गये। हे भीम! हम सब तुम्हारे ही बल पर युद्ध की तैयारी कर रहे हैं, इस कारण तुम्हारा ठीक ठीक मतलब जानने के लिये ही मैं ऐसा कह रहा हूं।

श्रीकृष्ण के वचन सुनकर भीम सेन समझ गये कि यह मुझे डरपोक बता रहे हैं, इससे वह अति दुखित हो कर बोले हे केशव! बाल्यावस्था से आप हमारे साथ रहे हैं, परन्तु फिर भी आपने हमें ऐसे वचन कहे हैं, जो नहीं कहने योग्य थे। हे माधव! दुर्योधन तो क्या मैं तीनों लोक में किसी से नहीं डरता। परन्तु भरत कुल से हमें अत्यन्त स्नेह है, इसीलिए हमने ऐसा कहा है। तब श्रीकृष्ण बोले हे महावीर! हमने तुम्हारी सोई हुई वीर वृत्ति को जगाने के लिए ही ऐसा कहा था क्योंकि यद्यपि हम सन्धि के लिए वहां जा रहे हैं परन्तु मुझे विश्वास है कि मेल न होगा और हमें ऐसा भयंकर संग्राम करना पड़ेगा जो संसार ने आज तक देखा सुना न होगा। इसके अनंतर अर्जुन नकुल सहदेव सात्यकी तथा अन्य राज पुरुषों ने अपनी २ बातें कहीं अंत में द्रौपदी जो अपने पतियों के मुख से नम्रता की बातें सुनकर मृत्तक के समान उदास हुई हुई बैठी थी वह रोती हुई कृष्ण से बोली।

हे मधु सूदन! हे गोपाल!! आपके बिना मेरा कोई

सहारा नहीं आप वहां सन्धि के लिए जाते हैं, परन्तु दुर्योधन यदि बिना राज्य दिये मेल करे तो आपने किसी प्रकार भी स्वीकार न करना। हे जनार्दन अबध्य के मारने में जो दोष होता है वही दोष बध्य के न मारने में होता है। आप उस शठ पर किसी प्रकार की कृपा न करना हे कृष्ण पापी कौरवों ने भरी सभा में मुझे अर्ध नग्न करके मेरा अपमान किया जिस को याद करके मेरा कलेजा अभी तक जल रहा है। यह कह कर द्रौपदी ने अपनी नागिन के समान कान्ति वाली वेणी को बाएं हाथ में पकड़ा और रोती हुई बोली हे कंस के मारने वाले! संधि करने के समय दुष्ट दुशासन के हाथ से नोंचे हुए इन केशों का ध्यान रखना। यदि भीम और अर्जुन डरकर उन से मेल करना चाहते हैं तो मेरे वृद्ध पिता मेरे पांचों पुत्रों सहित अभिमन्यु को आगे करके युद्ध करेंगे। हे घट घट के जानने वाले जिस अपमान की अग्नि को मैंने तेरह वर्ष हृदय में छिपाकर रखा है, अब वह प्रचण्ड हो कर मेरे शरीर को जला रही है यह अग्नि दुशासन के रक्त के बिना कभी शान्त न होगी मैं उस पापी की भुजा को लोहु में लिथड़ पिथड़ हुई मिट्टी में लेटती देखना चाहती हूं जिसने राजसूय यज्ञ में मंत्रों से सिचे हुए मेरे केशों को घसीटा था। इतना कहते २ वह सुन्दरी आंसु नेत्रों में रोक कर फूट २ कर रोने लगी।

तब श्रीकृष्ण ने उसको अपनी भुजा की टेक देकर

कहा हे द्रौपदी ! मत रो, धृतराष्ट्र के पुत्र यदि मेरे वचन को न मानेंगे तो तुम इन को रण भूमि में कुत्तों और गीदड़ों से खाए जाते देखोगी। मैं विना उनके सिर काटे कभी नहीं छोड़ूंगा। यह मैं तेरे सामने प्रतिज्ञा करता हूं हे मानिनि ! हिमालय पर्वत हिल जाए, आकाश टुकड़े टुकड़े होकर गिर पड़े परन्तु मेरी प्रतिज्ञा अटल रहेगी और कभी झूठी न होगी।

छठा अध्याय ।

श्रीकृष्ण का दूत बनकर जाना ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! द्रौपदी को धीरज देकर श्रीकृष्ण दूसरे दिन प्रातःकाल रथ पर चढ़ कर अपने पांचजन्य शंख की ध्वनि से भूमि आकाश को कंपायमान करते हस्तिनापुर चले। उनके पीछे दस महारथी एक हजार सवार और एक हजार प्यादे शस्त्रों की झंकार करते शरीर रक्षाके लिए चले। रास्ते में निर्मल नादियां हरे भरे खेत और मनके प्रसन्न करने वाले दृश्यों को देखते हुए दूसरे दिन वह हास्तिनापुर पहुंचे। श्रीकृष्ण का आगमन सुनकर दुर्योधन को छोड़कर धृतराष्ट्र के सभी पुत्र उनके स्वागत के लिए गए। गाड़ी घोड़ों और रथोंपरसवार तथा हजारोंही पांवप्यादे मनुष्य उनके दर्शनों के लिए नगर के बाहर पहुंचे। महाराज धृतराष्ट्र ने सारे नगर को सजाने की आज्ञा देदी। नगर के बाजारों को रंग बिरंगी झंडियों से फूलों की मालाओं से और अनेक

प्रकार की चित्र विचित्र चांदनियों से सजाया गया। दुकानें घर और गलियें सब सजाई गईं। असंख्य मनुष्यों की भीड़ दर्शनों की उत्कंठा से नगरमें एकत्र होगई, स्त्रियां वृद्धा, युवतियां और कन्याएं घरोंकी छत्तोंपर फूल मालाएं हाथों में लिए खड़ी हो गईं, उनके भारसे ऐसा प्रतीत होता था कि छत्तें गिर कर भूमि पर आ रहेंगी। तब श्रीकृष्ण जी की सवारी सब बाजारों में धीमे २ चलने लगी। पग पग पर इतनी पुष्प वृष्टि हुई कि भूमि पर फूलों की सेजा सी बिछ गई। श्रीकृष्ण का रथ आगे था उनके चारों ओर यादवसेना के सेनापति उनके अंग रक्षक थे। उनके पीछे कौरवों के महारथि तथा अन्य घुड़ सवार और प्यादा सेना थी। सारे नगर में घूमते हुए श्रीकृष्ण जी जय जय की ध्वनि में धृतराष्ट्र के सफेद महल में पहुंचे। श्रीकृष्ण के पहुंचने पर महाराज धृतराष्ट्र भीष्मपितामह विदुर तथा अन्य राज पुरुषों ने उठकर उनका स्वागत किया और सुन्दर रत्न जड़ित आसन पर उनको बैठा कर पांडवों की कुशल पूछी। वह बहुत देर तक दुर्योधन शकुनि कर्ण और दूसरे लोगों के साथ अनेक प्रकार के हास विलास करते हुए बैठे रहे। इसके अनंतर कौरवों का कुशल मंगल समाचार जान कर महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा से वह राजभवन से बाहर गए और महात्मा विदुर के गृह में जाकर ठैहरे। विदुरजी ने श्री कृष्ण की तन मन से पूजा की और पांडवों का कुशल

समाचार पूछा। श्रीकृष्ण जी ने जो जैसा था सुना कर पांडवों की इच्छा बतलाई। विदुर जी से मिल कर फिर वह अपनी भूआ (फूफी) पृथा को मिले और वहां से चल कर सायंकाल दुर्योधन के महल में गए। श्रीकृष्णको आते देख दुर्योधन अपने मन्त्रियों सहित उठ खड़ा हुआ और बड़े आदर सहित उनको अंदर ले गया। जब श्री कृष्ण आसन पर बैठ गए तो उनके आस पास सब कुरु लोग बैठ गए। कुछ देर बात चीत करनेके बाद दुर्योधन ने बड़ी नम्रता से कहा हे यादव पति! भोजन का समय हो गया है और आपकी कृपा से षटरस भोजन तैय्यार हैं,आज हमारे हां भोजन कर इस घरको पवित्र कीजिए तब श्रीकृष्णजी ने आदर सहित उत्तर दिया हे दुर्योधन! मैं इस समय दूत बन कर यहां आया हूं, दूत बिना सफल मनोरथ हुए आपके हां भोजन नहीं खासकता। दुर्योधन बोले हे मुरारि! आप निस्सन्देह दूत कर्म्म पर नियुक्त हैं परन्तु हमारे सम्बन्धी भी हैं,इस लिए आप हमारा निमंत्रण स्वीकार करें। हे जनार्दन! आप पांडव और कौरव दोनों के एक से सम्बन्धी और प्यारे हैं और दोनों का हित चाहते हैं आपने दोनों को सहायता दी है इस लिए हे नर श्रेष्ठ! आप किस कारणसे हमारे हां निमन्त्रण स्वीकार नहीं करते। यह सुनकर श्रीकृष्ण ने हंस कर उत्तर दिया हे वीर पुंगव! मैं दूत हूं इस लिए काम से क्रोध से लोभ से अथवा अन्य किसी निमित्तसे दूतधर्म को नहीं छोड़ सकता

हे दुर्योधन! दूसरे का अन्न खाने में दो ही कारण होते हैं, एक तो आपत्ति काल और दूसरे प्रीति। परन्तु न तो मुझ पर कोई आपात्ति ही है और न आपने अभी तक कोई मेरी प्रीति का काम ही किया है। इतना वचन कह कर श्रीकृष्ण जी बिदुर के घर में चले गए। बिदुर उस समय गृह पर न थे, परन्तु फूफी पृथा अपने हाथ से भोजन बना रही थीं। श्रीकृष्ण एकाएक मुस्कराते हुए अन्दर चले गए और फूफी के पास आसन पर बैठ कर बोले, फूफी! इस समय बहुत भूख लग रही है, हम यहीं भोजन जीमेंगे।

हे जनमेजय! उस समय पृथाके पास साग के बिना और कुछ न था, क्योंकि दुर्योधन के कोपने महात्मा बिदुर को कंगाल कर दिया था। और बाकी जो कुछ था उसने निर्धनों को दे दिया था। फूफी पृथा के नेत्रों में उस समय आंसु आगये। उसने सोचा कि मैं इनके आगे क्या रखूं। कहां छत्रपतियों के मुकुट द्वारकाधीश कृष्ण और कहां मैं, यह स्वर्ण के थालों में षट रस भोजन करने वाले मेरे रुखे सूखे केवल साग को किस प्रकार ग्रहण करेंगे। और मुट्ठी आटा भी तो नहीं है जो इनको साग के साथ दे दूं। हा हारिद्र देव! तुझे मैं क्या कहूं। इस प्रकार विचार करते करते उसका कण्ठ भर आया वह नीचे नेत्र किये अपने भावों को छिपाती हुई बोली, बेटा! अभी तुम्हारे फूफा आते हैं आप यहां विराजो, साग बन रहा है, शेष सब व्यञ्जन तैय्यार होने पर हम तुम सब मिल कर

खायेंगे। श्रीकृष्ण महात्मा विदुर की दशा को भली भान्ति जानते थे, उन्होंने हंस कर कहा, न फूफी! उनके आने की बाट कौन देखेगा, मुझे तो भूख ने व्याकुल कर दिया है, साग तो बन ही गया है मैं इसी को खाऊंगा। फूफी पृथा अपने भाञ्जे कृष्ण का हठ देखकर बोल न सकी, और वही साग उनको परोस दिया। श्रीकृष्ण उस सागको बड़े प्रेम से खाने लगे वह ज्यों ज्यों साग खाते त्यों त्यों उसके स्वाद में मस्त होकर उंगलियां चाटते और झूमते जाते थे। तब पृथा ने कहा बेटा! मेरे इस अलोने साग का तुमको क्या स्वाद आया होगा, शोक! मैं तुम्हारा सत्कार न कर सकी। श्रीकृष्ण जी बोले फूफी! क्या कहूं, बड़े बड़े राजा महाराजाओं के हां मैंने छत्तीस प्रकार के व्यञ्जन खाए, मेरे अपने रसोई घरमें प्रतिदिन बीसियों प्रकारके भोजन बनते हैं, परन्तु सच कैहता हूं, कि ऐसा स्वाद या तो माता यशोधा की दही और रोटीका आता था या आज इस साग का आ रहा है हे फूफी! इस अमृत के समान मीठे और रस भरे साग के सामने संसार के सब पदार्थ तुच्छ हैं। इस प्रकार बातें करते करते श्रीकृष्ण भोजन पाकर प्रसन्न हुए और फिर रात्रिको विदुर ही के गृहमें सो गए। रात भर महात्मा विदुरके साथ कौरव पांडवों के विषय में बात करते बीती। प्रातः काल श्रीकृष्ण स्नान संध्यादि नित्य कर्म करके बैठे तो महा तेजस्वी दुर्योधन अपने मंत्रीयों सहित उनके

पास आकर बोले हे यादव शिरोमणि! राज सभा में महाराज और उनके मंत्री सभी कौरवों सहित बैठे आप की राह देख रहे हैं। तब श्रीकृष्ण अपने श्वेत घोड़ों वाले सूर्य्यके समान चमकते हुए रथ पर बैठकर सात्यकी आदिक शरीर रक्षकों के साथ सभा भवन में पहुंचे और सब का कुशल समाचार पूछ कर यथास्थान बैठ गए। वहां देश देशान्तर के राजे महाराजे अपने आसनों पर बैठे थे, चुपचाप थी, सबकी आंखें श्रीकृष्ण पर लगी थीं, उस समय वह महाराज धृतराष्ट्र की ओर देखकर उठे और बोले हे भरत कुल सूर्य्य! क्षत्रियों में कुरुवंश इस समय सब से ऊंचा है, परन्तु यदि यह आपस में ही लड़ने लगे तो इसका अवश्य ही नाश हो जायेगा हे भारत! जिस प्रकार यह कुल भयानक नाश से बच जाए, दोनों ओर के शूरबीरों के प्राण न जाएं और परस्पर मेल मिलाप हो जाए, इसी कार्य्य को पूरा करने के लिए मैं यहां आया हूं। हे राजन्! आपका वंश वेद शास्त्रके अनुसार चलने वाला सत गुणों से भर पूर संसार में प्रसिद्ध है। हे राजन्! ऐसे कुलमें कोई भी अन्याय नहीं होना चाहिये आप इस समय बड़े हैं शक्ति आपके हाथ में है, किसी की सामर्थ्य नहीं जो आपकी इच्छा के विरुद्ध चल सके। हे कुरु श्रेष्ठ! आपके पुत्र दुर्योधन आदि इस समय अन्याय करने पर तुले हुए हैं, और यही इस होने वाले महायुद्ध का प्रधान कारण है, सो आप इनको

रोकें और मैं पांडवों को रोक दूंगा, इस समय आपके और मेरे हाथ में सब कुछ है। हे भारत! कौरवों और पांडवों के मिलाप से संसार में आपकी शक्ति बढ़ेगी और संसार की कोई शक्ति आपको दबा न सकेगी। हे पृथ्वी नाथ! दूसरों से सहायता लेनेमें क्या लाभ है आप पांडवों ही को अपना सहायक बनावें फिर तीनों लोकों में आप के सामने आंख उठाने वाला कौन है और युद्ध में तो दोनों पक्षों में से चाहे किसी का नाश हो, वह आप ही का नाश है, इसमें आप क्या भलाई दखते हैं। हे राजन्! आपके पुत्र और भतीजे युद्ध के लिये तैय्यार हैं, इनको इस कुल हत्या से बचाईए। यह सब आर्य्य एक दूसरेके अंग बन कर रहें। और लड़ने के लिए आए हुए इन सब राजों को कुशल पूर्वक अपने अपने देशमें भेजें। हे धृतराष्ट्र! युधिष्ठिर ने आपको आदर सहित यह संदेश भेजा है, कि हे तात! आपकी आज्ञा से हमने तेरह वर्ष बनवास भोगा और इस विचार से इस प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ कि आप अपने वचन पर स्थिर रहेंगे और बनवास से लौटने पर हमें हमारा भाग दे देंगे। परन्तु अब हमारे अपने भाग के मांगने पर यह युद्ध की तैय्यारी जो आपकी ओर से हो रही है नितान्त अन्याय है। आपको पिता जान कर और आपके विश्वास पर हमने सब कष्ट सहन किये अब पिता की भान्ति हमे स्वीकार कीजिए। पृथ्वीनाथ! आपकी सभा में आप ही के सामने इतना अंधेर

हो यह प्रशंसनीय बात नहीं। कुछ क्षण ठहर कर श्री कृष्ण जी फिर बोले हे नरनाथ! आप युधिष्ठिर के सद्भाव और सुशीलता को जानते हैं, परन्तु फिर भी आपके पुत्रोंने उनको जलाने का यत्न किया बनवास दिया और बन में अनेक दुःख दिये, परन्तु फिर भी उसने आप ही का सहारा लिया और स्वयं लड़ कर सब राजाओं को आपका दास बनाया। ऐसे सच्चे और धर्मात्मा राजा का शकुनिने सर्वस्व हर लेने की जो चेष्टा की यह उसके साथ बड़ा छल किया गया। हे राजन्! मैं दोनों पक्षों का कल्याण चाहता हुआ यही प्रार्थना करता हूं कि आप पांडवों का भाग उन को दे दें। पांडव आप की सेवा के लिए तैय्यार हैं और युद्ध के लिये भी, अब जैसा आपको रुचे कीजिए।

यह सुनकर धृतराष्ट्र बोले हे कृष्ण! आपने जो कुछ कहा है वह सत्य है और धर्म अर्थ काम मोक्ष से युक्त है, परन्तु मैं इसमें कुछ नहीं कर सकता, आप दुर्योधन को समझाएं, उसी के अधीन सब कुछ है। हे परंतप! वह मेरी आज्ञाको उल्लंघन करता और अपनी मनमानी करता है मैं विवश हूं।

तब श्रीकृष्ण जी दुर्योधन की ओर मुख करके बोले हे कुरु नन्दन! तुम कुलीन हो सर्व गुण सम्पन्न हो तुम को मेरे वचन पर अच्छी तरह विचार करना चाहिए। हे तात! तुम वेद शास्त्रों को जानने वाले हो तुम्हें मामा

पिता की आज्ञा पर अवश्य चलना चाहिए, आपके पिता पांडवों से मेल मिलाप करना चाहते हैं आप भी अपने मन्त्री मण्डल के साथ मेल करने का यत्न करो। हे भरत कुल भूषण! परायों से मेल करने वाला और अपनों से वैर रखने वाला इस संसार में बहुत दुःख पाता है, इस लिए परायों से अपनी रक्षा न चाहो। हे भारत! जन्म से लेकर आज तक तुमने पांडवों का तिरस्कार किया परन्तु तौ भी वह तुम्हारा कल्याण ही चाहते हैं। तुम अपने सारे पक्षपाती राजाओं की ओर देखो और फिर बतलाओ कि इन में से कौन युद्ध भूमि में अर्जुन के हाथपड़कर कुशल पूर्वक घर लौट सकता है, हे कुरु नंदन! मेरे साथ खड़े हुए अर्जुन को युद्ध क्षेत्रमें कौन ललकारने की शक्ति रखता है चाहे इन्द्र ही क्यों न हो। युद्ध में अपने स्वार्थ के लिए अपने भाई बन्धुओं का क्षय न करो मेल हो जाने में भी पांडव धृतराष्ट्र को ही राजा मानेंगे और तुम्हें युवराज पद देंगे, इस लिए पांडवों को आधा राज्य दे दो और आधे से सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करो इतना कह कर श्रीकृष्ण बैठ गये। इसके अनंतर भीष्म द्रोण और महात्मा विदुर ने दुर्योधन को अनेक प्रकार से समझाने और मेल कराने का यत्न किया। सबके बचन सुनकर दुर्योधन अपने आसन से उठकर श्रीकृष्ण की ओर मुख करके बोले, हे वासुदेव! तुम्हें समझ सोच कर हमारे साथ बात करना चाहिये, तुमने पांडवों में कौनसा

ऐसा गुण देखा जो तुम उनकी इतनी प्रशंसा करते हो। तुमने ही नहीं भीष्म द्रोण और विदुर ने भी हमारी भर-पेट निन्दा की परन्तु इतना किसी ने भी नहीं बताया कि हमारा दोष क्या है। क्या युधिष्ठिरने जुआ खेलकर शकुनिके आगे अपना सब कुछ नहीं हारदिया? क्या उस मूर्खने द्रोपदीको दांवपर नहीं रखा, अब सबकुछ हारजानेपर वह किस मुखसे अपना राज्य मांगता है, हे वासुदेव! तुम न्यायकीदृष्टिसे देखो कि इसमें हमारा क्यादोष है। औरआप जो बारम्बार अर्जुन के गांडीव धनुष और भीम की गदा सुना सुना कर हमें डराते हो, क्या हम इस से डर जाएंगे। मैं उनके बल पराक्रम को अच्छी तरह जानता हूं, बेचारे पांडव तो क्या भीष्मद्रोण और कर्ण के सामने इन्द्र आदि देवता भी खड़े होने की शक्ति नहीं रखते। परन्तु यदि तुम उनको हम से अधिक बलवान भी समझते हो तो भी हम युद्ध में उनके हाथ से मर जाना स्वीकार करेंगे, पर क्षत्रिय-धर्म के विरुद्ध उनके आगे झुक कर मेल नहीं करेंगे। हे यादव! शिरोमणि! हमारी बाल्यावस्था में हमारे पिता ने हमारे राज्यका आधा भाग पांडवों को दे दिया था, जिसे हम कभी भी नहीं चाहते थे, परन्तु अब वह दोबारा हम से राज्यकी सूईके नक्के भर भूमि पानेकी भी आशा न रक्खें।

दुर्योधन के मुख से ऐसे कठोर वचन सुनकर श्री कृष्ण का मुख क्रोध से तमतमाने लगा वह बोले, हे दुर्योधन! तुम जो युद्ध में मरने की इच्छा करते हो सो तुम्हारी इच्छा

अवश्य पूरी होगी। हे कुरुकुल कलंक ! तुम कहते हो। कि हमारा क्या दोष है, सो तुम सुनते हुए भी नहीं सुनते और जानते हुए भी अज्ञानी की तरह बकवाद करते हो। शठ! बाल्यावस्था में तुम ने भीम को लड्डुओं में विष देकर उसे मार डालने का प्रयत्न किया। पांडवों को वारणवत भेज कर उन्हें लाक्षा-गृह में जला डालने की कुचेष्टा की! तुम ने त्रिलोकी में पूजनीय महारानी द्रौपदी को सभा में बुलाकर जो अपमान किया, वह अपने तो क्या शत्रु भी ऐसा नहीं करते। पांडवों का जुए में सब कुछ छीन कर उन्हें बनवास दिलाया और बन में भी उनको मार डालने की इच्छा से तुम ने अनेक आक्रमण किए, अब वह लौट कर अपना राज्य मांगते हैं, तो तुम अपनी प्रतिज्ञा तोड़ कर कहते हो कि सूई के नक्के भर भूमि भी नहीं दूंगा। तुम अपने माता पिता और गुरुओं की बात नहीं सुनते, और फिर भी कहते हो कि हमारा क्या दोष ! मूर्ख ! समय पर मेरी एक एक बात तुमें स्मर्ण आएगी और उस समय पश्चात्ताप करते करते तुम इस संसार से विदा होगे ॥

श्री कृष्ण जब इस प्रकार कह रहे थे, उस समय दुःशासन उठ कर बोले हे सुयोधन! संभलो, यदि तुम अपनी इच्छा से पांडवों के साथ सन्धि न करोगे, तो भीष्म द्रोण और विदुर तुम्हें मुझे और कर्ण को बांध कर युधिष्ठिर के हाथ सौंप देंगे। दुःशासन की बात सुनकर महांक्रोधी दुर्य्योधन सर्प की नांई फुंकारता हुआ सभा भवन में से

उठ कर चला गया। उसे जाते देख उस के भाई और सब राजे महाराजे जो उसके पक्ष के थे उठ कर चले गए। दुर्य्योधन और उस के साथियों के इस प्रकार अपमान कर के चले जाने पर भीष्म बोले, हे कृष्ण! तुम ने अपना कर्तव्य पूरा किया, परन्तु यह दुरात्मा लोग धर्म अर्थ और काम को छोड़ कर केवल हठ पीटते हैं, अब पृथिवी अवश्य ही निः-क्षत्र होगी ऐसा लक्षणों से प्रतीत होता है। तब श्री कृष्ण भीष्म द्रोण आदि सभी वृद्धों को संबोधित करके बोले, इस शठ राजा को आप बल से नहीं रोकते, इस में आप सब का दोष है। हे क्षत्रियो! कंसने जब जीते जी पिता से राज्य छीन लिया, उस समय उसके सभी भाई बन्धु और हितचिन्तकों ने उसका साथ छोड़ दिया और सब ज्ञातियों के कल्याण के लिए मैंने उसे मार डाला। अब एक कंस के मरने पर सारे यादव वृष्णि और अंधक सुख पूर्वक रहते हैं, हे वीर जनो! इस समय आपको भी ऐसा ही करना उचित है, दुर्य्योधन को बल पूर्वक बांध कर पांडवों से मेल करो, इसी में क्षत्रिय कुल की भलाई है।

श्री कृष्ण का वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने गांधारी को बुलवा कर कहा हे प्रिय! देखो यह तुम्हारा पापी पुत्र सब की बात का अनादर करके शठों के समान सभा से उठ कर चला गया है, तुम उस पापी को समझाओ कि इस हठ को छोड़ दे और वृद्ध लोग जैसे कहते हैं उसके अनुसार करे। गांधारी बोली राजन्! यह सब आप ही का

दोष है जो पुत्र का ममता के वश हो कर उस शठ का साथ देते हैं, ऐसे पापी को तो उत्पन्न होते ही त्याग देना उचित था, अब विष वृक्ष के समान फैल कर यह सारे वंश का क्षय करने पर तुल गया है। इसके पश्चात् माता की आज्ञा से दुर्य्योधन फिर सभा में आया। उसे देखकर गांधारी बोली हे बेटा! अपने पिता तथा विदुर और भीष्म का कथन मान कर पांडवों से मेल करो पांडवों ही ने सारे संसार का राज्य जीत कर तुम्हें दिया है, अब उन के साथ युद्ध करके अपने अंगों को न काटो, इस से कुरु वंश का नाश होगा और दबे हुए शत्रु फिर उठ कर तुम्हारे राज्य को छीन लेंगे इस लिए पांडवों को उनका आधा राज्य देकर आनन्द से पृथिवी पर शासन करो। परन्तु दुर्य्योधन कब मानने वाला था, वह माता के बचन सुना अनसुना करके बिना कुछ उत्तर दिये उठ कर चला गया। सभा भवन से बाहर जाकर उसने शकुनि और कर्ण से सलाह की कि किसी प्रकार कृष्ण को यहीं पर पकड़ कर बांध लेना चाहिए! हे मामा! यदि हम ने इस मायावी को शीघ्र ही न बांध लिया तो वह भीष्म और धृतराष्ट्र को अपने साथ गांठ कर हमें अवश्य बांध लेगा। हे वीर शिरोमणि! कृष्ण के कैद कर लेने से सारे संकट दूर हो जाएंगे और पांडवोंकी कमर टूट जाएगी इस प्रकार सलाह करके दुर्य्योधन अपने साथियों को गुप्त रूप से तैय्यार करने लगा। परन्तु श्रीकृष्ण का प्रधान सेनापति सात्यकी दुर्योधन की इस कुमंत्रणा को अपनी

तीक्ष्ण बुद्धि से ताड़ गया। वह तुरंत वहां से उठा और बाहर निकल कर कृतवर्मा से बोला, झट पट सेना तैय्यार करो और सारे दल बल सहित सभा भवन के द्वार पर खड़े रहो मैं अंदर जाकर श्रीकृष्ण को सूचना देता हूं। कृतवर्मा को सावधान करके सात्यकी क्रुद्ध सिंह कि समान सभा भवन के अंदर पहुंचा और श्रीकृष्ण को दुर्य्योधन के कुचक्र का सारा हाल सुनाया। इसके पश्चात् वह खड़ा होकर कर्ण भेदी गंभीर गर्जना करता हुआ बोला हे महाराज धृतराष्ट्र! यह पापी दुर्य्योधन कर्ण और शकुनि बाहर इकट्ठे होकर श्रीकृष्ण को बांधने की सलाह कर रहे हैं। हे नर नाथ! इनकी यह चेष्टा ऐसी है जैसे कोई पागल कपड़े में आग पकड़ने की इच्छा करे। हे कुरु राज! इन मूर्खों को समझाओ ऐसा न हो कि सात्यकी की तलवार यहीं पर रक्त की नदी बहा दे और आप की उपस्थिति में यह सभा-भवन श्मशान घाट बन जावे, मैं श्रीकृष्ण के चरणों की जिन चरणों की धूल चाटने के योग्य भी दुर्योधन आदि नहीं हैं, शपथ खाकर कहता हूं कि यदि दुर्य्योधन ने इन पर हाथ उठाने की चेष्टा की तो मैं उन में से एक को भी जीता न छोड़ूंगा। सात्यकी की गर्ज सभा भवन में गूंजने लगी, सब लोग सहम गये तब महात्मा विदुर धृतराष्ट्र से बोले हे राजन्! तेरे पुत्रों के सिर पर मृत्यु नाच रही है जो इस कलंक लगाने वाले कर्म के लिए उद्यत हुए हैं। विदुर के इस प्रकार कहने पर

श्रीकृष्ण जी बोले हे राजन्! यदि मेरी संधि की बात को सुनकर वह क्रोध में आये हैं और मुझे बांधना चाहते हैं तो अपनी इच्छा को पूरी करें, परंतु आप मुझे भी आज्ञा दें और फिर देखें कि यह मुझे बांधते हैं या मैं इनको बांधता हूं। मैं इन सब को उचित दण्ड देने की शक्ति रखता हूं, यदि इन में साहस है तो यह बे रोक टोक अंदर आवें और अपने बल की परीक्षा कर देखें। यह सुनकर धृतराष्ट्र ने क्रोध से फुंकारते हुए सर्प के समान कहा हे विदुर! तुम इस मूर्ख दुर्योधन को शीघ्र अंदर लाओ। तब महात्मा विदुर राजा की आज्ञा से दुर्योधन शकुनि और कर्ण को अंदर ले आए उन को देख कर धृतराष्ट्र बोले हे नीच तू ऐसा पाप करने लगा है, जिस से सारे कुल की निंदा और नाश हो। रे क्रूर! तू अपने इन मूर्ख साथियों से मिलकर उस अदम्य तेज वाले कृष्ण को बांधना चाहता है, जिस से मनुष्य तो क्या देवता गंधर्व राक्षस और नाग भी थर थर कांपते हैं। हे दुरात्मा! हाथ से आग पकड़ना चाहता है कपड़े में वायु बांधना चाहता है, कृष्ण को बल से पकड़ना असंभव है। पिता के कटु वचन सुन कर दुर्य्योधन ने क्रोध से श्रीकृष्ण की ओर देखा उसने चाहा कि कृष्ण को पकड़ लें परंतु श्रीकृष्ण के नेत्रों से अग्नि बर्स रही थी जिसे वह सहार न सका। उस समय उसने अपने साथियों को सहायता के लिए दाएं बाएं देखा परन्तु उस का रहा सहा धीरज भी जाता रहा, उसकी कमर टूट गई

जब उसने देखा कि चारों ओर सात्यकी की सेना नंगी तलवारें लिये उसे घेर कर खड़ी है। वह घबरा कर कुरसी पर गिर पड़ा और मूढ के समान चारों ओर देखने लगा। तब सात्यकी और कृतवर्मा सहित श्रीकृष्ण प्रचण्ड सूर्य्य के समान देदीप्यमान उठ कर चले। चारों ओर यादव सेना थी। सभाके बाहर सारथि दारुक चमकते हुए रथ पर बैठा श्रीकृष्ण की बाट देख रहा था। श्रीकृष्ण जी रथ पर सवार होकर बूआ कुन्ती को मिलने गये। उसे मिल कर उन्होंने सारा हाल कहा श्रीकृष्ण बोले हे फूफी! दुर्य्योधन को मैंने बहुत समझाया परन्तु वह शठ अपने हठको नहीं छोड़ता, अब वह इस संसार में अधिक काल तक नहीं रह सकता। तुम्हें अपने पुत्रोंको कोई संदेशा देना हो तो कहो।

कुन्ती बोली बेटा! युधिष्ठिर से कहना, त्तत्रिय धर्म पर खड़े रहो, तुम अपने कर्मको छोड़ बैठे हो, बेटा माताका दूध जिस दिनके लिये पान किया था वह दिन अब निकट आगया है। अर्जुन और भीम से कहना, कि तुम क्षत्रिय होकर क्षत्रियों की मर्यादा पर चलो, देखो तुम्हारे सामने द्रौपदी का अपमान किया गया उसे कौन त्तत्रिय सह सकता है। मैं राज्य के नष्ट होने से, बनवास से और तुम्हारे देश निकाले से इतनी दुखी नहीं हूं, जितनी कि सभा में रोती हुई रजस्वला द्रौपदी को कहे गए कठोर वचनों से। इस दुख से मेरा कलेजा फटा जा रहा है, हे बेटा

तुमसे सनाथ हुई हुई भी वह अनाथ की भांति सभामें नग्न की गई। हे कृष्ण! मेरे पुत्रों को कहना कि जैसा द्रौपदी कहे उसी मार्ग पर चलो। और सबका कुशल पूछना, अब तुम निर्विघ्न जाओ और युद्ध में मेरे पुत्रों की रक्षा करो। इसके पश्चात् कुन्ती को प्रणाम करके श्रीकृष्ण बाहर निकले।

बाहर आकर श्रीकृष्ण कर्ण से बोले, आप से एक आवश्यक काम है, यह कह उन्होंने कर्णको अपने रथ पर बैठा लिया और सात्यकी तथा अन्य सैनिकों के साथ नगर के बाहर कूच कर दिया। नगर से कुछ दूर एकान्त स्थान पर पहुंच कर श्रीकृष्ण कर्णसे बोले हे कर्ण तुम बुद्धिमान हो वेदों और शास्त्रोंको जानने वाले हो, तुम्हारी बुद्धि सदैव धर्ममें लगी रही है, शास्त्रका कोई ऐसा विषय नहीं जिसे तुमने न पढ़ा हो, इसी लिये मैं तुम्हें एक गुप्त भेद बतलाता हूं। हे कर्ण! तुम सूत पुत्र नहीं हो, वरं पांचों पांडवों के बड़े भाई कुंती के ज्येष्ठ पुत्र हो। कन्या अवस्था में सूर्य्य के योग से और कुन्ती के गर्भ से तुम्हारा जन्म हुआ। उस समय लज्जा की मारी कुन्ती ने तुम्हें नदी में बहाय दिया, परन्तु दैव योग से तुम अधिरथ के हाथ आ गये और उसीने तुम्हारा पालन पोषण किया। हे कर्ण! धर्म के अनुसार तुम पांडु के पुत्र हो। इस समय तुम ही पांडवों में सब से बड़े हो, इस लिए आओ हम तुम को पांडवों के पास ले चलें हे कर्ण जेठे होने से तुम

ही राज-गद्दी पर बैठोगे और शेष पांडव तुम्हारी सेवा करेंगे। भीम तुम्हारे सिर पर छत्र झुलाएंगे, अर्जुन तुम्हारे सारथि बनकर तुम्हारे रथके घोड़े हांकेंगे, पांडव, यादव और सबके सब पांचाल तुम्हारी पूजा करेंगे और पांडवों के समान द्रौपदी तुम्हारी भी पत्नी होगी। इस लिए हे महाबाहो! आज ही हमारे साथ चलो, और सारे संसार का राज्य अपने हाथ में लेकर कुन्ती का दुख दूर करो।

यह सुन कर कर्ण बोले हे यादव श्रेष्ठ! कन्या अवस्था में हम कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न हुए इस लिए धर्मानुसार हम पांडु के ही पुत्र हैं परन्तु फिर भी हम पांडवों के साथ मिलने के लिए तैय्यार नहीं हैं इस संसार का राज्य तो क्या हम इन्द्रलोक का राज्य लेकर भी दुर्योधन का साथ नहीं छोड़ सकते। हे जनार्दन! दुर्य्योधन ने सदा ही हमसे प्रेम किया है और सगे भाइयों से बढ़कर हमारा आदर किया है कुंती ने हमें कन्याऽवस्था में जन्म देकर फैंक दिया, उसके नाते तो हम उसी दिन मर गए। अब युद्ध के समय किस प्रकार हम दुर्य्योधन का साथ छोड़ें, ऐसा करने से संसार हमको कायर निर्लज्ज और कृतघ्न के नाम से पुकारेगा। इसलिए हे यादव नंदन! आप हमारे जन्म की कथा पांडवों से न कहना, क्योंकि धर्मात्मा युधिष्ठिर यह जानकर कि हम उनके जेठे भाई हैं तुरंत अपना राज्य हम को देदेंगे और दुर्य्योधन के उपकारों से दबा हुआ मैं उस राज्य को दुर्य्योधन को सौंप दूंगा, परंतु मैं नहीं चाहता

कि दुर्य्योधन बिना कष्ट के ही सारे राज्य को प्राप्त करे मैं दिल से चाहता हूं कि युधिष्ठिर चिर काल तक राज्य करे ॥

सातवां अध्याय ।

वैशंपायनजी बोले हे राजा जनमेजय! श्रीकृष्ण तो कुंती से मिलकर उपप्लव्य नगरमें वापस चले गये परंतु कुंती के हृदय में बड़ी चिंता हुई और वह शोकमे व्याकुल हुई हुई मनमें सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिये, यह भाई २ का परस्पर युद्ध महां अनर्थ का कारण होगा, और कर्ण विशेष करके पांडवों के नाश का यत्न करता रहता है, और बलवान् भीहै यह बात मेरेहृदयको जलाती रहती है। इस प्रकार विचार करके वह कर्णको मिलने के लिए गंगा–तट पर गई। वहां जाकर उसने देखा कि उसका तेजस्वी पुत्र कर्ण सूर्य्य की ओर मुख करके वेद पाठ कर रहा है। कुन्ती उसके पीछे खड़ी होगई। तीन पहर बीतने पर चौथे पहर जब सूर्य्यदेव पश्चिम की ओर जाने लगे तब कर्ण ने भी अपना मुख पश्चिम की ओर फेरा। इधर मुख फेरते ही उन्होंने कुन्ती को देखा। उसे देख कर कर्ण ने नमस्कार करके कहा हे देवि! राधा का पुत्र कर्ण तुम्हें प्रणाम करता है, कहो किस कारण से तुम यहां आई हो? कुन्ती बोली बेटा कर्ण! मैं यही कहने के लिए आई हूं कि तुम अधिरथ और राधा के पुत्र नहीं हो और नांही तुम्हारा जन्म सूत कुल में हुआ है।

बेटा ! तुम सूर्य्य के सम्भोग से कुंती के पुत्र हो कन्या अवस्था में मैंने तुम को जन्म दिया है, इस लिए तुम युधिष्ठिर आदि पांचों भाइयों के ज्येष्ट भाई राज्य के अधिकारी हो । हे बेटा! मोह वश होकर तुम अपने मां जाए भाईयों से बैर रखते हो और कपटी दुर्योधन से मित्रता करके सारे वंश के क्षय का कारण बन रहे हो । बेटा ! तुम सब गुणों से युक्त वेदों के जानने वाले चक्रवर्त्ती राजा होने के योग्य हो कर सूत पुत्र कहलाते हो, यह हमें अच्छा नहीं लगता इस लिए धर्म के अनुसार तुम मेरा कथन मानकर पांडवों का साथ दो । कुंती के वचन सुन कर कर्ण बोले हे देवि! यद्यपि मैं तुम्हारा पुत्र हूं परन्तु इस समय तुम्हारी बात को किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं कर सकता, इससे हमारे धर्म की हानि होगी और संसार में अपयश होगा। हे माता! हमारे उत्पन्न होते ही तुम ने हम को मरने के लिए छोड़ दिया सो तुम्हारे नाते तो हम उसी दिन से मर चुके । राधा ने हम को अपने स्तनों से दूध पिलाया, इस कारण इस क्षत्रिय कुल से गिर कर संसार में सूत पुत्र कहलाए, हे माता ! हमारी इस गिरावट का कारण भी तुम ही हो तुमने हमको जन्म देकर हमारे साथ शत्रु का सा व्यवहार किया। दुर्य्योधन जिसको तुम नीच कहती हो उसी ने हम को अंग देश का राजा बना कर हमें सगे भाईयों से बढ़ कर क्षत्रियों में सन्मान दिया। उसने हमारा सत्कार किया और मैं

उसी का दिया राज भोगता हूं और अन्न खाता हूं अब विपत्ति के समय उस का साथ छोड़ कर मैं संसार में अपना मुख काला कराऊं और कृतघ्नता के पाप का भागी बनकर नर्क में गिरूं, यह मुझ से न हो सकेगा। इस लिए मैं युद्ध में दुर्योधन के लिए लडूंगा और उसके ऋण को सिर से उतारूंगा। हे माता! यही समय उस के किये हुए उपकारों का बदला चुकाने का है, सो मैं तुम्हारे पुत्रों से लड़ कर चुकाऊंगा परंतु हे माता! तुमने हमको जन्म दिया है, इस लिए तुम्हारी प्रसन्नता के लिए हम प्रतिज्ञा करते हैं, कि युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव इन चारों को हम युद्ध में नहीं मारेंगे परंतु अर्जुन को अवश्य मारेंगे, अथवा स्वयं उसके हाथ से मरेंगे उससे हमारा वैर है। इस तरह अर्जुन के मरने पर भी मुझ समेत तुमारे पांच पुत्र जीवित रहेंगे॥

कर्ण के सच्चे और स्पष्ट वचन सुन कर कुन्ती दुख से कांप उठी उसके मुख से कोई बात न निकली। अन्तमें कर्ण को कंठसे लगाकर वह बोली बेटा तुमने जो युधिष्ठिर आदि चार भाइयों को न मारने की प्रतिज्ञा की है उसे भूल न जाना। इसके अनन्तर वह ठंडी सांस भरती हुई वहां से विदा हुई और कर्ण भी बिना कुछ और बोले वहां से चल दिये।

आठवां अध्याय।

हस्तिनापुर से लौट कर श्रीकृष्ण उपलव्य नगर में पहुंचे। वहां जाकर उन्होंने युधिष्ठिर को कौरवों का सारा हाल सुनाते हुए कहा कि हे भारत! मैंने सब प्रकार से

कौरवों को समझाया और इस होने वाले युद्ध को रोकने के लिए बहुत यत्न किया, परन्तु वह शठ किसी प्रकार भी हमारे कथन को स्वीकार नहीं करता। उसको अपने शस्त्रों और सेना पर बड़ा भरोसा है। हे धर्म पुत्र! हमने जो कुछ करना था कर चुके अब तुम सब बातों को छोड़ कर अपनी सेनाओं को तैय्यार करो, और जो अधिकार प्रार्थनाओं से नहीं मिला उसे तलवार से प्राप्त करो। हे युधिष्ठिर! हमारी सेना बलवान और पराक्रमी है, दुर्योधन तो क्या देवता भी युद्ध में इसे जीतने की समर्थ नहीं रखते। अब दुर्योधन और उसके साथियों का काल आ पहुंचा है जिसे संसार की कोई शक्ति नहीं रोक सकती हे भारत! धर्म तुम्हारे साथ है और परमेश्वर तुम्हारे साथ है, वही तुम्हें युद्ध में विजय देगा। हे धर्म पुत्र! इस समय अपनी सारी सेना को अलग अलग बांट दें। आपके पास सात अक्षौहिणी सेना है, सो उनके अलग अलग सेनापति नियुक्त करो। द्रुपद, शिखंडी, सात्यकी, भीमसेन, चेकितान, धृष्टद्युम्न और विराट यह सात महा तेजस्वी परम पराक्रमी इन सेनाओं के सेनापति होने योग्य है परन्तु इन सातों के ऊपर एक प्रधान सेनापति होना चाहिये जिस के अधीन सब सेनाएं युद्ध करें। हे युधिष्ठिर! यह बात विचारने योग्य है कि कौन प्रधान सेनापति बने, इसके लिए आप सब की सम्मति क्या है सो कहो। तब सहदेव ने विराट का, नकुल ने द्रुपद का,

भीमसेन ने शिखंडी का नाम लिया। इन सब की अलग अलग सम्मति देख कर अर्जुन बोले हे राजन्! युद्ध में बल पराक्रम और बुद्धि तथा अनुभव इन सब बातों पर विचार करके मेरी तो यह सम्मति है कि सर्वगुण सम्पन्न महा पराक्रमी दुर्जय धृष्टद्युम्न ही इस पद के योग्य हैं। इसके अनन्तर युधिष्ठिर बोले, महाबाहु वीरो! जिन जिन के नाम आपने लिए हैं, वह सब ही धीर वीर और परम पराक्रमी योधा है इस लिए मैं इस महान कार्य्य को परम बुद्धिमान चतुर शिरोमणि श्रीकृष्ण की सम्मति पर छोड़ता हूं, वही इसका निर्णय करें।

श्रीकृष्ण जी बोले हे धर्म राज यद्यपि सारे ही एक से एक बढ़ कर हैं, जिस समय वह युद्ध में जाएंगे, शत्रुओं की सेना मार मार कर नष्ट कर देंगे, तथापि धृष्टद्युम्न को ही मैं इस समय प्रधान सेनापति चाहता हूं। तब श्रीकृष्ण की बात को सबने स्वीकार किया और यह खबर सब राजाओं को पहुंचा दी। इसके अनन्तर अर्जुन को पांडवों की सारी सेनाओं के देख रेख के काम पर नियुक्त किया गया अर्थात् वह सबसे बड़े अफसर बनाए गए। यह सब काम करके महाराज युधिष्ठिर ने अपनी सेनाओं को कुरुक्षेत्र की ओर कूच करने की आज्ञा दी। कूच की आज्ञापाकर क्षणमात्र में लाखों घोड़े हाथी खच्चर रथ और पालकियां तथा लाखों ही वीर और बांके जवान धनुषबाण तलवार तोप और अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्रों को

लेकर चलने के लिए तैय्यार हो गए । वीर सैनिकों के लाखों कवच सूर्य्य के प्रकाश में चमकने लगे, जल्दी करो जल्दी करो की ध्वनि से आकाश गूंज उठा, घोड़ों की हिन हिनाहट और काली घटा के समान एक पंक्ति में खड़े हुए हाथियों की चिंघाड़ों से कान फटने लगे। जब सब प्रकार से सेना तैय्यार हो गई तो महारथियों सहित पृथ्वी को कंपायमान करती हुई गर्जती हुई यह प्रचण्ड सेना समुद्र के समान आगे बढ़ी । सब के मध्य में रथ हाथी घोड़े और खजाना शस्त्र भण्डार वैद्य तथा सेना की खाने पीने की सामग्री लेकर महाराज युधिष्ठिर चले ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! जब यह प्रचंड सेना बड़े वेगसे चलती हुई कुरुक्षेत्रमें पहुंची तो श्रीकृष्ण और अर्जुनने अपने अपने शंखों को जोरसे बजाया। उन शंखोंकी ध्वनि सुनकर वीरों के उत्साह दुगने हो गए और वह आनंद से उछलने लगे। कुरुक्षेत्र में पहुंच कर महाराज युधिष्ठिर ने हिरण्यवती नदी के परम रमणीय तट पर जहां जल घास चारा और लकड़ियों की कोई कमी न थी अपने कैम्प गाड दिये। प्रधान सेनापति धृष्टद्युम्न ने भूमि को माप कर वहां सैनिकों की छावनी डाली। प्रत्येक सेना के अलग २ शिविर बनवाए औरशिल्पी वैद्यतथा दूसरे कारीगरों केलिए अलग कैम्प गड़वा दिये। हे जनमेजय लाल पीली और श्वेत ध्वजाओं वाली वह सागर के समान सेना देखते २ एक बड़े नगर के समान शोभा देने लगी श्रीकृष्ण जीने छावनी के

चारों ओर खाई खुदवाकर उसमें गुप्तसेना रखदी। फिर महाराज युधिष्ठिरकी आज्ञासे प्रत्येक शिविरमें अनगिनत धनुष बाण कवच और सहस्त्रों प्रकार के अन्य अस्त्र शस्त्र रखे गये इसके अतिरिक्त घी, शहद अन्नजल चाराभूसी आदि पदार्थों के भंडार भरेगए। इसप्रकार से अपनेसैन्य दलको सुसज्जित करके पांडव युद्ध आरंभ होने की राह देखने लगे।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! जब दुर्य्योधन ने अपने गुप्तचरों के मुखसे पांडवों की इस तैय्यारी का हाल सुना तो उसने कर्ण शकुनि आदि साथियों को बुलाकर कहा कि पांडवों ने कुरुक्षेत्र में अपने खेमे लगा दिए हैं इस लिए हमको भी उचित है कि जितना जल्दी हो सके कुरुक्षेत्र में किसी ऐसे स्थान पर अपनी छावनी डालें जहां शत्रु सहज ही में हम पर आक्रमण न कर सके। हे महावीरो! कम से कम एक लाख शिविर वहां गाड़ कर अपनी दुर्जय सेना को वहां भेजदो और आज ही घोषणा करदो कि कल युद्ध होगा। इसके अनंतर दुर्य्योधन ने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेनाको ग्यारह भागोंमें बांट दिया। तब दुर्य्योधन की आज्ञा से सहस्त्रों रथ लाखों घोड़े और घुड़सवार तथा प्यादे अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित होकर कूच की तय्यारियां करने लगे। दूसरे दिन प्रातःकाल यह पृथ्वी को कंपाने वाली भयानक सेना जय ध्वनि करती हुई कुरुक्षेत्र में पहुंची।

वहां सब सेना को यथा स्थान टिका कर कृपाचार्य्य द्रोणाचार्य्य, शल्य, जयद्रथ, काम्बोजराज, कृतवर्मा अश्व-

त्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, शकुनि और पराक्रमी वाल्हीक इन ग्यारह महारथियों को ग्यारह अक्षौहिणी सेनाओं का सेना पति बनाया। यह सब काम करके सब राजाओं को साथ लेकर दुर्य्योधन भीष्म पितामह के पास गये और हाथ जोड़ कर बोले हे दादा! सेना पति के बिना बहुत बड़ी सेना भी तितर बितर होकर मारी जाती है। आप शुक्राचार्य्य के समान नीतिज्ञ और अनुभवी हैं, संसार में आपको कोई हरा नहीं सकता इस लिए आप इस सेनाके प्रधान सेनापति बनें।

यह सुन कर भीष्म बोले हे महाबाहो! जैसे तुम चाहते हो वैसे होगा, परंतु मेरे लिए जैसे तुम प्यारे हो वैसे ही पांडव हैं, इस लिए मैं पांडुके पुत्रों का बध नहीं करूंगा। हां तेरे कल्याण के लिए उनके दस हज़ार वीरों को प्रतिदिन मारूंगा। इस तरह मैं उनका भीषण संहार करूंगा जब तक मैं उनके हाथ से मारा न जाऊंगा। दूसरे हे राजन् मैं इस शर्त पर लडूंगा, कि यदि मैं लडूं तो कर्ण न लड़े और यदि कर्ण युद्ध करे तो मैं न लडूंगा। तब कर्ण बोले हे पितामह! आप ही युद्ध करें, मैं जब तक आप मर नहीं जाते शस्त्र को हाथ नहीं लगाऊंगा आपके मरने पर मैं अर्जुन से युद्ध करूंगा, यह मेरी अटल प्रतिज्ञा है। इसके अनंतर दुर्य्योधन ने बड़ा दर्बार लगा कर भीष्म पितामह को प्रधान सेनापति का अभिषेक तिलक किया। बहुतसी दक्षिणादी। उस समय सैंकड़ों भेरियां और शंख बजाए गए। अभिषिक्त हुए हुए भीष्म जय ध्वनि से कैम्पसे बाहर निकले।

उस समय उनका मुख सूर्य्य के समान चमक रहा था।

हे जनमेजय! इस प्रकार दोनों ओर की सेनाएं लड़ने के लिए सुसज्जित हो गईं। पच्चीस कोस के मैदान में फैली हुई सेनाएं भूमंडल के शूरवीरों के दिल हिला रही थीं पूर्व में पांडव और पश्चिम में कौरव दल की सेनायें अपनी अपनी ध्वजाएं उड़ा रही थीं। हे राजन्! इससे पहले इतनी बड़ी सेनाएं संसार में कभी इकट्ठी नहीं हुई थीं। जब दोनों ओर पूरी तैय्यारी होगई तो दुर्य्योधन ने अपने मंत्री उलूक को एकान्त में बुला कर कहा कि हे उलूक! तुम कृष्ण के सामने जुआरिये पांडवों को जाकर मेरी ओर से यह संदेश दो कि हे युधिष्ठिर! हमने तुम्हारा राज्य छीना, बनवास दिया और द्रौपदी का अपमान किया, इन सारी बातों को याद करके हमसे यदि शक्ति है तो युद्ध करो कुरुक्षेत्र बड़ा साफ़ और बिना कीच के है, तेरे घोड़े बलवान हैं और कृष्ण तेरे साथहै, अब पुरुष बन और कलही रणभूमि में आकर भीष्म से युद्ध कर। हे निर्बुद्धि! यह संसार में सब से बड़े बलवान भीष्म कांबोज शक खश शल्य मतस्य म्लेच्छ पुलिंद द्रावड आंध्र और कांची के शूरवीरों को साथ लेकर तेरे और तेरी सेनाओं के मारने के लिए ललकार रहे हैं, घर में बैठकर अपनी प्रशंसा करना मूर्खों का काम है। हे उलूक अर्जुन को कहना कि तेरा सारथि कृष्ण है और तेरा गांडीव धनुष खजूर के समान लंबा है जिस पर तुझे भरोसा है, अब उसकी परीक्षाका समय आगया है, रे मूढ़ अभिमानी! मैंने

तेरह वर्षतक तेरा राज्य छीन रखा और तू बन२ में रोता रहा। तेरी स्त्री द्रौपदी का मैंने तेरे और तेरे बैलके समान मोटे भाई भीमसेन के सामने अपमान किया, परंतु तेरा गांडीव धनुष और उस की गदा मारे डर के बाहर न निकल सकी, हे अर्जुन ! अब समय है पिछली सब बातों का स्मरण करके कृष्ण के भरोसे मुझ से युद्ध कर और देख कि मेरे बाणों से एक कृष्ण क्या सहस्रों कृष्ण और सैंकड़ों अर्जुन गीदड़ों की भान्ति किस तरह भागते हैं ।

दुर्य्योधन की आज्ञा पाकर उलूक युधिष्ठिर के शिबिर में पहुंचा और श्रीकृष्ण के सामने पांडवों को उसका संदेशा कह सुनाया जिसे सुनकर अर्जुन को बड़ा क्रोध आया। उसने अपने विशाल मस्तक से पसीना पोंछा और चुप हो गए परंतु भीम इस अपमान को न सह सके वह प्रचंड क्रोध से उठे और दांत कटा२ कर हाथों को निपीड़ कर यह वचन बोले हे उलूक तुम उस नीच दुर्योधन से जाकर कहना कि तेरे सिर पर मृत्यु नाच रही है और तू काल की दाड़ों में फंसा हुआ है, सो तेरे कहनेके अनुसार कल युद्ध अवश्य होगा मैंने भी दुःशासन और तेरे बध की प्रतिज्ञा की हुई है सो वह अवश्य पूरी होगी इसमें तनिक भी संदेह नहीं। इसके अनन्तर अर्जुन बोले हे उलूक! दुर्योधन को कहना कि हे दुष्ट! तेरी गालियों का उत्तर कल रण भूमि में मेरा गांडीव धनुष देगा। तब युधिष्ठिर बोले हे उलूक ! दुर्योधन को जाकर कहना कि मैं तो कीड़ों को मारना भी पाप समझता

हूं, फिर भला भाइयों को कैसे मार सकता हूं यही विचार कर मैंने पांच गांव ही स्वीकार किये, परन्तु जब तुम ने इतना भी न माना तो मुझे शस्त्र उठाना पड़ा अब तुम्हारे अपने मुखसे अपनी बड़ाई शोभा नहीं देती, इस लिए कल आकर युद्ध कर और अपने पापों का फल भोग। उलूक महाराज युधिष्ठिर के वचन सुन कर दुर्योधन के पास पहुंचा और उसे युधिष्ठिर का उत्तर सुना दिया।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही दोनों ओर की सेनाएं युद्ध क्षेत्र की ओर बढ़ीं। लाखों मनुष्यों घोड़ों रथों और हाथियों के चलने से आकाश में धूल इतनी छा गई कि सूर्य्य छुप गया और दिन दिहाड़े अंधेरा छा गया। अवन्ति केकय और वाल्हीक नरेश अपनी २ सेनाओं के साथ दुर्योधन को आगे करके एक ओर से बढ़े। दूसरे दल में अश्वत्थामा को आगे करके जयद्रथ और शकुनि अपनी२सेना सहित आगे बढ़े। उनके पीछे दुर्योधन भूरिश्रवा शल्य और बृहद्रथ की सेनाओं सहित चला कौरवों की सेनाएं मिल कर बड़े सुन्दर क्रम से पश्चिम भाग में खड़ी हुई।इसके अनंतर भीष्म ने प्रत्येक सेना के मोरचे बनवाए जो कि बड़े ही दुर्भेद्य थे। उधर धर्मराज युधिष्ठिर भी अपने सेनापतियों सहित धृष्टद्युम्न को आगे करके क्षेत्र के पूर्व भाग में खड़े हुए। हे जनमेजय! इसप्रकार वह दोनों दल भारतवर्षके नाश करने वाले भयानक युद्ध के लिए आमने सामने खड़े हो गए।

इति उद्योगपर्व समाप्तः

अथ भीष्म पर्व

पहला अध्याय ।

वैशम्पायन जी बोले हे जनमेजय! जब चारों वेदों के जानने वाले श्री वेदव्यास जी ने कौरव पांडवों के महां युद्ध का समाचार सुना तो वह धृतराष्ट्र के पास आये। धृतराष्ट्र इस समय बड़े शोक में डूबे हुए थे। उनके अपने अन्याय से ही यह युद्ध छिड़ गया था, इस बात को जान कर वह बड़े व्याकुल थे। व्यास देवजी ने उनको इस अवस्था में देखा तो वह उन्हें एकान्त स्थान में ले जाकर बोले, हे धृतराष्ट्र! शोक और चिन्ता को छोड़ कर धीरज करो, जो कुछ होना होता है वह अवश्यमेव होकर रहता है, इस में मनुष्य की कोई गति नहीं, काल ही सब से बलवान है और वही सब कुछ कराता। हे राजन्! तुमारे पुत्र और भतीजे इस समय एक दूसरे का बध करने को आमने सामने खड़े हैं, हे पुत्र! इस महां युद्ध को यदि तुम देखना चाहो तो मैं तुम्हें दिव्य चक्षु दे सकता हूं, उस से युद्ध में होने वाली सब घटनाएं तुम देख सकोगे।

तब धृतराष्ट्र बोले हे दादा! यह सब मेरे ही बोए हुए बीजों का फल है, इस कारण मेरा मन दुःख के सागर में डूब रहा है। अब मुझे इस संसार में अधिक जीने की इच्छा नहीं है। हे दादा! पुत्रों और भतीजों को मरते हुए देख

कर मुझे और भी दुःख होगा, इस कारण मुझे दिव्य नेत्रों की इच्छा नहीं है, परन्तु इस युद्ध का सारा हाल सुना चाहता हूं! तब वेदव्यास जी ने धृतराष्ट्र के कथन से संजय को दिव्य नेत्र प्रदान किये और बोले हे बेटा! युद्ध का सम्पूर्ण वृत्तान्त संजय तुम से कहेगा। हर एक बात चाहे वह गुप्त हो या प्रगट, दिन में हो अथवा रात्रि में संजय को मालूम हो जाएगी। इस को अस्त्र शस्त्र व और किसी प्रकार से कोई मार न सकेगा और नां ही इसे कभी थकावट मालूम होगी। इस प्रकार धृतराष्ट्र को धीरज देकर भगवान् वेदव्यास जी चले गए।

दूसरे दिन रात के समय धृतराष्ट्र के पास जाकर संजय पहले दिन के युद्ध का सारा हाल इस प्रकार सुनाने लगे। संजय बोले हे धृतराष्ट्र अब सुनिये किस प्रकार आज आप के पुत्र और भतीजों ने युद्ध किया है। आज प्रातः काल ही कौरव और पांडवों के दल अपने २ शिविरों से युद्ध क्षेत्र में निकले। वहां पहुंच कर महापराक्रमी भीष्म सब राजाओं और सैनिकों के प्रति बोले हे क्षत्रियो! युद्ध भूमि में प्राण देना अथवा शत्रुओं को जीतकर संसार का राज्य करना, दो ही मार्ग क्षत्रियों के लिये हैं, इन्हीं मार्गों पर हमारे बड़े बूढ़े चलते आए हैं, आज वही समय आप के सामने उपस्थित है इस लिए प्राणों का भय और जीवन के मोह को त्याग कर मरने मारने के लिये तैय्यार हो जाओ। हे क्षत्रिय वीरो! क्षत्रिय के लिए लोहे से मरना पुण्य है

और घर में खाट पर पड़े २ रोग से मरना महां पाप है।

पितामह भीष्म के तेजस्वी मुख से निकले हुए इन वचनों ने सारी सेना का रंग बदल दिया और कर्ण को छोड़ कर शेष सब सैनिक और राजे महाराजे अपने २ शंखों को बजाते युद्ध क्षेत्र में फैल गए। हाथियों की चिंघाड़ घोड़ों की हिनहिनाहट, रथों के पहियों की कच कच और दुंदुभियों की ध्वनि कानों को फाड़ने लगीं योद्धाओं की गर्ज से दसों दिशाएं गूंजने लगी। धूल से आकाश भर गया। इसके अनन्तर भीष्म पितामह ने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना का बड़ा दुर्भेद्य मोर्चा बनाया जिस को तोड़ने की सामर्थ्य देव दानव और यक्षों में भी नहीं थी।

पितामह की इस भीषण सेना को मोर्चे में देखकर राजा युधिष्ठिर अर्जुन से बोले हे महाबाहो! भीष्म की इस सागर के समान प्रचण्ड सेना को देखकर हमें समझ लेना चाहिए कि युद्ध में पितामह को हराना लोहे के चने चबाना है। उन की सेना अधिक और हमारी थोड़ी है इस लिए ऐसी युक्ति से व्यूह रचो जिस से हमारी क्षति कम हो और शत्रु के पांओं उखाड़ दिए जाएं युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर अर्जुन ने बज्र व्यूह की रचना की जिस के मुख पर महा पराक्रमी उग्रकर्म और युद्ध में पीछे न हटने वाला भीमसेन दीवार की तरह खड़ा था। इस प्रकार दोनों सेनाएं दो सागरों के समान एक दूसरे के साथ टकराने के लिए मद मत्त हुई २ खड़ी हो गईं।

दूसरा अध्याय ।

अर्जुन का उदास होना ।

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! दोनों सेनाओं के सुसज्जित होकर खड़े हो जानेके पश्चात् सफेद घोड़ों वाले मणि जटित रथ पर सवार पांडवों के सेनापति अर्जुन अपने सारथि श्रीकृष्ण से बोले, हे कंसके मारने वाले ! हमारा रथ दोनों सेनाओं के बीच खड़ा करो। हमारे साथ युद्ध करने के लिये कौन कौन से योद्धा आए हैं, हमारा कौनसा योद्धा किसके साथ लड़ने के योग्य है, यह जानने की हमारी इच्छा है।

तब श्रीकृष्णने अपने सूर्य्य के समान चमकते हुए रथको दोनों सेनाआ के बीच में खड़ा कर दिया और कहाः—

हे धनञ्जय ! देखो, यह भीष्म द्रोण शल्य आदि ग्यारह अक्षौहिणी दल समेत खड़े हैं।

हे जनमेजय ! जब अर्जुन ने कौरव दलको देखा तो उसका हृदय करुणा से भर गया। उसने उदासीन होकर श्रीकृष्ण को कहा हे मधुसूदन ! लड़ने के लिए खड़े हुए इन सब अपने सम्बन्धियों को देखकर मेरे हाथ पांव ढीले पड़ रहे हैं मुख सूख रहा है और शरीर कांपता है और मेरा मस्तिष्क घूमने लगा है। हे कृष्ण ! जिन संबंधियों के लिए मुझे राज्य की इच्छा है, उन्हीं का बध करके राज्य मेरे किस काम आएगा। हे केशव ! अपने गुरु द्रोण और दादा जी जिन्हों ने पुत्रके समान हमें पाला है,

बध करके हम घोर नर्क में जाएंगे। इनको मार कर मैं न विजय चाहता हूं न राज्य लक्ष्मी। हे माधव! अपने नाने ताए चाचे साले ससुर भतीजे और पोत्रों को मार कर मैं अपनी कुल का क्षय किस तरह करूं मैं तो तीनों लोक और चौदह भुवन के राज्य के लिए भी इन्हें मारना नहीं चाहता फिर इस पृथ्वी के लिए क्या? हे चतुर शिरोमणि! यदि यह मेरा शीश धड़ से अलग कर दें तो फिर भी मैं प्रसन्न ही हूंगा क्योंकि अज्ञान के वश हुए हुए यह हमारे साथ युद्ध करने के लिए तुले हैं। हे नारायण! सम्बधियों और ज्ञातियों को मारने से लाखों स्त्रियां विधवा हो जाएंगी, उससे व्यभिचार फैलेगा और फिर संतान वर्ण शंकर उत्पन्न होगी जिससे सारी कुल नष्ट होगी हे केशव! ऐसे महां पाप को मैं किस प्रकार करूं इस लिए धृतराष्ट्र के पुत्र यदि हाथों में शस्त्र लेकर हमारा बध कर और मैं उनसे प्रतिकार न लूं तो भी हमारा कल्याण है। इतना कह कर अर्जुन नें धनुष को हाथ से रख दिया और आप मस्तक पर हाथ रख कर गहरी सोच में डूब गया।

तब उदास हुए २ अर्जुन को श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन ऐसे नाजुक समय में जब कि आर्य्यों का मुख तेज से लाल होना चाहिए तुम्हारे उतरे हुए चेहरे को देखकर मैं आश्चर्य्य से चकित हूं हे अर्जुन! तुम्हारा युद्ध से विमुख होना क्षत्रि धर्म के विरुद्ध नरक में लेजाने वाला और

संसार में अपयश देने वाला है, इस लिये हे पांडव ! कायरता को छोड कर युद्ध के लिये खड़े हो जाओ । हे अर्जुन जिनका शोक नहीं करना चाहिए उन्हीं के लिए शोक करके तुम विद्वान होकर मूढ़ों की सी बात करते हो । हे अर्जुन ! यह जीव न जन्मता है न मरता है, यह आत्मा नित्य है सनातन है और शरीर के नष्ट होने पर भी इसका नाश नहीं होता । हे पार्थ ! अनेक बार यह सब, तुम और हम एकट्ठे हुए और इसी प्रकार आगे भी होते रहेंगे । इस जीव का मरना केवल पुराने वस्त्र को त्याग कर नवीन वस्त्र धारण करना है । इस आत्मा को अग्नि जला नहीं सकती वायु सुखा नहीं सकती और जल गीला नहीं कर सकता हे अर्जुन ! यह सब अपने अपने कर्म दोष से पहले ही मरे हुए हैं तुम तो केवल निमित्त मात्र हो इस लिए तुम को इस में कुछ भी दोष नहीं है, हे भारत ! यदि तुम इस अविनाशी आत्मा को मरने वाला ही समझते हो तो भी तुम्हें इस मोह को दूर कर देना उचित है, क्योंकि जो जन्मा वह अवश्य मरेगा इस लिये इस अवश्य होने वाली बात का शोक कैसा ? हे अर्जुन ! तुम क्षत्रिय हो क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न हुए हो क्षत्रियों के लिए युद्ध में मरना मोक्ष देने वाला है । त्तत्रियों के लिए युद्ध स्वर्गका खुला द्वार है । इस समय यदि तुम युद्ध में मुख मोड़ेंगे तो संसार में तुम्हारी निंदा होगी, शत्रु तुम्हें कायर समझ कर तुम्हारी हंसी करेंगे । हे कुंती नंदन ! अपनी माता कुंती और

स्त्री द्रौपदी का अपमान याद करके इस कलंक को धो डाल। संसार में बड़े लोगों के लिए यश जीवन और अपयश मरना है। इस समय युद्ध मे हट कर अपने सम्बन्धियों की दृष्टि में तुम हल्के हो जाओगे। लोग तुम्हारे दया के विचार को न समझ कर उल्टा तुम पर नपुंसकता का दोष लगाएंगे, इसलिये हे अर्जुन ! या तो युद्ध में प्राण देकर स्वर्ग का राज्य भोगो या शत्रुओं को जीत कर इस पृथ्वी का राज्य प्राप्त करो इसमें तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा।

हे कौंतेय ! मामे साले भाई भतीजे गुरु और गुरु पुत्रों के झूठे मोह का त्याग करके तत्त्व को समझो। यह सब अपने अपने कर्मों करके मरने ही के लिए तेरे सामने खड़े हैं। इन को मारने वाला तो मैं हूं, सो पहले ही मार चुका हूं, तू तो केवल निमित्त मात्र है। हे अर्जुन ! यह सारा जगत् यज्ञ रूप है, जिस प्रकार यज्ञ में किया हुआ प्रत्येक कर्म परमात्मा को पहुंचता है, उसी प्रकार सारे संसार के कर्म मुझ से ही किये जाते हैं, जीव भ्रम से अपने आप को कर्त्ता मानता है। तूं मुझ को यज्ञ पुरुष समझ। मेरे संकल्प से ही यह युद्ध हो रहा है। हे अर्जुन जब जब संसार में अन्याय अत्याचार और अनर्थ होने लगते हैं धर्म कर्म और सच्चे मार्ग से हट कर लोग राक्षसी बुद्धि को धारण करते हैं तब तब ही मैं इस संसार में अवतार लेता हूं और राक्षसों अर्थात् दुष्टों का नाश करके धर्म की

रक्षा करता हूं और संसार को सन्मार्ग पर चलाता हूं। पूर्व काल में राम के रूप में मैंने ही रावणादि राक्षसों का बध किया था, नरसिंह रूप से हिरण्याक्षस आदि दैत्यों का भी मैंने ही संहार किया है, अब फिर वही समय आ गया है इसी कारण कंस और जरा सन्ध आदि बड़े बड़े राक्षसों का नाश करके कौरवों का बध करूंगा। हे अर्जुन! इनको मारने में तुमको कुछ भी पाप नहीं, क्योंकि ऐसा करते हुए तुम अपने क्षात्रधर्म को पूरा करते हो। हे किरीटि! यह संसार मुझसे ही रचा जाता है और मैं ही इस का नाश करता हूं। पृथिवी, जल, वायु, आकाश और अग्नि सब मेरे संकल्प से अपना अपना कार्य्य करते हैं। मेरे संकल्प के बिना सूर्य्य चन्द्रमा नक्षत्र मेघ वायु पृथिवी और सब देवता तथा मनुष्य और अन्य जीव जन्तु हिलने में भी असमर्थ हैं, क्या फिर मारने में हे अर्जुन! मैं विश्व रूप हूं विराट स्वरूप हूं सब स्थानों में व्यापक हूं और सर्व कर्मों का कर्त्ता हूं, इसलिये तू इन सब कुरुओं में अपनी ममता को छोड़कर युद्ध कर।

श्रीकृष्ण के वचन सुनकर अर्जुन बोले हे प्रभो! आप ने अपने वचनों से मेरे संशय को दूर कर दिया, परन्तु हे नाथ! जिस प्रकार आपने वचनों से मेरे अज्ञानरूप अन्धकार को दूर किया है, इसी प्रकार अपने विराट स्वरूप का दर्शन कराईये। तब श्रीकृष्ण बोले हे किरीटि! इन चर्म चक्षुओं से तू मेरे विराट रूप को न देख सकेगा इसलिये

मैं तुझे दिव्य नेत्र देता हूं। इतना कहकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिव्य नेत्र दिये और अपने विराट स्वरूप का दर्शन कराया।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! उस विराट रूप भगवान कृष्ण को देखकर अर्जुन के रोम खड़े होगये और वह हाथ जोड़कर बोले, हे देव देव! मै आपकी देह में अनंत रूप देखता हूं, और उस देह के अंश भी अनन्त ही देखता हूं। हे नाथ! अनन्त आपके सिर हैं और उन सिरों में अति सुन्दर मुकुट हैं, अनन्त ही हाथ देखता हूं और उसी प्रकार हाथों में शंख चक्र गदा देखता हूं हे नाथ! आपके प्रकाश से सारी दिशाएं चमक रही हैं, कैसा आप का रूप प्रबल अग्नि से भी बढ़ कर तेजोमय है, आपके शरीर में असंख्य सूर्य्य असंख्य चद्रमा और असंख्य ही भू मंडल देख रहा हूं। आप की अनन्त ही भुजाएं अनंत ही नेत्र और अनंत मुख हैं और उन मुखों में अग्नि जलती हुई देखता हूं। हे प्रभो! धरती से आकाश तक आपकी देह व्यापक देखता हूं। इस आपके अद्भुत भयानक रूपको देख कर तीनों लोक डरते हैं और कई कोटि देवता आपके मुखमें प्रवेश करते देखता हूं। कई कोटि देवता आपके सामने हाथ जोड़े कांपते देखता हूं। कई रुद्र कई ब्रह्मा और अनेक विष्णु देखता हूं अनंत प्रकार की सृष्टियां आपकी देह में देखता हूं। हे नाथ! आप आकाश को स्पर्श कर रहे हो, स्थान स्थान पर सूर्य्य

चमकते आपकी देह में दिखाई देते हैं। अनेक ही आपके रंग हैं, अनेक ही नेत्र हैं, जिनमें महा प्रलय की अग्नि के पर्वत जल रहे हैं। हे भगवान! आपके इस रूपको देख कर मैं डर गया हूं, अब बस करो प्रभो बस करो, आपके मुखमें बड़ी बड़ी दाढ़ों को देख कर जिनमें कौरव और पांडवों दोनों पक्षों के योद्धाओं के सिर लटके हुए हैं, मेरा कलेजा निकलने को है, अब बस करो भगवान बस करो, मैं इस रूपको और नहीं सहार सकता। इतना कह कर गिड़ गिड़ा कर अर्जुन उस विराट स्वरूप के चरणों में गिर पड़ा और मूर्छित हो गया। तब कुछ काल के पश्चात् अर्जुन को सुधि आई और उसने अपने सामने श्रीकृष्ण को उसी प्रकार सारथी के रूप में देखा, अपने आपको रथमें देखा, दोनों ओर कौरव पांडवों की सेनाको युद्ध के लिए तय्यार खड़े देखा तो वह आश्चर्य्य सागरमें डूब गया और बोला, हे नाथ! आपके विराट स्वरूप को देख कर मेरा मोह दूर होगया, हे प्रभो! मैंने जो आपको अपना सखा समझ कर अथवा संबंधी समझ कर कोई अनुचित शब्द कहा हो अथवा कोई अनुचित चेष्टा की हो उसे क्षमा करो, हे श्रीकृष्ण! अब मैं युद्ध के लिये तय्यार हूं।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! अर्जुन ने फिर गांडीव धनुष को उठाकर उसकी कर्ण भेदी टंकार की। तब अर्जुनको धनुष हाथ में लिए हुए देख कर पांडवों की सारी सेनामें सिंहनाद होने लगे। फिर पांडवों ने अपने अपने शंख

बजाए और दोनों दल एक दूसरे से लड़ने के लिए आगे बढ़े।

तीसरा अध्याय।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! जब दोनों सेनाएं पृथिवी को कंपायमान करती हुई एक दूसरे से भिड़ जानेके लिए आगे बढ़ीं, तो उसी समय धर्मपुत्र युधिष्ठिर अपना कवच उतार कर रथ से नीचे उतरे। उन्होंने अपने शस्त्र छोड़ दिये और हाथ जोड़ कर चुपचाप पांव प्यादा कौरवों की सेनाकी ओर मुख किये चलने लगे! उनको इस प्रकार शत्रुओं के मध्यमें जाते देख अर्जुन भीम नकुल तथा अन्य योद्धा लोग आश्चर्य्य चकित रह गये। अर्जुन उनके पीछे दौड़े और पास जाकर बोले हे राजन्! आप क्या करने लगे हैं जो शस्त्र छोड़कर पैदल शत्रु की सेना में में जा रहे हैं। हे धर्मराज! इस समय सेनाएं युद्ध के लिये तैय्यार खड़ी हुई हैं, आप शस्त्र छोड़कर शत्रु की सेना में किस अर्थ जा रहे हैं? संजय बोले हे धृतराष्ट्र! युधिष्ठिर ने अर्जुन की बात का कुछ उत्तर न दिया और वह उसी प्रकार आगे बढ़ने लगे। तब भीम नकुल सहदेव और कृष्ण भी उनके पीछे चले। भीम बोले हे अजात शत्रु! आप के इस तरह जाने से शत्रु आपकी हंसी करेंगे लोग आप को कायर समझेंगे और संसार में आपका अपयश होगा हे युधिष्ठिर! आप किस लिए इस प्रकार दीनता दिखलाते हैं। परन्तु भीम अर्जुन तथा अन्य योद्धाओं के

बारबार पूछने पर भी जब युधिष्ठिर ने कोई उत्तर न दिया तो श्रीकृष्ण सबको धीरज देते हुए बोले, आप किसी प्रकार की शंका न करें, युधिष्ठिर बड़े दूरदर्शी हैं, मैं उनके मनकी बात समझ गया हूं, हे अर्जुन ! युद्ध होने से पहले वह अपने गुरुओं और बड़ों से आज्ञा लेना चाहते हैं। उधर दुर्योधन के सैनिक लोग युधिष्ठिर को हाथ जोड़े शस्त्र छोड़ पैदल आता देख कर तरह तरह की बातें करने लगे, कोई कहता कि देखो अब यह कुल कलंक क्षमा मांगने आया है। कोई कहता युधिष्ठिर बड़ा कायर निकला, यदि इसने क्षमां मांगनी थी तो युद्धके लिए क्यों निकला था। कोई कहता इस अपयश देने वाले कर्म से तो मर जाना अच्छा था इसने क्षत्रिय कुलको कलंक लगा दिया। इस प्रकार जितने मुंह उतनी बातें होने लगीं। परन्तु वह धर्म पुत्र धीरभाव से शत्रु की सेना के अन्दर भाईयों सहित भीष्म पितामह के पास पहुंचे और उनके चरणों को छू कर हाथ जोड़ कर बोले, हे दादा ! अब युद्ध होगा इस में हमें आपसे लड़ना पड़ेगा, आप हमारे पूजनीय दादा हैं इस लिए क्षमा चाहता हूं और आपसे आज्ञा मांगता हूं। भीष्म बोले हे बेटा ! मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूं, युद्धमें मैं तुम्हारा कोई दोष नहीं देखता हूं तुम निर्दोष हो, इस लिए मनसे तुम्हारी विजय चाहता हूं और परमेश्वर से प्रार्थना करता हूं कि तुम्हारी कामना सिद्ध हो, हे पुत्र ! तुम्हारी धर्म पर श्रद्धा है तुम

कभी हार नहीं सकते । परन्तु बेटा मैंने दुर्योधन का अन्न खाया है इसलिए न चाहता हुआ भी तुमसे लडूंगा परन्तु संकटके समय सम्मति से तुम्हें सहायता दूंगा। तब भीष्मको प्रणाम करके वह द्रोणाचार्य्य के पास गये और उसी प्रकार हाथ जोड़ कर बोले हे गुरो! गुरु के साथ लड़ना पाप है परन्तु बहुत यत्न करने पर भी युद्ध ठन गया है इसलिए आपसे क्षमा मांग कर युद्ध की अनुमति मांगता हूं । द्रोणाचार्य्य बोले हे राजन्! तुम्हारी गुरु भक्ति पर हम प्रसन्न हुए तुम युद्धसे पहले हमारे पास आये हो, यह बहुत अच्छा किया, यदि तुम न आते तो हम अवश्य क्रोध करते परन्तु हम तुम्हें आशीर्वाद देते हैं कि तुम्हारी जय हो । हे राजन्! तुम सत्य के पक्ष में हो परन्तु पुरुष अर्थका दास है अर्थ पुरुष का दास नहीं, हम दुर्योधन का अर्थ भोगते हैं इसलिए लड़ने के लिए विवश हैं । इसके अनंतर महामति युधिष्ठिर कृपाचार्य्य के पास पहुंचे और उसी प्रकार हाथ जोड़ कर युद्ध की अनुमति मांगी । तब कृपाचार्य्य बोले हे राजन्! जिधर धर्म उधर कृष्ण हैं और जिधर कृष्ण हैं उधर जय होगी इस में सन्देह न करो, हम तुम्हें जय की आशीर्वाद देते हैं जाओ अब युद्ध करो ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! इसके अनंतर श्रीकृष्ण ने कर्णको अपनी ओर मिलाने का एक बार फिर प्रयत्न किया। वह सीधे कर्ण के पास पहुंच कर बोले हे महाबाहु कर्ण! हमने सुना है कि तुम भीष्म के जीते जी न लड़ोगे ऐसी

तुमने प्रतिज्ञा की है, सो हे वीर शिरोमणि! जब तक भीष्म जीते हैं तुम पांडवों की ओर से युद्ध करो और भीष्म से किये गये अपमान का बदला चुकाओ, उनके मर जाने पर तुम फिर कौरवों की ओर से युद्ध करना। तब कर्ण हंस कर बोले हे कृष्ण! दुर्य्योधन के विरुद्ध हम कुछ नहीं कर सकते, हमने दुर्य्योधन को युद्ध में विजय दिलाने का बीड़ा उठाया है इस लिये हम तुम्हारी बात नहीं मान सकते। जब कर्ण से मिल कर श्रीकृष्ण वापस आए तो युधिष्ठिर ने दोनों सेनाओं में खड़े होकर ललकार कर कहा कि इस समय जो हमारे पक्ष में मिलना चाहे वह निर्भय होकर हमारे पास आ सकता है। तब हे धृतराष्ट्र! आपकी वेश्या का पुत्र युयुत्सु दुर्य्योधन की सेना से निकल कर युधिष्ठिर के निकट आया और बोला हे राजन्! यदि आप हमें स्वीकार करें तो हम आपके लिए कौरव सेनासे लड़ेंगे। तब युधिष्ठिर प्रसन्न हो कर बोले हे युयुत्सु! आओ, आओ, निर्भय होकर आओ, हम तुमको स्वीकार करते हैं। इसके अनंतर युयुत्सु अपनी सेना सहित दुर्य्योधन के पक्ष से निकल कर सब के सामने पांडव दलमें आ मिला। उसे देख कर हे धृतराष्ट्र! पांडवों की सेना में हर्ष की ध्वनि उठी, सिंहनाद बजाए गये और आपकी सेना के हृदय पर इसका शोक मय प्रभाव पड़ा। तब युधिष्ठिर ने अपना सूर्य्य के समान चमकता हुआ कवच पहना और रथ पर बैठ कर युद्ध घोषणा के लिए शंख बजाया। फिर सेना उसी

प्रकार व्यूह में खड़ी होगई, और दुर्योधन की सेना पर प्रलयकाल की आंधी के समान टूट पड़ी।

चौथा अध्याय।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! जब दोनों दल सुसज्जित हो कर खड़े हो गये तो दुर्योधन की आज्ञा से उसकी सेनाएं पांडवों पर इस प्रकार टूट पड़ी जैसे बाज कबूतरों के झुंड पर। उधर युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर पांडवों के वीर गर्जते हुए कौरवों पर टूट पड़े। एक दूसरे को बध करने के लिए उनकी भयंकर गर्जना से आकाश गूंजने लगा। क्षण मात्र में कुरुक्षेत्र का मैदान तूफान आये हुए समुद्र के समान हो गया। पहला एक प्रहर बड़ी भयंकर मार काट में व्यतीत हुआ फिर दूसरे प्रहर घमसान मच गई। दोनों ओरके योद्धा प्रचण्ड युद्ध करने लगे कोई किसी को न पहचानता था। चाचा भतीजे को मामा भाञ्जे को साला बहनोई को और ससुर दामाद को मारने लगा। रथी रथियों पर टूट पड़े और पर्वताकार बड़े बड़े डील बाले हाथी हाथियों से टकरा टकरा कर क्रोध से एक दूसरे को फाड़ने लगे। बर्छे भाले और बाणों से बिंधे हुए हाथी शोर करते हुए इस तरह भूमि पर गिरने लगे जैसे प्रलय कालमें भूकंप होने पर मकान गिरते हैं। सैंकड़ों मनुष्यों को काट कर लहु में नहाई हुई तलवारें आकाश में चमकने लगीं इस तरह बहुत से वीर उस भयानक युद्ध में पृथ्वी पर सदाके लिए लेट गये। धृतराष्ट्र! अपनी सेना के बहुत से वीरोंको

मरे हुए देखकर भीष्म अपने तीक्ष्ण बाणों से पांडवों के सैनिकों का बध करने लगे। उनके बाण की तीक्ष्ण नोक सर्प की जिह्वा के समान जिसके शरीर को लगती थी वहीं मार कर ढेर कर देती थी। तब भीष्म के हाथ से अपनी सेना को पीड़ित होते देखकर अर्जुन का परम प्रतापी पुत्र भीष्म के सामने आया। अग्नि के समान तेजस्वी अभिमन्यु ने आते ही भीष्म की विशाल ध्वजा को काटकर नीचे गिरा दिया और फिर भीष्म और उसके अनुरथियों शल्य कृपाचार्य्य कृतवर्मा आदिक पर बाणों की वर्षा करने लगा। उस वीर राजकुमार ने एक तीक्ष्ण भाले से पितामह के सारथी का सिर काट दिया और भीष्म को नौं बाण मारकर उसका वज्र के समान दृढ़ कवच फोड़ दिया जिससे पीड़ित होकर वह व्याकुल हो उठा। हे राजन्! आपके पुत्र की महान सेना को अस्तव्यस्त करता हुआ अभिमन्यु उस समय ऐसा शोभायमान होने लगा जैसे हाथियों के यूथ में सिंह। उस समय सब महां रथियों ने उसको अर्जुन के तुल्य पराक्रमी देखा उसका फुर्ति से चलता हुआ धनुष बिजली के समान चमकता था और गांडीव की नाईं टंकार करता था हे राजन्! उस समय पांडवों ने अभिमन्यु की जयध्वनि की और हर्ष से अपने अपने शंख बजाये। तब भीष्म ने उसके निकट पहुंच कर दस बाणों से उसको बींध डाला और उसकी ध्वजा को काट गिराया चार बाण उसके सारथी

को मारे। दूसरी ओर शल्य कृप और कृतवर्मा उसको घेर कर बाण बर्साने लगे परन्तु वह बीर मैनाक पर्वत के समान अपने स्थान से इधर उधर न हुआ, और चारों ओर बाण छोड़ने लगा। उस समय भीष्म उसके पराक्रम की सराहना करने लगे, तब अभिमन्यु ने एक तीक्ष्ण बाण से पितामह के धनुष को काट डाला, जिसे देखकर पांडवों ने हर्षनाद किया। तब महाबलि भीष्म ने अपने दिव्य अस्त्रों का प्रयोग किया और असंख्य बाणों से उस अनथक राजकुमार को ऐसे ढांप दिया जैसे पृथिवी को मेघ। यह देखकर पांडवों के दस महारथी वीर अभिमन्यु की सहायता के लिये उस के पास पहुंच गये। उन्हें भीष्म की ओर झपटते देखकर मद्रराज शल्य ने विराट के पुत्र उत्तर के हाथी पर तीक्ष्ण बाण छोड़े, बाणों की पीड़ा से व्याकुल हुए हुए हाथी ने शल्य की रथ के चारों घोड़ों को पांओं के तले दबाकर पीस डाला। तब शल्य ने रथ से उतर कर उत्तर को सांप के समान विषैली लोहे की बर्छी मारी जो उस के स्वर्ण कवच को फोड़ कर छाती में धंस गई और वह धम से पृथिवी पर गिर पड़ा और मर गया अपने भाई उत्तर को मरा देखकर विराट का दूसरा पुत्र श्वेत क्रोध की अग्नि में जलने लगा। वह अपनी बहुतसी सेना लेकर शल्य पर बाणों की वृष्टि करने लगा। शल्य को मृत्यु के मुख में आये देख जयद्रथ समेत सात महारथी उसकी रक्षा के निमित्त आगये और बादलों के समान उस

पर बाण वृष्टि करने लगे तब मतवाले हाथी के समान चारों ओर घूम घूम कर वह सातों महारथियों की सेना को लताड़ने लगा जिससे व्याकुल होकर सैनिक इधर उधर भागने लगे। अपने सैनिकों को भागते देखकर भीष्म श्वेत की ओर दौड़े। हे धृतराष्ट्र! महापराक्रमी छत्रधारी भीष्म को आता देख पांडवों की सेना इस तरह कांपने लगी जैसे जल की तरगों से नौका। भीष्म के हाथ से श्वेत को बचाने के लिए अर्जुन रास्ते ही में उन से भिड़ गया। उधर शल्य ने श्वेत के चारों घोड़ों को तलवार से मार डाला। श्वेत अपनी प्राणरक्षा के लिए दौड़ कर अर्जुन के रथ पर जा बैठा। हे राजा! अर्जुन को सामने देखकर भीष्म ने इतनी जल्दी बाण छोड़ने आरम्भ किये मानों आकाश पर लाखों चीलें और कौए उड़ रहे हों। उन के बाणों से पांचाल केकय मत्स्य और प्रभद्रक वीरों के सिर इस तरह कटने लगे जैसे दात्री से घास। इसके पश्चात भीष्म ने अर्जुन से हट कर द्रुपद पर आक्रमण किया। पितामह के बाणों से पांचाल सेना के वीर इस तरह जलने लगे जैसे अग्नि से लकड़ियां। हे राजन्! दोपहर के सूर्य्य के समान प्रचंड तेज वाले भीष्म के सामने पांडवों की आंखें न उठती थीं। उनके सैनिकों के सिर कट कर ओलों की तरह भूमि पर बिछ गये। बहुत से इधर उधर भाग गये और बहुत से अपनी अपनी रक्षा के निमित जान बूझ कर मृतक के समान लेट गये।

तब भीष्म महारथियों का नाम ले लेकर ललकारने लगे। हे राजन्! उनके तेज विष में बुझे हुए बाणों ने हाहाकार मचा दिया, पांडवों की सेना चारों ओर अस्त व्यस्त हो कर भागने लगी। उस समय भगवान ने पांडवों की सहायता की अर्थात् सूर्य्य अस्त हो गया और उन्होंने वापसी का शंख बजा कर अपनी सेना को हटा लिया।

दूसरा दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! पहले दिन युद्ध में पांडवों की भारी हानि हुई तो युधिष्ठिर ने रात्रि के समय अर्जुन भीम नकुल सहदेव धृष्टद्युम्न द्रुपद सात्यकी तथा अन्य महारथियों को बुला कर दर्बार लगाया। जब सब योद्धा अपने अपने आसनों पर बैठ गये तो महाराज युधिष्ठिर कृष्ण से बोले हे नीति चतुर! यदि भीष्म आज के समान ही प्रति दिन हमारी सेना का नाश करते रहे तो हमारे सर्वनाश में कुछ भी संशय नहीं है। हे यादवकुल अवतंस महांपराक्रमी भीष्म ने अकेले ही हमारी सेना को आज इस तरह खदेड़ा है जैसे चरवाहा गौओं को। यदि उन के साथ मिल कर दुर्य्योधनादि महारथि कल हम पर आक्रमण करेंगे तो फिर उनकी सफलता और हमारी पराजय अवश्य होगी, अब तुम कोई ऐसा उपाय निकालो जिससे शीघ्र ही युद्ध का रंग बदले। देखो दुर्य्योधन के शिविर से इस समय भी हर्ष सूचक नाद उठ रहे हैं और हमारी सेना शोक में चुपचाप बैठी है।

युधिष्ठिर का वचन सुन कर श्रीकृष्ण बोले हे युधिष्ठिर ! आप शोक न करें, आपके भाई सात्यकी, द्रुपद और मैं जिस पक्षमें होंगे उसे देवता भी नहीं हरा सकते फिर क्या भीष्म? यह महाबलि धृष्टद्युम्न जिसके सेनापति हों विजय उनके पांओं चूमती है। तब धृष्टद्युम्न सबका साहस बढ़ाते हुए बोले हे राजन्! कल युद्धमें मैं भीष्म शल्य शकुनि और दुर्योधन आदि महारथियों के दांत तोड़ूंगा इसके लिए मैं क्रौञ्चारण व्यूहको रचूंगा, जिसके मुख पर अर्जन होंगे। जिसे देवताओं के अतिरिक्त कोई मनुष्य नहीं जानता।

हे धृतराष्ट्र! दूसरे दिन धृष्टद्युम्नने क्रौञ्चारण नामक व्यूह रच कर अपनी सेनाओं को खड़ा किया। उस व्यूह को देखकर दुर्योधन सब राजाओं को उत्साह देते हुए बोले हे महारथियो! आप सब अकेले अकेले पांडु पुत्रों को रणमें मार सकते हो, आपकी कलकी वीरता ने पांडवों के पांओं उखाड़ दिये हैं, परन्तु आज फिर वह सब मूर्ख कृष्णके प्रेरे हुए युद्ध क्षेत्रमें खड़े हैं इसलिए आप सब आज भीष्म की रक्षा करें और कल की तरह आज फिर इनको क्षत्रियों के भुज बल का परिचय दें। इसके अनंतर भीष्म ने पांडवों को मारने के लिए बड़ा दुर्भेद्य व्यूह रचा और भयंकर युद्ध होने लगा दोनों ओर के लाखों हाथी घोड़े और रथ लड़ते लड़ते ऐसे मिल गये कि किसी को वहां से निकलने का रास्ता न था। श्वेत

घोड़ों और श्वेत छत्र वाले पितामह भीष्म सूर्य्यके समान रथ में बैठे अपने बाण रूप प्रचण्ड किरणों से अभिमन्यु सात्यकी विराट केकय भीम की सेनाओं को घास की तरह जलाने लगे। तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण को कहा हे रिपुदमन्! यह देखो भीष्म हमारी सेना को बाणोंसे पीड़ित कर रहा है, आप मेरे रथको शीघ्र भीष्म के सन्मुख ले चलो। श्रीकृष्ण ने घोड़ों का मुख भीष्म की ओर करके कहा हे अर्जुन! संभल जाओ मैं रथको पितामह के सामने लेजा रहा हूं। इतना कह कर उन्होंने रथको भीष्म के सामने खड़ा कर दिया। तब एक ओर से महाबलि भीष्म और दूसरी ओर से देवताओं से भी न जीते जाने वाले अर्जुन बाण समूह छोड़ने लगे। दोनों के घोड़े श्वेत थे, दोनों के छत्र श्वेत थे और दोनों ही चमकते हुए रथ पर बैठे एक दूसरे से टकराते हुए ऐसे प्रतीत होते थे मानों प्रलय करने के लिए दो बड़े नक्षत्रों की टक्करें हो रही हैं। तब अर्जुन कौरव दलको अपने बाणों से ऐसे काटने लगे जैसे किसान गाजरोंका खेत काटता है। दुर्योधन अपनी सेनाका नाश होते देखकर भीष्म के पास जा कर बोला हे दादा! देखिये किस तरह अर्जुन हमारे वीरोंको धर्ती पर सुला रहा है परन्तु आप अपने पराक्रम से उसको नहीं मारते। हे पितामह! तुम्हारे कारण कर्ण भी मेरे पास नहीं है जो आज अर्जुन का बध कर देता इस लिए ऐसा युद्ध करो जिससे अर्जुन मारा जाए।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! दुर्योधन का व्यंग भरा वचन सुनकर भीष्म क्रोध से क्षात्र धर्म को धिक्कार है कहते हुए सांपों की सी जिह्वा वाले बाण अर्जुन पर छोड़ने लगे। उधर अर्जुन भी लाल नेत्र करके पितामह के छोड़े हुए बाण रास्ते ही में काट काट कर गिराने लगे। उनका रोमाञ्चकारी युद्ध देखकर दोनों ओर के सेनाध्यक्ष अपनी अपनी सेनाएं लेकर भीष्म और अर्जुन की रक्षाके लिए खड़े हो गए। उस समय हे धृतराष्ट्र ! एक ही क्षणमें लाखों बाण इधरसे उधर और उधरसे इधर वायु मंडल में उड़ते थे। वह दोनों महावीर कभी बाण समूह में छिप जाते और कभी प्रगट होते थे। इधर द्रोणाचार्य्य अपने तीक्ष्ण शरजालसे धृष्टद्युम्न को बींधने लगे। उस समय हे राजन् ! धृष्टद्युम्नने अकथनीय पराक्रम दिखलाया उस पर द्रोणाचार्य की सेनाने दोनों ओर से घेर कर बाणों की तीव्र वृष्टि की परन्तु पर्वतके समान वह बीर अपने स्थान से न हिला और शत्रुओं के बाणों को रास्ते ही में काट काट कर उन पर बाण छोड़ने लगा इसके पश्चात् उसने द्रोणाचार्य्य पर बड़े वेग वाली स्वर्ण की बर्छी चलाई। उस चमकती हुई बर्छी को अपनी ओर आते देखकर द्रोणाचार्य्य ने उसको रास्ते में ही तीन टुकड़े करके गिरा दिया। अपनी बर्छी को टुकड़े टुकड़े हुई देखकर पराक्रमी धृष्टद्युम्नने फिर आचार्य्य पर बाणों की घोर वृष्टि आरम्भ कर दी। तब द्रोणने बड़े वेगसे उसके बाणों को

काट कर एक बाणसे उसके धनुषको काट डाला और दो दो बाणों से उसके सारथि और घोड़ों को मार दिया।

तब धृष्टद्युम्न बड़े पराक्रमसे रथ पर से कूद कर गदा हाथ में लिए आचार्य्य की ओर दौड़ा परन्तु आचार्य्यने वेगसे आते हुए उसकी गदा को बाणों से खण्ड खण्ड कर दिया। इसके अनंतर धृष्टद्युम्न सौचन्द्र वाली एक ढाल और बिजली की नांईं चमकती हुई तलवार हाथ में लेकर गर्जता हुआ आचार्य्यके मारने को दौड़ा, परन्तु आचार्य्यने इस फुर्ती से उस पर बाण फेंकने आरम्भ किये कि संसार में माना हुआ बलवान योद्धा धृष्टद्युम्न वहीं का वहीं रुक गया और एक पग भी आगे न बढ़ सका और वहीं खड़ा होकर आचार्य्य की बाण-वृष्टि सहन करने लगा। धृष्टद्युम्नको बे तरह फंसा देखकर शीघ्रतासे भीमसेन उसकी सहायता के लिए वहां पहुंच गए और आचार्य्यको बाणों से ढक कर धृष्टद्युम्नको अपने रथ पर चढ़ा लिया। तब भीम सेनको देखकर आचार्य्यकी रक्षा के लिए कलिंगों की दुर्जय सेना आगे बढ़ी और भीमसेन पर चारों ओर से बाण बर्साने लगी कलिंगों और और आचार्य्यको मिलकर लड़ते देखकर महाराज विराट और द्रुपद उन पर टूट पड़े तब धृष्टद्युम्न तो युधिष्ठिर के पास चले गए और आचार्य्य विराट और द्रुपद युद्ध करने लगे! भीमसेन इस समय विकाल रूप धारण किये कलिंगोंको भयानक मार से मारने लगे। कलिंगों की भारी

सेना भी भीम के साथियों को मार मार कर पृथ्वी पर सुलाने लगी। इस भयानक युद्ध में कलिंग राज ने भीम के चारों घोड़ों को मार गिराया और बाणों की तीक्ष्ण वृष्टि करते हुए उस पर दौड़े। यह देख कर भीम ने एक भयानक गदा चलाई, जिस ने कलिंग राज के पुत्र और सारथि दोनों को मार कर भूमि पर गिरा दिया। अपने पुत्र को मरा हुआ देख कर कलिंग राज सर्प की तरह फुंकारे मारने लगा और क्रोध से हजारों रथों द्वारा भीम को चारों ओर से घेर लिया। उस समय भीमसेन रथ से कूद कर तलवार घुमाते हुए कलिंगराज के हाथी के पास जा पहुंचे और हाथी के दांतों को पकड़ कर और उछल कर कलिंगराज के हौदे पर चढ़ बैठे। तब हौदे में दोनों योद्धा लड़ने लगे अंत में भीम ने अपनी तलवार से उस का सिर काट डाला। फिर उसी तलवार के एक भरपूर हाथ से हाथी की गर्दन को धड़ से अलग कर दिया। वह टीले के समान ऊंचा हाथी चिंघाड़ मार कर पृथ्वी पर गिरा। भीमसेन हाथी से कूद कर भूमि पर आए और चारों ओर तलवार घुमाने लगे। उस समय कलिंगों की सेना में भीमसेन साक्षात यम के समान दिखाई देते थे। कभी हाथी कभी घोड़े कभी रथ और कभी प्यादों को मारते सिर से पैर तक लहु में नहाये हुए भीम आगे की तरह चक्र बांध रहे थे। उनकी तलवार से कट कट कर चिंघाड़े मारते हुए हाथी इस प्रकार गिर रहे थे जैसे भयंकर भुचाल

से मकान और आंधी से वृक्ष। हे धृतराष्ट्र! उस समय युद्ध भूमि में बड़ा भयानक दृष्य था, जहां तहां भाले तलवारें गदा तोमर रत्नों से जड़े हुए मुकुट घोड़ों की लगामें ढालें और मनुष्यों के कुंडलों वाले सिर कवचों वाले धड़ मनुष्यों जानवरों के कटे हुए अंग पड़े हुए दिखाई देते थे। रक्त की नदी बह रही थी। भीमसेन को ऐसा भयानक मार करते देख कर कालिंगों ने उस को चारों ओर से शर-वर्षा से पीड़ित करना आरंभ किया तब क्रुद्ध हो कर भीम ने अपनी गदा को कंधे पर रखा और ज़ोर से शंख बजाया। उस गदा से वह पवन पुत्र हनुमान के समान चारों ओर वीरों के सिर चूर्ण करने लगे परन्तु भीषण मार खाती हुई भी कलिंग सेना समुद्र की लहर समान उस के निकट आ पहुंची जिसे हटाते हटाते भीम घबरा गए। इसी समय शंख की ध्वनि सुन कर महारथि सात्यकी भीम की सहायता के लिए आ पहुंचे। अब कलिंगों की सेना को अंदर से महाबलि भीम और बाहर से पराक्रमी सात्यकी मारने लगे। दोनों ओर से प्रचण्ड मार को न सहते हुए कलिंग वीरों के पाओं उखड़ने लगे। उस समय रण भूमि में बड़ा कोलाहल मच गया। भीष्म पितामह ने कलिंगों की यह दुर्दशा देखी तो अर्जुन से हट कर शीघ्र भीमसेन पर चढ़ दौड़े। उधर धृष्टद्युम्न युधिष्ठिर का साथ छोड़ कर भीष्म के मुकाबले पर आ डटे। हे धृतराष्ट्र! सात्यकी भीम और धृष्टद्युम्न

तीनों पर पितामह तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगे। उन्हों ने भीम को बाणों से छलनी कर दिया, परन्तु वज्र के समान देह वाला भीम उन बाणों से इतना भी न घबराया जितना कि एक बालक वर्षा की बूंदों से। उस महां विक्रमी ने भीष्म की ओर एक लोहे की शक्ति चलाई जिसको पितामह ने रास्ते ही में काट गिराया। तब भीम वायु के समान वेग से दौड़ता हुआ पितामह के रथ पर टूट पड़ा। उधर महारथि सात्यकी ने तेज बाणों से पितामह के सारथि को मार डाला। सारथि के मरते ही भीष्म की रथ के घोड़े चमक उठे और रथ को युद्ध क्षेत्र से बाहर ले उड़े। भीष्म के चले जाने पर भीम आंधी के वेग से कौरवों का नाश करने लगे। उसी समय धृष्टद्युम्न उन को अपने रथ पर बैठा कर घेरे से निकाल कर ले गये।

पांचवां अध्याय।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! भीष्म पितामह के रण-भूमि से निकल जाने पर धृष्टद्युम्न कौरव सेना को इस प्रकार तहस नहस करने लगे जैसे मतवाला हाथी जंगल के पौदों को करता है। यह देख कर द्रोणाचार्य्य के पुत्र परम पराक्रमी अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न को ललकारते हुए उनके सन्मुख आए। तब अर्जुन के पुत्र वीर अभिमन्यु अश्वत्थामा के साथ लड़ने के लिए धृष्टद्युम्न के बाईं ओर खड़े हुए। उसे देख कर हे राजन्! तेरा पोता लक्ष्मण अभिमन्यु के साथ युद्ध में प्रवृत्त हुआ। लक्ष्मण ने अपने तीक्ष्ण बाणों से

अभिमन्यु को बींध दिया, इस पर पिता के समान परा-
क्रमी अभिमन्यु ने लक्ष्मण को पचीस बाणों से घायल कर
दिया। परन्तु मैनाक की भान्ति वह बालक लक्ष्मण अपने
स्थान से तनिक भी न हिला और एक अर्ध चंद्र के आ-
कार वाले बाण से अभिमन्यु के धनुष को काट डाला।
इस पर कौरव सेना ने प्रसन्न हो कर लक्ष्मण का जयजय
कार किया। तब बड़े रोष से अभिमन्यु ने दूसरे धनुष
को हाथ में लिया और बाणों की वृष्टि से लक्ष्मण को
अत्यंत पीड़ित कर दिया! अपने पुत्र को व्याकुल देख
कर दुर्य्योधन उसकी सहायता के लिए पहुंचा। उसे देख
कर दुर्य्योधन के सभी साथी राजाओं ने चारों ओर से
अभिमन्यु को घेर लिया। परन्तु वह वीर बालक विच-
लित न हुआ और चारों ओर इस प्रकार घूम घूम कर
चमकने लगा जैसे बिजली बादलों में चमकती है। अभि-
मन्यु को शत्रुओं में घिरा हुआ देख कर अग्नि के समान
देदीप्यमान अर्जुन वहां आ पहुंचे और कौरवों के
दलों को तीक्ष्ण शर प्रताप से इस प्रकार जलाने लगे
जैसे दावानल अग्नि बन को जलाती है। हे धृतराष्ट्र!
उस समय धृष्टद्युम्न अश्वत्थामा से, अभिमन्यु लक्ष्मण
से और अर्जुन दुर्य्योधन के साथ एक ही समय में
जुटे हुए थे। सब को अपनी अपनी पड़ी थी और कोई
किसी की सहायता न कर सकता था। उस समय अर्जुन
बाणों की घोर वृष्टि से कौरव दल को बुरी तरह नाश करने

लगे। उनके रुद्र स्वरूप के सामने ठहरने की किसी को भी शक्ति न थी। एक ही क्षण मे वह इतने बाण छोड़ते थे कि कौरव वीरों के सिर धड़ भुजा जंघा किरीट मुकुट भाले ढालें खड्ग और हाथी घोड़े ओलों के समान टप टप करते हुए गिरने लगे। सारा युद्ध क्षेत्र छत्रों ढालों झण्डों और मनुष्यों के शरीरों से पट गया। किसी वीर को अर्जुन के सामने जाने का साहस न था। हे राजन्! कौरव दल की अवस्था उस समय बड़ी शोचनीय थी। आपके वीर सैनिक अर्जुन को देखकर इस प्रकार लड़खड़ाते और कांपते थे, जैसे सिंह को देखकर बकरियों के झुण्ड। क्रुद्ध हुए सिंह के समान अर्जुन जिसको सामने पाता निर्दयता से फाड़ डालता। तब मारे भय के करुणा क्रन्दन करते हुए कौरवों के सैनिक चारों ओर भाग निकले। उस समय सूर्य्य अस्त होने में थोड़ा ही समय शेष था। परंतु दुर्योधन ने बेबस होकर संग्राम को बन्द करने के लिए शंख बजा दिया। तब अर्जुन ने देवदत्त को और श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख को बजाया। और दोनों सेनाएं एक दूसरे से हटकर अपने अपने शिविर को वापस चली गईं।

युद्ध का तीसरा दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! रात के होने पर आपकी सेनाओं में बड़ा भय और निराशा छाई हुई थी परन्तु युधिष्ठिर के शिविर में शंख ढोल और नरसिंहों का शब्द उठ रहा था। पांडवों के सैनिक रंग रलियां मना रहे थे।

और इस प्रकार एक ओर हर्ष और दूसरे पक्ष में शोक की रात्रि व्यतीत हुई। प्रातःकाल हुआ तो भीष्म पितामह ने अपनी सेनाओं को युद्ध क्षेत्र में गरुड़ व्यूह बनाकर खड़ा किया जो कि बड़ा ही दुर्भेद्य था। उधर अर्जुन ने धृष्ट-द्युम्न के साथ विचार करके अर्धचन्द्र नामक अति भयानक व्यूह रचा। इसके अनंतर दोनों ओर के महारथियों ने शंख बजाये और दोनों दल बड़े धक्के से एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। हे राजन्! उस पहली मुठभेड़ ही में ऐसा भीषण युद्ध होने लगा कि एक को दूसरे की पहचान न रही, धूल से आकाश भर गया। ऊंचे ऊंचे झण्डों को देखकर ही सैनिक लोग अपने और परायों को पहचानते थे। तीन घण्टे तक भीषण हत्या काण्ड हुआ, उस समय लहु की नहर चलने लगी और उस में डूबे हुए शरीर मगर मच्छों की न्याईं बहने लगे। परन्तु इतने होने पर भी न कौरव पांडवों का व्यूह तोड़ सके, और नांही पांडव कौरव का व्यूह तोड़कर आगे बढ़ने में समर्थ हुए। तब कौरव पक्षके सारे राजे अर्जुन को देखकर क्रोध से दांत पीसते हुए एक बार ही उस पर टूट पड़े। तब महाबीर ने स्वर्ण भूषित बारगी से उन सब राजाओं को ढक दिया। उधर शकुनि अपनी प्रबल गांधार सेनाको लेकर अभिमन्यु और सात्यकी के साथ युद्ध करने लगे। स्वयं महाराज युधिष्ठिर नकुल और सहदेव को साथ लेकर द्रोणाचार्य्य के साथ युद्ध करने

लगे। एक ओर वृकोदर भीमसेन और उसका पुत्र है-डम्बेय घटोत्कच दोनों दुर्योधन पर टूट पड़े। उस घटोत्कच ने अद्भुत पराक्रम दिखाया। दुर्योधन अपनी न हारने वाली सेना के साथ बादल के समान गर्जता हुआ बाणों की वृष्टि करने लगा तब भीमसेन ने क्रोध से दुर्योधन की छाती में एक तीक्ष्ण बाण मारा जो उसके कवच को बींधकर छाती में धस गया। उस बाणसे पीड़ित हो दुर्योधन मूर्छित होकर रथकी बैठक पर गिर पड़ा। दुर्योधनको मूर्छा गत देखकर उसका सारथि तुरन्तही रथको रण भूमि से बाहर लेगया। उसे भागते देख सारी कौरव सेना भागने लगी तब हे राजन्! महाकाल के सदृश्य भीमसेन आपकी सेना का घोर विनाश करने लगे और महा विकट संग्राम भूमि को पार करते दुर्योधन के पीछे दौड़े। परन्तु भीमसेन के निकट पहुंचने से पहले ही दुर्योधन को सुधि आगई। उस ने अपनी भागती हुई सेना को फिर युद्ध भूमि में लौटाया और स्वयं पितामह भीष्म के पास पहुंचकर बोला, हे दादा! बड़े शोक की बात है, कि आपके और गुरु द्रोणाचार्य के होते हुए हमारी सेना भाग निकले। यह आपके योग्य बात नहीं है। हे पितामह! यदि आप युद्ध में मेरी विजय चाहते हैं और पांडवों से आपको स्नेह नहीं है तो अपनी शक्ति से कौरवों की रक्षा कीजिये। भीष्म बोले हे दुर्योधन। अपनी ओर से मैंने कभी पांडवों पर दया नहीं की, यद्यपि वह मेरे दया के

पात्र हैं । परन्तु पांडवों को जीतना सहज नहीं । हे दुर्योधन ! इन्द्रादिक देवता भी पांडवों को युद्ध में नहीं हरा सकते यह मैं तुम्हें कईबार कह चुका हूं, परन्तु फिर भी मैं अब ऐसा युद्ध करूंगा जो कभी किसी ने देखा न सुना हो। इतना कहकर भीष्म ने अपने लम्बे धनुष को सम्भाला और पांडवों पर बाण वृष्टि करने लगे । उस समय बड़ा हाहाकार मचा, ठहरो, भागो, खड़े रहो, मारो आदिक शब्दों से आकाश भरकर एक ही बार सहस्रों सिर भुजाएं और टांगे उड़ उड़कर खट खटके शब्द से पृथ्वी पर गिरने लगीं । देखते ही देखते युद्ध भूमि मृतक शरीरों से इस तरह भर गई कि चलने के लिए रास्ता न रहा । सैकड़ों हाथी चिंघाड़ते हुए नीले पहाड़ों की नाईं गिरने लगे । हे राजन् ! वृद्ध भीष्म की फुर्ती और प्रचण्डता देखकर आकाश से देवताओं ने फूलों की वर्षा की । वह अपने धनुष को गोल मण्डलाकार करके बिजली की नांईं कभी उत्तर कभी दक्षिण कभी पूर्व और कभी पश्चिम में दिखाई देते । उस समय भीष्म के सन्मुख आए हुए वीर इस प्रकार मरने लगे जैसे अग्नि में पतंगे । तब बहुत पीड़ित हुई २ पांडव सेना हाय हाय करती हुई अनेक भागों में बटकर भागने लगीं ।

हे धृतराष्ट्र । पितामह ने पांडवों के दलों को तोड़ कर इस तरह चारों दिशाओं में भगाया जैसे जोर की आंधी बादलों के तोरे अलग अलग कर देती है । अपनी

सेना को भागते देखकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा हे धनञ्जय ! यही समय तुम्हारे पराक्रम दिखलाने का है। देखो पितामह किस प्रकार पांडवों का नाश कर रहे हैं, मोह को छोड़कर अपनी सेना की रक्षा करो । अर्जुन ने कहा हे श्रीकृष्ण ! तुम मेरे रथको भीष्म के सन्मुख ले चलो । तब श्रीकृष्ण रथको उधर ले जाने लगे । परन्तु अपनी ओर आते हुए भीष्मने दूर ही से अर्जुन और कृष्ण को रथ समेत बाणों से ढक दिया । भगवान कृष्ण ने हे राजन् ! उस समय महा चतुर सारथि होने का परिचय दिया । वह रथ को उस बाण वृष्टि में ही कभी दाएं कभी बाएं कभी आगे और कभी पीछे चलाते हुए भीष्म के सन्मुख पहुंच गए । तब पितामह अर्जुन समेत सारे पांडव दल पर बाण वर्साने लगे । सारी पांडव-सेना में हाहाकार मच गया । सैंकड़ों वीर क्षण मात्र में पृथ्वी पर लेटने लगे और अर्जुन के किये भी कुछ न बन पड़ा । ऐसी दशा देख कर श्रीकृष्णने मन में विचार किया कि अर्जुन मोह वश पितामह के साथ युद्ध में उन पर जी खोल कर प्रहार नहीं करता और भीष्म यदि इसी प्रकार प्रहार करते रहे तो आज ही युधिष्ठिर की सारी सेना मारी जायेगी, यह बड़ा अनर्थ होगा यह सोच कर श्याम सुन्दर भगवान कृष्ण सुदर्शन हाथ में लेकर रथ से कूद पड़े और भीष्म की ओर दौड़े । उन को जाते देख अर्जुन उन के पीछे दौड़ा और थोड़ी

दूर पर जा उनके पांओं पकड़ कर बोला हे नाथ ! आप यह क्या कर रहे हैं इससे आपकी और मेरी दोनों की निंदा होगी। परन्तु श्रीकृष्ण क्रोध से विषधर सर्पकी नांई फुंकारे मारते लाल लाल नेत्रों से अर्जुन को घसीटते हुए आगे बढ़ने लगे। उस आश्चर्य्य जनक दृष्य को देखकर कौरव और पांडव दोनों पक्षों के वीर लड़ते लड़ते थम गए। भीष्मने जब श्रीकृष्णको सुदर्शन चक्रलिये अपनी ओर आते देखा तो वह धनुषबाण छोड कर नंगे पांओं रथ से उतर कर यह वचन बोले कि हे श्रीकृष्ण ! आप स्वयं मुझे मारने आए हैं, अहोभाग्य है, कृपानिधान यह बृद्ध भीष्म आपके हाथसे मरने की इच्छा करता हुआ आप के सन्मुख खड़ा है। आज मेरा युद्ध सफल हुआ, आज मैंने युद्धको जीत लिया। हे वासुदेव ! युद्धमें न लड़ने की प्रतिज्ञा करके भी आप लड़ते हो, इसीसे मैं कहता हूं कि कौरवों की विजय हुई। तब अर्जुन हाथ जोड़ कर क्रोध से लाल नेत्रों वाले श्रीकृष्ण को बोले हे यादव चूड़ामणि ! आप अपनी प्रतिज्ञा को न छोड़ें इससे हमारा वीरों में अपमान होगा ! मैं दादाके गौरव को देखकर उन पर मरता हुआ भी प्रहार नहीं करता था परन्तु रथ पर चलिए, मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि अब पितृ-स्नेह को छोड़कर युद्ध करूंगा। तब श्रीकृष्ण फिर अर्जुन सहित रथ पर सवार हुए। संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! इसके अनंतर अर्जुन ने पूरे बलसे गांडीव धनुषको चढ़ाया

और तीक्ष्ण धार वाले बाणों से समस्त कौरव सेना का नाश करने लगे। उनके बाणों से आकाश भर गया, आकाश में बाणों की छत सी दीखने लगी। और दशों दिशाएं बाणों से ढक गईं शत्रुओं की भुजाएं और सिर कट कट कर ओलों के समान पृथ्वी पर गिरने लगे। युद्ध में बजते हुए शंख ढोल और दुन्दभियों के शब्द गांडीव धनुषकी टंकार से दबगये। उस समय कौरवों के महां सेना रूप सागर में मानों तूफान आ गया और सैकड़ों शूरवीर बाणों से बींधे हुए उसमें डूबने लगे गांडीव धारी अर्जुन बिजली की गर्ज के समान अप्रेमय गांडीव धन्वा की टंकार से शत्रुओं के हृदयों को पीड़ा देने लगे। हे राजन्! सिंह जैसे भेड़ों के समूह पर आ पड़े इसी प्रकार अर्जुन को प्रहार करते देख कौरव वीर जी छोड़ कर चारों ओर भाग गये। तब श्रीकृष्ण ने प्रसन्न होकर पंच जन्य शंख बजाया। इतने में सूर्य्य भगवान ने अस्ताचल पर पहुंच कर लहु के रंग की लाल २ किरणों द्वारा युद्ध समाप्त करने का संदेशा दिया। दोनों ओर से संध्या समय होने पर सेनाएं हटा ली गईं। इस तीसरे दिन के महां युद्ध में पराक्रमी अर्जुन ने रथी हाथी सवार घुड़ और प्यादे सब मिला कर बीस सहस्र मनुष्यों का संहार किया जिससे लहु की नदी बह निकली।

——:०:——

युद्ध का चौथा और पांचवां दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! रात बीतने पर चौथे दिन प्रातःकाल फिर दोनों दल आमने सामने खड़े हुए। गत दिन की पराजय से भीष्म पितामह बड़े क्रोध में थे। आज उन्होंने पांडवों के नाश के लिये व्याल नामक महां विकट व्यूह रचा, व्यूह को दृढ़ करने के लिये उन्हों ने आवश्यक स्थानों पर जयद्रथ, द्रोण, बाल्हीक, चित्रसेन तथा अन्य राजाओं को खड़ा किया। तब श्वेत छत्र और श्वेत घोड़ों वाले अर्जुन दूर से इस विकट व्यूह को देख कर बाहर निकले और प्रचण्ड बाणों से व्यूह को विध्वंस करने लगे। व्यूह को मध्य में से छेद करने के लिए अभिमन्यु बिजली के समान उन पर आ गिरा, तब आचार्य्य पुत्र अश्वत्थामा ने शल्य भूरिश्रवा और उनकी सेनाओं को लेकर चारों ओर से अभिमन्यु को घेर लिया और तीक्ष्ण बाण वृष्टि से उसको ऐसे ढांप लिया जैसे बादल जल धाराओं से पर्वत को। परन्तु सूर्य्य के समान वह बालक बाण रूप तीक्ष्ण किरणों से चारों ओर बादल के समान कौरव दल को छिन्न भिन्न करने लगा। उस ने तीक्ष्ण नोक वाले बाणों से महारथि शल्य के चारों घोड़ों को मार गिराया और अश्वत्थामा को एक बाण से बींध दिया और शेष सेना को घास पात की तरह काटने लगा। हे राजन्! अर्जुन और अभिमन्यु को दोनों ओर से व्यूह तोड़ते देख कर दुर्य्योधन ने केकय मद्र और

त्रिगर्त के पचास हजार योद्धाओं को साथ ले उसको घेर लिया, इस अथाह सेना को पिता पुत्र के साथ युद्ध करते महाबीर धृष्टद्युम्न ने देखा तो वह पांच हजार हाथियों को साथ लेकर मद्रों और केकय वीरों पर टूट पड़ा। उस समय हजारों हाथियों की एक साथ टक्करें होने लगीं। हे राजन्! उस समय कुरुक्षेत्र की भूमि डोलने लगी और उनके धमाकों से वीरों के हृदय धड़कने लगे। उस विकट युद्ध में धनुष साथ खेलते हुए धृष्टद्युम्न ने सहस्रों कौरवों वीरों को नाश करके सांयमनि के महांपराक्रमी पुत्र को मार डाला। उसको मरा देख कर कौरव दल में हाहाकार मच गया। अपने पुत्र को मरा देख कर सांयमनि क्रोध से गर्जता और मारो मारो कहता हुआ धृष्टद्युम्न पर चढ़ दौड़ा। तब दोनों में घोर युद्ध प्रवृत्त हुआ और सहस्रों भुजाएं कट कट कर युद्ध में बरसने लगीं। उस समय सांयमनि ने धृष्टद्युम्न को भीषण मार से व्याकुल कर दिया। यह देख कर तेजस्वी अभिमन्यु शल्य और सांयमनि पर अनंत बाण छोड़ने लगा और उन को तीक्ष्ण बाणों से मूर्छित कर दिया। तब दुर्य्योधन ने अपने विकर्ण चित्रसेन और दुःशासन प्रभृति दस महारथियों को साथ ले अभिमन्यु को घेर लिया। यह देख कर पांडवों के महांबलि भीम द्रौपदी के पांचों पुत्र धृष्टद्युम्न नकुल और सहदेव यह दस महांरथि वहां आकर युद्ध करने लगे। गज के आकार वाले भीम ने अपने पुराने शत्रु दुर्य्योधन को युद्ध-भूमि में

देखा तो गदा हाथ में लेकर यम के समान उसकी ओर दौड़ा। भीमसेन को अपनी ओर आते देख कर दुर्योधन दस हजार हाथियों की मागधी सेना ले कर उस के सामने आया।

भीम की रण-बीरता।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! भीम और दुर्योधन ऐरावत हाथियों के समान बल वाले एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। तब महाबलि भीम लोहे की भारी गदा हाथ में उठाये हाथियों पर टूट पड़े। उस समय सहस्रों काले काले हाथियों में घूमते हुए भीम इन्द्र-वज्र के समान शोभा देने लगे और द्रौपदी के पांचों पुत्र उसके पृष्ट रक्षक बन कर उस महा गज-सेना पर बाणों की वृष्टि करने लगे। तब क्रोध खाकर मगधराज ने अपने पर्वताकार हाथी को अभिमन्यु की ओर पेला। काल के समान आते हुए हाथी को देख कर अभिमन्यु ने एक ही बाण से उसकी मोटी सूंड के दो टुकड़े कर दिये, जिससे घोर चिंघाड़ मार कर हाथी वहीं मर गया। हाथी के गिर जाने पर अभिमन्यु ने मगधराज का सिर भाले से काट लिया। उधर भीमसेन भी इन्द्र के समान कुलिश रूप अपनी गदा से हाथियों के पेट फाड़ने लगे, जिससे लहु के फुवारे निकल निकल कर युद्ध क्षेत्र में बहने लगे। हे राजन्! एक ही चोट से हाथी की हड्डियां तक तोड़ते मैंने भीमसेन को अपनी आंखों देखा यह बड़े आश्चर्य का काम था! सिर से

पांओं तक लहु में भीगे हुए भीम भारी गदा उठाए साक्षात् यमराज दिखाई पड़ते थे। तब भयभीत हुए हाथी अपनी ही सेना को विध्वंस करते चारों ओर भागने लगे। गज सेना के भाग जाने पर दुर्य्योधन का साहस टूट गया, तब संध्याकाल निकट देख कर उस दिन का युद्ध समाप्त करके दूसरे दिन फिर घमसान का संग्राम होने लगा।

उस दिन भीमसेन का बध करने के लिए दुर्य्योधन पागल से हो रहे थे। उन्हों ने सब ओर से सेनाएं हटाकर सारी सेना को भीम के बध के लिए एकत्र किया। तब इतनी बड़ी सेना को देख घोर गर्जना करते हुए भीम फिर गदा से उसे फोड़ने लगे। वह चारों ओर मंडल बांध कर आंधी के वेग से गदा प्रहार करते हुए दौड़ने लगे। एक ही क्षण में सैंकड़ों वीरों को बह इस प्रकार धराशायी करने लगे जैसे हाथी नड़ों के बन को, हाथी घोड़ा प्यादा रथी उस समय जो उनके सामने आया, इस प्रकार गिर गया जैसे आंधी के झटके से वृक्ष जड़ सहित गिर पड़ते हैं। उनकी मांस मज्जा और लहु से भरी हुई लंबी गदा कौरब वीरों के दर्शन ही से कलेजे निकालने लगी, युद्ध में जिधर आंख उठाओ हाथी घोड़े मनुष्यों के लोथड़ों के तोदे खड़े दिखाई देते थे कौरव सेना भीम को देख कर ही भागने लगी। तब मुंह खोल कर यम के समान मनुष्यों को खाते हुए भीमसेन को देखकर पितामहां तुरंत वहां पहुंचे। परन्तु उनके साथ ही धनुष की महां घोर

टंकार करता हुआ यादव सेनापति सात्यकी भीष्म पर टूट पड़ा और भयानक बाण वृष्टि से कौरव दलको पीड़ित करने लगा। तब अगणित कौरव सेना उस पर बाण वृष्टि करने लगी। परन्तु उनकी कुछ परवा न करके प्रचण्ड सूर्य्य के समान वह बाणों की रश्मियों से आपकी सेना को संताप देने लगा। हे राजन्! उसकी प्रलय करने वाली बाण वृष्टिने आपकी सेनाओं के जी छुड़ा दिये। उधर दुर्य्योधन अपने साथी राजे और पुत्रों सहित भीम पर यमके समान प्रहार करने लगा। तब भीम ने अपने सारथी को कहा हे विशोक! यह देख धृतराष्ट्र के सब पुत्र आज मेरे मारने के लिए एकट्ठे हुए हैं, सो मैं आज तेरे सामने ही इनका नाश करूंगा, तू सावधान होकर रथ चला। इतना कह कर भीम उन पर सर्पों के समान बाण छोड़ने लगे। तब महांबलि दुर्योधन ने एक विष में बुझा भारी बाण भीम पर छोड़ा, जो सर्प के समान लपलपाता हुआ उस के कवचको फोड कर छाती में घुस गया। उस बाण से भीम मूर्छित होकर रथ में लेट गया। इस के कुछ काल पश्चात् उसे सुधि आई। तब क्रोध से फड़कते हुए नथनों से वह अपने धनुष को संभाल एक एक करके दुर्योधन के भाइयों के प्राण लेने लगा। यम के समान ताक २ कर उसने जलसंध, सुषेण, बीरबाहु, भीम और भीम रथ, सुलोचन इन सब आपके पुत्रों को हे राजन्! यम द्वार में पहुंचा दिया। अपने भाईयों को मरते

देख कर, कहीं आज ही भीम अपनी प्रतिज्ञा न पूरी कर डाले, इस विचार से आपके शेष पुत्र भाग गये। तब दिन समाप्त होने में थोड़ा समय रह गया है, और हमारी सेनाका धीरज नहीं रहा, यह विचार कर दुर्य्योधन ने युद्ध समाप्त करने का शंख बजा दिया।

छटा दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! जब प्रातःकाल हुआ तो दोनों ओरकी सेनाएं फिर रण-भूमि में उतरीं। उस दिन भीष्म पितामहने मकर नामक व्यूह बनाया। इसके उत्तरमें अर्जुनने श्येन व्यूहकी रचना की। सब प्रकारसे तैय्यार हो कर दोनों सेनापतियोंने शंख बजाए और युद्ध आरंभ किया। हे राजन्। पूर्व दिनके समान आज भी भीमसेन रुद्रमूर्ति धारण किये रणमें गर्जने लगे। तब स्वयं भीष्म पितामह उनसे युद्ध करने लगे। दूसरी ओर आचार्यपुत्र अश्वत्थामा अर्जुनसे जुट गए। अर्जुन ताक ताक कर उस पर बाण छोड़ने लगे। परंतु वह वज्रदेह वाला वीर तनिक भी विचलित न हुआ और अर्जुनके बाणोंको रास्ते ही में काट कर गिराने लगा। उसकी इस वीरताको देख कर कौरववीर उसकी प्रशंसा करने लगे। तब अर्जुन मन ही मन अश्वत्थामा की सराहना करने लगे और अपना गुरुपुत्र तथा ब्राह्मण समझ कर वहां से हट कर दूसरी सेनाओं से युद्ध करने लगे। इधर वीर अभिमन्युको भीमकी सहायता के लिए जाते देख दुर्य्योधन के पुत्र लक्ष्मणने

रास्ते ही में उसे जा लिया और तीक्ष्ण बाणोंसे उस राजकुमार को बींधने लगा। तब अभिमन्यु ने चार बाणों से उसके चारों घोड़ों को मार गिराया और एकसे लक्ष्मणको घायल कर दिया। परंतु लक्ष्मण इससे तनिक भी विचलित न हुआ और बराबर बाण-वृष्टि करता रहा। फिर क्रोध में आकर अभिमन्युने एक भारी शक्ति को उस पर छोड़ा। उस विकाल रूप भारी शक्ति को आते देख कर कृपाचार्यने तुरंत ही लक्ष्मणको बचा लिया और शीघ्रतासे उसे युद्ध-क्षेत्र से निकाल कर ले गया। उसके अनंतर खुला युद्ध होने लगा दोनों ओरके सारे वीर एक दूसरे से भिड़ गये, कोई बाण कोई गदा कोई तोमर और कोई तलवार से एक दूसरे को मारने लगे। क्षणमात्र में युद्ध भूमि लहुमें डूब गई, जिधर देखो उधर मुकुट कुंडल कवच और मनुष्योंके कटे हुए अंग उड़ते और गिरते दिखाई देने लगे। इसी समय यादव सेनापति सात्यकी और दुय्योंधन आमने सामने हो गये। वह दोनों एक दूसरेको देखकर बनमें सर्पोंके समान क्रोधसे फुंकार मारने लगे। उस समय दुय्योंधन के पीछे दस हज़ार हाथी थे। दुय्योंधनकी आज्ञा पाते ही वह सारी गजसेना उस पर टूट पड़ी। एक ही क्षणमें सहस्रों बाण उसके रथ पर पड़ने लगे, परंतु सूर्य्यके समान महां तेजस्वी सात्यकी पर्वतकी नाईं अचल अडोल खड़े रहे, और तीव्र बाणवृष्टिसे दुर्योधनकी सेनाको भूमि पर सुलाने लगे। उस समय उस यादव वीर का पराक्रम दर्शनीय था।

वह मेघके समान गर्जता हुआ बाणोंकी मूसलाधार वृष्टि करने लगा, जिससे व्याकुल होकर शत्रु भागने लगे परंतु उस वीरने भागने वालों और समान खड़े होकर युद्ध करने वालोंमें से एकको भी जीता न छोड़ा सात्यकी के इस भयानक कर्मसे कौरव दलमें हाहाकार मच गया। उन सबको मार कर वीर सात्यकी इस प्रकार चमकने लगा जैसे बादलोंको फाड़ कर प्रचण्ड सूर्य्य चमकता है। कौरव दलमें हाहाकार मचा देख भूरिश्रवाने सात्यकीको ललकारा और उस पर नोकीले बाण छोड़ने लगा। भूरिश्रवाको ललकारता देख सात्यकीके दशों दिशाओं हिला देने वाले दस पुत्र क्रोधमें आकर उसको बोले हे अभिमानी वीर! आओ आज हमसे युद्ध करके अपनी वीरता की परीक्षा करो हम सबसे मिलकर अथवा अकेले अकेले जिस प्रकार तुम चाहो हम युद्ध करनेको तैय्यार हैं, आज या तो तुम हमारे हाथों मारे जाओगे अथवा हम तुम्हारे हाथों वीरगतिको प्राप्त करेंगे। तब भूरिश्रवा बोले हे राजकुमारो! ठहरो, मैं तुम सबको एक ही बार यमपुरीमें भेजूंगा इतना कह कर वह उन दशों पर बाणों की वृष्टि करने लगा। वह दसों राजकुमार भी घोर गर्जना करते हुए उसे चारों ओर से बींधने लगे। वह सब एकसाथ ही उस पर बाण मारते, परंतु युद्ध कुशल भूरिश्रवा बड़ी फुर्ति से उनके बाणोंको रास्ते ही में दो टूक कर देता था। तब उन राजकुमारों ने बाणोंकी वर्षा करते करते गोल मंडल बांध कर सब

ओरसे उसको घेर लिया। अपने आपको शत्रुओंके घेरेमें देख कर भूरिश्रवा क्रोधसे दांत कटकटा कर बाणोंकी महां घोर वृष्टि करने लगा। उस समय हमने दावानल अग्निके समान उसको एकही समय में सब ओर लड़ते देखा। उस अकेले वीरने बारी बारी दशों राजकुमारोंके धनुष काटदिये,और फिर बिजलीके समान क्षणमात्रमें उन सबके सिर काट लिये। तब सात्यकी अपने पुत्रों की मृत्यु देख कर क्रोध में भूरिश्रवा पर तीक्ष्ण धार वाले बाण बरसाने लगा। उधर महांतेजस्वी अर्जुन कालके सामान कौरव-सेनाओंमें प्रलय मचाने लगा, उनकी बाण-वृष्टिसे सैंकड़ों वीर कट-कटकर युद्ध-भूमि में गिरने लगे। वह जिधर जाता उधर कौरव वीर इस प्रकार गिरते दिखाई देते जैसे प्रबल आंधीके झटकेसे वृक्ष जड़ों सहित उखड़ कर गिर जाते हैं। उसके गाण्डीव-धन्वाकी लगातार टंकार से सब कौरव सहम गये। हे राजन्! तब सूर्य्य अपनी लहुके समान किरणोंसे लाल हुआ २ अस्त होगया। दिन का युद्ध सामाप्त हुआ। वह संध्या बड़ी भयानक थी, आकाश लाल था, कुरुक्षेत्रकी भूमि में लाल रक्त की नदी बह रही थी, सहस्रों घायल हाय २ की पुकार कर रह थे। उस दिन दोनों पक्ष के योद्धा बड़े उदासीन हुए २ अपने अपने शिविर को गये। आज गाण्डीवधारी अर्जुन ने पच्चीस सहस्र मनुष्योंका बध किया, और इनके अपने भी सहस्रों वीर मारे गए।

सातवां दिन ।

छटे दिन के युद्ध का वृत्तान्त सुनकर धृतराष्ट्र बड़े दुःखी होकर बोले, हे संजय ! युद्धारम्भ के दिनसे आज तक हम प्रतिदिन तुम्हारे मुख से सारा हाल सुनते रहे हैं। परन्तु सदा तुम पांडवों की ही विजय सुनाते हो। प्रतिदिन तुम यही कहते हो, कि पाण्डव विजयका उत्सव मना रहे हैं, और हमारे शिविर में शोक और दुःख छाया हुआ है। इन बातों से हमें यही जान पड़ता है, कि भाग्य हमारे पुत्रों के विपरीत है। संजय बोले, हे राजन् ! आपके पक्ष वाले कुछ कम वीर नहीं हैं, वह भी बड़े बलवान्, पराक्रमी और अनुभवी हैं। भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृप आदि योद्धाओं के सामने देवता को भी ठहरने की समर्थ नहीं है, परन्तु फिर न जाने क्यों पाण्डवों के सामने उनकी एक नहीं चलती, उनकी सारी शूरवीरता इस प्रकार व्यर्थ हो जाती है, जैसे पत्थर पर बाण की चोट। परन्तु इसके लिये भाग्य का दोष देना व्यर्थ है। इस मनुष्य-विध्वंसकारी महासमरका कारण आप के पुत्र ही हैं, और आपने भी इस महायुद्धको रोकने की कोई चेष्टा नहीं की, यदि आप रोकना चाहते तो यह युद्ध उसी दिन रुक जाता, जिस दिन श्रीकृष्ण आपकी सभा में आए थे। इसलिए अब व्यर्थ के शोक को छोड़कर जो कुछ होता है, सुनते जाइए। अब मैं आपको सातवें दिन के युद्धका वृत्तान्त सुनाता हूं।

छठा अध्याय।

संञ्जय बोले, हे धृतराष्ट्र! उस महायुद्ध में उलूपी नामकी अर्जुनकी दूसरी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ पुत्र राजकुमार इरावान् आन पहुंचा। उलूपी अप्सरा के समान अतिरूपवती नागकन्या थी। उसका पुत्र इरावान् भी बहुत सुन्दर और बलवान था। वह अपनी माता के हां ही पला था। जब उसको इस महासमरका समाचार मिला, तो वह अपनी भारी सेना को साथ लेकर कुरुक्षेत्र में पहुंचा, और अपने पिता की सहायता के लिये कौरवोंसे युद्ध करने लगा। उस युद्ध में कौरवों की उसने अनन्त सेना काट डाली। जब उसके सामने आई हुई सेना सबकी सब मारी गई, तो उसने गान्धार देश की सेनापर आक्रमण किया, जिसका सेनापति शकुनि था। तब गजाकार लम्बे डील वाले गान्धारी-बीरों ने उसको चारों ओर से घेर लिया और सहस्रों पैने बाणों से उसकी देह को छलनी कर दिया। परन्तु राजकुमार इरावान् इस से तनिक भी न घबराया, और बड़े वेग से बाणों को छोड़ कर गान्धारियों को गिराने लगा। तब दुर्य्योधन ने शकुनिकी सहायता के लिए बहुत सी सेनाको वहां भेजा, जिसे देखकर इरावान का क्रोध दुगना होगया। उस समय वह वीर राजकुमार मध्यान्हके सूर्य्यके समान तीक्षण बाणों को छोड़ कर कौरवोंको जलाने लगा। हे राजन्! उस समय शकुनि और दुर्योधनकी सेना उसकी मारको न सहकर

भागने लगी, परन्तु उस बीरने असंख्य बाण इस प्रकार चलाए, कि वह मण्डलाकार होकर चक्रकी नाईं गोल घूमने लगे, फिर बाणों के पिंजरे में फंसे हुए उन सब गान्धारी-बीरों को इस पराक्रमी राजकुमारने चूहोंके समान मार डाला। केवल शकुनि उससे बच सका। अपनी सेनाको मरता देखकर दुर्य्योधन के तन को आग लग गई। उसने आर्ष्यश्रृंग नामक राक्षसको इरावान् के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। यह आर्ष्यश्रृंग बक नामक राक्षसका सेवक था, जिसे भीमसेन ने मार डाला था। अपने स्वामी की मृत्यु का प्रतिकार लेने के लिए आर्ष्यश्रृंग इरावान्पर टूट पडा। उसने अपनी तलवार से इरावान् का धनुष काट डाला और उसको भी घायल कर दिया। इसके अनन्तर वह राक्षस माया-युद्ध करने लगा। वह आकाश में उड़ गया, परन्तु इरावान ने वहां भी उसका पीछा न छोड़ा, अपने तीक्ष्ण बाणों से उसके शरीर को छलनी कर दिया। तब वह राक्षस बड़े क्रोध में आया, उसने मोहन अस्त्र चलाकर इरावान को मूर्छित कर दिया। जब संज्ञाशून्य हुआ हुआ २ इरावान रथ में पडा था, उस समय को अच्छा समझकर आर्ष्यश्रृंगने तलवार से उसका सिर काट दिया। इरावान् के मरने पर कौरव बड़े प्रसन्न हुए और हर्ष सूचक शंख पूरने लगे। उस समय अर्जुन कहीं दूर स्थान पर युद्ध कर रहे थे, उन्हें इस घटना का कुछ ज्ञान न था परन्तु भीमसेन के पुत्र

घटोत्कच को अपने भाई की मृत्यु पर महां क्रोध हुआ। वह क्रोध से पागल हो उठा। तब उस ने अपनी प्रचण्ड राक्षसी सेना को लेकर दुर्योधन पर आक्रमण किया, घटोत्कच के हाथों दुर्योधन की रक्षा करने के लिये महा पराक्रमी वंग नरेश ने अपनी असंख्य हाथियों की सेना से उस को घेर लिया। तब महा घोर संग्राम होने लगा। दुर्योधन ने अपने जीवन की आशा छोड़कर लाखों ही अत्यन्त तीक्ष्ण बाण उस राक्षसी सेना पर बर्साए, जिन से बहुत से बड़े २ राक्षस मारे गए। तब घटोत्कच को बड़ा क्रोध आया, उसने दांत कटकटाकर एक प्रचंड शक्ति दुर्योधन पर छोड़ी, जिसे वह किसी प्रकार भी बच नहीं सकता था। तब दुर्योधन के प्राण जाते देखकर वंग नरेश नें दुर्योधन को अपने रथ के पीछे छुपा लिया और स्वयं उस शक्ति को अपने शिर पर लेकर वहीं मर गया। हे राजन्! उसके बलिदान को देखकर आकाश से देवताओं ने पुष्प वर्षा की। वंग-नरेश के मरने पर घटोत्कच फिर दुर्योधन को चारों ओर से बाणों की भीषण मार मारने लगा। उससे व्याकुल हुआ २ दुर्योधन निकलने को कोई रास्ता न पाता था। यह देखकर भीष्म पितामह तुरन्त द्रोणाचार्य के पास जाकर बोले हे आचार्य! इस समय दुर्योधन रासक्षोंमें फंसा हुआ इस प्रकार पीड़त होरहा है जैसे पिंजरे में चूहा। आप शीघ्र जाकर उसकी रक्षा करें। इसके अनंतर भीष्म और द्रोणाचार्य दोनों बड़ी सेनाको लेकर वहां

पहुंचेवहांजाकर उन्होंने कौरवोंकी सेना की बहुत दुर्दशादेखी उनके योद्धा राक्षसों के माया-युद्ध से सहम गये थे, कुछ तो रुधिर में डूबे हुए महां दीनों के समान राक्षसोंके आगे हाथ जोड़ जोड़ कर प्राण दान मांगते, कुछ भयभति हो कर अपने मित्र संबंधियों और प्यारोंको छोड़ छोड़ कर भाग रहे थे। उन्हें भागते देख भीष्मने ललकार कर कहा, हे सैनिक लोगो! रण भूमिसे इस प्रकार भयभीत होकर भागना क्षत्रियों को उचित नहीं है। तुम्हारे भरोसे दुर्योधन ने यह रण ठाना और अब तुम ही उसको शत्रु के हाथ में छोड़कर किस मुखसे भागते हो। ठहरो ठहरो ! परन्तु उस समय किसी को अपनी सुधि न थी, उन्होंने पितामह की कुछ परवा न की और वापस न लौटे। यह देख कर भीष्म को महां दुख हुआ और वह उदास होकर दुर्योधन से कहने लगे। हे राजन्! बिना उचित प्रबन्ध किये राजा को कभी इस प्रकार अपने प्राणों को जोखों में न डालना चाहिये। हम सब लोग यहां आप ही के लिए लड़ रहे हैं, इसलिए यदि किसी पर आपको बहुत ही क्रोध आवे तो आप इनमें से किसी को आज्ञा देवें। इसके अनंतर भीष्म पितामह ने महांबली भगदत्त को घटोत्कच के साथ युद्ध में लड़ने के लिए भेजा। और दुर्योधन को वहां से निकाल कर अपने साथ ले गये। इसी अवसर में अर्जुन कौरवों का भारी नाश करके वहां पहुंचे। जब भीमसेन के मुखसे अपने पुत्र इरावानकी वीरता और

उसकी मृत्युका हाल सुना तो वह महां दुखी हुए और ठंडी सांस लेकर श्रीकृष्ण से बोले हे मधुसूदन! यह क्षत्रि धर्म बड़ा भयानक और निष्ठुर है। इसमें भाई भाईको और पिता पुत्रको अपने हाथ से बध करने में संकोच नहीं करता। यह देखो मेरा परम प्यारा उलूपी सुत मेरी विजय की कामना से मारा गया, इसका मुझे बहुत दुःख है। हे देवकी नंदन ! भाई धर्म राज अपना सारा राज्य छोड़ कर क्यों केवल पांच ही गांवों पर संतुष्ट होते थे, यह मैंने आज जाना। परन्तु अब क्या हो सकता है, अब बात इतनी बढ़ गई है, कि हम एक पग भी पीछे नहीं हट सकते हे वासुदेव ! अब शीघ्र ही मेरे रथको वहां ले चलो जहां सबसे भीषण युद्ध हो रहा है। तब श्रीकृष्ण अर्जुन के कथनानुसार रथको वहां लेगए जहां भीष्म और द्रोण बड़ी ही निर्दयता के साथ पांडवों की सेना का नाश कर रहे थे। उस समय महांरथि अर्जुन के हृदय में पुत्र-वियोग की अग्नि लगी हुई थी, वह कौरवों के रक्त से उसको तृप्त करने लगे। उस समय बड़े बड़े कौरवों के कलेजे सूख गये। कहां तो वह पांडवों को मारते थे और कहां अब अपनी रक्षा करना कठिन हो गया। अर्जुन को आए देखकर वह पांडव वीर जो पहले मार से व्याकुल होकर भाग रहे थे, फिर जमकर खड़े हो गए और चारों ओर से घमसान रण ठन गया अर्जुन के बाणों से कौरव लोग तड़प तड़प कर गिरने लगे। तब भीमसेन ने इस

अवसर को अच्छा समझ कर पूरे बलसे उन पर आक्रमण कर दिया, और कौरवों के उस व्यूह को जिसे तोड़नेकी सामर्थ्य मनुष्य तो क्या देवताओं में भी न थी, तोड़ डाला और उसके अन्दर घुस कर वहां पहुंच गए जहां दुर्योधन के कुटुंब-जन थे। उन्हें देखते ही भीमसेन अपनी भारी गदा उठाए मोह ममताको छोड़कर मारने लगे। उस समय भीमसेन ने जो देखा उसी को मार कर ढेर कर दिया, हे राजन्! काल के समान गदाधारी भीमने वहां एक को भी जीता न छोड़ा। तब भीम और अर्जुन के इस युद्ध ने बड़ा ही भयानक रूप धारण कर लिया। सहस्रों ही हाथी घोड़े मनुष्य बाण धनुष कुंडल किरीट मुकुट रण-भूमि में विखरे पड़े थे। रक्त की नदी बह रही थी, ऐसा भयानक युद्ध इसके पहले दिनों में कभी न हुआ था, और नांही इतनी नर-हत्या हुई थी। उस दिन कौरवों की भारी क्षति हुई। इसके अनंतर सूर्य्य नित्य की तरह सहस्रों मनुष्यों की आत्माएं साथ लेकर अस्त हुआ और दोनों सेनाएं अपने अपने शिविर में लौट गईं।

हे धृतराष्ट्र! पांडव उस दिन बड़े आनंद में थे, परन्तु कौरवों के शोक का पारावार न था। वह उदास चित्त मलिन मुख ठंडी सांसें भरते अपने शिविर में ऐसे चुपचाप पड़े रहे जैसे वह अपराधी जिसे सवेरे सूली पर चढ़ाया जाना हो। उस दिन राजा दुर्योधन अपनी बहुत बड़ी हानि देख कर महां शोकमें मग्न हो गया। उसने

दुशासन, शकुनि और कर्ण को बुला कर कहा कि हे महारथियो! आज के युद्ध में अपनी सेनाओं की दुर्दशा को देखकर मेरा मन डांवाडोल हो गया है, यदि कुछ दिन हमारी यही अवस्था रही तो हमारी पराजय होने में कोई संशय नहीं इसलिये कोई ऐसा उपाय सोचो जिससे पांडव अपनी सेना सहित मारे जाएं। यह सुनकर कर्ण बोले हे राजन्! हमारी सेना पांडवों से अधिक है, हमारे योद्धा पांडवों से अधिक बलवान और अनुभवी हैं, परन्तु फिर भी प्रति दिन हमारी हार और पांडवों की विजय होती है, इसका कारण स्पष्ट है, कि भीष्मपितामह पांडवों पर दया करते हैं और हृदय से उनका कल्याण चाहते हैं हे दुर्योधन! यदि ऐसा न हो तो तुम ही सोचो कि पितामह के सन्मुख ठहरने की किसमें शक्ति है। यदि भीष्म युद्ध से अलग हो जाएं और शस्त्र रख दें तो मैं कल ही पांडवों का समूल नाश करूंगा ऐसा मेरा निश्चय है। तब दुर्य्योधन बोले हे कर्ण! यदि तुम मुझे ऐसा निश्चय दिलाते हो तो मैं पितामह के पास जाता हूं और उनसे सेनापति का पद त्याग करने की प्रार्थना करता हूं। इतना कह कर दुर्य्योधन उसी समय भीष्म के पास पहुंचा, और उनको प्रणाम करके आसन पर बैठ गया और रोता हुआ बोला हे पितामह आपके भरोसे हमने यह युद्ध ठाना है। आपके साथ होते हम देवता दैत्य और राक्षसों को भी जीत सकते हैं मनुष्यों की तो क्या। इस कारण हे नाथ! पांडवों का संहार करके

मेरे ऊपर कृपा करें। और यदि आप दया भाव से अथवा मुझ पर द्वेष होने के कारण किंवा मेरे दुर्भाग्य से पांडवों की रक्षा करना चाहते हैं, तो कृपा करें और सेनापति का पद महांवीर कर्ण को सौंप दें, वह अवश्यमेव पांडवों को मार कर उनका समूल नाश करेगा।

हे धृतराष्ट्र! दुर्य्योधन के इन वचनों को सुन कर पितामह क्रोध की अग्नि में जलने लगे। दुर्य्योधन के वचन बाणों के समान उनके कलेजे को चीर गये। उस समय उनके नथने फड़कने लगे और आंखों से अंगारे बरसने लगे। परन्तु फिर भी वह कोमलता से बोले, हे दुर्य्योधन! क्यों तू मुझे बाणी के बाण मारता है मैंने तेरे कल्याण के लिये पूरा यत्न किया है, पूरा बल लगाया है और लगाता हूं, तेरे लिये अपने प्राणों को होमता हूं। हे वीर! यह जो तू बारबार कहता है, कि कर्ण पांडवों का नाश करेगा, सो तेरी भूल है। हे पुत्र! पांडव मट्टी के खिलौने नहीं किन्तु वज्र के समान शरीर वाले दुर्जय मनुष्य हैं। द्वैत बन में गंधर्वों से पकड़े गए तुम और तुम्हारे महांवीर कर्ण पांडवों ही से छुड़ाए गए थे। विराट नगर में युद्ध करते हुए जिस अकेले वीर ने हमारे सारे महारथियों को भूमि पर सुलाया था, वही अर्जुन इस समय भी यमके समान गांडीव कंधे पर रखे हमारे सन्मुख है। जो कर्ण सारे पांडवों का नाश करने की डींग मारता है उस को कहो कि वही विराट नगर वाला अर्जुन अब

दुगने तेज और बल से युद्ध भूमि को अपने धनुष की टंकार से गुंजा रहा है। हे दुर्य्योधन ! तू अज्ञान से न कहने योग्य बातें कहता है। अब रोना व्यर्थ है, अब जब युद्ध हो गया है तो पुरुषों के समान लड़ जाओ अथवा मर जाओ। मैं कल पूरे बल से पांडवों का नाश करूंगा, अथवा स्वयं प्राण दे दूंगा। तुम चिंता छोड़ कर सोवो, और कल हमारा अद्भुत युद्ध देखो, जिसे न किसी ने कभी देखा और न सुना होगा। हे बेटा! कल हम ऐसा युद्ध करेंगे, कि जब तक चन्द्र और सूरज हैं तब तक संसार उसको याद करेगा। तब पितामह से धीरज दिया हुआ दुर्य्योधन अपने शिविर में चला गया और प्रातःकाल की प्रतीक्षा करने लगा।

आठवां और नवां दिन।

प्रभात होते ही दुर्य्योधन ने सब राजाओं को अपनी सेना तय्यार करने की आज्ञा दी। और दुःशासन, शकुनि तथा अन्य बड़े बड़े महारथियों को कहा, कि आप सब आज भीष्म के अंग संग रह कर उनकी रक्षा करें, अब महा भयानक युद्ध होगा। इस के अनंतर शान्तनु-सुत भीष्म बहुत बड़ी सेना लेकर युद्ध क्षेत्र में निकले। आज उन्हों ने सर्वतो-भद्र नामक व्यूह बनाया। उस व्यूह के मुख पर खड़े रह कर लड़ने और सारी सेना की देख रेख का भार अपने ही ऊपर लिया। भीष्म के इस दुर्जय व्यूह को देख युधिष्ठिर ने भी उस के उत्तर में एक बड़ा विकट

व्यूह रचा। इसके पश्चात भीष्म ने अपने जीवन की आशा छोड़ दी, और दावानल अग्नि के समान प्रचंड ज्वाला से पांडवों की सेना को जलाने लगे। अत्यंत तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करके पांडवों की सेना को छा दिया। जिस से असंख्य रथ हाथी घोड़े बिना सवारों के हो कर भागने लगे, हे राजन्! कान तक खेंच कर बाण छोड़ने से भीष्म पितामह के धनुष की प्रत्यंचा की टंकार क्रम क्रम से तेज होने लगी। यहां तक कि पांडवों को कुछ समय पश्चात वह गर्जना वज्र के समान कठोर सुनाई देने लगी। रथियों से हीन हुए हुए रथ युद्ध क्षेत्र में चारों ओर भागने लगे। हाथी अपने सवारों से रहित चिंघाड़ते हुए अपनी सेना का मर्दन करने लगे। हे राजन्! उस महायुद्ध में हमने घोड़ों के मरने पर घुड़ सवारों को चारों ओर प्राण ले कर भागते देखा। सहस्रों हाथी हाथियों के पीछे भागते हुए घुड़ सवारों रथियों और पदातियों को दलने लगे। इतना भारी रक्त पात आज तक किसी ने पहले न देखा था। युद्ध क्षेत्र क्या था लहु की भरी हुई एक बड़ी नदी थी, जिसमें बहती हुई लाखों जीवों की अंतड़ियां उसकी तरंगें थीं, हड्डियों के पंजर गिरे हुए वृक्ष थे। मनुष्यों और पशुओं के बाल तट पर उगे हुए घास और पूले थे, रथ, बाण भंवर, घोड़े मछलियां, कुंडलों वाले सिर कमल फूल, हाथी मगरमच्छ, पगड़ियें, धनुष, तलवार, तोमर और मुद्गर कछुओं के समान बह रहे थे। उस

वेगवति रक्त की नदी को बड़े २ योद्धा क्षत्रिय लोग रथ, घोड़े और हाथी रूप नौकाओं से पार कर रहे थे। उस दिन पितामह ने यम के समान निर्दयता से जो देखा उसी को होम दिया यहां तक कि सोमकों की सारी सेना जिस में चौदह सहस्र वीर संसार में माने हुए थे, सब की सब इस प्रकार कट गई जैसे किसान खेत से धान काटता है। तब भीष्म के तीक्ष्ण बाणों से बड़े २ महारथी भागने लगे। हे राजन्! पांडव सेना इतनी भयभीत हो गई, कि दस दस पांच पांच तो क्या, दो मनुष्य भी एक स्थान पर इकट्ठे खड़े हुए दिखाई न देते थे। एक भारी कोलाहल और हाय हाय के सिवा और कोई शब्द सुनाई न देता था। तब अपनी सेना की ऐसी दुर्दशा देखकर श्रीकृष्ण अर्जुन से बोले हे अर्जुन! अब वह समय आ गया है, जिसकी तुम प्रतीक्षा करते थे। यह देखो! भीष्म से मारे हुए सहस्रों पांडव सैनिक रुधिर में डूबे हुए प्राण दे रहे हैं। हे गांडीव धारी! सभा में तुम ने प्रतिज्ञा की थी, कि मैं भीष्म को मारूंगा, सो आज तुम उसे क्यों नहीं पूरा करते।

अर्जुन बोले हे वासुदेव! इनको मार कर हम कभी सुख प्राप्त नहीं करेंगे। इनको मारने की अपेक्षा तो बनवास का महा दुःख कहीं अच्छा था। हे कृष्ण! जो पितामह बाल्यावस्था में हमें कंधे पर बैठा कर प्यार से फिराते थे जिन की गोद में बैठ कर हम बड़ा सुख मानते थे, तो

अपने हाथ से हमारे मुख में खाने के पदार्थ डालकर हमें प्रसन्न करते थे, जिनको दादा कहकर जब हम बुलाते थे तो वह स्नेह से हमारे सिर पर हाथ फेर कर कहते थे, कि हम तुम्हारे दादा नहीं, तुम्हारे दादा के दादा हैं, हाय! आज हम उन्हीं पितामह को अपने हाथों कैसे मार सकेंगे। हे गोवर्द्धनधारि! मेरा हृदय उनकी मृत्यु का नाम सुन कर बैठ जाता है। परन्तु मैं आप की आज्ञा के अनुसार लड़ूंगा, क्योंकि आपही के कथन से हम ने युद्ध-आरंभ किया है। हे केशव! जहां पितामह हमारी सेना को पीड़ित कर रहे हैं, वहां मेरे रथको ले चलो तब श्रीकृष्ण ने चंद्रमा के समान प्रकाशमान रथको भीष्म के सन्मुख लेजाकर खड़ा किया। अर्जुन को भीष्म के सन्मुख जाते देख पांडवों की भागती हुई सेना फिर पीछे लौट आई। तब अर्जुन को सामने देखकर सिंह की नांई गर्जते हुए भीष्म तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगे। परन्तु श्रीकृष्ण उससे तनिक भी विचिलित न हुए और बाणों की मारसे पीछे हटते हुए घोड़ों को भी बड़ी चतुरता के साथ आगे बढ़ाते गए। तब अर्जुन ने बादल की ध्वनि वाला बड़ा दिव्य धनुष लेकर बाणों से पितामह का धनुष काट दिया। परंतु भीष्म ने तुरंत ही दूसरा धनुष लिया और फिर बाण बर्साने लगे तब अर्जुन ने क्रोध से उनका यह धनुष भी काट गिराया। इसी प्रकार अर्जुन ने उनके क्रम क्रम से सात धनुष काटे और सातों ही भीष्म ने नये धनुष चढ़ाए। अर्जुनके हाथ

की फुर्ति देखकर पितामह ने उस समय धन्य हो धन्य हो कुंति सुत, ऐसा कहा। इसके अनंतर भीष्म पितामह कोप से प्रलयकाल के समान बाणों की घोर वृष्टि करने लगे। उस समय हे राजन्! श्रीकृष्ण ने घोड़े हांकने में परम चातुर्य्य दिखलाया। वह बाण की तीक्ष्णता के साथ ही घोड़ों को कभी दाएं कभी बाएं कभी आगे और कभी पीछे हटा लेते थे। भीष्म ने भी पहले की समान अपनी बाण वृष्टि फिर आरंभ की और दसों दिशाओं को बाणों से भर दिया। तब हे राजन्! अर्जुन को पितामह पर उपेक्षा करते और पूरे उत्साह से न लड़ते देखकर श्रीकृष्ण के क्रोधका पारावार न रहा। वह जलते हुए नेत्रों से कूद कर भीष्म की ओर सुदर्शन चक्र घुमाते हुए दौड़े। यह देख कर अर्जुन ने दौड़ कर उनके पांओं पकड़ लिये और कहा, हे प्रभो! यह आप क्या करते हैं, आपने शस्त्र न पकड़ने का प्रण किया है उसे झूठ न करें, आप रथ पर बिराजें, मैं शपथ खाता हूं, कि अब सावधान होकर युद्ध करूंगा और जो मेरे सामने आएगा, चाहे वह भीष्म हो अथवा और कोई, उसका बध किये बिना न छोड़ूंगा। तब श्रीकृष्ण उसी प्रकार क्रोध से फुंकारे मारते हुए फिर रथ पर आ बैठे और अर्जुन घोर युद्ध में प्रवृत्त हुआ। रथ पर बैठते ही उन दोनो पर भीष्मने ऐसी बाण वृष्टि की जैसे बादल पर्वतों पर बरसता है। तब उसी प्रकार युद्ध में महां प्रलय मचाते सूर्य्य देव अस्त होगए, और दोनों ओर की सेनाएं अपने अपने

शिविरों में विश्राम करने गईं।

हे राजन ! उस दिन भीष्म ने पांडवों की कितनी सेनाको यमपुरी में भेजा, हाथी घोड़े और पदाति कितने मारे इसकी कोई गणना नहीं कर सकता। सेनाओं के हट जाने पर युद्ध क्षेत्र एक ऐसा लुटा हुआ नगर प्रतीत होता था, जिनके रहने वाले सभी मारे गए हों।

सातवां अध्याय।

पांडवों का परामर्श।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! आजके युद्धमें अपनी भारी क्षति देख कर युधिष्ठिरने अपने सब महां रथियों को बुला कर परामर्श करते हुए श्रीकृष्ण को कहा, हे वासुदेव पिता मह भीष्मके पराक्रम और बलकी कोई थाह नहीं। वह प्रति दिन हमारी सेना को इस प्रकार दलते हैं, जैसे उन्मत्त हाथी नड़ों के बन को रौंद डालता है। और हम सब में एक भी ऐसा नहीं जो उनको रोक सके। हे कृष्ण! इस संकट से निकलनेका कोई रास्ता मुझे नहीं सूझता। आज मुझे मालूम हो गया है कि भीष्मका प्रताप और बल अथाह सागर है, जिसमें युद्धका तूफान आया हुआ है, और हम अपने बाहुबल से उसको पार करना चाहते हैं। हे केशव! इस क्षुब्ध महां सागरसे हमें बाहर निकलने का कोई उपाय बताओ, हे धृतराष्ट्र! महाराज युधिष्ठिर के इन दीन वचनों को सुनकर श्रीकृष्ण बड़े दुःखी हुए वह उन को धैर्य्य देते हुए बोले हे राजन्! अर्जुन और

भीमके होते हुए आपको घबराना उचित नहीं। वह भीष्म तो क्या, देवताओं से भी जीते नहीं जासकते। हे राजन्! यदि अर्जुन युद्ध करने और भीष्म को मारने पर उद्यत न हों, तो आप मुझे युद्ध करने की आज्ञा दें। मैं सबके सामने भीष्म को ललकार उन्हे मारूंगा। हे युधिष्ठिर! सवेरे ही आप मेरा इन्द्रके समान पराक्रम देखें। मैं आप के लिये प्रत्येक कर्म करने को उद्यत हूं, चाहे वह कितना भी भयानक क्यों न हो। हे अजात शत्रु! आपके शत्रु मेरे शत्रु हैं और आपके मित्र मेरे मित्र हैं जिसे आप मारने की इच्छा करते हैं उसे मेरे हाथों मरा ही समझो परन्तु अर्जुन ने उपप्लव्य नगर में भीष्म को अपने हाथों मारने की प्रतिज्ञा की थी, इस लिए मैं जो कुछ करूंगा उससे विचार करके ही करूंगा। मैं अर्जुन के लिये और अर्जुन मेरे लिए प्राण देने के लिये तैय्यार है, इस में तनिक भी संदेह नहीं।

कृष्ण के वचन सुन कर धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा, हे केशव! जहां आप जैसे बुद्धिमान् और नीति विशारद मेरे साथी हैं मुझे अपनी विजय में कुछ भी संशय नहीं, परन्तु अपनी विजय और गौरव के लिए मैं आप की प्रतिज्ञा को भंग करवाना नहीं चाहता। हे वासुदेव! युद्ध से पहले आपने शस्त्र को न पकड़ने की प्रतिज्ञा की है सो आप उसी पर स्थिर रहें। परन्तु मुझे इस समय एक उपाय सूझता है। वासुदेव! युद्धारम्भ से पहले मैं भीष्म पितामह

के पास गया था। उन्होंने मुझे वचन दिया था, कि संकट के समय हम तुम्हारे हित की सम्मति देंगे, सो यदि आप उचित समझें तो हम और आप इसी समय पितामह के शिविर में पहुंचें और उनसे कोई उपाय पूछें, उनका हम पर अतिस्नेह है वह हमारे भंवर में पड़े हुए जहाज को अवश्य पार लगायेंगे। तब श्रीकृष्ण ने उनकी बात से सहमत होकर तत्काल पितामह के शिविर में चलने की तैय्यारी की।

पांचों पांडव और श्रीकृष्ण तथा सात्यकी सब ने अपने अपने शस्त्र और कवच उतार दिये और अर्द्ध रात्रि के समय मशालों के प्रकाश में भीष्म पितामह के शिविर में पहुंचे। वहां जाकर उन्होंने पितामह की पूजा की और युधिष्ठिर हाथ जोड़ कर बोले, हे दादा! हम आप की शरण आये हैं, अपने शरणागतों की लाज आप ही के हाथ में है।

पितामह उन्हें देख कर अति प्रसन्न हुए और उन को धीरज देते हुए बोले, हे युधिष्ठिर! हे भीम, अर्जुन!! हे नकुल सहदेव, हे श्रीकृष्ण! आप सब को देखकर हम गद्गद प्रसन्न हुए, कहो आपका आना कैसे हुआ? हे पुत्रो! मैं वही करूंगा जो कुछ कि तुम चाहते हो, कहो मैं तुम्हारा कौन सा काम करूं, जिस से तुम्हारा कल्याण हो?

पितामह के वचन सुन कर युधिष्ठिर सिर झुका कर बोले, हे दादा! हम आपको क्या बतलाएं, कौनसी बात

है जिसे आप नहीं जानते, युद्धारंभ हुए आज नौ दिन से ही बराबर आप हमारी सेना का नाश कर रहे हैं, नब्बे हज़ार मनुष्य आपके बाणों का ग्रास बन चुका है, और हाथी घोड़ों की तो कोई गिनती ही नहीं। आप के तेज के सन्मुख इन्द्रादिक देवता भी थर थर कांपते हैं, हमारी तो गणना ही क्या? हे पितामह! आपकी भयानक मार खाते हुए भी हम आप के प्राण नहीं लेसकते, क्योंकि अर्जुन और हमारे अन्य साथी आपके पितृ प्रेम में पगे हुए हैं। इस कारण हे सूर्य्य के समान तेजस्वी पितामह, कोई ऐसा उपाय बतलाओ जिस से हमारी मंझधार में बही जाती हुई नौका किनारे लगे।

भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर की इस करुणा जनक दशा को सुना तो उनका हृदय पिघल उठा। बाल्यावस्था का प्रेम जाग उठा। जो काम गांडीव धनुष न कर सका उसको कोमलता के चार शब्दों ने कर दिया जो पाषाण हृदय लोहे के बाणों से घायल न हुआ था, शब्द के बाणों ने उसे बींध डाला। एक तो उनको पांडवों पर पहले ही से प्रेम था। दूसरा वह उनको सचाई और धर्म पर समझते थे। इसके अतिरिक्त दुर्य्योधन ने कई बार उनको अपमानित किया था, कटु वाक्य कहे थे, जलाया था, और पांडवों का पक्षपाती कहा था, उससे वह दुखी थे इन सब बातों को सोच कर वह बोले हे युधिष्ठिर! मैं तुम्हारी करुणावस्था को समझ गया, परंतु जब तक मेरे तन में प्राण हैं, जब

तक मेरे धड़ पर सिर है, तुमको कभी अपनी विजय की आशा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि जिस को एक बार मैं सहायता का वचन दे चुका उसका जीते जी अनर्थ न होने दूंगा । इसलिये अपने संकट का ध्यान रख कर तुम युद्धमें मेरे प्राण ले लो इसमें मुझे बहुत सुख होगा, और मेरा यह विचार है, कि कदाचित् मेरी मृत्यु होने पर कौरवों और पांडवों का फिर मेल हो जाय । हे बेटा ! अब मैं अपनी मृत्यु की चाबी तुम्हारे हाथ में देता हूं । मुझे संसार में दो ही मनुष्य मार सकते हैं, एक तो महां पराक्रमी गांडीवधारी अर्जुन और दूसरा शिखंडी । हे राजन् ! यह जो शिखंडी तुम्हारी सेना का महारथी और सेनापति है, यह वास्तव में स्त्री है, पूर्व-जन्म में यह स्त्री थी पुरुषत्व इसे पीछे प्राप्त हुआ है, यदि यह मुझ पर प्रहार करेगा तो मैं इसे कभी न मारूंगा और नां ही इस पर हाथ उठाऊंगा। यह मैंने तुमको अपनी मृत्यु की चाबी देदी अब जैसा तुम उचित समझो करो । यही हमारा उपदेश है ।

भीष्म पितामह के यह वचन सुनकर अर्जुन बालकों के समान रोते हुए बोले, हे कृष्ण ! मैं अपने दादा के साथ युद्ध में कैसे लड़ूंगा, हाय ! जिस दादा की गोद में बैठ कर हम ने धूल से भरे हुए अपने वस्त्रों से उन को मैला किया, आज उनके कलेजे में किस प्रकार बाण मारूंगा । हे वासुदेव ! जब बाल्यावस्था में मैं स्नेह से इन को दादा कहता था तो यह प्यार से कहा करते थे कि

मैं तेरा नहीं तेरे पिता का दादा हूं, आज उन्हीं की छाती को बींधने के लिये किस प्रकार अपनी आंखों से निशाना बांधूंगा, मैं इस महात्मा का वध न करूंगा, चाहे मेरी जय हो अथवा पराजय। तब श्रीकृष्ण जी बोले हे अर्जुन! उपप्लव्य नगर में सबके सामने तुम ने भीष्म को मारने की प्रतिज्ञा की, अब क्षत्रिय हो कर कैसे अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ोगे। यदि पांडवों का क्षय और अपयश नहीं चाहते तो इस महावीर युद्ध दुर्मद भीष्मको मार डालो, इसको मारे बिना तेरी विजय न हो सकेगी और नां ही तेरे बिना इस यमराजके तुल्य शूरबीरको और कोई मार सकता है। बृहस्पति के वचन पर विचार करो, उन्होंने यह कहा है, कि पिता दादा भाई बन्धु अपना पराया जो कोई भी आततायी हो उसे युद्ध में मारदे, कभी जीता न छोड़े तब अर्जुन बोले हे केशव! शिखंडी ही इसको मारने का निमित्त होगा, इसे आगे करके मैं वह काम करूंगा जिसे करते हुए मेरा हृदय रो रहा है अर्थात् पितामहका बध करूंगा हे धृतराष्ट्र! इस प्रकार निश्चय करके वह सब अपने अपने कैम्पों में जाकर सो गए।

आठवां अध्याय।

दसवां दिन।

भीष्म की मृत्यु।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही कृष्ण अर्जुन आदि सब पांडव शिखंडी को आगे कर युद्ध में निकले। उस दिन

अर्जुन ने बड़ा दुर्भेद्य व्यूह बनाया और उसके मुख पर शिखंडी ही को खड़ा किया। तब दोनों ओर से शंख बजाए गये और महा भयंकर युद्ध होने लगा। सव्यसाची अर्जुन भीष्मके सामने पहुंचने के लिए प्रलय कालके मेघ के समान कौरवों पर बाण वृष्टि करने लगे। आज उन्होंने भीष्मके मार डालने का निश्चय कर लिया था। इस कारण उन तक पहुंचने तक जो भी सामने आया उसी को मार गिराया। उनके गांडीव धन्वा की डोरी वज्रके समान क्रम क्रम से कठोर होने लगी। तब अपनी सेना का नाश होते देखकर दुर्योधन भीष्म के निकट जाकर बोले हे पितामह! अर्जुन हमारी सेना को भीषण मारसे व्याकुल कर रहा है, आप अपनी सेनाकी रक्षा करें। तब भीष्म पितामह बोले हे बेटा! घबराओ नहीं, आज मैं पांडवों का नाश करने में कोई बात उठा न रखूंगा। आज मेरा अंतिम युद्ध है जिसमें या तो सब पांडव मारे जाएंगे या अपने प्राण त्याग कर इसी युद्धक्षेत्रमें मैं भी गिर जाऊंगा। इतना कह कर पितामह क्रोध से दांत पीसते हुए अर्जुन और उसकी सेना पर बाणों की प्रचण्ड वर्षा करने लगे। उधर अर्जुन और शिखंडी की रक्षाके लिए भीम नकुल सहदेव युधिष्ठिर सात्यकी तथा अन्य सब महारथी भीष्म पर एक ही साथ सब ओर से बाण मारने लगे। उन्हें एक स्थान पर एकट्ठे मार करते देखकर दुर्योधन दुःशासन भगदत्त भूरिश्रवा आदि सब कौरव

बीर भी भीष्म की सहायता के लिए उसी स्थान पर आ गए तब दोनों ओर से घोर युद्ध होने लगा। अर्जुन के गांडीव धन्वासे छूटे हुए शर-समूहने भीष्मको रथ और घोड़ों सहित ढांप लिया, परन्तु इससे वह तनिक भी न घबराये और अपने बाणों से अर्जुनके सब बाण काट कर सूर्य्य के समान फिर युद्ध क्षेत्रमें चमकने लगे। आज प्राणोंको त्याग देना है अथवा पांडवों को परास्त करना है इस विचार से जी तोड़ कर युद्ध कर रहे थे। उनके बाणों से क्षण क्षणमें कटे हुए सिरों की वृष्टि हो रही थी, हाथियों सहित सवार सैंकड़ों की संख्यामें एक साथ भूतल पर गिरते थे। उस समयभीष्म रुद्र मूर्त्ति धारण किये हुए बिजली के समान चारों ओर घूमते थे और धनुष उनका गोल मंडलाकार था। भीष्म के ऐसे भयानक कर्म को देखकर कौरव उनकी जयजयकार करने लगे। आज उन्होंने शिखंडी की सेनाको तीक्ष्ण बाणोंसे ऐसे जलाया जैसे दावानल अग्नि बनको। तब क्रोधसे शिखंडी ने भीष्म की छाती में पांच बाण मारे और कहा हे भीष्म ! तुम्हारे समान इस समय संसार भरमें दूसरा कोई योद्धा नहीं तुम क्षत्रियों को ऐसे दग्ध कर रहे हो जैसे दीप-शिखा पतंगेको परन्तु यह जान कर भी मैं तुमसे युद्ध करूंगा और अपनी भुजाओं से तुम्हारा बध करूंगा। तब महारथी अर्जुन ने इस अवसर को उचित समझ कर शिखंडी को कहा- हे महांबाहो मैं तुम्हारे शत्रुओं का नाश करता

हुआ तुम्हारे पीछे पीछे रहूंगा तुम पूरे बलसे भीष्म पर प्रहार करो, यदि आज तुम भीष्म को बिना मारे लौटोगे तो लोग हमारी निंदा करेंगे, हे बीर ! भीष्म को मार कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो। मैं तुम्हारे पीछे चलता हुआ द्रोण, कृप, शल्य, दुर्योधन जो तुम्हारे निकट आयेगा उसका नाश करूंगा। इसके अनंतर दोनों ओर से बड़े वेगसे धावा हुआ। अर्जुन ने भीष्म पर बाण-वृष्टि करनी आरंभ की तब भीष्म की रक्षा चाहता हुआ दुःशासन अर्जुनके रथ पर टूट पड़ा। परन्तु अर्जुनने बाणोंसे उसके धनुष को काट दिया और फिर उसके रथको चूर चूर कर दिया दूसरी ओर भीमसेन अकेले ही दस महारथियों के साथ युद्ध कर रहे थें, अर्जुन दुःशासन का मान भंग करके भीमके पास पहुंचे। यह देखकर सुशर्मा तुरंत वहां पहुंचा और अर्जुन को बाणों से व्याकुल करता हुआ सिंहके समान गर्जने लगा। तब नकुल और सहदेव वहां पहुंच कर इस प्रकार चारों ओर चमकने लगे जैसे बादलों में बिजली। उनके हाथों सैंकड़ों सिर कट कट कर रण भूमि में ओलों के समान गिरने लगे। तब भीष्म अग्निके समान पांडव रूप घासके ढेरमें फिरने लगे। वह चारों ओर मनुष्य हाथी घोड़े और रथों का नाश करते महां भयंकर कर्म कर रहे थे। तब धृष्टद्युम्न की आज्ञासे सोमक और संजय सबके सब एक साथ भीष्म पर गिरे जैसे अग्निको बुझाने के लिए मट्टीके ढेर। हे धृतराष्ट्र। उनसे व्याकुल हुआ

हुआ पितामह प्राणोंका मोह छोड़ कर युद्ध करने लगा और राजा विराटका प्रिय भाई शतानीक मार डाला। इस प्रकार दशों दिशाओं को पीड़ित करते हुए भीष्म दोनों सेनाओं के मध्य में आकर डट गये। उस समय ग्रीष्म ऋतु के दोपहर के सूर्य्य के समान उनके देदीप्यमान मुख पर किसी की आंख न ठहर सकती थी। उनके हाथों सहस्रों मनुष्य और पशु मारे गए, पृथ्वी पर लहू की नदी बह निकली। तब श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन! अब चूकने का अवसर नहीं, यही समय है भीष्म को मार कर इस युद्ध रूपी सागर से अपने जहाजको पार लगाओ। तब अर्जुन ने शिखंडी को आगे करके भीष्मके रथको बाणों से ढक दिया। वह महांवीर भी अर्जुन के बाणों को फुर्तिसे काटने लगे। शिखंडी भी शस्त्रों की भंकार करता भीष्म पर ही लपका। धृष्टद्युम्न, सात्यकी, चेकितान, द्रुपद यह सब मिलकर भीष्म ही पर टूट पड़े। अभिमन्यु और द्रौपदी के पांचों पुत्र भी जो रणमें कभी पीठ नहीं दिखाते थे तीक्ष्ण धार वाले बाणों से भीष्म को पीड़ित करने लगे और पितामह अपने स्वभाविक तेजसे इन सबके प्रहारोंका उत्तर देते हुए पांडवों का क्षय करने लगे। हे राजन्। सारे सृंजयों ने मिल कर भीष्मको व्याकुल कर दिया। उनका कवच स्थान स्थान से टूट गया। परन्तु वह चलायमान न हुए और उनकी धनुषबाण रूपी ज्वाला बाणों के वायु से मिल कर

और भी प्रचण्ड हो गई । भीष्म चारों ओर घूम २ कर रथों हाथियों और घोड़ों सहित मनुष्यों को भूतल पर गिराने लगे । उनकी बृद्धावस्था में युवकों कीसी फुर्ती देख कर सब भयभीत और चकित थे । तब अर्जुन क्रोधसे फुंकार मारते हुए शिखंडी को आगे करके उन पर वार करने लगे । उन्हों ने पितामह के धनुष को काट दिया । धनुष के कटने पर शिखंडी ने भीष्म को ललकार कर दस बाण मारे । परन्तु पितामह ने उसकी ओर से मुंह मोड़ लिया और दूसरे सैनिकों पर बाणों की तीव्र वृष्टि करते रहे । तब अर्जुन ने फिर उनके धनुष को काट डाला । इस अवसर में फिर शिखंडी ने पंद्रह बाण उनके हृदय में मारे, पंरतु उन बाणों से पीड़ित होकर भी भीष्म ने शिखंडी को उत्तर न दिया और नया धनुष लेकर अर्जुन पर बाण मारे। इस पर क्रुद्ध हुए अर्जुन बार बार उनके धनुष काटने लगे । इस अवसर में शिखंडी बार बार उन पर तीक्ष्ण बाण छोड़ता जाता था परंतु उसके बाणों से पर्वत के समान डटे हुए भीष्म किंचितमात्र भी न हिले । तब क्रोध कर अर्जुन ने गांडीव धनुष को जोर से पकड़ा और पच्चीस बाणों से भीष्म का हृदय बींध डाला । इन बाणों के लगते ही भीष्म अत्यंत पीड़ित होकर दुःशासन से बोले, हे महा-बाहो ! यह बाण निस्संदेह अर्जुन के हैं जो मेरे कवच को फोड़कर कलेजे के अन्दर धस गये हैं । यह बिजली के समान तड़प कर गिरते हुए बाण शिखंडी के नहीं हैं । वज्र

के समान कठोर और बिजली के से वेग वाले यह बाण जो मेरी छाती को चीर कर अन्दर धस गये हैं, शिखंडी के नहीं हैं। यह बाण जो मेरी देह को इस प्रकार अन्दर ही अन्दर चीर रहे हैं, अर्जुन के सिवा अन्य के नहीं हैं। दूसरे सब राजे मिलकर भी मुझे पीड़ित नहीं कर सकते, निस्संदेह यह गांडीव धनुष से निकले हुए सर्प हैं, जो मेरे प्राण लेरहे हैं। इतना कह कर हे धृतराष्ट्र! भीष्म ने पांडवों के नाश करने के लिये अर्जुन पर एक तीक्ष्ण शक्ति चलाई। परंतु सव्यसाची अर्जुन ने सब कौरवों के देखते २ उसके रास्ते ही में तीन टुकड़े कर दिये। यह देखकर भीष्म ने मार देने अथवा मर जाने के विचार से, सोने की ढाल और एक भारी खड्ग हाथ में ली, और रथ से नीचे कूद पड़े। परन्तु अर्जुन ने रथ से उतरते २ ही उनकी ढाल और खड्ग को खंड २ कर दिया। उस समय हे धृतराष्ट्र! पांडवों ने आकाश को गुंजा देने वाला जयकारा बुलाया, उधर कौरवों ने भी सिंहनाद किया। उस समय दोनों ओर के सैनिक एक दूसरे से गुत्थम गुत्था हो गये और बिजली के समान लाखों तलवारें परस्पर टकारने लगीं। उस युद्ध सागर में भीष्म बड़े ग्राह के समान सैनिकों का बध करने लगे। पृथ्वी रुधिर में डूब गई। आज दसवें दिन ऐसा भयंकर युद्ध हुआ, कि दिग्गज और कमठ भी डोल गए। पांडव पक्ष के सहस्रों योद्धा भीष्म ने अपनी तलवार से यम पुर में भेज दिए। इसके पश्चात् अर्जुन ने बाणों की घोर वृष्टि से

सब कौरवों को मार २ कर भगा दिया और अकेले भीष्म को अपने महारथियों सहित घेर लिया। भीष्म के चारों ओर मार डालो, पकड़लो, गिरा दो आदि के शब्द सुनाई देने लगे। हे धृतराष्ट्र! चारों ओर से घिरे हुए अकेले भीष्म पितामह पर इतनी बाण वृष्टि हुई, कि उनके शरीर में एक अंगुल स्थान भी बिना बाणके न रहा। इस प्रकार वह अकेला वृद्ध परन्तु सारे संसार को जीतने की सामर्थ्य रखने वाला भीष्म अर्जुन के बाणों से बुरी तरह घायल हुआ। परन्तु फिर भी वह अस्त होते हुए सूर्य्य के समान प्रतापी पांडवों पर बाण छोड़ता रहा परन्तु अर्जुन के छोड़े हुए बाण अपना काम कर चुके थे उनका विष पितामह के रोम २ में फैल गया था, रक्त के घड़ों के घड़े निकल चुके थे, वह लड़ते २ शिथिल हो गए और सूर्य्यास्त होने से कुछ ही पहले वह अपने पुत्रों और पौत्रों को देखकर पूर्व दिशामें सिर करके धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़े। उनके गिरने पर बड़ा धमाका हुआ जैसे कोई हाथी गिरता है। हे धृतराष्ट्र! उनके गिरते ही हम सब के दिल भी गिर गए। बड़े ताड़ वृक्षके समान वह पृथ्वी पर गिरे परन्तु वह बाणों से भरे हुए थे, इस लिए भूमिको न छुए। वह वीरोचित बाणों की सेजा पर लेट गये, जिनका केवल सिर नीचे की ओर लटक रहा था। पितामह को गिरा हुआ देखकर दुःशासन घबराया हुआ द्रोणके पास पहुंचा उस समय उसके मुखका रंग सफेद हो गया था, मानों

एक बिन्दु लहु भी शरीर में न हो उसके मुखसे बात नहीं निकलती थी मानों शब्द होठों पर जम गए हो। उसने डबडबाए हुए नेत्रों से द्रोणको भीष्मके गिरने का समाचार सुनाया। द्रोण इस समाचार को सुनकर मूर्छित हो गए, कुछ देर बाद जब उनको चेतना आई तो उन्होंने युद्ध बंद करने का शंख पूर दिया। तब सब सेनाएं वहांसे हट गई, दावानल अग्निके समान भीष्मकी मृत्युका समाचार सब सेनाओं में फैल गया, जिसने सुना वही रोया, युधिष्ठिर अर्जुन तथा कृष्णके मुख उतर गये, दुर्योधनने सिरके बाल नोच लिये। हे धृतराष्ट्र! सूर्य्यसमान प्रतापी भीष्म के अस्त होने से दोनों ओर शोक की महांरात्रि होगई, चारों ओर उदासीनता के बादल छागए और क्षत्रियों की आंखों ने झड़ी बांधदी। इसके अनंतर सब राजाओं ने कवच उतार दिए और नंगे सिर भीष्म के निकट इकट्ठे हो गए और प्रणाम करके रोने लगे। कौरव और पांडव दोनों को खड़े देखकर धर्मात्मा भीष्म बोले हे वीरो! हे क्षत्रियो! हे महारथियो! मैं तुमको देखकर प्रसन्न हुआ, अब तुम आनंद से रहो हम तुमसे वियुक्त होते हैं। आज हमारे धर्म कर्म और जप तप तथा संयम का फल हमें मिल गया। भगवान ने हमारी लाज रखी और वीरोचित बाण शय्या हमें प्राप्त हुई परन्तु जब तक सूर्य्य उत्तरायण न हो हम प्राण न त्यागेंगे। इसलिए हे नरपतियो! हमारे उचित सिरहाना हमारे सिरके नीचे रखो

जिससे लटकता हुआ हमारा सिर शय्याके बराबर हो जाय। तब दुर्योधन कर्ण शल्य शकुनि सब दौड़ते हुए शिविरमें गए और नाना प्रकार के रेशमी तकिये लेकर वह उपस्थित हुए। हे धृतराष्ट्र! उनकोमल सिरहानों को पितामहने पसंद न किया और मुस्करा करके बोले हे राजाओ! यह सिरहाना रण भूमि में प्राण देने वालों के उपयुक्त नहीं है। इसके अनंतर वह अर्जुन से बोले हे बीर! तुम मेरे सिरके नीचे वीरों के योग्य सिरहाना दो, तब अर्जुनने कांपते हुए हाथों से धनुषको पकड़ा और तीक्षण बाण उनके सिर के पिछले भाग में मार कर गाड़ दिया। इस प्रकार जब अर्जुनने उनको बाणोंकी शय्याके योग्य सिरहाना दिया तो वह प्रसन्न होकर बोले हे नरश्रेष्ठ! त्तत्रियोंको ठीक इसी प्रकार शूर शय्या पर शयन करना चाहिये यही त्तात्र धर्म है, अब तुम निश्चिन्त रहो, मैं इसी शय्या पर लेटूंगा जब तक सूर्य्य नारायण उत्तरा-यण नहोंगे। हे सुयोधन! अब तुम मेरे चारों ओर एक गहरी खाई खुदवाओ, जिससे कोई हिंसक जीव मेरे निकट न आए। हे धृतराष्ट्र! दुर्योधन और युधिष्ठिर दोनों ही उस समय बाण निकालने वाले चतुर वैद्यों को लेकर वहां पहुंचे। वैद्योंको देखकर भीष्म बोले हे पुत्रो! इस समय इन वैद्योंकी आवश्यकता नहीं, उन्हें बहुत सा धन और रत्न आदिक पुरस्कार देकर लौटा दो हमने वीरोचित गति को प्राप्त किया। हे राजाओ! अब बाणों

की सेजा पर लेटा हूं, इस सेजा समेत ही मेरा दाह संस्कार करना। तब उन्होंने वैद्योंको बहुत सा धन रत्न आदि देकर लौटा दिया। इसके अनंतर कौरवों और पांडवों सबने भीष्म की परिक्रमा की और उनके चरणों में प्रणाम करके शोकातुर हुए हुए रुधिर से लतपत अपने अपने शिविरों में गए। हे धृतराष्ट्र! रात्रि बीतने पर बड़ी भोर ही सब पांडव और कौरव भीष्म पितामहके पास गये। और उनको प्रणाम करके बैठ गए। उस समय भीष्म बाणोंकी पीड़ा से अत्यंत पीड़ित हो रहे थे, और विषैले बाणोंकी विष उनके रोम रोमको दग्ध कर रही थी। भीष्मने उनसे जल मांगा। तब दुर्योधन चांदी सोने के बर्तनों में जल लाया। जलको देखकर भीष्म बोले हे पुत्रो! मैं अब इस संसारमें नहीं हूं इस लिए किसी मनुष्य का दिया हुआ भोग पदार्थ अब मैं नहीं भोग सकता। इसके पश्चात् उन्होंने अर्जुनको जल देनेका संकेत किया। तब अर्जुन उसी समय अपने रथ पर चढ़े। गांडीव धनुषको खेंचकर कान तक लेगये और भीष्म की दाईं ओर पृथ्वी में जोर से बाण छोड़ा। हे राजन्! वह बाण अर्जुनके बाहु बलका प्रमाण था, वह भूमिको छेदकर पाताल में जलकी तय तक खुभगया और वहांसे अमृतके समान निर्मल शीतल जलका स्रोतनिकल आया। उस शीतल जलको पीकर भीष्मने अपनी प्यास बुझाई। हे धृतराष्ट्र! अर्जुनके इस अद्भुत कर्म को देखकर सब क्षत्रियों ने धन्य हो कह कर उसका

सन्मान किया। भीष्म भी प्रसन्न होकर सब राजाओंके सन्मुख बोले हे अर्जुन भूमण्डल में सब राजाओं में तुम श्रेष्ठ हो तुम्हारे तेज और पराक्रमके सामने सब भूपति ऐसे ही हैं जैसे सूर्य्य के सामने तारे।

इसके पश्चात् पितामह बोले हे दुर्योधन! देख किस प्रकार अर्जुनने अपने बाहुबल से जल का स्रोत निकाला है। हे राजन्! आग्नेय वायव्य वारुण सम्मोदन आदि इस संसार और स्वर्ग लोक में जितने भी अस्त्र शस्त्र हैं, अर्जुन उन सब को जानता है, अथवा कंस निकन्दन श्रीकृष्ण भगवान इनको जानते हैं, प्यारे सुयोधन! ऐसे पराक्रमी को युद्ध में जीतना असम्भव है। ऐसे पुरुष से तुम को संधि कर लेनी चाहिये। हे सुयोधन! अब बहुत लड़ चुके सहस्रों मनुष्यों की हत्या होचुकी, आज इस युद्ध के यज्ञ में मैंने भी अपनी बलि चढ़ादी, अब तुमको मेलकर लेना चाहिये, पांडवों का आधा भाग उनको दे दो और तुम दोनों भाई भाई के समान एक दूसरे को गले से लगाओ। हे धृतराष्ट्र! इतना कहते २ उनका कण्ठ रुक गया, वह और न बोल सके और अपने आत्मा को स्थिर करके चुप हो गये। हे राजन्! आज भरत कुल का सूर्य्य अस्त हो गया, पितामह भीष्म मारे गये, वह शर शय्या पर पड़े उत्तरायण सूर्य्य की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जिसके बल और वीर्य्य के भरोसे आपके पुत्रों ने रण ठाना था, आज वह शिखण्डी के हाथों युद्ध में गिर गये हैं। युद्ध में जिनको खड़ा देखकर पाण्डवों की सेना

डर के मारे ऐसे कांपती थी, जैसे सिंह को देखकर गौओं का समुदाय वही शत्रुओं के नाश करने वाले लगातार दस दिन तुम्हारी सेना की रक्षा करते हुए सूर्य्य की नाईं अस्त हो गये।

संजय के मुख से भीष्म की मृत्यु का हाल सुनकर धृतराष्ट्र मूर्छित होकर गिर पड़े, उनके नेत्रोंके सामने अंधेरा छागया कुछ देर बाद वह सचेत हुए तो बालकों की नाईं हाय दादा हाय दादा कहते रोने लगे॥

इति भीष्म पर्व समाप्त

अथ द्रोण पर्व

पहला अध्याय।

युद्ध का ग्यारहवां दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! आज बड़ी भोर कुछरात्रि रहते ही कर्ण उस स्थान पर पहुंचे जहां भीष्म पितामह शरशय्या पर पड़े हुए थे। उस समय उसके हृदय से भीष्म का वैर विरोध दूर हो चुका था। वह शोक और दुःख व पश्चाताप करता हुआ पितामहके निकट पहुंचा और दोनों हाथ जोड़ दण्डवत करके उनके पायताने खड़ा हो गया। तब भीष्मने दशम द्वारसे प्राणों को उतार कर कर्ण को देखा, और अत्यंत धीरे २ बोले, हे कर्ण! हे वीर शिरोमणि!! मैं तुम्हें देख कर प्रसन्न हुआ अब मैं इस मर्त्य लोकमें नहीं हूं, इसलिये यहां के सब वैरविरोधों को भी त्याग चुका हूं। हे पुत्र! अब मैं तुमको यही उपदेश देता हूं कि इस युद्ध की अग्निको मिलापके जलसे शान्त करो, यदि सुयोधन लोभवश नहीं मानता तो तुम को अलग हो जाना चाहिये, तुम वास्तवमें युधिष्ठिर के सगे भाई और कुन्ती के गर्भसे कंवारे पनमें उत्पन्न हुए हो, तुम्हारे युद्धसे अलग होने पर कौरव वंशका बचाव होगा। यह सुन कर कर्ण ने कहा हे तात! आप सत्य कहते हैं मैं कुन्ती का पुत्र और युधिष्ठिरका भाई हूं परन्तु उससे त्याग किया गया मैं जन्मसे ही सुयोधनके आश्रित हूं।

उन्हीं के अन्न से पला हूं, उन्हीं की कृपासे अंगदेश का राजा बना हूं, और सच पूछो तो मेरे ही भरोसे पर सुयोधनने यह युद्ध छेड़ा है, अब इस समय जबकि लाखों मनुष्य कट चुके हैं और हम इतनी दूर आ पहुंचे हैं, कि पीछे हटना असंभव और सुयोधन पर अत्याचार है, लोग मुझे भीरु कहेंगे, मैं लोक परलोक कहीं का न रहूंगा, इस लिये मुझे आशीर्वाद दीजिये और युद्ध विषयक कोई सम्मति दीजिये। तब भीष्म ने उसको दृष्टिसे ही प्यार दिया और युद्धमें क्षात्र धर्मको निष्कलंकनिभाने का उपदेश दिया। इसके अनंतर भीष्मने फिर प्राणोंको दशम द्वारमें चढ़ा लिया और चेष्टा हीन हो गये। तब कर्णने उनकी परिक्रमा की और शिविर को लौट आए। जब सूर्य्य उदय हुआ तो कर्ण मन्त्री मण्डल सहित दुर्योधन के कैम्प में पहुंचे। अपने शिविर में बहुत दिन के पश्चात् कर्ण को देख कर वह पितामह के शोक को भूल गये, और ऐसे प्रसन्न हुए जैसे नौका के डूब जाने पर अथाह नदी में बहते हुए मनुष्य को जहाज़ मिल जाए। वीरोचित शिष्टाचार करके दुर्योधन बोले हे महाबाहो! बहुत दिन के बाद तुम को देखकर प्रसन्न हुआ। पितामह के युद्ध क्षेत्रमें गिर जाने पर मुझे एकमात्र तुम्हारा ही सहारा है। उन्हों ने दस दिन तक महा घोर संग्राम करके हमारी रक्षा की और अब देवलोक को चले गये, अब तुम अपने धनुष की छाया में कौरव सेना की रक्षा करो।

तब कर्णने कहा हे राजन्! भीष्म पितामह बड़े पराक्रमी और बल में अथाह सागर थे, वह यदि चाहते तो तीनों लोकों को जीत लेते परन्तु पांडवों पर वह मन ही मन दया रखते थे, इसी कारण उन्हों ने अपने प्राण दे दिये। परन्तु मैंने जो कुछ तुम्हारे सामने प्रतिज्ञाएं की थीं, उन्हें पूरा करूंगा, और पांडवों को अपने बाणों से इस प्रकार उड़ाऊंगा जैसे आंधी बादलों को। परन्तु इस समय जब कि द्रोणाचार्य्यजी जो कि जाति से ब्राह्मण चार वेद षटशास्त्र और अंगों व उपांगों के जानने वाले हैं, जिनके जोड़ का धनुषधारी अनुभवी और पराक्रमी संसार भरमें नहीं, उनको छोड़कर मुझे सेनापति बनाना उचित नहीं है, आप शीघ्र ही आचार्य्यके पास जावें और उन्हे सेनापतिपदसे विभूषित करें। कर्णके वचनको सुनकर दुर्य्योधन आचार्य्यके पास गये और प्रणाम करके बोले हे गुरु! आप चार वर्णोंमें उत्तम ब्राह्मण हैं, शास्त्रके जानने वाले हैं, आयु में बड़े हैं, आपकी बुद्धि और बलका लोहा इस समय संसार में प्रसिद्ध है, इस लिये हे आचार्य्य! आप ही इन राजाओं की रक्षा करने में समर्थ हैं, आप सेनापतिके पदको विभूषित करके हम सबकी रक्षा करें जैसे इन्द्र देवताओंकी। यह सुनकर द्रोण बोले हे राजन्! जो गुण आपने मुझमें कहे हैं, मैं उन सबको पूरा करने की इच्छा से पांडवों से युद्ध करूंगा। इसके अनंतर सारी सेनाके सामने दुर्योधनने द्रोणाचार्यका अभिषेक किया।

कौरव सेनामें बाजे बजने लगे और शंखोंकी ध्वनि होने लगी। सेनापति के पदको प्राप्त करके द्रोण सारी सेनाके बीचमें दुर्योधनसे बोले हे राजन्! भीष्मके मरजाने पर तुम ने मुझे सेनापति बनाया है, इससे मैं तुम पर प्रसन्न हुआ, क्या मांगते हो, मांगो आज मैं तुम्हारी किस अभिलाषा को पूरा करूं? दुर्य्योधन बोले हे गुरो! युधिष्ठिर को जीता पकड़कर मेरे पास लाईये यही मेरी सब से बड़ी अभिलाषा है। तब आचार्य्यने प्रसन्न होकर कहा, धन्य है युधिष्ठिर, सचमुच वह अजात शत्रु है जिसे तुम भी मारना नहीं चाहते। यह सुनकर दुर्योधन बोला हे आचार्य्य! युधिष्ठिर को मैं मारना नहीं चाहता ऐसा नहीं है, मैं उसे एक क्षण भी जीवित देखना नहीं चाहता, परन्तु इस समय उसके मारने से डरता हूं यदि वह मार दिया गया तो अर्जुन हमारा सर्वनाश कर देगा इसमें तनिक भी संदेह नहीं, इसलिये उसे पकड़ कर एक बार फिर जूएके दांवमें बनबास भेजनेकी इच्छा है। दुर्योधनके छलसे भरे हुए इन वचनों को सुनकर आचार्य्य को बहुत दुख हुआ परन्तु वह अपने मनके बेगको दबाकर बोले हे राजन्! यदि वीर अर्जुन युधिष्ठिर की रक्षा न कर रहा हो, और युधिष्ठिर युद्धसे भाग न जाए तो मैं निसंदेह उसको बांधूगा इस प्रकार प्रतिज्ञा लेकर दुर्योधन मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ।

हे धृतराष्ट्र! द्रोणाचार्यके इस संकल्पका पांडवोंको

चर ने युधिष्ठिर के पास पहुंचाया। तब वह अर्जुन को बोले, हे महाबाहो! आचार्य्य ने मेरे पकड़ने की प्रतिज्ञा की है, इसलिये तुम मुझ से दूर न जाना। अर्जुन बोले हे राजन्! मेरे जीते जी आप को द्रोण अथवा अन्य किसी शस्त्रधारी से भय नहीं करना चाहिये। इसके अनंतर दोनों ओर की सेनाएं महां कोलाहल करती दो समुद्रों के समान गर्जती हुई टकरा गईं। द्रोणाचार्य्य सूर्य्य के समान दमकते हुए रथ पर बैठे पांडवी सेना को इस प्रकार जलाने लगे जैसे अग्नि ईंधन को। प्रचंड बाणों की वृष्टि से उस अनुभवी वीर ने देखते २ लहु की नदी बहा दी। उस समय आचार्य्य की मार को न सह कर पांडवी सेना इस प्रकार भागने लगी जैसे सिंह को देख कर गौएं। रास्ता साफ होने पर द्रोणाचार्य्य युधिष्ठिर की ओर दौड़े। परन्तु युधिष्ठिर के दाएं खड़े हुए द्रुपद कुमार ने उसे इस प्रकार रोका जैसे पर्वत समुद्र को।

अपने रास्ते में द्रुपद कुमार को धावा करते देखकर आचार्य्य ने अर्ध चंद्राकार बाण से उस का सिर काट लिया और उसकी शेष सेनाको मार मार कर इस प्रकार उड़ाया जैसे धुनिया रूई को। जब यह बाधा दूर हुई तो आचार्य्य मुख्य २ योद्धाओं को मार कर फिर युधिष्ठिर के सामने आए। तब युगंधर नामक पांचाल कुमार ने बड़े वेग से आचार्य्य पर बाण वृष्टि की, परन्तु छेड़े हुए सर्प के समान द्रोण ने भाले से उसको भी मार गिराया

और बड़ी फुर्ति से युधिष्ठिर को तीक्ष्ण बाणों से बींध डाला। तब तत्काल पाञ्चाल कुमार व्याघ्रदत्त बाज की तरह आचार्य्य पर झपटा और तीखी धार वाले पचास बाणों से आचार्य्य को छेद डाला, और ज़ोर २ से अट्ट-हास करने लगा। आचार्य्य को उस की अपमानजनक हंसी पर बड़ा क्रोध आया। उन्हों ने नेत्रों की पुतलियां घुमा कर धनुष को उस पर ताना, और एक ही बाण से व्याघ्रदत्त का सिर भूमि पर गिरा दिया, और दूसरे बाण से उस के सहायक सिंह सेन का सिर भी काट लिया। इसके अनंतर चारों ओर ताक २ कर बाण मारते और फ़ुर्ति से पुतलियां घुमाते हुए आचार्य्य यमराजके समान फिर युधिष्ठिर के सन्मुख आ खड़े हुए।

द्रोणके सामने अनाथ और निस्सहाय युधिष्ठिर को देख कर पांडवी सेना में हाहाकार मच गया, सब योधा यही कह रहे थे हा! राजा पकड़े गये, मारे गये। तब युधिष्ठिर को बचाने का कोई उपाय न देख कर योद्धाओं ने भयसूचक शंख बजाए। हे धृतराष्ट्र! शंखों की ध्वनि सुनकर एका एक महारथि अर्जुन रथसे पृथ्वी को कंपाय-मान करते वहां आ पहुंचे। अर्जुन ने आते ही गांडीव धनुष से सर्पों के समान असंख्य बाण छोड़े, जिस से व्याकुल हुई हुई आचार्य्य की सेना जी छोड़ कर भागने लगी। हे धृतराष्ट्र! अर्जुन की वह फ़ुर्ति आश्चर्य्य जनक थी, उनका धनुष गोल मंडलाकार हो गया, उस समय

उनको बाण चढ़ाते खैंचते और मारते किसी ने न देखा। उनके बाणों से भूमि आकाश और दिशाएं छा गईं, मानो कुरुक्षेत्र बाणमय हो गया था । अर्जुन के इस अद्भुत कार्य को देखकर आचार्य्य निराश हो गए। इतने में आकाश पर अंधकार हो गया, पृथ्वी पर रक्त की नदी बह निकली थी तब संध्याकाल होने पर आचार्य्य ने अपनी सेना को लौटा लिया। अर्जुन भी प्रसन्न चित्त हुए २ अपनी सेना सहित युद्ध क्षेत्र से लौटे। और आज का युद्ध समाप्त हुआ।

युद्ध का बारहवां दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! अर्जुन के हाथों अपने सैनिकों के बहुत बड़े विनाश को देखकर दुर्योधन आज बड़ी भोर आचार्य्य के पास पहुंचे और उदास मुख हो कर बोले, हे आचार्य! आपने युधिष्ठिर को जीते जी पकड़ने का वर दिया, उसे पूरा करने में किस कारण देर करते हो आपके सामने इन्द्रादिक देवता भी नहीं ठहर सकते, यह युधिष्ठिर तो क्या, कल आप के देखते २ अर्जुन ने हमारे दल के सहस्रों वीर भूमि पर सुलादिये, हे तात्! बड़े लोक अपने वचन को निभाने में आगा पीछा नहीं करते। दुर्योधन के व्यंग भरे वचनों को सुनकर द्रोण बोले, अर्जुन के होते हुए युधिष्ठिर को इन्द्रादिक देवता भी नहीं पकड़ सकते, यह मैंने पहले ही कह दिया था। इसलिए हे राजन्! यदि युधिष्ठिर को बंधा हुआ देखना

चाहते हो तो किसी उपाय से अर्जुन को दूर ले जाओ तब तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा । द्रोण के वचन को सुन कर त्रिगर्त के राजा बोले, हे दुर्योधन! आज हम अर्जुन को ललकार कर युद्धक्षेत्र से दूर ले जाएंगें और ऐसा घोर युद्ध करेंगे कि या तो इस संसार में अर्जुन न रहेगा और या सब के सब त्रिगर्त वहीं पर मर मिटेंगे, यह हमारी प्रतिज्ञा हुई। इसके पश्चात् उन सब त्रिगर्तों ने होमका अग्नि प्रज्वालित किया और उसकी परिक्रमा करके अर्जुन को मारने व स्वयं मरने की शपथ उठाई। शपथ उठाने से हे धृतराष्ट्र! त्रिगर्तों का नाम संसप्तक हुआ।

इसके अनन्तर जल्दी ही द्रोणाचार्य्य स्वर्ण-जटित रथपर बैठकर युद्ध क्षेत्र में आए। उनके पीछे पीछे कौरव-सेनाएं अनेक प्रकार के बाजे, ढोल बजातीं और शंखोंकी ध्वनिसे कूच करतीं युद्धक्षेत्र में आईं। उधर युधिष्ठिर भी अपने दल सहित रण-भूमिमें आए। तब त्रिगर्त्तपति ने अर्जुन को युद्ध में ललकारा और अपने विचार के अनुसार लड़ते भागते कई कोस दूर अर्जुन को खींचकर लेगया। अर्जुन को त्रिगर्त्तराज के साथ लड़ते देखकर आचार्य्य तुरन्त युधिष्ठिर की ओर दौड़े, और उनपर तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगे। युधिष्ठिर की सेना भी बड़े वेग से बाणों का उत्तर बाणों से देने लगी। कुछ काल तक यह युद्ध सुहावना प्रतीत होता रहा, परन्तु शीघ्र ही इस ने भयकर रूप धारण कर लिया। दोनों

ओर के वीर उन्मत्त पुरुषों की नाईं मानव-संहार करने लगे। अपने और पराए कि पहचान कोई न करता था। इस भयानक युद्ध के अन्दर आचार्य्य अपने बाणों से पाण्डव-सेना को घास पात के समान जलाने लगे, और उसको घबराहट में डालकर युधिष्ठिर पर टूट पड़े, परन्तु युधिष्ठिर पर्वत के समान स्थिर रहकर आचार्य्य पर इस वेग से बाण-समूह छोड़ने लगे कि सब लोग दंग रह गए। युधिष्ठिर के दाएं ओर खड़े हुए महाबलि सत्यजित द्रोण पर टूट पड़े। आचार्य्य ने सत्यजित को अपने सामने देखकर पांच बाणों से उसके कवच को फोड़ डाला और एक बाण से उसके धनुष को काट डाला। इसपर तेजस्वी सत्यजित ने दूसरा धनुष उठाया और पच्चीस तीखी धार वाले बाणों से द्रोण को व्याकुल कर दिया। द्रोण को घबराए हुए देखकर पाण्डवी सेना ने सिंहनाद किया। परन्तु आचार्य्य ने तुरन्त सम्भल कर बड़ी फुर्ति से बाण-वृष्टि आरम्भ की। तब सत्यजित बड़े पराक्रम के साथ धनुषकी टंकार करता हुआ तीक्ष्ण बाण छोड़ने लगा। उसने शीघ्र ही आचार्य्य के सारथि और घोड़ों को मारकर भूमि पर लिटा दिया। तब छेड़े हुए सर्प के समान द्रोण ने अपने लाल नेत्रों को ऊपर उठाया और क्रोध से सत्यजित् पर अर्धचन्द्राकार बाण छोड़ा, जिससे वह कटे हुए वृक्ष की नाईं पृथ्वी पर गिर पड़ा। हे धृतराष्ट्र! सत्यजित के गिरने पर पाण्डव-सेना

में हाहाकार मच गया और मारे डर के सैनिक इधर उधर भागने लगे। तब राजा युधिष्ठिर अपने आपको अर्जुन से रहित देखकर और द्रोण की प्रतिज्ञा को स्मरण करके रथ सहित युद्धक्षेत्र को छोड़कर भागने लगे। युधिष्ठिर को भागते देख आचार्य्य उनको पकड़ने के लिये इस प्रकार दौड़े जैसे बाज भागते हुए शशक पर झपटता है। परन्तु भीम रास्ते ही में उनसे भिड़ गए। तब प्राग्ज्योतिष का राजा भगदत्त आचार्य्य की सहायता के लिये भीम पर टूट पड़ा, और अपने मेघ के समान बड़े हाथी को पेलता हुआ तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगा। भीमसेन भी उसके बाणों को रास्ते ही में काट काटकर गिराने लगे। अपने बाणों को निष्फल जाता देख भगदत्त को बड़ा क्रोध आया, तब उसने भीमसेन के रथ को पीस डालने की इच्छा से हाथी को अंकुश मारकर उसकी ओर दौड़ाया। भीमसेन ने उस हाथी को तीक्ष्ण बाणों से ढांप दिया, परन्तु मतवाला हुआ हुआ वह हाथी बड़े वेग से उसके सिर पर आपहुंचा। तब अपने आपको बड़े संकट में देखकर भीम रथ से कूद पड़ा, और उस हाथी के पेट के नीचे छिपकर गदा के प्रहार से उसको पीड़ित करने लगा। तब हाथी शीघ्रता से घूमकर भीम पर टूट पड़ा, परन्तु वायु के वेग वाला भीम गदा प्रहार करता हुआ बारम्बार उसको चक्कर देने लगा। भीम को इस प्रकार चक्कर देते देख वह सिधा हुआ हाथी

दांएं घूमकर जल्दी से बांई ओर वापस मुड़ा और भीम की गर्दन में अपनी सूंड को डाल दिया, परन्तु अथाह बल वाले भीमने झटका देकर उसकी सूंड को छुड़ा दिया, इतने में अपनी सेना के एक हाथी को भगदत्त के हाथी से जुटाकर भीम उस चक्कर से बाहर निकल भागा, और युधि-ष्ठिर की सहायता के लिए द्रोणाचार्य के पीछे अपने रथ को दौड़ाया। भीमसेन को इस प्रकार साफ निकल जाते देख भगदत्त क्रोध से पांडवी सेना का नाश करने लगा। उसके जलते हुए बाण पांडव दल रूप बन को दग्ध करने लगे, थोड़ी ही देर में सैनिकों के शरीरों के ढेर लग गये, किसी की शक्ति उसके सामने ठहरने की न थी, उस थोड़े समय में भगदत्त ने सहस्रों मनुष्यों को मार डाला, तब अपने सामने किसी को न देखकर वह हर्ष से मतवाला हुआ २ गर्जने लगा! सब कौरव भगदत्त के इस अद्भुत कर्म को देखकर आकाश में वस्त्र उछालने लगे और वायु में झंडे फैहराने लगे। दूर से कौरवों के फहराते हुए झंडे देख कर श्रीकृष्ण अर्जुन को बोले हे नरशार्दूल! यह देखो कौरव दल में शोर हो रहा है और उनकी ध्वजाएं वायु में फहरा रही हैं, निस्सन्देह कोई बड़ा भयानक कर्म्म हुआ है, वह सामने भगदत्त पर्वताकार हाथी पर खड़ा गर्ज रहा है, शीघ्र ही वहां पहुंचो और उसे यमपुर में भेजकर अपनी कीर्ति की रक्षा करो। इतना कहकर श्री कृष्ण ने रथ को भगदत्त की ओर घुमाया। तब अर्जुन को

लौटते देखकर त्रिगर्तों ने बड़ा कोलाहल मचाया और बारम्बार वस्त्र हिला हिलाकर उसको ललकारने लगे। यह देखकर अर्जुन बोले हे केशव! जो मुझे ललकारे उसके साथ मैं अवश्य लडूंगा यह मेरी प्रतिज्ञा है, इसलिए तुम रथको इन की ओर करो आज यह सब यमपुर में भेज दिये जाएंगे। तब श्रीकृष्ण ने रथ को घुमाकर त्रिगर्त राज के सन्मुख खड़ा किया। तब त्रिगर्त लोग सब मिल कर एक ही साथ अर्जुन पर बाण बरसाने लगे। उन में त्रिगर्त-राज का एक भाई भी था, उसने अर्जुन के मुकुट पर एक बाण मारा, अर्जुन ने तत्काल ही उसका सिर काट लिया और मूसलाधार वृष्टि के समान बाण-वृष्टि से त्रिगर्तों का संहार करने लगे। यह देखकर वह सब सहम गये और चारों ओर भागने लगे। उनको भागते देखकर त्रिगर्त्त-राज क्रोध से पुकार २ कर कहने लगे, मत भागो मत भागो, अरे कौरवों के सामने अग्नि को साक्षी करके तुमने जो शपथ उठाई थी, उसे तोड़कर अब क्या मुंह लेकर वहां जाते हो। अपने राजा से पुकारे हुए वह सब साहस करके फिर इकट्ठे हुए और युद्ध करने लगे। उनको फिर लौट कर आये देखकर अर्जुन बोले, हे श्रीकृष्ण! मृत्यु इनको फिर लौटा लाई, मैं इन सब को अवश्य यमपुर में भेजूंगा। आज तुम मेरे पराक्रम को देखो और रथ को इनके और समीप ले चलो। तब श्रीकृष्ण बड़ी चतुरता से रथ को दाएं-बाएं,

आगे पीछे और चक्कर देते त्रिगर्तों के अति निकट ले गए। कृष्ण की चतुरता देखकर अर्जुन का उत्साह दुगना हो गया और वह असंख्य बाण बर्साकर त्रिगर्तों को दग्ध करने लगा और थोड़ी ही देर में सामने खड़े हुए सब के सब बीरों को यमपुरी में भेज दिया। अन्त में त्रिगर्तों ने भी जीवन की आशा छोड़ दी, और सब के सब एक स्थान पर खड़े होकर अर्जुन पर बाण बर्साने लगे। उस बाणवृष्टि ने अर्जुन और कृष्ण दोनों को ढांप दिया। वह दोनों ही रथ में बैठे दिखाई न देते थे। यह देख कर त्रिगर्तों ने समझा कि अर्जुन और श्रीकृष्ण दोनों ही मारे गये हैं वह हर्ष से फूले हुए वस्त्र उछालने लगे। श्रीकृष्ण को तो इतने घाव लगे कि वह व्याकुल होगये और अर्जुन से बोले, हे अर्जुन! कहां हो? तुम हमे देख नहीं पड़ते तुम्हें कोई घाव तो नहीं लगा। तब अर्जुन ने उसी समय वायव्य अस्त्र छोड़ा, जिस से सब बाण पल भर में इधर उधर उड़ कर जा गिरे, और अर्जुन और कृष्ण दोनो ही बाणों के अन्दर से निकल कर आए जैसे बादलों के नीचे चमकते हुए तारे। तब अर्जुन क्रोध में मतवाले होकर भल्लास्त्र द्वारा किसी का सिर किसी की भुजा और किसी का पांओं काटने लगे। उन्हों ने मारते २ त्रिगर्त्तों को व्याकुल कर दिया। इस प्रकार शत्रुओं को मारकर और पूरी तरह से हरा कर फिर वह उस स्थान पर आये जहां प्राग्ज्योतिष का राजा भगदत्त अपने मेघ के समान हाथी

से पांडवों की सेना को इस प्रकार रौंद रहा था जैसे हाथी कमलों के बनको। अर्जुन को सामने आते देख भगदत्त ने सब ओर से ध्यान हटाकर केवल अर्जुन पर बाणों की प्रचण्ड वृष्टि आरम्भ की। वहां अर्जुन और भगदत्त में घोर संग्राम हुआ। दोनों ही महारथी थे दोनों ही वीर बलवान और अनुभवी थे। भगदत्त ने रथ समेत कृष्ण और अर्जुन को मार डालने के लिये अपने हाथी को उनकी ओर बढ़ाया। यम के समान उस हाथी को अपनी ओर आते देख श्रीकृष्ण ने परम चातुर्य्य से रथ को बांई ओर घुमाया। इतने में अर्जुन ने भगदत्त के धनुष के दो टुकड़े कर दिये। और हाथी की देह पर लोहे की जो जाली चढ़ी थी उसे तीखे बाणों से खण्ड २ कर दिया। तब भगदत्त ने अर्जुन के सिर पर एक बड़ा तोमर मारा। तोमर के लगने से अर्जुन का करीट टेढ़ा हो गया। किरीट को सीधा करके अर्जुन क्रोध से बोला हे भगदत्त! हे प्राग्ज्योतिष नरेष! तुम जी भरकर सब लोगों को देख लो, अब तुम्हारा काल आ पहुंचा है। जो कोई हमारे किरीट पर आघात करेगा वह जीता न रह सकेगा, यह हमारी प्रतिज्ञा है। अर्जुन की बात से भगदत्त के तन में आग सी लग गई और उस ने क्रोध से एक अंकुश अर्जुन पर फेंका। उड़ते हुए सर्प के समान उस अंकुश को अर्जुन पर आते देख कर श्री कृष्ण समझ गए कि इस अंकुश से अर्जुन अपने आप को बचा न सकेंगे, इसलिए तुरन्त ही उन्हों ने अर्जुन को

अपनी आड़ में ले लिया और उस अंकुश को अपने शरीर पर लगने दिया । परन्तु अर्जुन को यह बात बुरी लगी, वह दुःखी होकर बोले हे वासुदेव! तुम ने युद्ध न करने की प्रतिज्ञा की थी, परन्तु अंकुश को अपने उपर लेकर तुम ने उसे तोड़ दिया है यदि मेरे हाथ में शस्त्र न होता और मैं अपनी रक्षा न कर सकता तो तुम मेरी रत्ता कर सकते थे, परन्तु इस समय मेरे हाथ में शस्त्र हैं और मैं युद्ध कर रहा हूं, ऐसी अवस्था में तुम्हारा बीच बचाव करना उचित नहीं है ।

इतना कहकर अर्जुन ने भगदत्त के हाथी के मस्तक पर सैंकड़ों बाण एक साथ छोड़े और उसे छनन्नी कर दिया । भगदत्त ने हाथी को बढ़ाने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु हाथी ने एक न मानी जैसे निर्धन मनुष्य की स्त्री पति के कथन को, गांडीव धनुष से निकले हुए बाणोंने उस के मस्तक को हिला दिया और वह अकस्मात् चिंगाड़ता हुआ पृथिवी पर गिर पड़ा । उस पर सवार भगदत्त भी रक्त में नहाया हुआ फूले हुए कनेर के वृक्ष की तरह पृथिवी पर गिरा । तत्काल अर्जुन ने अर्ध चन्द्राकार बाण से भगदत्त का कलेजा छेद दिया । भगदत्त के हाथ से धनुष छूट गया, मुख पीला हो गया और प्राण पखेरु उड़ गये । भगदत्त को मारकर युधिष्ठिर की सहायता के लिये अर्जुन वहां पहुंचे जहां द्रोणाचार्य्य पांडवों को व्याकुल कर रहा था । अर्जुन ने वहां जाते ही गांडीव धन्वा की टंकार की

और कौरव दल पर सावन भादों के मेंह के समान बाणों की वर्षा करने लगे । देखते ही देखते सहस्रों वीरों को यमपुरी भेज दिया । युधिष्ठिर को दबाती हुई कौरव सेना स्वयं दबकर पीछे हटने लगी और थोड़े ही समय में युद्ध का पांसा पलट गया । अर्जुन भीम और युधिष्ठिर मिल कर कौरव दल का सर्व नाश करने लगे । धृष्टद्युम्न ने वहां अद्‌भुत पराक्रम दिखाया । ऐसा युद्ध न कभी किसी ने देखा न सुना । तब सूर्य्य भगवान् अस्ताचल के शिखर पर चले गये, रात हो गई, और युद्धक्षेत्र कराहती हुई आवाज़ों में डूब गया ।

दूसरा अध्याय ।

तेरहवां दिन ।

अभिमन्यु-बध ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! अपने असंख्य सैनिकों को युद्ध-भूमि में मरते और कराहते देखकर सूर्य्य उदय होते ही दुर्योधन द्रोणाचार्य के पास पहुंचा और नेत्रों में आंसु भरकर बोला, हे आचार्य्य ! प्रसन्न मन से वरदान देकर भी आप अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ते हो, यदि आपने शत्रुओं का शीघ्र नाश न किया और पांडव इसी प्रकार प्रतिदिन हमारी सेनाका विध्वंस करते रहे तो हमारी हार निश्चित है । हे गुरो ! अपने कहे हुए वचनों को पूरा न करना, यह आप जैसे पूजनीय लोगों के लिये शोभा नहीं देता ।

दुर्योधन के मुखसे यह वचन सुनकर आचार्य्य ने

लज्जासे मुख नीचेकर लिया, उनका मुख कानोंतक लाल हो गया और बोले, हे सुयोधन ! हम तुम्हारे हितका काम करने के लिये सदैव प्राणों तक दे देनेके लिये तैय्यार रहते हैं, और पूरे यत्नसे पांडवोंका नाश करते हैं, परन्तु कृष्णकी चतुरता और अर्जुनके पराक्रमके सामने हमारा बस नहीं चलता, जो कुछ हम प्रयत्न करते हैं, वह सबका सब अकारथ चला जाता है, और हमारा बना बनाया काम बिगड़ जाता है। परन्तु हम फिर कहते हैं, कि अर्जुन को यदि आज भी तुम युद्धक्षेत्रसे हटाले जाओ, तो हम चक्र व्यूह रचकर ऐसी मोरचाबंदी करेंगे, कि जिसको तोड़ना तो क्या उसके अंदर घुसनेकी भी किसीमें सामर्थ्य नहीं, और जो कोई भी उसके अन्दर घुसेगा वह जीता बाहर न निकल सकेगा ! द्रोणाचार्यके मुखसे यह बात सुन शेष बचे हुए त्रिगर्तोंने पहिलेकी तरह आजभी अर्जुनको दूर लेजाने की शपथ उठाई। तब दुर्योधन प्रसन्न होकर अपनी सेनाको सजाने लगे। इसके अनंतर दोनों सेनाएं फिर युद्ध क्षेत्रमें गर्जती हुई निकलीं और त्रिगर्त लोग कल की तरह आज भी अर्जुनको ललकार कर युद्धसे दूर खेंचकर ले गये। इधर कौरवोंके चक्र-व्यूह नामक महां दुर्भेद्य मोरचेको देखकर युधिष्ठिर अवाक् और हैरानसे खड़े रह गये। पांडवोंकी सेनामें किसी भी मनुष्यको इस व्यूहके तोड़ने की विधि नहीं आती थी। वह उस समय बड़े असमंजसमें पड़ गये, और सोचने लगे, कि क्या करें,

अर्जुन दूर है और शत्रुओंकी सेना भीषण मारकाट करती आंधी के समान आगे बढ़रही है,यदि इनको न रोका और इस व्यूहको न तोड़ा तो आजही हमारी सारी सेना मारी जाएगी, हे धृतराष्ट्र! इन विचारों ने युधिष्ठिर को शोक सागरमें डुबो दिया, उनका शरीर पसीना पसीना हो गया परन्तु डूबते को तिनके का सहारा, बहुत देर तक सोचनेके पश्चात् उन्होंने अभिमन्यु को बुलाकर कहा, हे पुत्र आचार्यने आज महां दुर्भेद्य चक्र-व्यूह की रचनाकी है, जिसे तोड़नेकी विधि अर्जुनके सिवा और कोई नहीं जान सकता। अब इस व्यूहको किस उपायसे तोड़ें, यह हमारी समझ में नहीं आता, ऐसा न हो कि अर्जुन यहां लौटकर सब को मरा हुआ देखे, इस लिए बेटा! तुमही कोई उपाय करो, अर्जुन का काम तुम्हें छोड़ कर दूसरा कौन कर सकता है?।

अभिमन्युने कहा हे पिता! हमको इस व्यूहके अंदर घुसनेकी युक्ति तो आती है, परंतु बाहर निकलनेकी विधि नहीं आती। इस लिये यदि मृत्युकी खोहके समान इसके अंदर आप मुझे धकेलना चाहें तो मैं जानेको तैय्यार हूं। तब युधिष्ठिर बोले, तुम यदि एक बार व्यूहको तोड़ कर अंदर घुस जाओ, तो हम सब तुम्हारे पीछे पीछे घुसकर शत्रुका सर्वनाश करेंगे, तुम केवल अंदर जाने के लिये रास्ता खोल दो। तब युधिष्ठिरकी आज्ञा पाकर अभिमन्यु अपना कवच और अस्त्र शस्त्र धारण करनेके लिये अपने

कैम्प में गये। वहां उनकी अर्धांगिनी उत्तराने जब उनके व्यूह तोड़ने के लिये जाने की बात सुनी तो वह सहम गई और शोकातुर होकर बोली हे प्यारे ! आचार्य्य के रचे हुए चक्रको तोड़ना सहज नहीं, इस पर इस व्यूह के अंदर जाना ही आप जानते हैं परन्तु निकलना नहीं, ऐसी अवस्था में आपका यह साहस कोई अच्छा फल नहीं ला सकता, आप इस पर विचार कर और फलाफल सोच कर जाने का साहस करें। उत्तराकी बात सुनकर वीर अभिमन्यु ने कहा, हे प्रिये! आचार्य्य के व्यूह के अन्दर घुसने की तो बात ही क्या है युधिष्ठिरकी आज्ञा से मैं साक्षात देवराज इन्द्र से भी लड़ने को उद्यत हूं। युद्ध में मर जाना क्षत्रियोंका परम धर्म है, कायर और डरपोक खाट पर सड़ सड़ कर मरते हैं। अपनी आन और अपने सन्मान के लिए क्षत्रिय लोग प्राण दे देते हैं। हे प्यारी ! वीर पुत्री वीर-बधु और वीरनारी होकर तुम मुझे वीर गति की प्राप्ति से किस प्रकार रोकती हो। यह संसार अनित्य है और शरीर भी अनित्य है परन्तु यश और कीर्ति नित्य है, अनित्य को छोड़ कर नित्यका प्राप्त करना यही सच्चा रास्ता है, इसी में कल्याण है, यही बुद्धिमत्ता है। इस मलिन देह से यदि निर्मल यश मिलता है तो ऐसे अवसरको गंवा देना अज्ञानियों का काम है। अभिमन्यु के गम्भीर वचन सुन कर उत्तरा ने प्यार से उसके कण्ठ में अपनी दोनों लता रूपी भुजाएं डाल दीं और डबडबाई हुई आंखों से बोली हे नाथ !

मैं आप को युद्ध से नहीं रोकती, आप प्रति दिन युद्ध में जाते हैं और मैं अपने हाथ से आप को शस्त्र बांधती हूं, परन्तु न जाने आज क्यों मेरा हृदय बैठा जाता है, शरीर में कपकपी होती है, हृदय का वेग दबाय भी नहीं दबता और बलात् आंखों में आंसु डबडबाने लगे हैं, इसी कारण मैं कहती हूं कि आज के युद्ध में कोई बड़ी भयानक घटना होने वाली है, जिस के चिन्तन से ही मेरे प्राण उड़ने लगते हैं ।

उत्तरा को शोकातुर देखकर अभिमन्यु ने प्यार से उसको गले लगाया और धीरज देते हुए बोला हे प्रिये! जहां अधिक प्रेम होता है, वहां तुच्छ बात पर भी अनिष्ट भावनाएं मन में उठा करती हैं, परंतु वास्तव में कोई ऐसी बात नहीं होती । तुम धीरज धरो, मैं कौरव सेना को अपने धनुष से अकेला ही इस प्रकार धुनक सकता हूं जैसे धुनिया रूई को, फिर आज की तो चिन्ता ही क्या है, जहां स्वयं भीम नकुल सहदेव युधिष्ठिर और अन्य महारथी मेरे साथ होंगे । इसके अनन्तर वीर अभिमन्यु ने अपना अभेद्य कवच बांधा सब शस्त्र सजाये और उत्तरा को आलिंगन करके कैम्प से बाहर निकला ।

तीसरा अध्याय ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! कैम्पसे बाहर निकलकर अभिमन्यु सूर्य्य के समान चमकते हुए रथ पर सवार हुआ, और सारथिको बोला, हे सुमित्र! तुम शीघ्र ही आचार्य्य

की सेनाके सन्मुख हमारे रथको खड़ा करो, आज हम कौरवों का नाश करके अपना प्रताप दिखाएंगे।

अभिमन्युके इस प्रकार आज्ञा देने पर सारथि बोला हे राजकुमार! आप इस समय बड़े भारको अपने ऊपर ले रहे हैं, इसलिए वहां जाने से पहले भली भान्ति विचार करलो। तब अभिमन्यु हंस कर बोला, हे सारथि! बार बार कहने पर भी तुम क्यों देर करते हो, कौरव सेना से घिरे हुए द्रोण तो क्या, यदि स्वयं इन्द्र भी ऐरावत गज पर सवार होकर हमारे सन्मुख आएंगे तो मैं उन से भी लडूंगा। सारथि ने अभिमन्यु की बात का बुरा मनाया परन्तु क्या करता, बेबस था, उसने रत्नों से जड़ी हुई घोड़े की रासों को हिलाया और वेग से आचार्य की ओर चला, अभिमन्यु के रथ के पीछे २ शेष पांडव भी चले, जल से भरा हुआ गर्जता हुआ पहाड़ी नाला जैसे बड़ी नदी के साथ जा मिले, इसी प्रकार अभिमन्यु द्रोण की सेना के साथ जा मिला, दोनों ओर से तुमुल युद्ध होने लगा, अभिमन्यु ने व्यूह को तोड़ने के लिए असंख्य पैने बाणों से व्यूहके मुख पर खड़े हुए योद्धाओं को वहीं ढेरकर दिया, उधर से कौरवों ने भी व्यूह की रक्षा के लिये जी तोड़ कर युद्ध किया, एक के गिरने पर दूसरा उसी स्थान को पुर करने लगा परन्तु अर्जुन सुत अभिमन्यु के बल पराक्रम और चातुर्य्य के सामने उनका बस न चला। द्रोणाचार्य्य के देखते देखते वह वीर राजकुमार व्यूह को

तोड़ कर अन्दर घुस गया। अन्दर जाकर उस महाराथि ने चारों ओर बाणों की वृष्टि करनी आरम्भ कर दी। तब उस महांबलि को हाथी घोड़े रथों और प्यादोंने चारों ओर से घेर लिया। अत्यंत फुर्तीला मर्मों के जानने वाला वह वीर सिंह के समान पराक्रमी उन सब को तीक्ष्ण बाणों से वेधने लगा। उसने क्षण भर में अपने ऊपर आते हुए योद्धाओं को इस प्रकार जला दिया जैसे बिजली वृक्षों को। अभिमन्यु के अन्दर घुस जाने पर युधिष्ठिर भीम शिखण्डी सात्यकी नकुल और सहदेव धृष्टद्युम्न द्रुपद केकय तथा अन्य योधे उस द्वार से अन्दर घुसे और बड़े बल से कौरवों पर टूट पड़े। उनके पराक्रम को न सह करके सब कौरव इधर उधर भागने लगे। अपनी सेना को भागते और व्यूह का द्वार टूटा हुआ देखकर दुर्योधन बड़े वेग से उधर दौड़ा और भागते हुओं को रोकने लगा। तब सिंधुराज जयद्रथ अकेले द्वार पर आकर डट गया और बड़ी वीरता से पांडवों को रोक दिया। अब पांडवों के बाहर रुक जाने पर उन में बड़ी चिन्ता फैली। अभिमन्यु अकेला अन्दर है इस विचार से वह बड़े जोर से लड़ने लगे, तब वहां घोर युद्ध मच गया। पांडव बार २ टूटे हुए स्थान से अन्दर जाने का प्रयत्न करते थे परन्तु वीर सिंधुराज ने लंबे धनुष से सहस्रों ही पैने बाण छोड़ कर उन को पीछे हटा दिया उसी अवसर में बड़ी चतुरता से जयद्रथ ने टूटे हुए व्यूह को फिर से बना लिया। तब अभिमन्यु ने सब की आशा छोड़ कर

अपनी भुजाओं पर भरोसा किया। वह तेजस्वी बालक सेना के अन्दर घुस कर इस प्रकार निर्भय होकर घूमने लगा, जैसे सागर में मगर। जो उसके सामने आया उसे भूमि पर गिरा दिया। उस समय सहस्रों प्राणियों के प्राण लेता हुआ वह साक्षात् यम प्रतीत होता था। उसको देखकर वीरों के मुख सूखने लगे, पसीने छूटने लगे और मस्तक चकराने लगे। कुछ देर बाद अभिमन्यु को मद्र-राज शल्य दिखाई दिये। उसने उनको विषम बाणों से यहां तक घायल किया कि शल्य को मूर्छा आ गई। शल्य को मूर्छित होकर गिरते देख उसकी सेना इस प्रकार भागी जैसे सिंह को देखकर भेड़ें भागती हैं। शल्य के छोटे भाई ने अपने बड़े भाई को मूर्छागत देख कर बड़े क्रोधसे उसपर आक्रमण किया परन्तु राजकुमार ने उसको उसके घोड़े और सारथि तीनों को एक ही बाण से मार डाला। शनैः २ अभिमन्यु की मार ने बड़ा ही भयानक रूप धारण कर लिया, कर्ण को बार २ भगाकर उसने दुर्योधन के परम प्यारे पुत्र लक्ष्मण को मार डाला, शल्य के पुत्र रुक्मारथ का बध किया। कोशल देश के राजा महारथि बृहद्बल के प्राण लिये और अनेक राजकुमार तथा राजे यमपुरी में भेजे। तब कौरव लोग घबरा कर द्रोणाचार्य्य की शरण गये। कर्ण बोले हे आचार्य्य ! यदि आप अर्जुन के पुत्र का शीघ्र ही कोई उपाय न करेंगे तो वह हम में से एक को भी जीता न छोड़ेगा। द्रोणाचार्य्य

अपने प्यारे शिष्य के पुत्र की वीरता और पराक्रम देख रहे थे, वह प्रसन्न होकर बोले, हे कर्ण ! बारंबार तुम अपने बल और पराक्रम की श्लाघा किया करते थे, आज अभिमन्यु से इस प्रकार क्यों घबराते हो। अर्जुन का गांडीव अभी युद्ध क्षेत्र से दूर है, उस परम तेजस्वी सव्यसाची के पुत्र की रण कुशलता देखो जो सहस्रों योद्धाओं के साथ अकेला लड़ता नहीं थकता। अभिमन्यु के हाथ की सफाई और बाण चलाने में फुर्ति देखो जिस ने आप की सारी सेना को मार २ कर पागल कर दिया है। तुम सब मिल कर बार बार उस पर चोट करने का यत्न करते हो, परन्तु मैनाक पर्वत के समान वह अपने स्थान पर अटल खड़ा सबको ललकार रहा है। इसकी रण चतुरता से हम बड़े प्रसन्न हुए हैं, यद्यपि उसने तीक्ष्ण बाणों से हम को भी व्याकुल कर दिया है। कर्ण बोले हे गुरो अर्जुन से मैं इसको किसी बात में भी कम नहीं देखता हूं, जिस प्रकार इस ने पैने बाणों से मेरे हृदय को छेद डाला है यदि युद्ध से भाग जाने में कोई लज्जा न होती तो हम सब कभी के पीठ दिखा गए होते, इसलिये जिस प्रकार भी हो सके अभिमन्यु को मारने का यत्न करो अन्यथा यह हम सब को मार डालेगा।

तब आचार्य्य ने कहा हे कर्ण ! अर्जुन को मैंने कवच पहरने की जो रीति बतलाई थी, उसी रीति से अभिमन्यु ने कवच धारण किया है, जब तक इस का कवच न टूटेगा तब तक यह कभी मारा न जायगा। इस

लिए जिस प्रकार हो सके इसके कवच और धनुष को तोड़ डालो, रथों से उतर कर सब मिलकर उस पर टूट पड़ो, और उसे रथ से उतार दो। तब उस के साथ युद्ध करो। हे वीर लोगो! जब तक अभिमन्यु के हाथ में शस्त्र रहेगा तब तक उसे परास्त करना तुम लोगों की शक्ति से बाहर है। द्रोण की बात सुनकर कर्ण ने जल्दी से अभिमन्यु के धनुष को काट डाला। भोज ने उस के घोड़े मार डाले और कृपाचार्य्य ने उस के पृष्ट रक्षक और सारथि को मार डाला और शेष महारथि उस पर बाण बरसाने लगे। तब घोड़े और सारथि के मारे जाने पर वह वीर राजकुमार ढाल तलवार लेकर रथ से कूद पड़ा। तब द्रोणाचार्य ने फुर्ति से उसकी तलवार की मुट्ठी को काट डाला और कर्ण ने बाणों से ढाल के टुकड़े २ कर दिये। तब उस अग्निपुञ्ज अभिमन्यु ने हाथ में गदा उठाई और अश्वत्थामा को पीडित किया, सुबल के पुत्र के प्राण लिये और देखते ही देखते यम के समान चारों ओर घूम घूम कर कौरवों का नाश करने लगा दस रथियों को मार कर पृथ्वी पर गिराया सात घुड़ सवारों और दस हाथी सवारों को मार डाला। इस के अनंतर शकुनि के पुत्र के रथ और घोड़ों को गदा से चूर २ कर डाला। तब द्रोण ने अर्धचंद्र बाण से उसकी गदा को तोड़ दिया। अपने पास कोई शस्त्र न देखकर उस वीर ने रथ के चक्र को उखाड़ा और उससे कौरव वीरों को मार २ कर यमपुर

पहुंचाने लगा। अभिमन्यु को यम के समान चक्र प्रहार करता देखकर दुःशासन का पुत्र गदा उठा कर उस की ओर दौड़ा तब वह दोनों घोर युद्ध करते करते भूमि पर गिर पड़े। अभिमन्यु को गिरे देख कर कर्ण द्रोण शकुनि शल्य दुःशासन आदि सात महारथि एक ही वार उस पर टूट पड़े, किसी ने उसके सिर पर गदा मारी, किसी ने भाला किसी ने तलवार। तब वह वीर बालक बेसुध हो गया और शीघ्र ही इस पापी संसार को छोड़ कर देव-लोक को चला गया। उस समय कौरवों की सेना में आनंद सूचक बाजे बजने लगे, जिसे सुनकर पांडवों ने अभिमन्यु की मृत्यु का समाचार जाना जिस से वह सब के सब दुःख के सागर में डूब गये। तब युधिष्ठिर की आंखें अग्नि के समान दुःख और क्रोध से जलने लगी, वह अपने सैनिकों को ललकार कर कहने लगे हे वीरो! आगे बढ़ो, और उस वीर बालक के समान जिस ने अकेले ही असंख्य शत्रुओं को मार कर कीर्ति को प्राप्त किया है, तुम भी रण में जूझ जाओ। इसके अनंतर सब पांडव प्राणों का मोह छोड़ कर कौरव दल का नाश करने लगे, देखते ही देखते वहां रक्त की नदी बहने लगी सहस्रों कौरव थोड़े ही समय में मारे गये, शेष प्राण लेले कर भागने लगे। युधिष्ठिर उस समय विकाल काल के समान निर्दयता से प्राणियों का बध करने लगे, उन के सामने जो आया, मारा गया। तब अत्यंत डरे हुए कौरव द्रोण के बारंवार

रोकने और बुलाने पर भी भाग गये। उस समय संध्या हो गई थी। भगवान् सूर्य मानों अभिमन्यु की मृत्यु को देख कर क्रोध से लाल हो रहे थे। रण भूमि में अंधेरा हो गया, और दोनों सेनाएं अपने २ शिविर में चली गई, इस प्रकार आज का रोमाञ्चकारी युद्ध समाप्त हुआ।

चौथा अध्याय।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! अभिमन्यु की मृत्यु से सब पांडव दुःख से लंबी सांस भरते हुए युधिष्ठिर के चारों ओर बैठ गए। सब के सब उदास हुए चुपचाप थे। उन्हें देख कर युधिष्ठिर और भी व्याकुल हो गये और ढाहें मार मार कर रोने लगे, हाय! हमारी ही मूर्खता से उस वीर के प्राण गये। हमीं ने उसको चक्र व्यूह-में प्रवेश करने की आज्ञा दी। हाय! हम ने उस वीर पुत्र को पीछे पीछे चल कर सहायता देने का वचन दिया, परन्तु उस को पूरा न कर सके। उस बालक को इतना बड़ा काम सौंप कर हम उस की रक्षा न कर सके, इससे बढ़कर हमारा दुर्भाग्य क्या हो सकता है। भाई अर्जुन और सुभद्रा को अब हम क्या मुख दिखलावेंगे जो उस को प्राणों से भी अधिक प्यार करते थे। भाई अर्जुन यहां आकर जब अपने प्यारे पुत्र को न देखेंगे तो हमें क्या कहेंगे, धिक्कार है क्षात्र-धर्म पर, धिक्कार है राज्य संपत्ति पर, आज हमें स्वर्ग भी अच्छा नहीं लगता, अब हम जीत भी गये तो उस से क्या सुख है। हे धृतराष्ट्र! जिस समय युधिष्ठिर इस प्रकार विलाप

कर रहे थे, उसी समय व्यासदेव जी पांडवों के शिविर में आये। उन्हें देख कर युधिष्ठिर आदि सभी पांडव उठ कर खडे हो गये। उनकी यथोचित पूजा करके उन्हें आसन पर बैठाया। इसके अनंतर उसी प्रकार शोक से व्याकुल हुए २ वह युद्ध का वृत्तांत कहने लगे, हे भगवान्! हमने बहुत बड़ी भूल की जो उस बालक को इतना बड़ा काम सौंपा, ऐसा हमको उचित नहीं था। वह वीर बडी बीरता के साथ पिता के समान शत्रुओं को पीडित करता हुआ व्यूह को तोड़ कर अंदर चला गया, परंतु अकेले जयद्रथ ने हमें व्यूह के भीतर घुसने न दिया। उस समय पर हम अभिमन्यु के निकट न पहुंच सके, और वह वेचारा अकेला सात महारथियों से मारा गया, इसी विचार से हम शोक के अथाह समुद्र में डूब रहे हैं, मनको बहुतेरा समझाते हैं, परंतु तनिक भी शान्ति नहीं आती। इतना कहकर युधिष्ठिर फिर रोने लगे।

युधिष्ठिर को दुःख से रोते देखकर व्यासदेव जी को बडी दया आई। वह उस को धीरज देते हुए बोले हे युधिष्ठिर! भावी बड़ी अटल है, परमेश्वर के कार्यों में रोना मूर्खों का काम है, अभिमन्यु ने वीरगति को प्राप्त किया है, तुम सब को भी उसी बालक के समान क्षात्रधर्म पर चलते हुए प्राण देने चाहिए। अकेले अभिमन्यु ने सहस्रों योद्धाओं के साथ लड़ते हुए युद्ध में प्राण दिये हैं, उस वीरने क्षात्रधर्मकी लाजरखली है, उसके लिए रोना व्यर्थ है।

हे राजन्! काम्यक बन में जब जयद्रथ द्रौपदी को हर कर ले गया, उस समय भीम ने उस की पकड कर बहुत दुर्दशा की और बहुत अपमान किया। उस अपमान से जलते हुए जयद्रथ ने महादेव की उग्र तपस्या की, जिससे प्रसन्न हो कर महादेव ने उस को वर दिया, कि हे जयद्रथ! अर्जुन को छोड कर शेष सभी पांडवों को एक न एक दिन तुम युद्ध में नीचा दिखाओगे, उसी वर के प्रभाव से आज अकेले ही जयद्रथ ने तुम सब को आगे नहीं बढ़ने दिया और टूटे हुए व्यूह को दोबारा बना लिया। व्यासदेव जी के वचन को सुनकर युधिष्ठिर के मन में धीरज आया। उन्हों ने समझ लिया, कि अभिमन्यु के मरने और जयद्रथ के रोकने में महादेव का वर ही कारण है यह सोच कर वह चुपचाप अर्जुन के आने की राह देखने लगे। हे धृतराष्ट्र! उधर सांझ होने पर अर्जुन और कृष्ण सब के सब त्रिगर्तों को मार कर अपने विजयी रथपर सवार होकर जब वापस शिविर में लौटे तो वहां उन्हों ने भयानक सन्नाटा देखा। ऐसी चुपचाप और उदासीनता देखकर अर्जुन बोले हे श्री कृष्ण! आज प्रतिदिन की तरह दुंदभि का शब्द सुनाई नहीं देता नां ही शंख की ध्वनि उठती है और नां ही बाजे बज रहे हैं योधा लोग भी हम से आंखें चुरा कर इधर उधर हो रहे हैं इस कारण मेरी समझ में नहीं आता। हे वासुदेव! आज कोई भयानक दुर्घटना हुई प्रतीत होती है।

इस प्रकार बातें करते करते श्री कृष्ण और अर्जुन शिविर के अन्दर पहुंचे। वहां उन्हों ने देखा कि सभी पांडव चुपचाप उदास मुंह लटकाए बैठे हैं। यह हालत देख कर अर्जुन का कलेजा मुंह को आगया। उन्होंने ढूंडती हुई दृष्टि से अपनी आंखों को चारों ओर फिराया, परंतु अपनी प्राणों से प्यारी वस्तु को वहां न देख कर बोले हे वीर योद्धाओ आज तुम सब के सब मुख मलीन छबि हीन उदासीन बैठे हो। मैं आप सब में अभिमन्यु को नहीं देखता हूं, वह सुभद्रा नंदन कहां है? वह तेजस्वी बालक हमारे आने पर प्रतिदिन हमको आगे आकर मिलता था, आज हम त्रिगर्तों का समूल नाश करके आ रहे हैं, परंतु उसने हंसते २ आकर हमें आलिंगन नहीं किया। हे भीम! हे युधिष्ठिर! हम ने सुना है, कि आज आचार्य ने महां विकट चक्र-व्यूह की रचना की थी, कहीं अभिमन्यु को तो उसमें नहीं भेज दिया, उसको हमने उसके अंदर घुसने की विधि तो बतलाई है परंतु बाहर निकलने की नहीं बतलाई। अर्जुन की बात का किसी ने उत्तर न दिया और सब के सब भरी हुई आंखों से एक दूसरे का मुख देखने लगे। तब अर्जुन उनके इस खेदमय मौन को देखकर समझ गये, कि अभिमन्यु रण में जूझ गया है हे पुत्र के वियोग ने उन के कलेजे को चीर डाला, मानों बर्छी उनके पेट में खुब गई हो। वह अथाह शोकसागर में डूब गए, और बालकों की नांईं रोने लगे, हाय बेटा! तुम्हें एक क्षण भर भी न

देखकर हमारा हृदय व्याकुल हो जाता था, अब मैं किस को देखकर इस संसार में जीऊंगा, हे पुत्र ! तुम्हारे प्यारे प्यारे मुखड़े को देख देख कर सुभद्रा और द्रौपदी जीती थीं, अब वह विरह की ज्वाला को किस प्रकार सहन करेंगी। तुम्हारे बड़े २ नेत्र और मोतियों से श्वेत दांत और सुन्दर तीखी नासिका वाले मुख को अब मैं कब देखूंगा, हाय हमारा सर्वस्व नाश हो गया, अब इस राज्य से क्या लाभ जब उसके भोगने वाला तू ही नहीं रहा हे वीर लोगो ! किस ने सुभद्रा की आंखों के तारे और मेरे हृदय के टुकड़े को रण में टुकड़े २ किया है। जल्द बताओ किस ने उसको मार कर अपनी मौत को बुलाया है, बल पराक्रम शूरवीरता ज्ञान बुद्धि दूरदर्शिता और सुन्दरता में जो श्री कृष्ण के समान था, वह युद्ध में कैसे मारा गया। उस के सुन्दर मुख के बिना देखे मुझे कैसे शान्ति आ सकती है। हे युधिष्ठिर ! किस प्रकार वह राजकुमार उदय होते हुए सूर्य्य की नांई अकेला ही सहस्रों मनुष्यों के साथ लड़ता हुआ कौरवों की सेनारूप बादल से ढक दिया गया। उस नवयुवक ने घेरे में फंसकर अवश्य मुझे स्मरण किया होगा। इन सत्य की डींग हांकने वाले कौरव धनुर्धारियों ने क्योंकर उस अकेले बालक को मार डाला। हाय ! सुभद्रा को मैं क्या मुख दिखलाऊंगा द्रौपदी को क्या उत्तर दूंगा, निस्संदेह मेरा जहाज डूब गया, मेरा सब कुछ लुट गया, इस संसार में मेरे लिए अब क्या रखा है, धिक्कार है

मेरे भुज बल को, हे वीरो! इतनी बड़ी सेना के साथ होते हुए भी तुम उस बालक की रक्षा न कर सके, हा दैव! हाय ईश्वर!!

तब अर्जुन को पुत्र के वियोग से दुखित विलाप करते देखकर श्री कृष्ण बोले हे अर्जुन! धीरज धरो, क्षत्रिय हो कर तुम्हें इस प्रकार विलाप करना शोभा नहीं देता, जो सच्चे क्षत्रिय युद्ध में पीठ नहीं दिखाते, उनका रणभूमि में मरना अटल है, यही क्षत्रियों का मार्ग है, और इसी पर चलने की सब लोग इच्छा रखते हैं। उस पराक्रमी बालक ने प्राण देकर अपनी कुल की प्रतिष्ठा को बचा लिया, अभिमन्यु वैकुण्ठ को गया है, इस में तनिक भी संशय नहीं। वह वीर राज पुत्र युद्ध में सन्मुख हो कर लड़ता लड़ता वीर गति को प्राप्त हुआ है, इस मे उत्तम गति और क्या हो सकती है, हे भारत! शोक को छोड़ कर उस के पराक्रम साहस और गुणों को देखो। सच्चे क्षत्रिय को रण में भूमि * पर ही प्राण देने शास्त्रकारों ने लिखे हैं। हे सव्यसाचि! तुझे दुःख से रोते देखकर तेरे यह सारे भाई बन्धु भी शोकातुर हुए २ दीनों के समान दुखित हो रहे हैं, इसलिये इस शोक को त्याग करके इन को धीरज दो, और करने योग्य कार्य्य को सोचो।

श्रीकृष्ण के वचन को सुनकर अर्जुन भरे हुए कण्ठ से

* आज कल भी हिन्दु लोग मरने वाले मनुष्य को खाट से उतार कर भूमि पर लिटा देते हैं, वास्तव में युद्ध-भूमि में मरना ही शास्त्रोक्त है।

बोले हे भाइयो! किस प्रकार वह बीर लड़ा, किस प्रकार उस ने आचार्य्य के व्यूह को तोड़ा, कैसे वह शत्रुओं में घेरा गया, और किस प्रकार मारा गया, यह सब मैं सुनना चाहता हूं।

इतना कहकर धनुष और तलवार को हाथ में लेकर अर्जुन क्रोध से विषधर सर्प के समान फुंकार मारने लगे। उस समय युधिष्ठिर और कृष्ण के सिवा किसीको अर्जुन की ओर देखने और उत्तर देने की सामर्थ्य नहीं थी। तब युधिष्ठिर ने बहुत धीमे धीमे कहना शुरू किया, हे अर्जुन! जब तुम संसप्तकों के साथ युद्ध करने के लिये दूर चले गए तो द्रोणाचार्य्य ने चक्र-व्यूह नामक मोरचा बनाया, जिसके अन्दर घुसने की और तोड़ने की हममें से किसीको भी युक्ति नहीं आती थी। इस व्यूह को रचकर आचार्य्य की सेना हम पर आंधी के समान टूट पड़ी, जिससे हमारे सैंकड़ों ही वीर पृथ्वी पर गिरने लगे। उस समय हम सब मूढ़ों के समान खड़े खड़े देखते थे, परन्तु क्या करें और किस प्रकार इस व्यूह में प्रवेश करें इस की कुछ समझ न आती। हमने उस प्रबल सेना को रोकने का बहुतेरा प्रयत्न किया, परंतु हमारा कुछ बस न चला, हम लोग शत्रुओं की मार से इतने व्याकुल होगये, कि क्षण भर भी उनके सामने ठहरना हमारे लिये असम्भव होगया। यह देखकर हमने उस इन्द्र के समान तेजस्वी अभिमन्यु को बुलाकर कहा

कि बेटा! अर्जुन इस समय दूर त्रिगर्तों से युद्ध कर रहे हैं, और आचार्य्य हमारा भयानक नाश कर रहे हैं, इस लिये तुम इस व्यूह के अन्दर प्रवेश करो। हमारी आज्ञा को न टालने वाले उस अदभुत वीर ने कहा, कि हम इस व्यूह के अन्दर प्रवेश करना तो जानते हैं, परंतु बाहर निकलना नहीं जानते, यदि उचित समझते हैं तो मैं तैयार हूं। तब हमने कहा, कि हम सब तुम्हारे पीछे चलकर तुम्हारी रक्षा करेंगे तुम केवल व्यूह को तोड़कर अन्दर जानेका द्वार बनादो। इस पर सुशील घोड़े की नाई वह बालक बिना आना कानी किये रथपर सवार हुआ, और बड़ी नर्भयता से गर्जता ललकारता आचार्य्य की सेना पर टूट पड़ा। थोड़े ही समय में अपनी विलक्षण बीरता से वह व्यूह को तोड़कर अन्दर घुस गया। हम सब लोग अभिमन्यु के पीछे २ चले और व्यूह के अन्दर प्रवेश करने का यत्न करने लगे। परन्तु उसी क्षण जयद्रथ ने द्वार को रोक लिया। हमने जयद्रथ को वहांसे हटाने और अन्दर प्रवेश करनेके लिये घोर युद्ध किया, सैंकड़ों वीर वहां मारे गये, परन्तु तुच्छ होते हुए भी महादेव के वर से उसने हमको अन्दर न जाने दिया। जब हम अन्दर जाने के लिये प्रयत्न करते, तब तब ही वह हमारे प्रयत्न को निष्फल कर देता। इसके अनन्तर द्रोणाचार्य्य करण आदि सात महारथियों ने उस अकेले बालक को चारों ओर से घेर लिया। हे अर्जुन! उस शूरवीर बालक

ने अकेले ही सैंकड़ों रथों, हाथीसवारों, घुड़सवारों को यमपुर में भेजा । वह जिधर पड़ा सिंह के समान कौरव-दल को भेड़ों की नाईं फाड़ता गया महारथी बृहन्नल को भी उसने मार डाला । तब कौरव लोग घबराकर भागने लगे ! उस समय द्रोणाचार्य्य सहित सप्तमहारथि उस अकेले पर अधर्म से टूट पड़े, किसीने उसके सारथि को, किसी ने घोड़ों को मार डाला । तब रथ-हीन हुआ हुआ वह बीर गदा से लड़ता रहा । गदा के कट जाने पर वह इन्द्र के समान पराक्रमी बीर रथ के चक्र को उठाकर शत्रुओं का बध करने लगा । अन्त में दुःशासन के पुत्र ने उसके मस्तक में ज़ोर से गदा का प्रहार किया, जिससे अभिमन्यु पृथिवी पर गिर पड़ा । गिरने पर उसने उठने का प्रयत्न किया, परन्तु द्रोण, कर्ण, शल्य आदि महारथियों ने उसे सम्भलने न दिया, और किसी ने भाला किसी ने बर्छी, किसी ने तलवार, किसी ने तोमर से उसके शरीर को टुकडे २ कर दिया, इस प्रकार उस बीर बालक को अधर्म से इन्हों ने मार डाला ।

युधिष्ठिर के मुख से अभिमन्यु की मृत्यु का हाल सुनकर अर्जुन अपने आप को संभाल न सके, वह दारुण दुःख से मूर्छित होकर भूमि पर गिर पडे । अर्जुन को अचेत पडे देखकर सब लोग शोक से व्याकुल हुए २ चुपचाप उस के आस पास बैठ गये । थोडी देर बाद उनको सुधि आई, तो वह क्रोध से पागल हुए २ इस

प्रकार कांपने लगे, मानों बड़े वेग से ज्वर चढ़ रहा हो। उस समय वे छेड़े हुए अजगर के समान ज़ोर २ से सांस लेने लगे। उनके नेत्रों से आंसुओं की धारा बहने लगी। और वह बारम्बार हा पुत्र! हा पुत्र! कहते हुए विलाप करने लगे। कुछ देर बाद जब उनके मन का बोझ कुछ हलका हुआ, तो उन्हों ने क्रोध से अपने हाथ को पृथिवी पर मारकर कहा, हे महाराज! हम शपथ खाकर कहते हैं, कि कल ही हम इस बाल-हन्ता जयद्रथ का बध करेंगे। मेरे हृदय के टुकड़े को काटने वाला मनुष्य कल सूर्य्यास्त तक जीता नहीं रह सकता। इस पापात्मा जयद्रथ को द्रौपदी के हर लेने के समय छोड़कर हमने भारी भूल की, आज उस उपकार को भूलकर उसने निरपराध बालक की हत्या कर डाली है, निस्सन्देह अब वह मेरे हाथों से बच नहीं सकता। हे महाराज! इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु और साक्षात् महादेव की शरण में जाकर भी अब वह अपने आपको मरा हुआ ही समझे। हे राजाओ! मैं आप सब के सामने प्रतिज्ञा करता हूं, कि कल सूर्य्यास्त से पहले पहले यदि मैं जयद्रथ को न मार डालूं तो माता पिता के मारने वाले को जो पाप लगता है, वह पाप मुझे लगे। पराई स्त्री और पराए धन के चुराने वाले को जो पाप लगता है, उसका भागी मैं बनूं। हे मनुष्यों में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण! मैं प्रतिज्ञा करता हूं, कि कल सूर्य्यअस्त होने तक यदि मैंने जयद्रथ को

न मार डाला तो मैं आप सब के सामने इसी स्थान पर अग्नि में अपने आप को जला कर भस्म कर दूंगा। निस्संदेह मेरी यह प्रतिज्ञा अटल होगी, सूर्य्य टल जाए, चन्द्रमा टल जाए यह पृथिवी टल जाए परन्तु मेरी प्रतिज्ञा अटल होगी। इतना कह कर अर्जुन ने गांडीव धनुष को ज़ोर से पृथिवी पर मारा जिसका शब्द आकाश में गूंज गया। श्री कृष्ण ने भी अपने पांचजन्य नामक शंख को बड़े ज़ोर से बजा कर अर्जुन की प्रतिज्ञा का समर्थन किया अर्थात् यह प्रगट किया कि अर्जुन ने जो प्रतिज्ञा की है वह उचित है। इस के अनन्तर अर्जुन ने देवदत्त नामक शंख को बजाया, फिर सारे पांडव शिविर में से सहस्रों ही शंखों की ध्वनियां एक साथ उठने लगीं। इसके अनन्तर बाजे बजने लगे और संपूर्ण सैनिक लोग अपने सिंह नाद से आकाश को गुंजाने लगे। जब कौरवों के गुप्त चरों ने जाकर दुर्य्योधन को सारा समाचार सुनाया और शंखों बाजों तथा सिंहनादों के बड़े कोलाहल का कारण बतलाया तो जयद्रथ का कलेजा कांप उठा, उसका मुख एकाएक सफ़ेद हो गया और हाथ पांओं ढीले हो गए। वह अपने स्थान से उठकर लड़खड़ाता हुआ दुर्य्योधन के पास जा कर बोला हे राजन्! तुम ने सुन लिया, कि अर्जुन ने मेरे मार डालने की कैसी भीषण प्रतिज्ञा की है। मैं अर्जुन के बल विक्रम को पहले देख चुका हूं इस लिए आप से अपने घर जाने की छुट्टी चाहता हूं। हे राजन्! उसकी

प्रतिज्ञा का एक एक शब्द मेरे हृदय को नीचे गिरा रहा है, बहुतेरा संभालता हूं परन्तु संभलने में नहीं आता। जयद्रथ की बात सुनकर महां चतुर दुर्य्योधन बोले हे सिंधु नरेश! डरिए मत, हम ऐसा प्रबन्ध करेंगे कि अर्जुन आप का कुछ भी बिगाड़ न सकेगा कल हम अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना को केवल आप ही की रक्षा के लिए नियुक्त करेंगे। कर्ण, भूरिश्रवा, शल्य, सुदक्षिण, अश्वत्थामा शकुनि स्वयं मैं और आचार्य्य आप को चारों ओर से घेर कर खड़े होंगे। इतने महारथियों के होते हुए आप को तनिक भी नहीं डरना चाहिए, फिर आप स्वयं भी महां धनुर्धारी हैं, ऐसी अवस्था में एक अर्जुन क्या एक सौ अर्जुन भी तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं कर सकते। दुर्य्योधन से दिलासा पाकर जयद्रथ तुरन्त आचार्य्य के पास पहुंचा और दोनों हाथ जोड़ कर बोला हे गुरो! अर्जुन की भीषण प्रतिज्ञा से मेरा हृदय थरथरा रहा है, दुर्य्योधन के बहुत धीरज देने पर भी मुझे भय है, कि अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके छोड़ेगा, इस लिए मैं आप की शरण आया हूं, हे आचार्य्य! मेरा जीवन अब आप के हाथ है। तब आचार्य्य ने जयद्रथ को धीरज देते हुए कहा हे राजन्! क्षत्रियों को मृत्यु से डरना उचित नहीं, मृत्यु एक न एक दिन सब को आनी है, फिर तुम ज्ञानी हो कर ऐसी बातें कैसे कहते हो। परन्तु फिर भी मैं तुम को अभय दान देता हूं तुम डरो मत मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा और कल एक ऐसा

व्यूह बनाऊंगा, जिसके अन्दर अर्जुन प्रवेश न कर सकेगा तुम भली भान्ति जो खोल कर युद्ध करो और निर्भय रहो।

पांचवां अध्याय।

जयद्रथ बध

युद्ध का चौदवां दिन।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! वह रात अर्जुन ने पुत्र शोक में और जयद्रथ ने व्याकुलता से बिताई। प्रातःकाल होते ही आचार्य्य अपना शंख बजाकर शिविर से निकले। दूसरी ओर से अर्जुन पुत्र शोक से जलते हुए लाखों योद्धाओं के साथ हाथी घोड़े और प्यादों के कोलाहल में युद्ध भूमि में आए। द्रोणाचार्य्य बड़ी फुर्ति से घोड़ा दौड़ाते हुए अपने सैनिकों को जहां जहां खड़ा करने लगे। जब सारी सेना को यथोचित स्थान पर खड़ा कर दिया गया तो आचार्य्य ने जयद्रथ को कहा हे महारथि! तुम यहां से छः कोस की दूरी पर जाकर ठहरो, तुम्हारे साथ महारथि कर्ण शल्य अश्वत्थामा भूरिश्रवा कृपाचार्य्य एक लाख घुड़ सवार साठ हज़ार रथी, चौदह हज़ार हाथी और बीस हज़ार प्यादा सैनिक तुम्हारी सहायता के लिये होंगे। हे जयद्रथ! पहले तो हम अर्जुन को रास्ते ही में लड़ते लड़ते सन्ध्या तक रोक रखेंगे, और यदि किसी प्रकार हम से लंघ भी गया तो छः कोस दूर उस का पहुंचना अति कठिन है, और यदि पहुंच भी गया तो इतनी बड़ी सेना को पार करते करते उसको दिन डूब जाएगा। हे

राजन्! तुम महाबीर हो धीरज धरो, आज अर्जुन तो क्या इन्द्रादि देवता भी तुम्हें पा न सकेंगे। आचार्य्य की आज्ञा पा कर जयद्रथ लाखों घोड़े हाथियों के अन्दर घिरा हुआ कर्ण आदिक महारथियों के साथ वहां से छः कोस दूर चला गया। उसके चले जाने पर द्रोणाचार्य्य ने शकट–व्यूह नामक महा विकट व्यूह बनाया। यह व्यूह २४ कोस लंबा और दस कोस चौड़ा था, जो गर्जते हुए समुद्र के समान बड़ा भयंकर था। इस शकट व्यूह के मुख पर आचार्य्य स्वयं धनुष ले कर खड़े हुए इस के अनन्तर दोनों ओर से मारु बाजों की ध्वनि उठने लगी। तब अर्जुन क्रोध से तमतमाये हुए मुख से कवच खड्ग और सोने का मुकुट धारण किये इन्द्र के समान अपने रथ को जयद्रथ के मारने के लिये आगे बढ़ाने लगे। इस समय श्री कृष्ण ने जोर से पांच जन्य नामक शंख को बजाया जिस से कौरव वीरों के कलेजे हिल गये। तब अर्जुन बोले हे वासुदेव! जिस स्थान पर दुर्मर्षण खड़ा है वहीं मेरे रथ को ले चलो, इस गज सेना को मार कर के हम शत्रुओं के व्यूह में प्रवेश करना चाहते हैं। अर्जुन के कथन से श्रीकृष्ण रथ को दुर्मर्षण के सामने लेगये। वहां पहुंचकर अर्जुन उस बादल के समान गज-सेना पर इस प्रकार टूट पड़े, जैसे सिंह बन में हाथियों पर। दोनों ओर से तुमुल संग्राम होने लगा। वर्षा ऋतु के बादल जिस प्रकार पहाड़ों पर मूसलाधार वृष्टि करते

हैं, इसी प्रकार उस गाण्डीवधारी अर्जुनने अपने शत्रुओं पर बाण बरसाये। हे धृतराष्ट्र! उस समय सारी कौरव सेना बाणों से ढक गई, अन्धकार होगया, सैंकड़ों शूरबीर थोड़े ही समय में पृथिवी पर गिर पड़े। तब दुर्मर्षण के मतवाले हाथी बाणों से पीड़ित होकर आकाश में सूंडें उठा २ कर चिंघाड़ते हुए भागने लगे। भागते २ उन्हों ने अपनी ही सेना का विध्वंस कर दिया। अर्जुन ने सहस्रों ही हाथियों और सवारों को अपनी फुर्ती से छोड़े हुए बाणों से काट डाला। दुर्मर्षण ने अपनी सेना को बहुत ललकारा, परन्तु उस महाकोलाहल में किसीने उसकी न सुनी और ऐसे भागे कि पीछे फिर कर न देखा। दुर्मर्षण की सेना की यह दुर्दशा देखकर उसके भाई दुःशासन को बड़ा क्रोध आया। वह अपनी गजसेना को लेकर अर्जुन पर चढ़ दौड़ा। तब ऊंची लहरों वाले, तूफ़ान से भरे हुए समुद्र के समान दुःशासन की गजसेना के बीच में घिरे हुए अर्जुन ने असंख्य बाणों से उस सेना का नाश करना आरम्भ किया। उसके क्रूर सर्पों के समान छोड़े हुए बाण बीरों के सिर काट काटकर आकाश में उड़ने लगे। थोड़ी ही देर में सैंकड़ों हाथी पृथिवी पर गिर पड़े और सैंकड़ों ही हाथियों के हौदे खाली होगये। तब सवारों से रहित हाथी उच्छृंखल हो होकर अपनी ही सेना के अन्दर दौड़ने लगे। तब शेष बची हुई सेना फिर भागने लगी। दुःशासन भी वहां खड़ा न रह सका

और द्रोणाचार्य्य के पीछे छिपकर उसने अपने प्राण बचाये । उस समय अर्जुन के सामने जो आया, मारा गया । इस प्रकार उस सारी गजसेना को मारकर वह इन्द्र के तुल्य पराक्रमी अर्जुन आचार्य्य के सामने आया, और बड़ी ही नम्रता से हाथ जोड़कर बोला, हे गुरो ! हमने जयद्रथ को मारने की प्रतिज्ञा की है, इस कारण हमे उसके साथ युद्ध करने का अवसर दीजिये । तब द्रोणाचार्य्य बोले, हे अर्जुन ! हमने जयद्रथ को बचाने की प्रतिज्ञा की है, उसे अभयदान दिया है, इसलिए जब तक तुम हमें न जीत लोगे, तब तक जयद्रथ के पास कभी न पहुंच सकोगे । इतना कहकर आचार्य्य ने अर्जुन को बाणों से ढक दिया । तब अर्जुन भी क्रोध से दांत पीसते हुए गुरु पर बाण-वृष्टि करने लगे । अस्त्र-विद्या में गुरु शिष्य दोनों समान थे । उनका परस्पर तुमुल युद्ध होने लगा । दोनों ही एक दूसरे को बाणों से व्याकुल करने लगे, दोनों ही ने एक दूसरे के धनुष और डोरियों को काटना आरम्भ किया । दो घण्टे तक अद्भुत युद्ध होता रहा, ऐसा युद्ध कभी किसीने देखा न सुना । कभी अर्जुन गुरु को दबाकर पीछे हटा देते और कभी गुरु तीक्ष्ण बाणों से अर्जुन को फिर पीछे हटने पर विवश कर देते, दोनों में से कोई किसीको न हटा सकता । यह देखकर श्रीकृष्ण अर्जुन से बोले, हे महाबाहो ! आचार्य्य के साथ युद्ध में और समय खोना उचित नहीं हैं, तुमने

जयद्रथ को मारने की भीषण प्रतिज्ञा की है, इसलिए आचार्य्य को यहीं छोड़कर आगे बढ़ने का यत्न करो। तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण की बात को मानकर रथ बढ़ाने का इशारा किया। तब श्रीकृष्ण ने वायु-वेग से रथ को हांका और द्रोणाचार्य्य की प्रदक्षिणा करके पिछली ओर से रथ को उड़ाते हुए आगे बढ़ाने लगे। अर्जुन के रथ का वेग देखकर द्रोणाचार्य्य ने ललकार कर कहा, हे अर्जुन! सामने आए शत्रु को बिना जीते कभी कोई क्षत्रिय नहीं भागता, तुम क्षत्रियों के मुकुट और संसार में माने हुए शूरवीर होकर किस प्रकार भागे जारहे हो? परन्तु अर्जुन के हृदय में तो जयद्रथ-बध की धुन लगी हुई थी। वह बोले, हे आचार्य्य! आप हमारे शत्रु नहीं गुरु हैं, जिस प्रकार अश्वत्थामा आपके पुत्र हैं, वैसे ही मैं भी हूं, इसलिए यह नियम आपके सम्बन्ध में नहीं है, मेरा शत्रु जहां खड़ा है, मैं वहीं जारहा हूं। इतना कहकर युधामन्यु और उत्तमौजा दो चक्र-रक्षकों को साथ लेकर अर्जुन आंधी के समान उस ओर बढ़े, जिधर जयद्रथ सूचिव्यूह नामके मोर्चे में छिपा खड़ा था। अर्जुन को शकटव्यूह से निकल कर आगे दौड़ते देख काम्बोज और भोजराज दोनों उनको रोकने के लिये उन पर टूट पड़े। वहां उस महातेजस्वी पाण्डुनन्दन के साथ भयानक युद्ध छिड़ गया। अर्जुन के बाणों से घोड़ों के समूह घायल हो होकर गिरने लगे, रथ टूटने लगे, हाथी चिंघाड़ें

मार मारकर, बड़े बड़े पत्थरों के समान धमाके के साथ गिरने लगे। थोड़े ही समय में वह युद्ध- भूमि सहस्त्रों मृतक पुरुषों और जानवरों से भर गई और बड़ी भयङ्कर देख पड़ने लगी। परन्तु कौरव-सेना टिड्डी-दल की तरह अर्जुन को चारों ओर से घेरकर आगे बढ़ने लगी, जहां उनके दस मरते उनके स्थान में सौ आगे बढ़ते थे। यह देखकर श्रीकृष्ण ने कहा, हे कुन्ती-नन्दन ! इन सैनिकों पर ढीली मुट्ठी से काम न चलेगा, दया-भाव को छोड़कर शीघ्र इन्हें ठण्डा करो। आज जिस काम के लिए तुमने प्रतिज्ञा की है, उसके लिए समय बहुत ही थोड़ा रह गया है। तब अर्जुन ने बड़ी तेजी से बाण छोड़ने आरम्भ किए। क्षण मात्र ही में उसने युद्ध-भूमि को बाणमय कर दिया यहां तक कि थोड़े ही समय में सबके सब वीर घायल होगए, उनमें से बहुतसे मर गए और बहुत से मूर्छित होकर, भूमि पर गिर पड़े। एक भी वीर ऐसा न बचा, जिसे अर्जुन के बाण रूप सर्प ने डस न लिया हो। कृतवर्मा और सुदक्षिण दोनों महारथि भी मूर्छित होकर गिर पड़े इस अवसर को पाकर श्रीकृष्ण ने रथ को इतने वेग से दौड़ाया, कि उसे देखना कठिन हो गया, किसी को साहस न हुआ, कि उनके पीछे रथ ले जावे और उनको खड़ा करे।

छटा अध्याय ।

अर्जुन का आगे बढ़ते जाना ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! जब दुर्य्योधन ने देखा कि अर्जुन सैंकड़ों और सहस्त्रों योद्धाओं के प्राण लेकर शकट व्यूह से निकल गये हैं और अब सूचि-व्यूह में जारहे हैं तो वह तत्काल द्रोणाचार्य्य के पास पहुंचे और त्यूदी चढ़ा कर बोले, हे आचार्य्य! अर्जुन ने आप के सामने व्यूह में प्रवेश किया, और आप की सेना को इस प्रकार दग्ध कर दिया जैसे दावानल अग्नि बन को, परन्तु किसी में उस को रोकने की सामर्थ्य न हुई।

हे गुरु! हमें मालूम होता है, कि इस समय हमारे पास कोई भी योग्य सहायक नहीं है, और पितामह की मृत्यु के पश्चात् हम आश्रयहीन हो गये हैं। हे आचार्य्य हम आपको सदा ही प्रसन्न रखते रहे हैं और अब तक रखने का प्रयत्न करते हैं, आपकी आज्ञा का कभी उल्लङ्घन नहीं करते, परन्तु आप हमारी कुछ भी परवा नही करते, और हमारे रक्त के प्यासे पांडवों पर दया करते हैं और सदा ही अंदर से उन का पक्ष करते हैं। हमें यह पता न था कि आप उस घड़े के समान हैं जिसके अन्दर तो विष हो परन्तु मुख पर दुग्ध लगा हो। हे आचार्य्य! यदि आप जयद्रथ को यह वचन न देते कि हम तुम्हारी रक्षा करेंगे तो हम उनको यहां क्यों रोकते, उसने हमसे अपने घर चले जाने की आज्ञा मांगी परन्तु आपने भरोसा दे कर

उस को मृत्यु के मुख में धकेल दिया । हे आचार्य्य ! हमारी बातों का बुरा न मानना इस समय हम इतने दुखी हैं, कि अपने मनके वेग को रोके नहीं रोक सकते, सिन्धु-राज को आपने अभयदान दिया है, वह आपकी शरण है, इस कारण हे आचार्य्य ! उसकी रक्षा करें ।

दुर्योधन के वचन सुनकर आचार्य्य बोले हे महाबाहो ! हम तुम्हारी बातों का बुरा नहीं मानते, तुम हमको ऐसे ही प्यारे हो जैसे अश्वत्थामा । परन्तु हमारा इसमें कुछ भी दोष नहीं । हे सुयोधन ! अर्जुन के रथवाही श्रीकृष्ण रथ हांकने में ऐसे चतुर हैं, कि वह हमारी एक भी नहीं चलने देते । उनसे चलाए हुए घोड़े वायु वेग से दौड़ते हुए आधे आकाश और आधे भूमि पर चलते प्रतीत होते हैं । तुम देखते नहीं हो कि अर्जुन से छोड़े हुए बाण उनके रथके एक एक कोस पीछे गिरते हैं, इसलिये थोड़ा सा द्वार पाते ही श्रीकृष्ण रथको निकालकर आगे लेजाते हैं । और बृद्ध होने के कारण हम उनकी फ़ुर्ति और वेग के साथ बराबरी नहीं कर सकते । हे सुयोधन ! अर्जुन तो आगे निकल गये हैं परन्तु युधिष्ठिर सहित शेष पांडव सेना हमारे व्यूहके इतनी निकट आगई है कि यदि हम उनको यहां ही न रोकदेंगे तो वह जयद्रथ क्या हम में से एक को भी जीवित न छोड़ेगी । इस कारण मेरा यहां ही ठहरना उचित है हां तुम स्वयं वीर हो, पराक्रमी हो, अर्जुन के सामने जाकर उससे युद्ध करो हे राजन् ! आज

मैं तुम्हें वह कवच बांधता हूं जिसको अर्जुन क्या इन्द्र भी तोड़ नहीं सकता इस कवच को बांध कर तुम उस वीर के साथ युद्ध करो, आज संसार तुम्हारे अद्भुत युद्ध को देखे। इतना कह कर आचार्य्य ने मंत्रों से पवित्र किया हुआ वह अभेद्य कवच दुर्योधन के शरीर पर बांधा जिस को फोड़ कर कोई भी शस्त्र उसके शरीर को घायल न कर सकता था। उस कवच को धारण करके दुर्योधन एक सहस्र चतुरंगिणी सेना को साथ लेकर अर्जुन को रास्ते ही में पकड़ने के लिए दौड़ा। और अपनी सेना को आंधी के समान उड़ाता हुआ अर्जुन के निकट पहुंच कर उसे ललकारने लगा। अपने पीछे दुर्योधन को इतनी बड़ी सेना के साथ आते देखकर अर्जुन श्रीकृष्ण के प्रति बोले हे माधव! यह देखो स्वयं दुर्योधन मुझे ऐसे लल-कार रहा है जैसे जीवन से दुःखी हुआ हुआ रोगी मृत्यु को। परन्तु हमें लड़ते लड़ते प्रातःकाल से तीसरा पहर हो गया है, हमारे घोड़े थक गए हैं और बहुत बुरी तरह से घायल हैं, सैकड़ों बाण इनके शरीर में खुभे हुए हैं, इसलिए हे केशव! तुम रथ को यहीं खड़ा करो और घोड़ों को थोड़ा विश्राम दो मैं भूमि पर खड़ा हो कर भी आज दुर्योधन और उसकी सेना का नाश करने में समर्थ हूं। इतना कह कर अर्जुन रथ से कूद पड़े और अपने निकट आती हुई कौरव सेना को गांडीव धनुष से रोकने लगे। तब श्रीकृष्ण ने रथ के घोड़ों को खोल दिया और

उनके शरीर से एक एक करके सब बाणों को निकाला। इस के अनंतर घोड़ों को पानी पिलाया, घास खिलाया और अपने हाथों से उनको खूब मला, जिससे घोड़ों की सब थकान दूर हो गई और वह पहले की तरह फिर तैय्यार हो गए । जितनी देर श्रीकृष्ण घोड़ों को तैय्यार करने में लगे रहे उतना अवसर महा पराक्रमी अर्जुन यम के समान अकेला ही कौरवों की सेना का भयानक विनाश करता रहा, सहस्रों कौरव वीर लाख यत्न करने पर भी एक पग आगे न बढ़ सके । हे धृतराष्ट्र! युद्धभूमि में घोड़ों को खोल कर श्रीकृष्ण ने यह अद्भुत कर्म किया जिसे आज तक किसी सारथि ने न किया था। उस समय अर्जुन की वीरता को देख देख कर शत्रुओं ने भी उसको धन्य धन्य कहा और आकाश से देवताओं ने पुष्पों की वर्षा की। तब श्रीकृष्ण ने घोड़ों को फिर रथ के आगे जोड़ा और अर्जुन को लेकर पवन के समान सूचि-व्यूह में पहुंचा। अर्जुन को दौड़ते देखकर दुर्योधन भी उसी वेग से दौड़ा और व्यूह के निकट ही उसको जा लिया। अर्जुन ने बहुत क्रुद्ध होकर दुर्योधन को चौदह तीक्ष्ण बाण मारे परन्तु वह सब बाण दुर्योधन के शरीर से टकरा कर गिर पड़े तब अर्जुन ने चौदह बाण और छोड़े परन्तु वह भी शरीर को छूते ही नीचे गिर पड़े। अपने बाणों को व्यर्थ जाते देखकर अर्जुन के नेत्र क्रोध से जलने लगे। वह गांडीव धन्वा को खेंचकर कानों तक ले गये और सर्पों के

समान अत्यन्त तीक्ष्ण अठाईस बाण उसपर छोड़े, परंतु पहले की तरह वह भी सबके सब निष्फल गये। उल्टे दुर्योधन उन पर बाण वृष्टि करने लगे। यह देखकर कौरव सेनाने आकाशको फाड़ने वाला सिंह नाद किया और सब दुर्योधन की जय २ करने लगे। श्रीकृष्ण दुर्योधनकी वीरता को देखकर आश्चर्य में डूब गए और अर्जुन को बोले हे महाबाहो! आज तुम्हारे सब बाण व्यर्थ जारहे हैं। क्या गांडीव धनुष वही है अथवा तुम्हारी भुजाओं में बल नहीं रहा, आज मैं दुर्योधनकी धीरता और बलको देखकर चकित हूं। तब अर्जुनने कहा हे केशव! आज जिस कवचको बांधकर दुर्योधन मेरेसामने हुआ है, वह अभेद्य है और किसी भी शस्त्र से नहीं फूट सकता। आचार्य्यने केवल मुझे ही इस कवचके बांधनेकी युक्ति सिखाई थी, उसी कवचको आचार्य्यने आज इसे बांधा है, परंतु आप तनिक भी चिंता न करें, इस कवच के साथ और भी युद्ध करनेके बहुतसे ढंग चाहिये जिनको यह मूढ दुर्योधन नहीं जानता, मैं अभी आपके सामने ही इसको मारूंगा यदि यह भाग ने गया, इतना कह कर क्रोध से तमतमाये हुए मुख वाले अर्जुन ने अपने धनुष को चढ़ाया और एक बाण से उसके धनुषको काट डाला और दो तीक्ष्ण बाण उसकी हथेलियों पर मारे जिनसे पीड़ित हुआ हुआ दुर्य्योधन लहू से भरे हुए हाथों से भाग निकला। दुर्य्योधन को भागते देखकर सूचि व्यूह के आगे खड़ी हुई अनंत सेना अर्जुन पर मकड़ी के

समान टूट पड़ी। तब वह पांडु नंदन अनंत बाणों से उनको बींधने लगा। दोनों ओरसे घोर संग्राम होने लगा अर्जुन ने सहस्रों वीरों को भूमि पर सुला दिया, क्षण मात्र में पृथ्वी पर सिरों और भुजाओं के ढेर बिछ गये। परंतु अकेला अर्जुन टिड्डी दल सेनाके साथ कब तक पार पावेगा, यह देखकर श्रीकृष्ण ने सोचा, कि सूर्य्य अस्त होने में बहुत ही थोड़ा समय बाकी है, कौरव सेना बहुत बड़ी है और पग पग पर हमें रोकरही है। अर्जुन अकेला इन सबको पार करके इतनी दूर तक कैसे पहुंचेगा। इन सब बातों को सोच कर पसीने में डूबे हुए और धूल से भरेहुए श्रीकृष्ण सहायताके लिये बारबार पांचजन्य शंख को बजाने लगे। हे धृतराष्ट्र ! पांचजन्य शंखकी ध्वनि को सुनकर युधिष्ठिर बड़े चिन्तित हुए। अर्जुन बहुत बड़ी विपत्तिमें फंस गये हैं। इस विचारने उनके हृदयको शोक के समुद्र में डुबा दिया। अंत में उन्हों ने सात्यकी को बुला कर कहा, हे युयुधान ! श्रीकृष्ण बारंबार शंख बजा रहे हैं और उनके रथपर बहुत बड़ी गर्द और धूल उड़ती दिखाई देती है। यह देखो हाथी घोड़े, रथ और पदातियों की अनंत चतुरंगिणी सेना उसी ओर भागी जाती है, इतनी बड़ी सेनाको बिना जीते अर्जुन किस प्रकार जयद्रथ तक पहुंच सकेगा। हे महाबाहो ! सूर्य्य अस्त होने में बहुत थोड़ा समय रह गया है, अब तुम्हारे बिना कौन है जो उसकी सहायता कर सके। हे यादव श्रेष्ठ ! अर्जुन

तुम्हारा गुरु है और तुम उसके प्राणोंसे प्यारे शिष्य हो। इस लिये तुम्हें उसकी सहायता के लिये शीघ्र वहां पहुंचना चाहिये। आचार्य्य की ओर से तुम कुछ भी चिन्ता न करो, यदि वह तुम को रोकने की चेष्टा करेंगे तो हम सब मिल कर उन पर आक्रमण करेंगे। यह सुन कर सात्यकी ने कहा हे धर्मराज ! आप मुझे आज्ञा करें, अर्जुन के लिये मैं अपने प्राण तक दे देने को उद्यत हूं, चाहे इन्द्र भी सामने आ जाए, आचार्य्य तो क्या, परन्तु राजन्! एक बात है जिससे मैं डरता हूं, अर्जुन जब प्रातःकाल युद्ध भूमि में गए थे उस समय उन्होंने मुझे आचार्य्य से आपकी रक्षा करने के लिये आपके पास रहने की आज्ञा दी थी। उन की आज्ञा को भंग करके यदि मैं चला गया और आचार्य ने आप पर आक्रमण किया तो फिर मैं कहीं का न रहूंगा। तब युधिष्ठिर बोले हे युयुधान ! मेरी रक्षा की आप चिन्ता न करें बीर धृष्टद्युम्न तुम्हारे पीछे मेरी रक्षा करेंगे, और मैं स्वयं भी आचार्य्य से युद्ध करने में समर्थ हूं। अपने और अर्जुन में जब मैं तुलना करता हूं तो अर्जुन ही की रक्षा करना मुझे आवश्यक प्रतीत होता है। हे शत्रु नाशक ! अर्जुन के बिना मुझे इस संसार में जीने की इच्छा नहीं है इस लिए तुम मेरे कथन से जाओ, तुम पर कोई दोष न आवेगा। धर्मराज की आज्ञा पाकर सात्यकी उसी मार्ग से व्यूह के अन्दर प्रवेश करने लगे, जिस मार्ग से अर्जुन गये थे। व्यूहके मुख पर स्वयं द्रोणाचार्य्य यमराजके समान

धनुष चढ़ाये थे। उन्हें देखते ही सात्यकी ने उन पर तीक्ष्ण बाण बरसाने आरंभ किये। उस वीरने आचार्य्य के घोड़े सारथि और ध्वजा को काटगिराया और एक तीक्ष्ण बाण से उनके धनुष के दो टुकड़े कर दिये। आचार्य्य को बेबस देख कर कौरवों के बड़े बड़े वीर सात्यकी पर टूट पड़े और अनन्त बाण उस पर छोड़ने लगे परंतु वह वीर तनिक भी न घबराया और बादल के समान चारों ओर बाणोंकी वृष्टि करने लगा। उसने सारे कौरव वीरों को बाणों से तोप दिया। अपने गुरु अर्जुनके समान उसने सैंकड़ों और सहस्रों शत्रुओं का बध किया, सैंकड़ों हाथी घोड़े और प्यादों को मार कर रथोंको चूर चूर कर दिया। किसीको उसके सामने खड़े होने का साहस न रहा, और सब के सब भाग निकले। यह देख कर द्रोणाचार्य्य दूसरे रथ पर सवार होकर फिर उस की ओर चढ़ दौड़े और ललकार कर बोले, ठहरो ठहरो हे सात्यकी! यदि तुम अपने गुरुके समान भाग न गये तो आज तुम्हारा मैं बध करके छोड़ूंगा। परंतु सात्यकी ने रथ को बेग से आगे बढ़ाते हुए कहा, हे आचार्य्य! शिष्यको अपने गुरुके मार्ग पर ही चलना उचित है, जब मेरे गुरु ने आपको अपना शत्रु नहीं समझा तो मेरे भी शत्रु नहीं हैं, प्रत्युत गुरुके गुरु हैं। इतना कह कर सात्यकी आंधी की तरह अपने रथ को उड़ाते हुए ले गए। सूचि ब्यूह में पहुंचने तक जिस ने उस का रास्ता रोका उसी को उस ने यमपुरी में भेजा। उस को इस

प्रकार मारते काटते और भयानक नाश करके जाते देख दुर्य्योधन ने बहुत से राजों को उसे मारने के लिए भेजा। वह सब मिल कर सात्यकी पर प्रहार करने लगे। इधर धर्मराज युधिष्ठिर ने सोचा, कि अर्जुन की सहायता के लिये तो हमने सात्यकी को भेजा परन्तु सात्यकी अकेला इस समय बहुत से राजों में घिर गया है उस की रक्षा कौन करे। सात्यकी की रक्षा करना मेरा पहला कर्त्तव्य है, अर्जुन को वह पुत्र से बढ़ कर प्यारा है, यदि वह युद्ध में मारा गया तो बहुत बुरा होगा। यह विचार करके धर्मराज ने भीम को कहा हे भीम! तुम्हारे भाई अर्जुन के झंडे को मैं अब नहीं देख रहा हूं। पांचजन्य शंख की बारंबार आने वाली ध्वनि मेरे कलेजे को चीर रही है, इससे जान पड़ता है, कि देवताओं और असुरों को जीतने वाला अर्जुन इस समय बड़ी विपत्ति में है। इतना कहते कहते युधिष्ठिर का कण्ठ भर आया और नेत्रों से आंसु चलने लगे। भाई की यह दशा देखकर भीम बहुत घबरा गये। उन्होंने युधिष्ठिर को धीरज देते हुए कहा हे धर्म राज! आप अधीर न हों, अर्जुन को जीतने वाला संसार में कोई उत्पन्न नहीं हुआ, और फिर श्रीकृष्ण के साथ होते आप को कोई भय नहीं करना चाहिये, परंतु आप हमें आज्ञा दीजिये, कि इस समय हमें क्या करना होगा।

तब युधिष्ठिर बोले हे शत्रुओं के नाश करने वाले! अर्जुन के बिना हम जीना नहीं चाहते वह हमें तीनों लोकों

के राज्य से भी अधिक प्यारा है, आज प्रातःकाल से वह जयद्रथ को मारने की प्रतिज्ञा कर के युद्ध क्षेत्र में गया हुआ है, परन्तु अभी तक नहीं लौटा इस से हमको महां दुख हो रहा है। उस की सहायता के लिए हम ने वीर सात्यकी को अकेले ही समुद्र के समान अथाह सेना के अंदर भेज दिया है, और अब उस को अकेले ही बहुत से राजों के साथ युद्ध करते देखता हूं इस से मेरा दुख और भी बढ़ गया है, इसलिये तुम सब कामों को छोड़ कर शीघ्र वहां जाओ जहां अर्जुन कौरवों को क्षय कर रहे हैं और उनके कुशल पूर्वक होने की अपने शंख द्वारा मुझे सूचना दो। तब भीमसेन ने धर्मराज को धृष्टद्युम्न की रक्षा में सौंप कर कहा हे राजन्! लो हम चले और वहां पहुंच कर हम आपको सूचना देंगे। इतना कह कर वह वायु पुत्र रथ को ले चला। भीमसेन को सामने देखकर द्रोणाचार्य्य बोले हे वृकोदर! आज हम तुम्हारे शत्रु हैं, हमें बिना जीते तुम व्यूह के अंदर प्रवेश नहीं कर सकते। आचार्य्य की बात से भीमसेन को बड़ा क्रोध हुआ, वह त्युढ़ी चढ़ाकर बोले हे आचार्य्य आज तक हम तुमको अपना गुरु समझते रहे, परंतु अब तुम हम को अपना शत्रु समझते हो, हे ब्राह्मण! ठहर जाओ, आज भीम तुम्हें अपना बल दिखाए-गा। हे वृद्ध! अर्जुन ने तुम को ब्राह्मण जान कर नहीं मारा, परंतु भीम युद्ध में अपने कर्त्तव्य को पहचानता है। इतना कहकर महां काय भीम ने एक लंबी लोहे की गदा

ज़ोर से आचार्य्य पर चलाई। मृत्यु के समान चक्कर खाती हुई उस गदा को अपने पर आती देखकर आचार्य्य फुर्ति से रथ पर से कूद पड़े, परन्तु उस एक ही गदा से उन के चारों घोड़े सारथि और रथ चूर चूर हो गये। भीम इस अवसर को पाकर जल्दी से अपने रथ को आगे ले गए। शकट व्यूह के अंदर प्रवेश करके प्रचंड आंधी के समान वह कौरव सैनिक रूप वृक्षों को पृथिवी पर फैंकने लगे। सहस्रों योद्धाओं को यमपुरि में भेजते हुए वह महांवीर व्यूह के अंत के भाग में पहुंच गये। वहां यादव सेनापति सात्यकी भोज और काम्बोजों के साथ घोरयुद्ध में प्रवृत्त थे। भीमसेन इस अवसर को अच्छा समझ कर चुपके चुपके वहां से आगे निकल गये। व्यूह को पार करते ही उन्होंने अर्जुन के वानर के चिन्ह वाले झंडे को देखा। अपने भाई को कुशल पूर्वक देख कर भीम ने वर्षाकाल के बादल के समान गर्ज कर सिंहनाद किया। श्रीकृष्ण और अर्जुन ने भीम की अवाज़ को पहचान लिया, और समय पर उस को सहायता के लिये पहुंचे देख कर बहुत प्रसन्न हुए। युधिष्ठिर ने जब भीम की गर्जना को सुना तो वह फूले न समाये और सब राजाओं में उस की प्रशंसा करने लगे।

इस प्रकार बच कर जाते हुए भीम को जब कौरवों ने देखा तो उन्होंने पीछे से उस पर धावा किया। सहस्रों वीर उस अकेले जाते हुए पर टूट पड़े परन्तु उसने सबको मार मार कर भगा दिया, और जो सामने आया उसको

यमपुरि का रास्ता दिखलाया। हे धृतराष्ट्र! महांबलि भीम ने अपनी गदा से वहां आपके इकत्तीस पुत्रों को एक एक करके मार डाला। तब शेष बची हुई कौरव सेना में बड़ी घबराहट फैल गई। वह सब ऐसे भागने लगे जैसे सिंह को देख कर मृगों के समूह। तब सूचि-व्यूह में खड़े हुए कर्ण बाहर निकले और भीम के सन्मुख आकर उस पर तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगे। भीम भी कर्ण के बाणों को रास्ते ही में काट काट कर गिराने लगे, उन दोनों का घोर युद्ध होने लगा। परंतु कर्ण अस्त्र-विद्या में बड़े प्रवीण थे, उन्होंने भीम को मार मार कर व्याकुल कर दिया। अपने आपको अस्त्र-विद्या में निर्बल देख कर भीम रथ से कूद पड़े और ढाल तलवार ले कर कर्ण की ओर दौड़े, परन्तु भीम अभि निकट पहुंचने भी न पाये थे कि कर्ण ने बाणों से उन की ढाल और तलवार को काट दिया। भीमसेन उस समय शस्त्रहीन युद्ध-भूमिमें खड़े रह गये। तब कर्ण गरुड़ के समान उन पर झपटे। उस समय भीम भाग कर मरे हुए हाथीयों के बीच में छुप गये। कर्ण भी हाथियों में से मार्ग निकालते हुए वहां पहुंचे और भीम को छुपे देखकर सड़-सड़ाती हुई चाबुक मारकर बोले, हे भोजन के वीर! तुम विराट के रसोई-घर में जाकर रोटियों से युद्ध करो, यहां तुम्हें आना उचित नहीं था। इस समय तुम्हें मारना व जीता रखना मेरे हाथ में है, परन्तु अर्जुन को छोड़कर मैं और किसीको न मारूंगा, यह मैंने

कुन्ती से प्रतिज्ञा की है, इसलिये तुझे छोड़ता हूं, जा फिर कभी युद्धमें मेरे सामने न आना। कर्णके अपमान युक्त इन वचनों को सुनकर भीम के क्रोध का पारावार न रहा, वह तत्काल उठे और कर्ण के हाथ से धनुष छीन कर उसके दो टुकड़े कर दिये और बोले, हे अभिमानी! क्षत्रिय का रण में युद्ध करना ही एकमात्र धर्म है; जय और पराजय परमात्मा के हाथ में है। हमने भी तुमको कई बार पहले हराया है, परन्तु इस समय भी यदि तुममें मुझसे लड़ने का साहस है तो तू मेरे साथ मल्ल-युद्ध कर, फिर तू देखेगा कि मुझसे पार पाना सहज नहीं है। परंतु कर्ण भीम के बल को जानता था, इस कारन बार बार ललकारे जाने पर भी उसने भीम के साथ मल्ल-युद्ध करना स्वीकार न किया और चुप-चाप वहांसे चलकर फिर जयद्रथ के पास जाखड़ा हुआ। तब भीमसेन फिर रथ पर सवार हो अर्जुन के पास पहुंच गये और भाई के साथ मिलकर कौरव-दल का नाश करने लगे। इतने में सात्यकी भी काम्बोज और भोज क्षत्रियों को मार-काटकर अर्जुन की ओर आता दिखाई दिया। उसे देख कर श्रीकृष्ण परम प्रसन्न हुए और अर्जुन के प्रति बोले, हे अर्जुन! यह देखो तुम्हारा परम प्यारा शिष्य सात्यकी सहस्रों कौरवों को क्षय करके तुम्हारी सहायता के लिए आरहा है। यह सुनकर अर्जुनने कहा, हे केशव! सात्यकी ने यहां आकर बड़ा अनुचित काम किया है। मैं इसको

धर्मपुत्र की रक्षा का भार सौंपकर आया था, परन्तु युधिष्ठिर ने इसे भेजकर हम को बड़ी भारी चिन्ता में डाल दिया है। अब द्रोणाचार्य्य से कौन उनकी रक्षा करेगा। और सात्यकी इस समय थका हुआ भी है, वह अकेला इस बड़ी सेना के साथ कैसे लड़ सकेगा ? इसने यहां आकर लाभ के स्थान में उल्टी हानि की है। यहां तो हमें अपनी ही रक्षा करनी थी, परन्तु अब इसकी भी साथ करनी पड़ेगी। यह कहकर अर्जुन फिर शत्रुओं का संहार करने में लग गए। इतने में सात्यकी को बेखटके अर्जुन के साथ मिलते देखकर महाबलवान् भूरिश्रवा उसपर टूट पड़ा और तीक्ष्ण बाणों से उसे बींधने लगा। सात्यकी भी उसके बाणों को खण्ड खण्ड करने लगे। कुछ देर तक दोनों में घोर युद्ध हुआ, परन्तु सात्यकी के घोड़े थके हुए थे और स्वयं भी लड़ता लड़ता थक चुका था, भूरिश्रवा से वह पार न पासका। उसके धनुष से बाण धीरे धीरे निकलने लगे। भूरिश्रवा ने उस समय पूरे बल से उसपर आक्रमण किया और उसके चारों घोड़े मार दिये, सारथि का सिर काट लिया और रथ चूर चूरकर डाला। तब सात्यकी रथ से कूदकर ढाल तलवार हाथ में लिये भूरिश्रवा की ओर दौड़ा, परन्तु उसने तीक्ष्ण बाणों से उसकी ढाल तलवार भी काट, डाली और रथ से उतर कर उसपर तलवार से झपटा। अपने हाथ में कोई अस्त्र शस्त्र न होनेसे सात्यकी मण्डल बांधकर भूरिश्रवा के

आस-पास दौड़ने लगा। यह देखकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा, हे सव्यसाचि ! यह देखो तुम्हारा शिष्य शस्त्र-हीन हुआ हुआ बड़े संकट में पड़ा है। हे महाबाहो ! वह तुम्हारे हित के लिये लड़ रहा है, उसकी रक्षा करो। परन्तु अर्जुन एक तो सात्यकी पर पहले से ही प्रसन्न था, दूसरे भूरिश्रवा धर्म-पूर्वक उससे युद्ध कर रहा था, इसलिए श्रीकृष्ण की बात को सुना अनसुना करके वह शत्रुओं पर बाण बर्साता रहा। इतने में भूरिश्रवा ने सात्यकी को पकड़कर पृथिवी पर गिरा लिया और केशों से पकड़कर दाएं हाथसे तलवार निकालने लगा। उस समय सात्यकी तलवार से बचने के लिए अपनी गर्दन को दाएं बाएं मोडने लगा। सात्यकी को मृत्यु के दांतों में फंसा हुआ देखकर श्रीकृष्ण से न रहा गया, वह फिर बोले, हे अर्जुन ! देखो तुम्हारा परम-प्यारा शिष्य बुरी तरह फंसा है, ऐसे बीर की रक्षा करनी तुम्हारा धर्म है। तब अर्जुन का हृदय भी दया से पिघल गया, वह बोला, हे वासुदेव ! मैं इस समय एकचित्त होकर शत्रुओं से लड़ रहा था इसलिए मैंने आपकी बात पर ध्यान नहीं दिया था। इतना कहकर अर्जुन ने सरसराता हुआ एक बाण भूरिश्रवा पर छोड़ा, जो उसकी दोनों भुजाओं को काट कर लेगया। अकस्मात् भुजाओं के कट जाने पर भूरिश्रवा बड़े दुःख और क्रोधसे बोला, हे अर्जुन ! संसार में सबसे बड़े शूरवीर होकर यह अधर्म तुम्हें शोभा नहीं

देता, जब मैं सब ओर से मन हटाकर अपने शत्रु से लड़ रहा हूं, उस समय तुम ने हमारी भुजाओं को काट कर क्षत्रियों को कलंकित कर दिया। रे मूढ़! तुम्हें ऐसा पाप करते लज्जा भी नहीं आई, परंतु जिस के सारथि और सलाहकार कृष्ण हैं, उनको भले-बुरे और पाप-पुण्य का विचार कहां। यह कहकर भूरिश्रवा उसी स्थान पर आंखें बन्द करके समाधि लगाकर परमात्मा के ध्यान में बैठ गए। सात्यकी उस समय बड़े क्रोध में था, उसका हृदय अपमान से जल रहा था, वह विचार-शून्य हुआ हुआ उठा, और तलवार के एक भरपूर हाथ से उस ने भूरिश्रवा का सिर तन से अलग कर दिया। सात्यकी के इस महानीच कर्म को देखकर चारों ओर से क्षत्रिय लोग उसको धिक्कार है धिक्कार है, ऐसा कहने लगे। अर्जुन ने भी उस के इस काम पर बहुत बुरा मनाया, और उस की ओर से मुख फेरकर अपने रथ को जयद्रथ की ओर हांक दिया। इतने में अर्जुन के दोनों चक्ररक्षक भी जो पीछे रह गए थे, कौरव सेना-का संहार करके वहां पहुंचे, भीम और सात्यकी जिन के रथ चूर चूर हो चुके थे, दोनों उनके रथों पर सवार होगए और अर्जुन के पीछे पीछे चलने लगे। अर्जुन को अतिसमीप आए देखकर दुर्योधन, कर्ण, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा जयद्रथ को बचाने के लिये डटकर खड़े होगए।

—:०:—

सातवां अध्याय ।

जयद्रथ की मृत्यु ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! अर्जुन ने जब अपने प्यारे पुत्र के मारने वाले सिंधुराज जयद्रथ को देखा तो क्रोध से उन के नेत्र जलने लगे । उस समय सूर्य्य अस्त हुआ ही चाहता था । अर्जुन प्रलयकाल के मेघ के सदृश कौरव सेना पर बाण वृष्टि करने लगे । एक ही क्षण में सैंकड़ों बाण अग्नि के समान इस प्रकार अकाश में उड़ने लगे जैसे प्रलयकाल में संसार का नाश करने के लिए करोड़ों तारे एक साथ ही टूटते हैं, वीरों के सिर धड़ हाथ, पाओं मुकट ओलों के समान पृथिवी पर गिरते थे । गांडीव धनुष की कान फाड़ने वाली कठोर ध्वनि से वीरों के हृदय कांप उठे । तब कर्ण आदि महारथियों ने जल्दी से जयद्रथ को घेर कर बीच में छिपा कर खड़ा किया और स्वयं अर्जुन पर बाण छोड़ने लगे । कुछ देर तक दोनों ओर से महा घोर संग्राम हुआ, कौरव वीर अपने प्राणों की आशा छोड़ कर लड़ने लगे । सूर्य्य अस्त होने में कुछ क्षण ही शेष रह गये । कौरवों के हृदय बढ़ गये वह प्रसन्न हुए २ अर्जुन पर चारों ओर से टूट पड़े । यह देखकर श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन ! सूर्य्य अस्त होने में थोड़ा समय रह गया है और कर्ण आदि महारथि पूरे बल से युद्ध में प्रवृत्त हो रहे हैं, वह देखो जयद्रथ भयभीत हुआ २ इन के मध्य में छुप कर बैठा है । हे

नरसिंह ! इन छहों महारथियों को बिना जीते जयद्रथ को मारना अति कठिन है। इस लिये मैं अपने योग बल से सूर्य्य पर परदा डालूंगा, जिस से जयद्रथ सूर्य्यास्त हो गया है ऐसा समझेगा और अपने आप को प्रसन्न होकर प्रगट कर देगा। उस समय हे अर्जुन तूने सामने आये हुए इस बालहंता नीच को मार डालना हे धृतराष्ट्र! अर्जुन को इस प्रकार समझा कर श्रीकृष्ण भगवान् ने योग बल से महां अन्धकार को सिरजा। उस फैले हुए अन्धकार ने सूर्य्य को ढांप लिया। क्षण मात्र में ही अन्धेरी रात्रि पड़ गई देख कौरव लोग प्रसन्न होकर सिंहनाद करने लगे, शंख भेरी ढोल और विजय के बाजों से उन्हों ने आकाश को गुंजा दिया। हाथ में मशालें लिये शस्त्रों को छोड़ २ कर वह सब उन्मत्त होकर नाचने लगे। उस समय जयद्रथ भी मारे खुशी के अपने आप को भूल कर बाहर निकल आया और "रात्रि होगई" "रात्रि होगई" "अर्जुन को हमने मार लिया" इस प्रकार कोलाहल करने लगा। ज्यूंही जयद्रथ इस प्रकार उछलता कूदता बाहर आया श्रीकृष्णजी अर्जुन से फिर बोले, हे वीर शिरोमणि! देख वह पापी जयद्रथ आनन्द से नाच रहा है, यही समय इसके बध का है, मारो। वासुदेव के ऐसा कहने पर गांडीव धारी अर्जुन अग्नि के समान बाणों से कौरवों को दग्ध करने लगे। उसके बाणों से कौरव वीर गिरने लगे चकराने लगे पीडित होने लगे और भयभीत होकर भागने लगे। हे धृतराष्ट्र! सारी कौरव

सेना के मारे जाने तथा भाग जाने पर सूर्य्य के समान पराक्रमी अर्जुन कर्ण कृप आदि रक्षकों को मारने लगे। उसने बाण समूह से अश्वत्थामा कर्ण कृपाचार्य शल्य और दुर्य्योधन सब को तोप दिया। उस महावीर की फुर्ति को देखकर आकाश से देवताओं ने फूल बर्साये। किस समय वह बाण को पकड़ता जोड़ता और छोड़ता है, इसको कोई भी देख न सकता था। उसका धनुष लगातार गोल बांबी के समान दिखाई देता था, जिसके अन्दर से सर्पों के समान बाण निकलकर दशो दिशाओं को फैल जाते थे। उसने कर्ण और उसके पुत्र वृष सेन के धनुष को काट डाला, शल्य के सारथिं का सिर काट डाला और कृपाचार्य्य व अश्वत्थामा को बाणों से वींध डाला। हे धृतराष्ट्र! अर्जुन ने छहों महां रथियों को मार २ कर व्याकुल कर दिया। अर्जुन की मार से भयभीत होकर वह सब अलग अलग हो गये। तब जयद्रथ अकेला खड़ा अर्जुन को यमराज के समान सामने देखकर कांपने लगा। उस समय अर्जुन ने महांकाल के तुल्य घोर बाण निकाल कर गांडीव में जोड़ा, और कान तक खैंच कर उसको जयद्रथ पर छोड़ा। गांडीव से छूटा हुआ वह बाण बाज पक्षि की नांई तेजी से पहुंच कर जयद्रथ के सिर को काट कर गगन मंडल में उड़ गया। हे राजन्! जयद्रथ का सिर कटते ही श्रीकृष्ण ने अपनी माया को दूर करके अन्धकार को समेट लिया। सूर्य्य फिर चमकने लगा।

उस समय दुर्योधन और उसके सारथियोंने समझा, कि यह श्रीकृष्णकी माया थी। वह सब दुख से रोने लगे और निराश होकर बैठ गए। जयद्रथ को मारकर श्रीकृष्ण ने आकाश को गुंजा देने वाला पांच जन्य शंख बजाया। अर्जुन ने भी पुत्र की मृत्यु का बदला लेकर देवदत्त नामक शंख बजाया। हे धृतराष्ट्र! इस युद्ध में भीमसेन ने तेरे ३१ पुत्र मारे और सात्यकी ने भी बहुत से बीरों के प्राण लिये। इस के अनन्तर सिंहनाद करते हुए अर्जुन और श्रीकृष्ण युधिष्ठिर के पास आए। श्रीकृष्ण ने धर्मपुत्र को प्रणाम करके कहा हे राजन्! अर्जुन ने अपनी कठिन प्रतिज्ञा को पूर्ण किया। आपका शत्रु पापी जयद्रथ यमपुरि में भेज दिया गया, आप की विजय हुई, आपको बधाई हो आपको बधाई हो। यह सुनकर धर्मपुत्र गद्गद प्रसन्न होकर रथ से उछल पड़े और श्रीकृष्ण को कण्ठ से लगाकर आनन्द के आंसु बहाने लगे। धर्म पुत्र बोले हे केशव! अर्जुन ने जयद्रथ को मारकर अद्भुत वीरता दिखलाई, परमात्मा की दया और तुम्हारे बुद्धि बल से अर्जुन ने प्रतिज्ञा को पूरा किया। जो काम देवताओं से भी न होसकता था, उसको पूरा करके तुमने मेरे डूबते हुए जहाज को पार लगाया। हे वासुदेव! जिसके साथी तुमहो उसका शत्रु संसार में जीता नहीं रह सकता तुम्हारी कृपा से मैं अवश्य विजय पाऊंगा। इसके पश्चात् युधिष्ठिरने भाई को हृदय से लगाया। सारी पांडव सेनामें हर्षकी एक लहर दौड़ गई विजय के बाजे बजने लगे और देवताओं ने आकाश से पुष्पों की वर्षा की।

आठवां अध्याय ।

सञ्जय बोले, हे धृतराष्ट्र! सिन्धुराज जयद्रथके मारे जाने पर तुम्हारे पुत्र दुर्य्योधन का उत्साह टूट गया, उसकी सारी आशाएं जल में बुल-बुले के समान नष्ट होगईं। वह दीन के समान बैठकर बहुत रोया। जहां एक ओर जयद्रथ का बध देखकर उसकी छाती फटी जाती थी, दूसरी ओर अर्जुन, भीम और सात्यकी के हाथों अपनी सेना का भयानक विनाश हुआ देखकर उसका मुख पीला होगया, नेत्रोंसे जल-धारा बहने लगी। उस समय उसको अर्जुन का बल-पराक्रम मालूम हुआ। उसने मान लिया कि अर्जुन के समान प्रतापी शूरवीर योद्धा त्रिलोकी में नहीं है। ग्यारह अक्षौहिणी सेना के रक्षा करते हुए भी जिसने जयद्रथ को मारकर पुत्र-बध का प्रतिकार लेलिया, उस वीर को कौन जीत सकता है। इन विचारों से दुःखी हुआ हुआ वह द्रोणाचार्य्य के पास पहुंचा, और रो रोकर अपनी सारी दुर्दशा सुनाने लगा। दुर्य्योधन बोला, हे गुरो! अर्जुन ने हमारी सात अक्षौहिणी सेना को चीरकर बड़े बड़े महारथियों के सामने जयद्रथ को मार डाला, यह बात बड़े आश्चर्य्य की और मेरे हृदय को दग्ध करने वाली है। आपका भरोसा देने पर मैंने उसको यहां ठहरा लिया। यदि मुझे पता होता की आप अपने शिष्य अर्जुन को मारने में उपेक्षा करेंगे तो मैं उसको उसी क्षण उसके घर लौटा देता। हाय हाय

मैंने अनर्थ किया, उस बेचारे को विश्वास देकर विश्वास-घात किया हे आचार्य्य ! अर्जुन, भीम और सात्यकी ने हमारे उन सहस्रों वीरों को पृथिवी पर सुला दिया, जो हमारे हित के लिए लड़ने आये थे। में उनके उपकारों का बदला कहां चुकाऊंगा। संसार में मेरा अपयश होगया ! मैं कायर पुरुषों की नाईं उनको मरवाकर भी आप जीता हूं, इस पाप का प्रायश्चित्त सौ अश्वमेध यज्ञ करके भी नहीं होसकता। हाय ! यह पृथिवी क्यों नहीं फट जाती, जो मैं दुराचारी, क्षत्रियों में निन्दित इसमें समा जाऊं और इस कलाङ्कित मुख को किसी के सामने न लेजाऊं। इतना कहकर दुर्य्योधन बालकों के समान बिलख बिलखकर रोने लगा।

हे धृतराष्ट्र ! दुर्य्योधन के इन बचनों से आचार्य्य को बड़ा दुःख हुआ, उनका हृदय क्रोध और शोकसे जलने लगा। वह बोले हे सुयोधन ! क्यों तुम बाणीके बाणोंसे मेरा कलेजा छेदते हो। तुम्हारा रोना व्यर्थ है। मैं तुमको बार बार कह चुका हूं, कि अर्जुन को युद्ध में जीत लेना असम्भव है। हे ऊंचे कन्धों वाले ! अर्जुन से रक्षित हुए शिखण्डी ने भीष्म पितामह के प्राण लेलिये, इसीसे तुम उसके बाहुबल को जानलो। भीष्म के समान पराक्रमी, बलवान्, युद्ध-विद्या में निपुण और तेजस्वी महारथि इस संसार में क्या तीनों लोकों में भी नहीं था, वह भी अर्जुन के तीक्ष्ण बाणों को न सहार सका और अन्त

में इसी युद्ध में मारा गया तो फिर हम और किस पर भरोसा करें। हे राजन्! अपने आप छेड़े हुए युद्ध में अब कायरों के समान रोना तुम्हें शोभा नहीं देता। यह रोने का समय नहीं है। जब शकुनि द्वारा जूए में पांडवों का सर्वस्व तुमने हर लिया था, विधाता ने उसी समय तुम्हारे मस्तक पर रोना लिख दिया था। हे दुर्य्योधन! शकुनि के वह पांसे अब गाण्डीव धनुष के बाण बनकर भरतकुल की जड़ें उखाड़ रहे हैं। उस समय विदुर ने पितामह ने और स्वयं मैंने तुमको समझाया, श्रीकृष्ण ने बार बार तुम्हारे आगे विनती की, परन्तु तुमने सबको ठुकरा दिया, जो बड़ों का कहा न मानकर अपने हठ पर अड़ा रहता है उसकी यही दशा होती है। हे दुर्य्योधन! सारी सभा में द्रौपदी का जो अपमान तुमने किया है, उस पाप का फल किस प्रकार न मिले। तुम मुझे आकर कोसते हो, कि मैं जान बूझकर अर्जुन की उपेक्षा करता हूं, परन्तु जब कर्ण, कृप, अश्वत्थामा और तुम स्वयं जयद्रथ को घेरे खड़े थे, फिर क्यों उसको अर्जुन के हाथों मरने दिया। स्वयं कुछ न करके मुझे बचनों के बाणों द्वारा जलाते हो। परन्तु फिर भी हे राजन्! मैं तुम्हारा हित करूंगा। आज रात्रि को भी युद्ध होगा और या तो मैं पांण्डवों का सर्वनाश करूंगा, अथवा स्वयं ही रण में जूझ जाऊंगा। यह देखो पांण्डवों और सृंजयों की अगणित सेना मेरे ऊपर मकड़ीके समान चढ़ी आरही

है। मैं इन्हें मारे विना कवच नहीं उतारूंगा। तुम अश्वत्थामा को कहना कि वह सोमकों को न छोड़े। अब मैं घोर युद्ध करने के लिये जाता हूं।

नवमा अध्याय।

रात्रि-युद्ध।

सञ्जय बोले, हे धृतराष्ट्र! दुर्य्योधन के वचनों से तपे हुए आचार्य्य ने उसी समय अपनी बची-खुची और बिखरी हुई सेना को एकत्र किया, और फिर एक दृढ़ व्यूह रचा। व्यूह के बीच में शल्य, अश्वत्थामा, कृतवर्मा और दुर्य्योधन को खड़ा करके स्वयं उसके मुखपर खड़े होकर सेना की रक्षा करने लगे। फिर लाखों ही मशालें जलाई गईं। उन मशालों के मध्य में खड़े हुई स्वर्ण का कवच पहरे आचार्य्य इस प्रकार शोभा देने लगे, मानों तारों के मध्य में चमकता हुआ पूर्णमाशी का चन्द्रमा। कौरवों को रात्रि-युद्ध के लिए तैयार खड़ा देख पांण्डव-दल में भीं मशालें जल गईं। तब दोनों सेनाएं एक दूसरी का नाश करने के लिये टूट पड़ीं। पांण्डवों के मन दिन की विजय से बढ़े हुए थे। कौरव-वीर जयद्रथ के मारे जाने से क्रोध से उन्मत्त होरहे थे। दोनों सेनाएं सिंहनाद करती हुईं परस्पर टकरा गईं। लोहे के साथ लोहा बजने लगा। हाथी हाथियों से, घोड़े घोड़ों से, रथ रथों से और प्यादे प्यादों से टकरा टकरा कर गिरने लगे। कोई एक दूसरे का साथी न रहा, सब अकेले अकेले

लड़ने लगे। मशालों के धुन्धले प्रकाश में मारो मारो इस प्रकार ललकारते हुए पाण्डव कौरवों का भीषण संहार करने लगे। उनके सामने जो आया मारा गया। तब हे राजन्! आपकी सेना भयभीत हो कर भागने लगी। उनके पांओं उखड़ गए। अपनी सेना को भागते देख दुर्योधन के नेत्र क्रोध से जलने लगे, वह तुरंत ही द्रोण और कर्ण के पास जाकर बोला हे वीरो में श्रेष्ठो! जयद्रथ के मारे जाने से आप दोनों ने इस रात्रि युद्ध का आरम्भ किया है, फिर क्यों तुम अपनी भागती हुई सेना को बलसे नहीं थामते। हे महांबाहु योद्धाओ! यदि तुमको मुझ पर स्नेह और दया है, यदि तुम अन्दर से पांडवों के साथ मिले हुए नहीं हो तो अपने बल पराक्रम के अनुसार युद्ध करो। हे धृतराष्ट्र! दुर्योधन के वचन रूप इन बाणों से बींधे हुए वह दोनों फिर महां घोर संग्राम में प्रवृत्त हुए। तब जिस प्रकार लकड़ी के गृह में चारों ओर आग लग जाती है, उसी प्रकार द्रोण पांडव सेनाको जलाने लगा। उनके धनुष से छुटे हुए बाण सर्पों की नांई पांडव वीरों को डसने लगे। उस समय चारों ओर हाय हाय करते हुए पांचाल गिरते दिखाई देते थे। पांडवी दलके सहस्रों पुरुष मशालें छोड़ २ कर भागने लगे। जिस ओर द्रोणाचार्य का मुख होता उसी ओर की सेना भयभीत होकर इस प्रकार गिरती भागती और चिल्लाती देखी गयी मानों बकरियों के समूह पर बाघ आ पड़ा

हो। उधर तेजस्वी कर्ण ने द्रुपद पुत्र धृष्टद्युम्न को सामने देख कर दस तीक्ष्ण बाण उसकी छाती में मारे। धृष्टद्युम्न उन तीरों से दुगने जोश से लड़ने लगे। उन्हों ने भी कर्ण को विष में बुझे हुए बाणों से छेद डाला। तब दोनों वीर एक दूसरे पर ललकारते हुए टूट पड़े। धृष्टद्युम्न के बाणों से विचलित न होकर कर्ण ने उसके चारों घोड़ों और सारथि को मार डाला। घोड़ों और सारथि के मारे जाने पर धृष्टद्युम्न उछल कर पृथिवी पर आ खड़ा हुआ उसने एक भयानक परिघसे कर्ण के घोड़ों को पीस डाला और अवसर पाकर दौड़कर युधिष्ठिर के रथ में जा बैठा। धृष्टद्युम्न के भागने पर कर्ण मेघ के समान गर्जना करता हुआ पांचालों का भीषण संहार करने लगा। हे राजन्! उस महा तेजस्वी धनुषधारी ने थोड़ी ही देर में पांडवों के सहस्रों वीर मार डाले। सारी युद्ध भूमि हाथी घोड़े और मरे हुए मनुष्यों से पट गई। कर्ण की भीषण मार से डरे हुए पाञ्चाल और सृंजय चारों ओर भागने लगे। उस समय वायु से यदि तृण भी हिलता तो पांडवों की सेना कर्ण आगये कर्ण आगये कहती हुई प्राण रक्षा के लिए स्थान ढूंढती थी। अपनी सेना की ऐसी दुर्दशा देखकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर अर्जुन से बोले हे सव्यसाची! आज निश्चय ही कर्ण हमारी सारी सेना को मार डालेगा, इसका शीघ्र उपाय करो। यह सुनकर अर्जुन कृष्ण से बोले हे केशव! कर्ण के युद्ध को देखकर महाराज युधिष्ठिर बहुत डर गए हैं इस

लिए तुम मेरे रथको वहां ले चलो, जहां वह सूत पुत्र हमारी सेनाका संहार कर रहा है। आज मैं कर्ण को मार डालूंगा अथवा कर्ण के हाथों स्वयं मर जाऊंगा। हे वासुदेव! आज मैं अपने चिर शत्रु से लडूंगा। यह सुनकर श्रीकृष्ण बोले हे फाल्गुण! कर्ण के साथ इस समय तुम्हारा युद्ध करना उचित नहीं है। समय आने पर अवश्य ही तुम उसको मारोगे, मेरा विचार इस समय महांवीर घटोत्कच को भेजने का है। वह अतुल पराक्रमशाली कुमार आज कर्ण के दांत तोड़ेगा। इतना कहकर श्रीकृष्ण जी वर्षा ऋतु के नये मेघ के समान प्रकाशमान मुख वाले भीम सुतको बोले हे पुत्र घटोत्कच! यह देखो महा बाहु कर्ण हमारी सेनाको इस प्रकार हांक रहा है जैसे प्रचण्ड वायु बादलों को। इस अर्ध रात्रि के समय में हमारी सेना कर्ण से मार खाती हुई ऐसे भाग रही है जैसे सिंह के आ पड़ने से बकरीयां। हे पुत्र! नदी की बाढ़ के समान चढ़े हुए कर्ण को रोकने के लिए तुम से अन्य कौन समर्थ है। हे भयंकर पराक्रम वाले, हे अतुल बल शालीन! तुम अपने माता और पिता दोनों के कुल की लाज रखो और अपने अस्त्र बलसे इस अभिमानी का नाश करो। तुम अपनी निशाचरी माया से इसका सामना करो और धृष्टद्युम्न द्रोण को मारेंगे।

श्रीकृष्ण की आज्ञा पाकर घटोत्कच बोला हे वासुदेव! आपकी आज्ञा से आज मैं कर्ण से वह युद्ध करूंगा

कि जब तक यह पृथिवी रहेगी लोग स्मरण करेंगे । आज कुरुक्षेत्र की भूमि रक्त में नहायेगी आज मैं अपनी माता के दूध के गुणों को प्रत्यक्ष करूंगा। यह कहकर वह ऊंचे कंधों वाला बड़े हाथी के समान चिंघाड़ता हुआ कर्ण पर टूट पड़ा । हे राजन्! अपनी ओर दौड़ते हुए उस पर्वत के समान डील वाले कुमार को देखकर सारी कौरव सेना भयभीत हो गई, परन्तु सूर्य्य समान तेजस्वी कर्ण ने प्रसन्न मुख होकर तीक्ष्ण बाणों से उसका स्वागत किया।

दसवां अध्याय ।

घटोत्कच बध ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! घटोत्कच के बाणों से जब आपकी सेना पीड़ित होकर भागने लगी तो कर्ण उसके सामने होकर युद्ध करने लगे । घटोत्कच की मार बड़ी भीषण थी, परंतु महावीर कर्ण ने बाणों की वृष्टि से उसको रथ समेत ऐसे ढांप दिया जैसे मेघ सूर्य्य को। तब घटोत्कच ने क्रुद्ध होकर अपनी राक्षसी माया की रचना की। उस माया से क्षण मात्र में चारो ओर सहस्रों घटोत्कच दिखाई देने लगे। वह सब दल बांध कर मारो मारो ऐसे कहते हुए समुद्रकी नांई उमड़ पड़े जिन्हें देखकर कौरव सेना भयभीत होकर भागने लगी। इस के अनंतर वह मायावी राक्षस बहुत ऊंचे आकाश पर चढ़ गया, और उस अंधेरी रात में आकाश से पत्थरों की वर्षा करने लगा। तब अपने सन्मुख शत्रु न देख और आकाश से बड़े २ पत्थर गिरते देख

कौरव सेना में हा हा कार मच गया। कर्ण ने क्रोधसे तप कर आकाश पर वज्र के समान बाण छोड़े परन्तु वह उस तक बिना पहुंचे ही पृथिवी पर गिर पड़े। तब कुछ बस न चलता देख कर कौरवों के बड़े २ बीर भागने लगे। हे राजन्! आपके सहस्रों बीर उन पत्थरों से मारे गये और सहस्रों ही घायल होकर युद्ध भूमि में तड़पने लगे। यह देख कर तेजस्वी कर्ण ने जो हिमालय के समान अचल खड़ा राक्षसकी माया देख रहा था आकाशकी ओर दिव्य अस्त्र चलाया, जिससे सारी माया दूर होगई और आकाश में लटका हुआ घटोत्कच तारे की नाईं दिखाई देने लगा। इसके अनंतर उस वीर भीम सुतने केवल कर्ण को पीड़ित करना आरंभ किया। लाखों ही बाण, शक्ति, शूल, गदा परिघ और भयानक शब्द से फटने वाले गोले फैंक २ कर उसने कौरवों का भीषण संहार किया। बहुत सी सेना मारी गई, बाकी भाग गई और घोड़े रथ हाथी पत्थरों और अन्य शस्त्रोंकी मार से चूर २ होगए पृथिवी पर रक्त की नदी चलने लगी। कर्ण भी बुरी तरह घायल हुए, उनका हाथी के डील वाला शरीर स्थान स्थान से घायल हुआ, परंतु सब सेनाके भाग जाने और इतनी मार खाने पर भी वह वीर अपने स्थान से नहीं हटा और अकेला ही बाणों की वर्षा करता रहा। यह देख कर घटोत्कच दांत पीसने लगा उसने एक बड़ा गोला कर्ण पर गिराया, गोले के फटते ही कर्ण के रथके चारों घोड़े मर गये और रथ चूर २

हो गया। तब करण घबरा कर इधर उधर देखने लगा। उस समय एक भी मनुष्य उसके निकट नहीं था। अपने आपको बिना रथके अकेले खड़े देखकर वह विस्मित हो कर सोचने लगा, कि अब क्या करना चाहिये रात्रिका समय, सेना सब भाग गई है, घोड़े मर गये हैं और मैं बिना रथके पृथिवी पर अकेला खड़ा हूं, इस राक्षस से किस प्रकार पार पाऊंगा। इस प्रकार वह सोच रहा था, कि कौरवों के बडे २ सैनिक घबराये हुए उसके निकट पहुंचे और हाथ जोडकर बोले हे अंगराज! आज इस राक्षसके हाथों हमारी सारी सेना मारी जाएगी, ऐसा जान पडता है। हे वीर! यह देखो हमारे हितके लिए आए हुए वीर किस प्रकार पत्थरोंकी मारसे तडप रहे हैं, यदि शीघ्र ही इस निशाचरका उपाय न किया गया तो प्रातः काल होने से पहले ही हममें से एक भी जीता न बचेगा। यह सुनकर कर्ण दुर्य्योधन के प्रति बोले हे राजन्! आपके हित के लिये हम प्राण तक दे सकते हैं, इस लिए मैं अपनी पूरी शक्ति से घटोत्कच पर आक्रमण करूंगा आप अधीर न हों, आप सब मिल कर उस पर टूट पडो, फिर निश्चय ही यह घोरकर्म राक्षस मारा जाएगा। इतना कहकर कर्ण दूसरे रथ पर सवार हो फिर घटोत्कच पर बाण वृष्टि करने लगे। इस पर उस मायावी निशाचर ने फिर अपनी मायाका प्रसार किया, उसकी माया के प्रभाव से कौरव लोग ऐसा देखने लगे मानों रक्तकी नदी बडे वेगसे उनकी ओर बढ़ रही है। यह देख कर डूबने

के भय से वह सब के सब भागने लगे, तब दूसरी ओरसे लाखों ही सर्प रींघते हुए उन्हीं की ओर आरहे हैं ऐसा प्रतीत होने लगा। संजय बोले हे धृतराष्ट्र! एक ओर रक्त की नदी और दूसरी ओर से लपलपाती हुई जिह्वाएं निकाले लाखों सर्प और आकाशसे बाण परिघ पत्थर आदि की वृष्टि से अत्यंत कातर हो कर कौरव सेना हाय हाय करने लगी, अपनी सेनाकी यह दुर्दशा देखकर दुर्य्योधन फिर कर्ण को बोले हे नरश्रेष्ठ! शीघ्र इस उत्पाती राक्षस का बध करो, पांडवों की सारी सेना में कोई भी ऐसा क्रूर भयानक, बलवान और भीम कर्म मनुष्य नहीं है, अभी आधी रात शेष है, यदि इसको न मार डाला गया तो यह हम सब को मार डालेगा। तब कर्ण बोले हे सुयोधन! मेरे पास पंचक नाशन नामक ५ बर्छियां थीं, जो मैंने भगवान सूर्य्य से उग्र तपस्या करके पांडवों के मारने के लिये ली थीं, परंतु एकदिन दोपहरके समय जब मैं भगवान् सूर्य्य की तपस्या कर रहा था, प्रचंड धूप से व्याकुल हुई२ कुंती मेरे पास आई। उसको धूप और पसीने से विकल देख कर मैंने पूछा हे देवी! तुम यहां किस कारण आई हो, मैं तुम्हारी आशा को पूर्ण करूंगा। तब उसने अपने आनेका कारण कहा और अंतमें अपने पांचों पुत्रोंकी रक्षाके लिये वह पांचों बर्छीयां उसने मांगलीं, हे राजन्! तुम जानते हो कि मैंने याचक को मुंहमांगा पदार्थ देनेका प्रण किया है और जीवनं भरमें इस प्रणको कभीनहीं तोड़ा, सो वह पांचों

बर्छीयां मैंने कुंती को देदीं। इसके पश्चात् मैंने फिर सूर्य्य देवताकी अराधना की। तब सूर्य्य भगवान प्रसन्न होकर बोले हे पुत्र क्या वर चाहते हो सो कहो? मैंने फिर दूसरी बार पांच बाण इन पांचों पांडवों को मारने के लिए मांगे। परन्तु कुंती इसका पता पाते ही फिर मेरे पास आई और बड़ी नम्रता पूर्वक इन पांचों बाणों को मांगने लगी। हे राजन्! अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार मैंने वह भी उस को दे दिये क्योंकि मुझे भरोसा था कि जब तक मेरे कवच और कुंडल जो जन्म से ही मेरे शरीर के साथ लगे हैं, मेरे पास हैं पांडव मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते परंतु देवताओं के स्वामी इन्द्र ने ब्राह्मण का रूप धारण करके अपनी अंश अर्जुन की रक्षा के लिए इन दोनों वस्तुओं को भी मुझसे मांग लिया। तब मैंने तलवार से उस कवच को उधेड़ा और अपनी छाती के मांस समेत रक्त से भींगे हुए कवच तथा कुंडल इन्द्रको दे दिये। हे राजन्! देवराज इन्द्र मेरी इस सहन शक्ति धीरता साहस तथा उदारताको देख कर मुझ पर अति प्रसन्न हुए और उनके बदले में उन्होंने मुझे एकवीर घातिनी शक्ति प्रदान की और बोले हे पुत्र! यह शक्ति जिस पर तू चलायेगा वह चाहे मनुष्य हो चाहे देवता अथवा राक्षस, बिना उसके प्राण लिए न छोड़ेगा। हे सुयोधन! वही एक शक्ति मेरे पास है, परंतु उससे मैं अपने पुराने वैरी अर्जुन का बध करूंगा, और उसी के मारनेके लिए मैंने उसको संभाल

कर रखा हुआ है, सो मैं इस घटोत्कच पर चलाकर उसे निरर्थक नहीं करना चाहता हे राजन्! मैं इस राक्षसको अन्य अस्त्र शस्त्रों द्वारा मारने की चेष्टा करूंगा और कर रहा हूं।

तब कर्ण की बात सुन दुर्य्योधन बोला हे महांबाहो! इस भीमकर्म राक्षको मैं अर्जुन से बढ़ कर समझता हूं, अर्जुन तो सन्मुख होकर युद्ध करता है उसे हम सब मिलकर अथवा अकेले अकेले मारने की समर्थ रखते हैं, हे वीर! अर्जुन तुमसे किस बात में बढ़ कर है इस कारण उससे हमको कुछ भी भय नहीं है परन्तु घटोत्कच मायावी राक्षस है, बड़े पाप में प्रवृत्त हुआ २ वह कभी प्रगट और कभी छिप कर हमारी सेना का भीषण संहार कर रहा है, यदि इसी प्रकार हमारी सेना मरती गई तो अर्जुन के साथ लड़ना तो कहां एक भी पुरुष जीता न बचेगा। हे नरसिंह! आप मुझ पर दया करो और दिव्य शक्ति से इस नर पिशाच का बध करो। जो प्रताःकाल तक जीते रहेंगे तो अर्जुन को किसी और उपाय से मार लेंगे। हे धृतराष्ट्र! सुयोधनके इस प्रकार बारबार अनुरोध करने पर कर्ण न चाहता हुआ भी दिव्य शक्ति हाथ में लेकर युद्ध के लिए निकला। उसने पहले तो दिव्य अस्त्रों से घटोत्कच की माया को दूर किया और फिर मेघ के समान गम्भीर गर्जना वाली आवाज से ललकार कर बोले हे नर-पिशाच! तू बीर नहीं है। बीर छिपकर वार नहीं करते, नपुंसकों और स्त्रियों के समान छिप कर

अस्त्र चलाते हुए तूने पांडव श्रेष्ठ भीमसेन की नाक काट दी है। हे शठ! यदि तू भीम की संतान है तो पुरुषों के समान नीचे उत्तर कर युद्ध कर। हे राजन्! कर्ण के इन वचनों से क्रुद्ध हुआ हुआ घठोत्कच बहुत ऊंचे आकाश से थोड़ा नीचा उत्तर कर बाणों की वृष्टि करने लगा। तब कर्ण ने उस राक्षस पर असंख्य बाण छोड़े और आकाश को बाणों से तोप दिया। उस समय उन दोनों वीरों का घोर युद्ध होने लगा, जिस को देख कर दोनों ओर के वीर योद्धा चकित रह गये, कायर मनुष्य विना युद्धकिये ही भयभीत होकर भूमि पर गिर गये, हे राजन्! जो घटोत्कच मायास्त्र से अंधकार करता है तो तेजस्वी कर्ण तुरंत ही दिव्य अस्त्र से प्रकाश कर देता है और ऐसा प्रतीत होने लगता है मानों सहस्रों चन्द्रमा आकाश में एक साथ चढ़े हुए हैं। जो वह प्रलय काल के मेघों के समान गजकी सूंड के बराबर जल धारा बर्साता है तो महांवीर कर्ण वायव्य अस्त्र द्वारा ऐसी प्रबल आंधी चलाता है कि सब बादल टुकड़े टुकड़े होकर छिन्न भिन्न हो जाते हैं उस समय कुरुक्षेत्र की भूमि में एक विचित्र दृष्य होता है जिसको मनस्वी पुरुष ही देखने में समर्थ है, क्योंकि मेघकी गर्ज बिजली की कड़क और भूमि तथा पर्वतों को हिलादेने वाली आंधी से कायर मनुष्य आंखें मीच करके भूमि पर लेटे हुए त्राहिमाम् त्राहिमाम् कर रहे हैं, इसी प्रकार जब वह वारुणास्त्र से पृथिवी को जल

मग्न करने की चेष्टा करता है तो कर्ण आग्नेय अस्त्र से अग्नि ही अग्नि कर देता है । हे राजन् ! इस प्रकार उस वीर कर्ण ने राक्षस की माया को नष्ट करके पांडव सेनाको बहुत पीड़ा दी । उसने पांडवों और सृंजयों को अपने प्रखर शर-समूह से ऐसा जलाया जैसे दावानल अग्नि बनको । तब पांडव सेना हाहाकार करके भागने लगी, एक के साथ एक खड़ा न रहसका, मृत्युके समान कर्ण जिस ओर मुंह करते उधर ही भागढ़ पड़ जाती । यह दशा देख कर अर्जुन श्रीकृष्ण से बोले हे माधव ! यह कर्ण किस प्रकार हमारी सेनाका संहार कर रहा है तुम मेरे रथको उसके सामने ले चलो आज मैं उसका बध करूंगा । तब श्रीकृष्ण उसकी बात को टाल कर बोले हे नर शार्दूल ? घबराने की कोई बात नहीं, घटोत्कच कर्ण से किसी बात में कम नहीं है आज वही कर्ण से युद्ध करेगा तुम कर्ण के उन सहायकों का नाशकरो जो उसके साथ मिल हमारी सेनाका नाश कर रहे हैं। इतना कह कर श्रीकृष्ण रथको वहां से दूर ले गये जहां पर कर्ण खड़ा पांडवों को पीड़ित कर रहा था। इसके पश्चात् हे धृतराष्ट्र ! अपने सामने किसी को खड़ा न देख कर वीर कर्ण ने उस दिव्य शक्ति को हाथ में लिया और तान कर घटोत्कच पर चलाया । वह शक्ति उल्काके समान आकाशको प्रकाशमान करती हुई घटोत्कच की छातीको फोड़ कर निकल गई। उस समय बिजली गिरने के समान बड़ा शब्द हुआ

और दूसरे ही क्षण घटोत्कच बड़े तारेके समान आकाश से पृथ्वी पर आकर गिरा और मर गया।

घटोत्कच को गिरते देख कर सारी कौरव सेना आकाश में वस्त्र उछालने लगी बाजे बजने लगे और वीरोंने गगन मंडलको गुंजा देने वाला सिंह नाद किया उधर पांडव सेना महां शोक में डूब गई, सबके मुंह सुख गए, परन्तु श्रीकृष्ण ने उस समय प्रसन्न होकर शंख बजाया और घोड़ों की बागें छोड़कर जोर २ से हंसने लगे। इस समयकी हंसीको देखकर अर्जुन को बड़ा क्रोध हुआ, वह आवेश में भरा हुआ बोला हे केशव! हमारे परम मित्र होकर भी तुम जो इस समय करते हो सो बहुत अनुचित है, घटोत्कच की मृत्यु से हम सब के हृदय दुःख और शोक में डूबे हुए हैं, ऐसे समय में तुम्हारा हंसना मेरे हृदय को बाण के समान चीर गया है, भीमसेन क्या कहेंगे, कि अभिमन्यु के मरने पर अर्जुन बहुत रोया परंतु मेरे पुत्र की मृत्यु पर वह प्रसन्न हुआ है। हे वासुदेव! इस महां दुखदायिनी हंसी का कारण मुझे खोल कर कहो। यह सुन कर श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन! घटोत्कच के मरने से मुझे सचमुच ही प्रसन्नता हुई है, क्योंकि उस के मरने ही में सब पांडवों की कुशलता समझता हूं। हे सव्यसाचि। कर्ण के पास इन्द्र की दी हुई एक अभेद्य शक्ति थी, जो उसने तुम्हारे मारने के लिए चिरकाल से संभाल कर रखी हुई थी, आज उसी से घटोत्कच मारा गया है, अब तुम को मारने वाला संसार

में कोई नहीं है। आज मेरे हृदय का कांटा निकल गया, यदि तुम इस शक्ति से मारे जाते तो महां अनर्थ हो जाता। हे किरीटि! युधिष्ठिर ने प्रतिज्ञा की हुई है, कि यदि अर्जुन मर जाएगा तो मैं अपने आप प्राण दे दूंगा और युधिष्ठिर के मरने पर शेष पांडव मर जाते, घटोत्कच के मरने से सब पांडव बच गये, अब तुम कौरवों का नाश हुआ ही समझो, इस में तनिक भी संदेह नहीं है। श्रीकृष्ण के यह युक्ति युक्त वचन सुनकर सब पांडव शान्त हुए, और शोक वा दुःख से रोते हुओं ने उस महां बलवान भीमसुत का अन्तिम संस्कार किया। तब थोड़ी देरके लिए दोनों ओर की सेनाएं युद्ध भूमि में ही सोईं।

ग्यारहवां अध्याय।

रात्रि युद्ध।

दुःशासन बध।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! थोड़ी रात युद्ध-भूमि में विश्राम करके दोनों पक्षों के वीर बड़ी रात रहते ही युद्ध के लिए जागे। गुरु द्रोणाचार्य्य ने फिर महां विकट व्यूह की रचना की इधर धृष्टद्युम्न भी सारी सेना को सुसज्जित करके कौरव दल पर टूट पड़े, क्षणमात्र में युद्ध भूमि फिर प्रेत भूमि बन गई। महाराज विराट और द्रुपद दोनों मिलकर आचार्य्य पर टूट पड़े और तीक्ष्ण बाणों से उसको तोप दिया द्रोणाचार्य्य उन के बाणों से क्रुद्ध

होकर इस प्रकार फुंकारे मारने लगे जैसे छड़ी से छेड़ा हुआ सांप, उन्हों ने अपने धनुष को खैंच कर गोल मंडलाकार किया और बडे वेग से पांडव सेना को घास के ढेर के समान दग्ध करने लगे। अपनी सेना का नाश होते देख भीमसेन तुरंत ही आचार्य्य की ओर दौडे परंतु दुर्योधन के छोटे भाई दुःशासन रास्ते ही में उन से भिड गये। अपने सन्मुख नीच हृदय दुःशासन को खडा देख भीम के होंठ और भवें क्रोध से फडकने लगीं। वह रथ से उतर कर और गदा हाथ में लेकर यम के समान दुःशासन की सेना में घुस गये। हे राजन उस ! पर्वताकार भीम ने वहां बडा भयानक युद्ध किया, आप के वीरों को उस ने इस प्रकार उडाया जैसे धुनिया रूई धुनकता है। एक ही गदा के प्रहार से उस ने हाथियों के मस्तक फोड कर चूर २ कर दिये, रथों को तोड दिया, घोडे मार दिये मनुष्यों की तो गिनती ही क्या है, क्षणमात्र में उस भीमकर्म पांडु पुत्र ने दुःशासन की सेना को इस प्रकार दल दिया जैसे मस्त हाथी कमल बन को। तब दुःशासन उन्मत्त हुए सांड की तरह गर्जता हुआ भीम के सामने गदा लेकर खडा हुआ। आमने सामने होते ही वह दोनों हाथियों के समान एक दूसरे से भिड गये। हे राजन्! बराबर आकार वाले बराबर बल वाले वह दोनों एक दूसरे पर गदा प्रहार करने लगे। वह दोनों गोल मंडल बांध बांध कर घूम २ कर एक दूसरे पर आघात्

करते थे। उनका यह अद्भुत युद्ध देखने के लिए सब कौरव तथा पांडव युद्ध छोड कर वहां इकट्ठे हो गए। अपने २ पक्ष के योद्धा का आघात देखकर दोनों ओर के वीर सिंह नाद करने लगे। इस प्रकार भीषण मार करते और खाते उनके शरीर लोहु से लतपत हो गये, वह थक २ कर ठहर जाते और एक दूसरे की ओर लम्बे सांस लेते हांपते हुए देखते, फिर भिड जाते फिर ठहर जाते। हे राजन्! उन के शरीर पर गिरती हुई गदा का ऐसा भीषण शब्द होता था जैसे ऐहरन पर घन की चोट। दस दस सहस्र हाथियों के बल रखने वाले वह दोनों उसी प्रकार बहुत रात तक लडते रहे, अंत में उस ना थकने वाले वृकोदर भीम ने अपनी गदा से दुःशासन की गदा को चूर २ कर डाला। इसके पश्चात् भीम ने भी अपनी गदा को रख दिया और दोनों भुजाओं से दुःशासन को पकड लिया। तब वह दोनों महापराक्रमी परस्पर केशों को पकड कर उन्मत्त हाथियों के समान टक्कर लडने लगे। हे राजन् उन की टक्कर के शब्द से देखने वाले वीरों के हृदय दहल गये। अंत में लडते २ दुःशासन के अंग ढीले पड गये, तब भीम ने एक ही भुजा से उस को पृथिवी पर से ऐसे उठाया जैसे जंगली हाथी वृक्ष की जड को, और आकाश में घुमाता हुआ चक्कर बांधकर घूमने लगा। दुशासन की यह दशा देख कर सब कौरव वीर हाहाकार करने लगे, परंतु भीम ने

निर्दयता से उसे भूमि पर पटक दिया जैसे धोबी वस्त्र को। हे राजन्! तब उस गिरे हुए वीर की छाती पर पांओं देकर वह विकालस्वरूप पांडु पुत्र अंधेरी रात्रि में बादल के समान गर्जता हुआ बोला हे दुष्ट दुःशासन! अब तू संसार को भली भांति देख ले, क्षणमात्र ही में तू इस संसार में नहीं रहेगा। रे नीच! अपने पापों का स्मरण कर, भरी सभा में द्रौपदी के वस्त्र खेंचकर नग्न करने की जो चेष्टा तू ने की थी, उस का फल भोगने के लिये तैयार हो जा। हे पाप राज! एक वस्त्रा द्रौपदी को जिस हाथ से केशों से खेंचकर तू लाया था आज तेरे उस हाथ को तोडता हूं, इतना कहकर हे राजन्! भीम ने दुःशासन की भुजा को दोनों हाथों से ऐसा मरोडा जैसे धोबी वस्त्र को निचोडता है, उसने उसकी भुजा को तोड डाला जिससे दुःशाशन बहुत तडपा। परंतु भीम के मस्तक पर दया की एक भी रेख न आई वह उस प्रकार गर्जता हुआ सब कौरवों को ललकारने लगा, कि हे कौरव लोगो। इस नराधम ने द्रौपदी का सभा में तुम सब के सामने अपमान किया था, और मैंने उस समय प्रतिज्ञा की थी, कि युद्ध में हे दुःशासन तेरी छाती का अढ़ाई चुल्लू रुधिर पियुंगा, इस समय मैं उसी प्रतिज्ञा को पूरा करने वाला हूं, तुम सब में से यदि किसी को साहस हो तो इसको बचाये, यह कर वह नेत्रों से अग्नि के चिंगारे बर्साता हुआ भीम चारों ओर देखने लगा, तब कोई उतर न

पाकर वह फिर बोला, लोग कहते हैं कि कृष्ण और अर्जुन महां पापियों की भी शरण पड़ने पर रक्षा करते हैं, सो हे अर्जुन! हे कृष्ण! इस पापी की सहायता करके तुम भी भीम के भुज बल को देखो! भीम के शत्रु को बचाने के लिये तीनों लोकों में किस की सामर्थ्य है। हे राजन्! भीम के इन गर्व से भरे हुए बचनों को सुनकर अर्जुन की आंखों से आग निकलने लगी वह क्रुद्ध होकर बोले, हे वृकोदर भूमि पर पड़े हुए शत्रु का इस प्रकार तिरस्कार करते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती! दुःशासन वीरों के समान युद्ध भूमि में गिरा है, जो सब क्षत्रियों को आभिप्रेत है, इसी दिन के लिए च्त्राणियां पुत्रों को जन्म देती हैं रे मदान्ध! दुःशासन वीर गति को प्राप्त करके वैकुण्ठ को जा रहा है, और तू व्यर्थ की डींगें हांकता हुआ अधोगति को प्राप्त करता है यदि कृष्ण और अर्जुन को तू ललकारता है तो ले अर्जुन आज इस की रक्षा के लिये तय्यार है। यह कहकर अर्जुन ने गांडीव धनुष पर बाण जोड़ा, और भीम से लड़ने के लिये उद्यत होगया, परन्तु उसी समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन के धनुष को छीन लिया और भीम के प्रति बोले हे नर श्रेष्ठ! तुम सच्चे हो, तुम अपनी प्रतिज्ञा को पालन करने में निर्दोष हो। तब यम के समान गर्जते हुए भीम ने दुःशासन के हृदय में जोर से लात मारी और दोनों हाथों से उसके मांस को नोच कर छाती को फाड़ डाला, उसे

समय दुःशासन की छाती से रक्त का स्रोत बहने लगा, तब भेड़िये के समान झुंझलाकर भीम ने उसकी छाती पर मुख रख दिया और उसका रुधिर पीने लगा। हे राजन् ! इस महां क्रूर कर्म को देखकर कौरवों के हृदय कांप उठे। तब भीम उसकी छाती पर से लहु पीकर उठा उस के होंठ दांत पंजे और वस्त्र सब रुधिर से भरे हुए थे, वह सिंह के समान दहाडता हुआ बोला हे कौरव लोगो ! पापात्मा दुःशासन का बध करके उसका गर्म २ रक्त पीकर आज हम अपनी प्रतिज्ञा से छूट गये। यह महां युद्ध एक प्रकार का यज्ञ है, इस में दुःशासन रूप एक पशु का बलिदान हो गया, इस के अनन्तर दूसरे पशु दुर्योधन का बलिदान होगा, और फिर यज्ञ समाप्त हो जाएगा।

बारहवां अध्याय।

द्रोणाचार्य्य की मृत्यु।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! दुःशासन के मर जाने पर दुर्य्योधन अत्यन्त दुःख से विलाप करता हुआ गुरु द्रोणाचार्य्य के पास जाकर बोला हे गुरो ! देखिए इस निर्दयी भीमसेन ने कैसा क्रूर कर्म किया है, रण में गिरे हुए मेरे भाई की छाती पर चढ़कर इस राक्षस ने उसका रक्त पान करके अपनी दुर्जनता का प्रमाण दिया है, इस से मेरा हृदय शोक के समुद्र में डूब रहा। हे आचार्य्य ! चौदह दिन से लगातार युद्ध हो रहा है, जिस में मेरे एक एक करके सारे के सारे भाई मारे गए परन्तु पांडवों में से

एक भी नहीं मरा, यह बड़े आश्चर्य्य की बात है। हे प्रभो! आप के होते हुए भी मैं महां दीनों के समान दुःख पा रहा हूं। दुर्य्योधन के इन बचनों को सुनकर द्रोणाचार्य्य बोले हे राजन् मैंने अपनी ओर से पांडवों के मारने में कोई बात उठा नहीं रखी, परन्तु भीम का यह राक्षसी कर्म मेरे हृदय को दग्ध कर रहा है, इस नर पिशाच ने युद्ध क्षेत्र में गिरे हुए क्षत्रिय का रक्त पीकर सारी क्षत्रिय जाति को कलंकित कर दिया है, इस कारण हे राजन्! तुम धीरज धरो, आज रात्रिही में मैं युधिष्ठरको पकड़ कर तुम्हारे हाथ में सौंप दूंगा। इस प्रकार दुर्य्योधन को धीरज देकर द्रोणाचार्य्य समुद्र के समान गर्जती हुई सेना को साथ लेकर अर्जुन पर टूट पड़े, क्योंकि बिना अर्जुन के परास्त किये युधिष्ठिर को बांधना असम्भव था। इधर अर्जुन भी महां विकट व्यूह बांध द्रोणाचार्य्य के सन्मुख हुए, दोनों ओर से सर्पों के समान बाण छूटने लगे। आचार्य्य का मुख इस समय प्रचण्ड सूर्य्य के समान क्रोध से तप रहा था, वह तीक्षण बाणों की वृष्टि से अर्जुन की सेना का भयानक नाश करने लगे, परन्तु अर्जुन भी गुरु से किसी प्रकार कम न थे, अनन्त बाणों की वृष्टि से उन्हों ने आकाश को ढांप दिया। अर्जुन के बाण द्रोणाचार्य्य के बाणों को रास्ते ही में इस प्रकार दो टूक करके गिराने लगे जैसे मकड़ी के दलों को तिलियर काटते हैं। अपने बाणों को व्यर्थ जाते देख कर आचार्य्य के नेत्रों से

अंगारे बर्सने लगे। उन्हों ने अर्जुन का गला काटने के लिए अर्धचन्द्राकार बाण मंत्र पढ़ कर धनुष पर जोड़ा और नेत्रों की पुतलियां घुमाते हुए महा काल के समान उसको छोड़ा। उसी समय भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को सचेत किया। अर्जुन ने फुर्ति से तुरन्त ही उस बाण के टुकड़े २ कर दिये। यह देखकर आचार्य्य को घोर दुःख हुआ और फिर उसी प्रकार बाणों की वृष्टि करने लगे। अर्जुन को आचार्य्य के साथ जुटे हुए देखकर दुर्य्योधन ने इस अवसर को अच्छा समझ सब राजाओं को एकत्र करके दूसरी ओर से शेष पांडवी सेना पर आक्रमण किया, और पांडव सेना को असीम पीड़ा देने लगे। अर्जुन ने जब यह समाचार सुना तो अपने स्थान पर युधिष्ठिर को खड़ा करके स्वयं भीमसेन सहित उन राजाओं के साथ युद्ध करने लगे। तब महाराज युधिष्ठिर भीम और नकुल को साथ लेकर आचार्य्य के साथ भयानक युद्ध में प्रवृत्त हुए। दोनों ओर से घोर संग्राम होने लगा। आचार्य्य के अग्नि के समान जलते हुए बाणों ने युधिष्ठिर की बहुत सी सेना को दग्ध किया परन्तु पांडु सुत युधिष्ठिर ने भी वह हाथ दिखलाए कि आचार्य्य की सेना में हाहाकार मच गया। उनके सैंकड़ों और सहस्रों वीर सदा के लिए भूमि पर सो गये, रथ चूर चूर हो गए, घोडे भाग गये, मर गये और हाथी कटी हुई सूंडों से चिंघाडते हुए

गिरने लगे, यहां तक कि आचार्य्य के चारों घोड़ों को मारकर उनके सारथि का सिर काट लिया और ध्वजा को चूर्ण करके पृथिवी पर गिरा दिया। तब आचार्य्य को रथ-हीन देखकर दुर्य्योधन ने तुरन्त अपने रथ को आगे किया। उस रथपर चढ़ कर आचार्य्य ने तत्काल अपनी सेना को इस प्रकार बांट कर खड़ा किया, कि जिसके घेरे में फंस कर निकलने का मार्ग श्रीकृष्ण और अर्जुन के बिना और कोई नहीं जानता था। हे राजन्! उस घेरे में फंसाकर आचार्य्य ने पाण्डवी-सेना को इस प्रकार उड़ाया जैसे धुनिया रुई को। जब बहुत से रथी और सरदार मारे गये तो आचार्य्य ने धीरे धीरे अपने रथ को आगे बढ़ा कर युधिष्ठिर पर इतने बाण छोड़े, कि उनका अङ्ग अङ्ग पीडा से दुखने लगा, उनके शरीर में अनेक घाव होगये, जिनसे इतना रुधिर बहा कि धर्मपुत्र के हाथ-पाओं ढीले पड गये। उनमें धनुष को चढ़ाने की तो क्या, उसे थामने की भी शक्ति न रही। तब युधिष्ठिर को सब प्रकार से असमर्थ पाकर आचार्य्य ने अपने रथ को तेज़ी से हांका और वह उनके अति-निकट पहुंच गये। उस समय पाण्डवी-सेना में हाहाकार मच गया, "धर्मपुत्र पकडे गये" "धर्मपुत्र पकडे गये" इस प्रकार दुहाई देते हुए पाण्डव-सैनिक सहायता के लिये पुकारने लगे। इस महाकोलाहल को सुन कर श्रीकृष्ण अर्जुन को बोले, हे श्वेतवाहन! युधिष्ठिर इस

समय मृत्यु की दाढ़ में फंसे हुए हैं, तुम्हारे बिना कोई उनकी रक्षा नहीं कर सकता। तब अपने मोरचे पर अकेले भीम को नियुक्त करके अर्जुन गाण्डीव की टङ्कार करते हुए आचार्य्य पर दौड़े। उन्हों ने असंख्य बाणों से द्रोण के दुर्ग को तोड़ दिया और सहस्रों वीरों को मारते काटते द्रोण के सिर पर जाचढ़े। तब अवसर पाकर युधिष्ठिर उस स्थान से निकल गये। हे धृतराष्ट्र! हाथ में आए हुए धर्मपुत्र के निकल जाने पर आचार्य्य को ऐसा दुःख हुआ जैसे कंगाल को रुपयों की थैली पड़ी हुई मिल जाए, परन्तु हाथ डालते ही उसका वास्तविक स्वामी आकर छीन ले। अर्जुन ने तुरन्त महाराज द्रुपद के पुत्र सेनापति धृष्टद्युम्न को आचार्य्य के सन्मुख खड़ा कर दिया, और स्वयं फिर उसी मोर्चे पर चले गये, जहां अकेले भीम सब राजाओं के साथ युद्ध कर रहे थे। सञ्जय बोले, हे राजन्! यद्यपि युधिष्ठिर आचार्य्य के हाथों से बचकर निकल गये, परन्तु उनको इतने गहरे घाव लगे और इतना रुधिर बहा, कि वह मूर्छित हो गये, और उनके बचने की कोई आशा न रही। उसी समय नकुल और सहदेव जो आयुर्वेद के परांगत अश्विनीकुमारों के रूप हैं, वहां पहुंचे और युधिष्ठिर को शिविर में लेजाकर उनके शरीर से बाण निकाले, घावों पर लेप लगाकर उनको भली प्रकार बांधा और सञ्जीवन औषधियों का रस पिलाकर उनको सचेत करने का

यत्न करने लगे, जब महाराज युधिष्ठिर को कुछ २ सुधि आई तो वह उनको वहीं छोड़ बहुत से वीरों का पहरा लगा कर फिर रणभूमि में चले गये। उधर धृष्टद्युम्न गुरु द्रोणाचार्य्य पर तीक्ष्ण धार वाले बाण छोड़ने लगे। उन दोनों का घोर युद्ध होने लगा, दोनों ही महारथी और युद्ध में परम-प्रवीण थे। वह बहुत देर तक लड़ते रहे, परन्तु कोई भी एक दूसरे को हरा न सका। तब क्रुद्ध होकर आचार्य्य ने बड़ी भयानक बाण वृष्टि करनी आरम्भ की, जिससे धृष्टद्युम्न के बहुत से वीर मारे गये, यह देख कर द्रुपद और विराट दोनों धृष्टद्युम्न की सहायता के लिये आगे बढ़े और आचार्य्य को बाणों से पीड़ित करने लगे। परन्तु द्रोण ने उनके चलाये हुए बाणों को रास्ते ही में काट दिया। तब विराट ने बड़े ज़ोर से एक तोमर और द्रुपद ने एक प्रास चलाया। इसपर द्रोण के क्रोधरूप अग्नि में मानों घृत पड़ा, वह अग्नि के समान प्रदीप्त हो कर उनपर अस्त्र छोड़ने लगे। विराट और द्रुपद के अस्त्रों को खण्ड खण्ड करके तेज धार वाले दो बाणों से उन्होंने दोनों के सिर काट लिए!

अपने पिता की हत्या देखकर धृष्टद्युम्न क्रोध से कांपने लगे। उन्होंने आकाश की ओर हाथ उठा कर प्रतिज्ञा की, कि यदि आज हम द्रोण का सिर काट कर अपने पिता का बदला न लें तो परमात्मा हमें क्षत्रियों के लोक से गिराकर नर्क में वास दें। इसके अनन्तर

एक ओर से पाञ्चाल-वीर और दूसरी ओर से अर्जुन पाण्डवीय-सेना लेकर आचार्य्य पर टूट पड़े। परन्तु प्रचण्ड वायु जिस प्रकार बादलों को खण्ड खण्ड करके छिन्न भिन्न कर देता है, उसी प्रकार आचार्य्य ने पाञ्चाल-सेना का भयानक विनाश कर डाला। यह देखकर श्रीकृष्ण बोले, हे अर्जुन! तुम्हारे बिना और किसी में इतना बल नहीं जो आचार्य को मार सके, परन्तु इतना भयानक जन-संहार करने पर भी तुम जी खोलकर आचार्य पर वार नहीं करते। हे अर्जुन! यदि कुछ देर तक यही दशा रही तो निश्चय ही हमारी हार होगी। इस कारण यदि तुम अपने हाथ से गुरु का बध नहीं करना चाहते तो इसके लिए हमें कोई और उपाय रचना होगा। हे किरीट! यदि आचार्य के पास जाकर कोई यह समाचार सुनाये कि अश्वत्थामा मारे गये तो अवश्य ही उनका साहस टूट जाएगा और फिर उनका मारना कोई कठिन नहीं है। परन्तु अर्जुन ने श्रीकृष्ण की इस बात पर ध्यान ही न दिया, और बारम्बार कहने पर भी वह गुरु भक्त पूर्ववत् युद्ध करता रहा। तब श्रीकृष्ण युधिष्ठिर के निकट रथ ले जाकर बोले हे राजन्! युद्ध में आचार्य किसी प्रकार भी जीते नहीं जा सकते इस कारण धर्म युद्ध का त्याग करके जीतने का कोई उपाय करो, ऐसा न हो कि द्रोण हम सबको मार डाले। हे राजन्! अश्वत्थामा नामक एक प्रसिद्ध हाथी को भीमसेन ने

मार डाला है, सो तुम यदि द्रोणाचार्य्य को यह समाचार सुनाओ कि अश्वत्थामा मर गया है तो वह अपने पुत्र की मृत्यु हुई समझ कर शस्त्र छोड़ देगा यह सुनकर युधिष्ठिर बोले हे केशव! भूल से भी झूठ बोलना पाप है, फिर जान बूझ कर तो क्या, श्री कृष्ण बोले हे धर्मपुत्र! तुम अश्वत्थामा का नाम ले करके पीछे मनुष्य अथवा हाथी यह साथ कह देना इस के बिना अब और कोई उपाय नहीं है। तब अर्जुन को छोड़ कर सबने श्रीकृष्ण के इस विचार को पसंद किया और युधिष्ठिर ने बहुत कठिनता से स्वीकार किया। इस के अनंतर धृष्टद्युम्न सात्यकी श्रीकृष्ण ज़ोर ज़ोर से शङ्ख बजाने लगे, सैनिक लोग आकाश में वस्त्र उछाल उछाल कर कहने लगे अश्वत्थामा मारा गया, अश्वत्थामा मारा गया। हे धृतराष्ट्र! अकस्मात् इस समाचार को सुनकर आचार्य्य पर मानों वज्रपात हुआ, उनका हृदय सहम गया परंतु फिर यह सोच कर कि कहीं यह शत्रु की चाल न हो वह उसी उत्साह से लड़ने लगे, परंतु श्रीकृष्ण की नीति अपना काम कर चुकी थी, जो संशय जो भय हृदय में बैठ गया, फिर वह न निकल सका, वह बड़े २ महारथियों के मुख से पुत्र-बध की बात सुन व्याकुल हो गये उनका कलेजा मुंह को आगया छाती धड़कने लगी अग्नि के समान लाल मुख देखते देखते सफ़ेद हो गया, अंत में बहुत सोच विचार के पश्चात् उन्होंने निश्चय किया कि

धर्मपुत्र युधिष्ठिर कभी असत्य वचन नहीं कह सकते, उन की बाणी पर मुझे एक मात्र विश्वास है, यह विचार करके उन्हों ने धनुष बाण हाथ से रख दिया और युधिष्ठिर के निकट जाकर बोले हे धर्मपुत्र ! अश्वत्थामा मारा गया है वा नहीं, यह मैं तुम्हारे मुखसे सुनना चाहता हूं। हे धृत-राष्ट्र ! द्रोण के इस प्रकार पूछने पर श्रीकृष्ण धर्म पुत्र के पास जाकर धीरे से बोले हे राजन् यदि क्रुद्ध हुए २ द्रोण दो घंटे भी और युद्ध करेंगे तो तुम्हारी सेना नष्ट हो जाएगी, यह मैं सत्य कहता हूं सो आप हम सब को द्रोण से बचाएं। इस समय झूठ सत्य से बढ़कर है, प्राण रक्षा के लिए झूठ बोलने वाला मनुष्य पापी नहीं होता। तब श्रीकृष्ण की प्रेरणा से युधिष्ठिर आचार्य्य के पास जाकर झूठ के भय से कांपते हुए लड़खड़ाते शब्दों से बोले, "हां अश्वत्थामा भीम के हाथ से मारे गये परंतु..........." हे राजन् ! "मनुष्य अथवा हाथी" अभी उन्हों ने कहना था, परंतु उसी समय श्रीकृष्ण भीम सात्यकी नकुल सहदेव तथा अन्य योद्धाओं ने बड़े जोर से शंख बजाकर कोला-हल करना आरंभ किया, जिस से युधिष्ठिर की शेष बात द्रोण न सुन सके और पुत्र की मृत्यु से विकल होकर वहीं बैठ गए। उनका युद्ध साहस जाता रहा। उन्हों ने रथ में बैठ कर शस्त्रों को छोड़ दिया और सब लोगों को अभय दान देकर योग समाधि मे लीन होगये। उन्हों ने अपने प्राणों को दशम द्वार में चढ़ा लिया।

तब धृष्टद्युम्न तलवार घुमाता हुआ आचार्य्य की ओर दौड़ा। उस समय अर्जुन ने "मत मारो, मत मारो" इस प्रकार धृष्टद्युम्न को कहा, परन्तु पिता की मृत्यु से जलते हुए द्रुपद कुमार ने एक भरपूर हाथ से द्रोण का सिर धड़ से अलग कर दिया। द्रोण के मरने पर सारी कौरव सेना भयभीत होकर चारो ओर भागने लगी। उस भागती हुई सेना का पांण्डवों ने भीषण संहार किया।

तेरहवां अध्याय।

अश्वत्थामा का युद्ध

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! कौरव सेना को भागते देख कर अश्वत्थामा तुरंत दुर्योधन के पास जाकर बोले हे राजन्! किस कारण से हमारी सेना भागी जारही है, और तुम स्वयं उनको न रोक कर विस्मित दशा में खड़े क्या देख रहे हो? अश्वत्थामा के प्रश्न को सुन कर दुर्योधन चुपचाप खडे रहे, उन्हे उसके पिता की मृत्यु का समाचार सुनाने का साहस न हुआ। तब कृपाचार्य्य ने वडे दुख से निरंतर आंसु बहाते हुए उसको द्रोण की मृत्यु का सारा हाल सुनाया। हे महाराज! तब अश्वत्थामा का मुख देखते देखते इस प्रकार लाल हो गया जैसे अग्नि से निकला हुआ लोहा। हाथ मरोड़ते दांत पीसते और क्रुद्ध सर्प के समान फुंकार मारते हुए उस के नेत्र अंगारों के समान जलने लगे। महाकाल मानो संसार में प्रलय करने के लिए खड़ा है, इस प्रकार उस बीर का शरीर तपने लगा

उसके नेत्रों में रोष का धुआं छा गया और वह गर्म गर्म आंसु छोड़ता हुआ बोला हे राजन्! युद्ध में जो प्रवृत्त होगा वह मरेगा अथवा मारेगा, इस में शोक व दुःख नहीं है परंतु धर्म में प्रवृत्त हुए मेरे पिता का नीच धृष्ठद्युम्न ने सिर काट लिया यह बात मेरे हृदय को दग्ध कर रही है हा! अपने बराबर के पुत्र और शिष्य के जीते जी वह अनाथों के समान मारा गया। मेरी भुजाओं को धिक्कार है, मेरे बल पराक्रम और अस्त्र शस्त्रों को धिक्कार है, जो मेरे जीते जी मेरे पिता का सिर काट लिया गया, अब पांचालों का समूल नाश किये बिना मेरे हृदय को शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। और नां ही पितृऋण से मैं उऋण हो सकता हूं, आज कृष्ण और अर्जुन द्रोण-पुत्र के बल विक्रम को देखें, आज यदि मैं पांडवों को दग्ध न कर डालूं तो मेरे जीवन को धिक्कार, आज मैं नारायण अस्त्र से पांडवों को मार कर शान्त हूंगा, यह कह कर अश्वत्थामा ने जोर से शङ्ख बजाया फिर शेष महारथियों ने अपने अपने शंख बजाये, भागती हुई सेना के पांव जम गये और सागर के समान गर्जते हुए कौरव योद्धा फिर पांडवों की ओर दौडे। हे धृतराष्ट्र! भागे हुए कौरवों को फिर लौटते देख कर युधिष्ठिर अर्जुन के प्रति बोले हे महाबाहो! इन्द्र के समान कौन महावीर इन सब को फिर लौटा रहा है? तब अर्जुन ने उत्तर दिया, हे राजन्, जिस को धृष्टद्युम्न ने बडी क्रूरता के साथ अनाथ समझ कर मार डाला अब

उसका नाथ आ पहुंचा है। इसके अनंतर फिर कौरव और पांडव दल समुद्रों के समान टकराने लगे, प्रलयकाल का सा दृश्य बंध गया द्रोण की मृत्यु का बदला लेने के लिये दावानल अग्नि के समान अश्वत्थामा पांडव सैन्य रूप महा बन को जलाने लगा। सहस्रों मनुष्यों को यमपुरि में भेज कर उसने भयानक नारायण अस्त्र को चलाया। वह अस्त्र बिजली के समान अकाश में पहुंचकर भयानक गर्ज के साथ फट गया और उसके अंदर से सहस्रों प्रचण्ड बाण अग्नि के समान चमकते हुए आकाश से बड़े वेग से गिरने लगे, जिस से पांडव दल के अगणित योद्धा मरने लगे। यह देखकर श्रीकृष्ण ने ललकार कर कहा, हे योद्धाओ ! जो बचना चाहते हो तो शीघ्र ही अस्त्रों को छोड़ कर रथों से उतर पड़ो और पृथिवी पर लेट जाओ, प्राण रक्षाका यही उपाय है। तब सबके सब रथों सवार, घुड़-सवार और हाथी सवार अस्त्रों को छोड़ कर भूमि पर लेट गये। परन्तु भीमसेन अपने बल के अभिमान से वहीं खड़ा २ अश्ववत्थामा पर बाण छोड़ने लगा। हे राजन् थोड़ी ही देर में वह दुःसहतेज भीमसेन की भवों को जलाने लगा, तब श्रीकृष्ण ने बल-पूर्वक उस महाकाय भीम को पटक कर भूमि पर दबा दिया। जब कुछ काल पश्चात् वह असह्य तेज शान्त हुआ और सब दिशाएं निर्मल हुईं तब चारों ओर से ठंडी वायु चलने लगी मृग पशु पक्षि फिर सुख से बोलने लगे हाथी घोडे सब खडे हुए। उस समय

क्रोध से दांत कटकटाता हुआ धृष्टद्युम्न प्राणों का मोह छोड कर अश्वत्थामा पर चढ़ दौडा। तब अपने पिता की मृत्यु को स्मरण करके अश्वत्थामाने तेज धार वाले दस बाणों से उस को बींध दिया चारों घोडों और सारथि को मार कर उस के सब साथियों को भगा दिया। धृष्टद्युम्न की यह दशा देखकर तुरंत ही सात्यकी ने अपना रथ फेरा और तीक्ष्ण बाणों से अश्वत्थामा के घोडों और सारथि को मार कर उसका धनुष काट दिया। परन्तु तेजस्वी आचार्य्यपुत्र अग्नि की ज्वाला के समान तत्काल दूसरे रथ पर बैठ गया और सात्यकी को बाणों की तीव्र वृष्टि से बडा कष्ट दिया, और अंत में एक जलता हुआ बाण सात्यकी पर छोडा। जैसे इन्द्र वज्र मेघको फाड डालता है, उसी प्रकार सात्यकी के कवच को फोड कर वह बाण उस के शरीर में घुस गया। तब रुधिर से लाल हुआ हुआ सात्यकी पीडा से व्याकुल होकर रथ में मूर्छित होकर लेट गया, यह देख कर सारथि शीघ्र ही सात्यकी को रण भूमि से भगा ले गया इस के अनंतर क्रुद्ध हुए २ अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न के मस्तक पर एक तीक्ष्ण बाण मारा, उस की भी वही दशा हुई। तब भीम, अर्जुन, चेदि युवराज, सुदर्शन और पुरुवंशी मिलकर अश्वत्थामा को पीडित करने लगे। परंतु वह तेजस्वी ब्राह्मण तनिक भी विचलित न हुआ, और आगे पीछे दाएं बाएं असंख्य बाणों को छोडता हुआ गर्जने लगा। उस ने दशों दिशाओं को बाणों से तोप दिया

और बृद्धक्षत्र तथा सुदर्शन दोनों राजाओं के सिर काट लिए और फिर बेग से झपट कर चेदी के युवराज को मार डाला । हे राजन् ! तीन महारथियों को अपने सामने मारे जाते देख कर भीम के क्रोध का पारावार न रहा वह बादल के समान गम्भीर गर्जना करते हुए उस पर बाणों की तुमुल बृष्टि करने लगे। अश्वत्थामा ने भीम को सामने देख कर उसके सारथि को मार डाला और घोड़ों को घायल कर दिया। तब बाण की पीड़ा को न सह भीमके घोड़े रथ को लेकर भाग निकले। तब अर्जुन अश्वत्थामा को ललकार कर बोला हे आचार्य्य पुत्र ! यदि कुछ साहस है तो आओ मेरे साथ युद्ध करो। अश्वत्थामा को श्रीकृष्ण और अर्जुन पर बड़ा क्रोध था, क्योंकि श्रीकृष्ण ने छल से उसके पिता को मरवाया था, और अर्जुन ने शिष्य हो कर भी गुरु की मृत्यु को चुपचाप देखा था। उस ने उन दोनों को मार डालने के लिये भयानक आग्नेय अस्त्र पकड़ा और दशों दिशाओं में घुमाकर उस को छोडा। उससे भूमि आकाश में घोर अंधकार छा गया, आकाश से मानों भयानक उल्कापात होने लगा। सहस्रों वीर ज्वर पीडित रोगी के समान लडखडा कर पृथिवी पर गिर पडे, उस आग्नेय अस्त्र के ताप से प्रत्येक मनुष्य हाय जला हाय जला कह कर त्राहिमाम् त्राहिमाम् पुकारने लगा। श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों ही उस अंधकार में डूब गये। उनको न देखकर सारे पांडव दल में

हाहाकार मच गया। हे धृतराष्ट्र! इस से पहले हम ने कभी ऐसा दृष्य न देखा न सुना। अश्वत्थामा के इस घोर कर्म से सभी पांडव और पांचाल थर थर कांपने लगे। तब अर्जुन ने उसी समय ब्रह्मास्त्र छोडा, जिस से थोडे ही समय के पश्चात् अंधकार भागने लगा क्षण २ में उजाला होने लगा। कुछ ही देर में सब दिशाएं निर्मल हो गईं, और श्रीकृष्ण तथा अर्जुन दोनों चन्द्रमा और सूर्य्य के समान चमकते हुए अपने रथ पर दिखाई देने लगे। तब पांडव दल में हर्ष के बाजे बजने लगे। शंख भेरियां और ढोल बजने लगे। यह देखकर अश्वत्थामा गैहरे विचार में मग्न हो गया, उसका मन उदास हो गया। दुर्य्योधन ने संध्या होती देख अपनी सेना को लौटा लिया। इधर पांडव भी अपनी सेना को लेकर शिविर में लौट गये इस प्रकार सूर्य्य देवता भारत के सहस्रों वीरों के रक्त से लाल हुए २ द्रोण रूप एक महान् आत्मा को अपनी गोद में लेकर अस्त हो गए।

इति द्रोण पर्व समाप्तः।

अथ कर्ण पर्व ।

पहला अध्याय ।

युद्ध का पन्द्रहवां दिन ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! चार दिन तक भयानक संग्राम करके जब द्रोणाचार्य्य जी स्वर्ग को चले गये तो दुर्योधनादि कौरवों के हृदय दुःख और शोक से अधीर हो गये। वह सब रात भर अश्वत्थामा को बीच में बैठा कर आंसु छोड़ते रहे । जब प्रातःकाल हुआ तो दुर्योधन ने सब राजाओं को बुलाकर कहा, कि हे राजाओ ! जो कुछ होना था सो हो गया। दैव की इच्छा के विरुद्ध मनुष्य कुछ नहीं कर सकता, अब तुम अपनी अपनी सम्मति दो कि अब क्या करना चाहिए। महाराज दुर्योधन की बात सुनकर अश्वत्थामा बोले हे राजन्! दैव की इच्छा को कोई किस प्रकार जान सकता है, इस से पूर्व हमारे वीरों ने वही किया कि जो क्षत्रियों का धर्म है, इस लिए हम सब को भी उन्हीं के मार्ग पर चलना चाहिए। हमें साहस और धीरज से काम लेना चाहिए। धीर पुरुष पहले हारे हुए भी अंत में जीत जाते हैं, इसलिए हे प्रभो! महावीर कर्ण को सेनापति बनाकर पांडवों का क्षय कीजिये अथवा रण भूमि में सदा के लिए सो जाईए यही क्षत्रियों का मार्ग है।

अश्वत्थामा के इन निर्भय और प्यारे बचनों को

सुनकर सब राजाओं ने उस की बात का अनुमोदन किया और बारंबार सिंह नाद करके आकाश को गुंजाने लगे। तब दुर्योधन कर्ण की ओर मुख करके बोले हे अंगराज इस समय मुझे तुम्हीं पर एक मात्र भरोसा है, और सच पूछो तो तुम्हारी ही भुजाओं के भरोसे मैंने इस युद्ध को छेड़ा है। पितामह हृदय से पांडवों की ओर थे, और वह दस दिन तक उन की रक्षा करके अन्त में वैकुण्ठ लोक को चले गए। गुरू द्रोणाचार्य्य यद्यपि हमारे परम हितैषी थे परन्तु पांडवों का बध करना उनको अभीष्ट न था, वह भी सूर्य्य मंडल को भेद कर वीर लोक को चले गये। परन्तु आप पर मेरा पूरा भरोसा पूरा विश्वास है कि आज ही तुम पांडवों का समूल नाश करके इस भयानक युद्ध की अग्नि को ठंडा कर दोगे। दुर्योधन के यह वचन सुनकर कर्ण बोले हे राजन्! हम ने पहले ही तुम्हारे साथ प्रतिज्ञा की थी, कि हम पांडवों का समूल नाश करेंगे, हम को पांडवों पर तनिक दया नहीं है, आज हम अवश्य ही सेनापति के पद को ग्रहण करेंगे और अभिमानी अर्जुन का मद चूर चूर कर देंगे आज अर्जुन के रक्त को पीकर युद्ध भूमि अपनी प्यास को शान्त करेगी, कर्ण के शत्रु अर्जुन को अब तीनों लोकों में कोई भी बचा नहीं सकता, आज तुम इस पृथिवी को पांडवों से शून्य देखोगे, हे राजन्! व्याकुल न होवो मैं आप के अर्थ प्राण तक दे दूंगा। कर्ण के इन वचनों से दुर्योधन

अति प्रसन्न हुए और बारंबार उसको हृदय से लगा कर सब राजाओं के सन्मुख उसको सेनापतिका तिलक दिया इसके अनन्तर कौरवों ने प्रसन्न होकर अनेक प्रकार के बाजे बजाए, शंखों की ध्वनि आकाश में गूंजने लगी और ऊंचे २ झंडे गगन मंडल में फहराने लगे । हे राजन्! सेनापति के पद से अभिषिक्त होकर कर्ण दोपहर के सूर्य्य के समान बड़े तेज के साथ शोभा देने लगे। उन्हों ने तुरंत ही युद्ध शंख बजाया और सारी सेना को एकत्र करके समुद्र के समान गर्जते हुए युद्ध क्षेत्र की ओर बढे। कर्ण को इस प्रकार वेग से आते देखकर युधिष्ठिर अर्जुन से बोले हे महाबाहो! वह देखो अहंकार के मद में चूर हुआ २ कर्ण हमारी सेना को ललकार रहा है, आज इस युद्ध दुर्मद योद्धा को मार कर बारह वर्ष से जलते हुए हमारे हृदय को ठण्डा करो। हे अर्जुन इस के मरने पर तेरी विजय है ।

युधिष्ठिर के इन वचनों को सुनकर अर्जुन ने अपनी सेना को घोड़े के खुर की तरह अर्धचन्द्राकार में खड़ा किया और सब महांरथियों को सावधान करके युद्ध का शंख बजाया और फिर कौरवों पर इस प्रकार झपटे जैसे बाज पक्षि बटेर पर, दोनों सेनाएं एक दूसरेसे भिड गईं और हुंकार करती हुई भयानक मारकाट में प्रवृत हुईं । पैदल पैदलों से रथी रथियों से और हाथी हाथियों से टकराने लगे।

दूसरा अध्याय ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र युद्ध के आरम्भ में ही नकुल

ने बडा पराक्रम दिखलाया, उसने जलते हुए बाणों से कौरव दलको इस प्रकार दग्ध करना आरम्भ किया जैसे दावानल अग्नि घास के ढेर को, असंख्य बाणों से उस ने भूमि और आकाश को भर दिया । आकाश में उडते हुए उसके बाण इस प्रकार पृथिवी पर गिरते थे जैसे प्रलयकाल में लाखों ही तारे सहसा टूट पडे हों । उस की मार से पीडित हुई २ कौरव सेना चारों ओर भागने लगी हे राजन् कौरवों ने इस युद्ध में उसको अर्जुन के समान देखा। तब अपनी सेना को भागते देखकर महा तेजस्वी कर्ण झुंझला कर नकुल पर झपटे। उन्होंने आते ही नकुल को बाणों से तोप दिया और एक तीक्ष्ण बाण से उसके धनुष को काट दिया, फिर सारथि को मार दिया और रथ के घोडों को भी मार डाला घोडों और सारथि के मर जाने पर नकुल कूदकर दूसरे रथ की ओर भागा परन्तु महावीर कर्ण ने दौडकर उसके गले में धनुष को डाल दिया और झटका देकर बोला हे नकुल ! कर्ण के साथ युद्ध करना तुम्हारे जैसे बालकों का काम नहीं है, जाओ जाकर घोडों की लीद उठाओ, इस समय तुम्हारी मृत्यु मेरे हाथ है परन्तु मैं तुम्हें मारूंगा नहीं, माता कुन्ती के कथन से मैंने तुम्हें छोड दिया । यह कह कर कर्ण अपने रथ पर सवार हो गया और नकुल लज्जित हो कर नीचे मुंह किये हुए युधिष्ठिर के रथ की ओर चला। उधर श्वेत वाहन अर्जुन ने अपने रथ पर से असंख्य

बाणोंको छोड़ कर दशो दिशाओं को भरपूर कर दिया। गांडीव से छूटे हुए बाण हाथी सवार घुड़सवार प्यादों और रथियों का लहू पीने लगे। तब अकेला दुर्योधन बादल के समान गंभीर गर्जना करता हुआ सूर्यके समान तेजस्वी अर्जुन को ढांपने के लिये दौड़ा। अर्जुन ने तुरंत ही सात बाणों से उस के सारथि घोड़े झंडे और धनुष को काट कर गिरा दिया और एक बाण से उसके छत्र को उड़ा दिया। उसके अनंतर प्राणोंके लेने वाला एक बाण दुर्य्योधन की ओर छोड़ा, परंतु आचार्य्य पुत्र अश्वत्थामा ने उस के रास्ते ही में टुकड़े कर दिये और दुर्य्योधन को बचा लिया। इस पर अर्जुन को अश्वत्थामा पर बड़ा क्रोध चढ़ा, उन्हों ने दुर्य्योधन से हट कर अश्वत्थामा की ओर मुख फेरा और तीक्ष्ण बाणों से उसके घोड़े रथ और धनुष के टुकड़े २ कर दिये, कृपाचार्य्य को बाणों से वींधकर उनके धनुष को काट डाला। फिर कृतवर्मा के धनुष को दो टूक किया उसके झंडे को भूमि पर गिरा दिया और घोड़ों को यमपुरि मे भेज दिया। इसके अनंतर दुःशासन को बाणों से मूर्छित करके फिर कर्ण की ओर रथ बढ़ाया। उन्होंने देखा, कि पर्वत के समान ऊंचे रथ पर बैठे हुए कर्ण पांडव सेनाको बड़ी पीड़ा दे रहे हैं। उनकी मार से हाथी घोड़े और मनुष्यों को भीषण संहार हो रहा है। उनके अस्त्रों से घबराई हुई पांडव सेना का साहस टूट गया है और वह भागने पर तैय्यार है। अर्जुन ने अपने चिर

शत्रुको देखा तो हृदय में महा क्रोध परंतु ऊपरसे मुस्कराते गांडीव की कठोर टंकार करने लगे। अर्जुन ने तत्काल अस्त्रों से अस्त्रों को दूर करके भयानक बाणों से भूमि आकाश दिशाओं और विदिशाओं को बाणमय कर दिया उनके बाण बिजली के समान कड़क कर शत्रुओं को भस्म करने लगे। कौरवों की सेना मारे डरके आंखें बंद करके इधर उधर भागने लगी और हाहाकार करने लगी, घोड़े और हाथी घायल हो हो कर तडपने लगे। उधर कर्ण ने भी अपने बाणों से पांडव सेनाकी यही दशा करदी हे राजन्! तब दोनों ओर के मनुष्य हाथी और घोडे युद्ध छोड कर भागने लगे, आकाश धूल से इतना भर गया कि दिन के समय भी कोई किसी को देख नहीं सकता था। इस प्रकार सात घंटे तक प्रलयकाल के समान युद्ध होता रहा। असंख्य वीर योधा हाथी और घोडे मर गये, रक्त की नदी बह निकली, रथों के पहिये रक्त में डूबे हुए चलने में असमर्थ हो गये। इस समय सूर्य्य भगवान् भी विरक्त होकर अस्त होने वाले थे तब दोनों ओर से शंख बजाए गये और युद्ध बंद किया गया। आज यद्यपि पांडवों की भी बहुत सी सेना मारी गई परंतु कौरवों की हानि बहुत भारी हुई। उनके लाखों पशु प्राणि और मनुष्य आज मारे गये। कौरवों के चले जाने पर पांडव बड़े हर्ष के साथ विजय के बाजे बजाते हुए सिंहनाद करते अपने शिविर में लौटे।

तीसरा अध्याय ।

सोलवां दिन ।

कर्ण का भयानक युद्ध ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! आज बड़ी भोरही महांबलि दुर्य्योधन कर्ण के पास जाकर बोले हे वीर प्रवर ! पितामह और आचार्य के पश्चात् हमें तुम पर पूरा भरोसा था, कि तुम पांडवों का एक ही दिन में नाश करोगे, परंतु आपके होते हुए भी पांडवों ही ने हमारी सेना का बहुत बडा नाश किया, हे महाबाहो ! अर्जुन के मारने का शीघ्र उपाय करो, जिसका जीता रहना हमारी मृत्यु का कारण है । तब कर्ण ने दुर्योधन को धीरज देते हुए कहा हे राजन् ! आज हम महा पराक्रमी अर्जुन के साथ अंतिम युद्ध करेंगे, आज अर्जुन अपने भाईयों समेत यमपुरि का रास्ता लेगा अथवा हम ही रण भूमि में अपने प्राण देदेंगे। हे सुयोधन ! बहुत से शत्रुओं का नाश करते करते कल का दिन हमने गंवा दिया, अर्जुन हमारे सामने नहीं हुआ आज हम उसके सामने खडे होकर द्वैरथ युद्ध करेंगे और अपनी प्रातिज्ञा को पूरा करेंगे। हे राजन् ! अर्जुन से हम बाहु बल में अधिक हैं, हमारे बाण अर्जुन से बढ़ कर ठीक निशाने पर बैठते हैं और वेग में भी अधिक हैं और हमारे अस्त्र भी अर्जुन के अस्त्रों से बढ़ चढ़कर हैं इस लिये अर्जुन से मुझे किसी प्रकार का भी भय नहीं है, परंतु हे राजन् फिर भी हम कुछ बातों में उससे कम हैं,

और उस कमी को मैं छिपाना उचित नहीं समझता, यदि वह न्यूनता पूरी हो जाय तो तुम अर्जुन को मरा ही समझो। तब दुर्य्योधन के पूछने पर कर्ण बोले हे राजन् ! एक तो अर्जुन के रथके समान दिव्य रथ हमारे पास नहीं है और नां ही उस प्रकार के घोड़े ही हैं, और सब से बडी न्यूनता यह है कि श्रीकृष्ण के समान चतुर सारथि हमारे पास नहीं है। हे कौरव नरेश ! मद्रराज·शल्य श्रीकृष्ण के समान वीर बुद्धिमान बलवान और रथ हांकने में अति चतुर हैं, यदि वह हमारे सारथि बनना स्वीकार करें तो विजयलक्ष्मी तुम्हारी ही है इसमें कुछ भी संदेह न जानो। कर्ण की यह बात सुनकर दुर्य्योधन अति प्रसन्न होकर बोले हे अंगराज तुम जैसा चाहोगे वैसा ही हो जाएगा। इतना कहकर दुर्य्यो-धन तुरंत ही महारथि शल्य के पास पहुंचे और हाथ जोड प्रणाम करके बोले हे मामा ! आप सत्यब्रती हैं, सदा सत्य बोलते हैं, सत्य करते हैं और मन से सत्यका विचार करते हैं, आपके समान सच्चा वीर पराक्रमी बलवान और चतुर इस समय संसार में कोई नहीं है, यही विचार कर वीर श्रेष्ठ कर्ण नें आपही को चुना है, उसी पर विचार करने के लिये हम आपके पास आये हैं। हे मद्रराज ! हम आप से हाथ जोड कर और पांओं पड कर प्रार्थना करते हैं, कि आप युद्ध में कर्ण के सारथी बनें। आपके हाथ घोडों की बागें आते ही कर्ण पांडव सेना का संहार कर देंगे यह उनका विश्वास है, इसलिये हे मामा ! हमारी रक्षा के हित आप

कर्ण के सारथ्य को स्वीकार करें ।

हे धृतराष्ट्र ! सुयोधन की बात सुनकर शल्य का हृदय क्रोध से जल उठा, उसके होंठ फड़कने लगे, भ्रकुटि टेढ़ी हो गयी, वह नेत्रों से रोषका धुंआ छोड़ता हुआ बोला हे सुयोधन! तुम ने मेरा घोर अपमान किया तुम्हारी बातों से प्रतीत होता है, कि तुम मुझ पर विश्वास नहीं रखते । तुम कर्ण को हम से बढ़कर मानते हो। इसी लिये मुझे उसका रथवाही बनने पर बाध्य करते हो । हे राजन् ! कर्ण युद्ध में मेरे बराबर नहीं है, मुझे कर्ण से युद्ध करने की आज्ञा दो, फिर जो हारे वही सारथी बने। हे राजन्! मैं अकेला ही युद्ध करके पांडवों का क्षय करूंगा, आज तुम मेरे बाहू बलको देखो कि किस प्रकार मैं अग्नि के समान पांडवों की सेना को दग्ध करता हूं । जिस कर्ण की तुम मेरे सामने प्रशंसा करते हो उसको मैं भुजाओं से दबाकर चूर चूर कर सकता हूं। मैं अपने बलसे सारी पृथ्वी को फाड़ सकता हूं, पर्वतों को तोड़ सकता हूं और समुद्रों को सुखा सकता हूं । हे दुर्योधन ! कर्ण रथवाही का पुत्र होने से शूद्र है, उसको मेरा रथ हांकना चाहिए, मैं उच्च कुल का क्षत्रिय होकर एक नीच की कैसे सेवा कर सकता हूं। हे राजन्! तुम ने मेरा अक्षम्य अपमान किया, अब मैं युद्ध न करूंगा तुम मुझे आज्ञा दो मैं अपने देशको लौट जाऊंगा। यह कहकर क्रोध से जलता हुआ मद्रराज शल्य वहां से उठकर चल दिया । तब हे

धृतराष्ट्र ! तेरा पुत्र प्यार से उसका रास्ता रोक कर खड़ा हुआ और बड़ी मीठी बाणी से बोला हे मामा ! आप जिस प्रकार कहते हैं वह सब सत्य है, आप कभी सत्य को नहीं छोड़ते ! आप कर्ण से बढ़कर वीर और पराक्रमी हैं, आप की कुल क्षत्रियों में श्रेष्ठ हैं, परन्तु आपके सारथि बनाने में आपका अपमान करना यह हमारा अभिप्राय नहीं है, इसे सत्य जानो । हे राजन् ! श्रीकृष्ण अर्जुन से बढ़कर वीर बुद्धिमान और नीतिज्ञ है, परन्तु फिर भी उन्हों ने अर्जुन का सारथ्य स्वीकार किया है, मैं अपनी सारी सेना में आप ही को श्रीकृष्ण के तुल्य देखता हूं, इसीलिये हे मामा ! कौरवों के हितके लिये आपको सारथि बनने के लिए प्रेरणा करता हूं।

तब मद्रराज शल्य कुछ कोमल होकर बोले हे राजन् ! तुमने जो मुझे श्रीकृष्ण के तुल्य माना है सो मैं तुम पर प्रसन्न हुआ, मैं तुम्हारे कथन के अनुसार सारथ्य कर्म को स्वीकार करूंगा परन्तु कर्ण को मेरी एक शर्त पूरी करनी होगी। हे राजन् मैं ऊंची कुलका क्षत्रिय हूं, इसलिये एक तो युद्ध में मेरे साथ सारथियों का सा व्यवहार न करे और दूसरे जो मेरी इच्छा होगी मैं कर्ण को कहूंगा उसको कर्ण सहन करे। यदि मेरी यह शर्त कर्ण को स्वीकार हो तो मैं सारथि बनना स्वीकार करता हूं। तब हे राजन् ! सबके सामने कर्ण ने शल्य की शर्त को स्वीकार किया। इसके अनंतर कौरव दल में आकाश को फाड़ने

वाला सिंह नाद हुआ, भेरियें बजने लगीं और मारू बाजे बजने लगे। तब शल्य ने "जय हो" कहकर कर्ण का रथ तैय्यार किया और तुरंत ही उसे उनके निकट ले आये। महावीर कर्ण ने वेद मंत्रों से विधि पूर्वक उस रथका पूजन किया और फिर प्रदक्षिणा की। इसके अनंतर सूर्य्य नारायण की उपासना की और फिर मद्रराज शल्य को रथ पर चढ़ने का इशारा किया। तेजस्वी कर्ण की आज्ञा पाकर शल्य उस रथ पर इस प्रकार चढ़गये जैसे सिंह किसी ऊंचे पर्वत के शिखर पर चढ़ता है। सूर्य्य के समान तेजस्वी कर्ण भी उस रथ पर सवार हुए ऐसे शोभा देने लगे जैसे बादलों के मध्य में सूर्य्य।

इन दोनों को रथपर सवार देखकर दुर्योधन बोले हे अंगराज! तुम ही मेरे एक मात्र सहारे हो, चिरकाल से मेरी आंखें तुम्हें युद्ध में देखने को तरस रही थीं आज मेरी मनोकामना पूरी हुई। हे वयस्य! युद्ध में जिस काम को पितामह भीष्म और द्रोणाचार्य्य पूरा न कर सके। उसी भीषण काम को आज अपने बाहुबल से तुम पूरा कर दिखाओ, आज अपने जन्म शत्रु अर्जुन का बध करो पांडवों का समूल नाश करो और कौरवों के कांटों को समूल उखाड़ दो। हे महाबाहो! जाओ विधाता तुम्हारे दायें हों, तुम्हारा कल्याण हो। इसके अनन्तर कौरवों की सेना में बादलों की गर्जना के समान एक सहस्र तुरही और दस सहस्र भेरियां गर्जने लगीं, जिसे सुनकर

पांडवों के कान खड़े हो गये, उन्हों ने समझ लिया, कि कर्ण युद्ध के लिये निकल आये। शल्य ने घोड़ों की बागें हिलाईं और हुंकार से उनको युद्ध क्षेत्र की ओर हांकने लगे। यह देखकर कर्ण मूछों पर बल देते हुए बोले हे शल्य! रथको शीघ्र चलाओ, हम आज पांडवों का समूल नाश करके छोड़ेंगे, आज हम अपने भुज बल से अर्जुन का मद चूर चूर करेंगे, आज दुर्योधन अर्जुन को धूलि में लेटा हुआ देखेगा।

कर्ण की बात सुनकर शल्य बोले हे सूत पुत्र! घबराओ नहीं, जब तक अर्जुन तुम्हारे सामने नहीं आते तब तक जितनी चाहें डींगे मार लो, परंतु उसके सामने आने पर फिर तुम्हें उसके बल पराक्रम का पता लग जायेगा। हे रथवाही के पुत्र! जिस अर्जुन के पराक्रम से इन्द्र भी भयभीत होता है उसकी अवज्ञा करते तुम्हें लज्जा नहीं आती। जब तुम युद्ध में वज्र की टंकार के समान गांडीव के कठोर शब्द को सुनोगे, जब तुम पर्वताकार भीम के हाथों अपनी सेना को कट कट कर गिरा देखोगे और जब नकुल सहदेव और युधिष्ठिर के बाणों से आकाश मंडल को छिपा हुआ देखोगे तब तुम्हारे मुख से ऐसी अनाप शनाप बात न निकलेगी। शल्य के इन बचनों ने कर्ण के हृदय को छेद डाला उस ने शल्य की ओर जलते हुए नेत्रों से देखा परन्तु फिर अपनी प्रतिज्ञा को स्मरण करके धीरता से बोले हे शल्य! युद्ध में शत्रु

की बड़ाई और हमारी तुच्छता प्रकट करके तुम उचित बात नहीं करते मैं अपने शत्रु को आप समझ लूंगा तुम रथ को हांको। तब शल्य ने कर्ण की आज्ञा से रथ को वेग से चलाया, तब क्षण मात्र में शत्रुओं के मध्य में पहुंच कर पांडव दल का संहार करते हुए कर्ण ललकारने लगे, हे वीर योद्धाओ! तुम सब के सब शान्ति और निर्भयता से खड़े रहो, तुम में से कोई भी मेरा शत्रु नहीं है, अकेले अर्जुन ही को मैं अपने साथ युद्ध करने के योग्य पाता हूं, इस कारण तुम में से जो कोई अर्जुन के सामने मुझे ले जाएगा वह हाथी घोडे रत्न आदिक मुंह मांगा इनाम पाएगा। इतना कह कर महावीर कर्ण मेघ की गर्जना के समान ज़ोर २ से शंख बजाने लगे। कर्ण के वीरता भरे इन वचनों को सुनकर दुर्योधन का हृदय हर्ष से उछलने लगा, वह प्रसन्न होकर कर्ण के पीछे पीछे चले, परन्तु शल्य ने फिर उपहास करते हुए कहा, हे कर्ण! तुम अपने धन को व्यर्थ क्यों फूंकते हो, तुम्हें इस की आवश्यकता ही नहीं पडेगी। अर्जुन अभी अभी तुम्हारे सामने आ जाएंगे। हे अभिमानी! कृष्ण और अर्जुन के मारने का संकल्प करना तेरी मूर्खता है। वह तीनों लोकों को जीतने वाले तुझ से मारे नहीं जा सकते। क्यों कोई भी तुम्हारा भाई बंधु इष्टमित्र तुम्हें इस आग की खेल से मना करने वाला नहीं रहा, तू हाथों से सूर्य्य और चन्द्रमा को पकड़ना चाहता है, नदी के स्रोत को भुजाओं से रोकना चाहता

है। तुम्हारे बुरे दिन निकट आ रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है। हे कर्ण! यदि अपनी रक्षा चाहते हो तो कोई सुरक्षित व्यूह की रचना करके स्वयं उसके अंदर उचित स्थान पर खड़े होवो। हे राजन्! हमारी बात को बुरा न मानना हम अर्जुन के पराक्रम को जानते हैं, इसलिये तुम को इस बाल-लीला से रोकते हैं। यह सुनकर कर्ण विषधर सर्प के समान फुंकारे मारते हुए बोले हे शल्य! हम तुहारी बुद्धि और तुम्हारे बलके भरोसे पर लड़ने नहीं आए,हमने अपने बलको तोल लिया है, तुम मित्रता के बहाने हमसे वैरकर रहे हो जो युद्ध के समय हमारे मनको कायर बनाने का यत्न करते हो परन्तु हमारा हृदय निर्बल नहीं है, हमने जो बल निश्चय किया है वह करके छोड़ेंगे तुम हमारे कार्य्य में विघ्न न डालो।

परन्तु शल्य ने तो कर्ण का तेज और साहस ही हरना था और इसी कारण वह बोलता था, इसलिये कर्ण के कथन पर ध्यान न देकर वह फिर बोला, हे रथवाही के बेटे! सेनापति-पद को प्राप्त करके तू क्यों अपनी जाति को भूल गया है। भेड़ों में बैठा हुआ गीदड जब तक जंगल में शेर की गर्ज नहीं सुनता, तभी तक वह अपने आप को शेर समझता है। जब तक तू भीषण युद्ध में गाण्डीव की गर्ज नहीं सुनता, तभी तक तुम्हारे मुख से ऐसी बातें निकलती हैं। रे मूढ़! अमृत और थूक में, चूहे और बिल्ली में, सिंह और गीदड़ में जितना अन्तर

होता है, उतना ही अन्तर तेरे और अर्जुन में है।

कर्ण अब और अधिक न सहार सका, उसके हृदय मे आग लग गई, भृकुटि चढ़ गई और वह नेत्र लाल करके बोला, हे नराधम! हम अर्जुन को तुम्हारी अपेक्षा अधिक जानते हैं। हे कुलाङ्गार। तुम हमारे पक्ष के होकर शत्रुओं के समान काम कर रहे हो। युद्ध में क्षत्रिय किस प्रकार प्राण देते हैं, यह हम जानते हैं! आज चाहे अर्जुन हमें मार डाले, परंतु हम अवश्य उसके साथ युद्ध करेंगे, इसलिये तुम अधिक बकवाद न करो। रे शठ! यदि दुर्योधन के सामने तुम्हें न मारने की हमने प्रतिज्ञा न की होती तो अब तक तुम यमपुरि को चले गए होते। परन्तु फिर यदि तुम ने कोई ऐसी बात की तो हम इसी गदा से तुम्हारे टुकडे २ कर डालेंगे।

यह सुनकर शल्य बोले, हे सूतपुत्र! अब हम तुमको कुछ नहीं कहेंगे, परन्तु तुम्हारी मृत्यु में अब कोई संशय नहीं है, जो तू मेरे हित के वचनों को मरणासन्न रोगी के समान नहीं सुनता। हे धृतराष्ट्र जब उन दोनों का इस प्रकार झगडा बढने लगा, तो दुर्य्योधन ने हाथ जोड कर दोनों का बीच बचाव किया। तब कर्ण ने शल्य की बात को भुलाकर हंसते २ रथ को आगे ले चलने का इशारा किया। उधर कौरवों के मध्य में कर्ण को खडा देखकर युधिष्ठिर ने अर्जुन को कहा, हे धनञ्जय! वह देखो सूतपुत्र कर्ण पाण्डवों की सेना को ललकार रहा है,

हे अर्जुन! आज इसको मारकर युद्ध को शान्त करो। चिरकाल से यह मूर्ख तुमसे युद्ध करने की इच्छा रखता हुआ आज तुझे ढूंढता है, तुम इस से युद्ध करो। हम कृपाचार्य्य से लड़ेंगे और भीमसेन दुर्योधन का अभिमान चूर्ण करेंगे। तब युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर अर्जुन ने देवदत्त नामक शंख बजाया और अपनी सेना सहित उधर ही को प्रस्थान किया, जिधर कर्ण खड़ा इनकी बाट देखता था।

अर्जुन को आते देख शल्य कर्ण से बोले, हे अङ्गराज! तैय्यार होजाओ, जिनको पाने के लिए तुम इनाम देते थे, वही अर्जुन श्रीकृष्ण के साथ दिव्य रथपर सवार सूर्य्य और चन्द्रमा के समाने शोभा देते हुए आरहे हैं, यह देखो उनके रथ से उड़ाई हुई धूल आकाश को छाए हुए आंधी के समान बढ़ रही है, और जिसके पहियों के शब्द से पृथिवी डोल रही है। हे राजन्! अर्जुन को कर्ण की ओर जाते देख कर्ण का पुत्र वृषसेन मेघ के समान गर्जना करता हुआ रास्ते ही में अर्जुन पर टूट पड़ा। यह देख महाबली नकुल ने वृषसेन को बाणसमूह से ढक दिया, तब उन दोनों वीरों का युद्ध होने लगा। दोनों ओर से असंख्य बाण छोड़े गये, जिससे आकाश भर गया। अंत में क्रोध से भरे हुए वृषसेन ने तीक्ष्ण बाणों से नकुल के घोड़ों को भूमि पर गिरा दिया। तब घोड़ों के मरने से रथ-हीन हुआ हुआ नकुल एक ही

छलांग से उछल कर भीम के रथ पर चढ़ गया, जैसे सिंह पर्वत पर । अर्जुन ने जब यह देखा तो कर्ण के सामने ही उस पर बाणों की वृष्टि करने लगे । तब वृषसेन अत्यंत क्रुद्ध होकर अर्जुन की ओर दौड़ा और एक तीक्ष्ण बाण से उसके हृदय को वींध कर ऐसे गर्जा जैसे नमुचि इन्द्र को बींध कर गर्जा था । वृषसेन के बाण से तपा हुआ अर्जुन क्रोध से भृकुटि चढ़ा कर बोला हे कर्ण ! मेरी अनुपस्थिति में तुमने मेरे पुत्र को मारा था, यह कलंक तुम्हारे मस्तक पर से कभी नहीं हटेगा परन्तु मैं आज तेरे सामने तेरे पुत्र का बध करता हूं, यह कहकर उसने गांडीव धनुष को झुका कर वृषसेन पर तीक्ष्ण बाण छोड़े जिस से उस की भुजाएं और सिर पृथिवी पर गिर पड़े, और फिर वह कांपता हुआ इस प्रकार रथ से नीचे गिर गया जैसे फूला हुआ वृक्ष आंधी के वेग से गिर पड़े ।

पुत्र को अपनी आंखों के सामने मरता देखकर कर्ण के नेत्रों से क्रोध और दुःख के आंसु निकल गये । उस ने बड़े क्रोध से अर्जुन को ललकारा और रथ को उस के सामने खड़ा किया । हे राजन् ! उन दोनों को आमने सामने खड़े देखकर कौरव और पांडवों ने सिंहनाद किये । कुरुक्षेत्र की रण स्थली शंखों की गूंज से नाद करने लगी । उस समय वह दोनों महां तेजस्वी बीर वाघ चर्म्म से ढके हुए रथों पर बैठे हुए दो सूर्य्य प्रतीत होते थे । तब कौरव कर्ण को और पांडव अर्जुन को सिंहनाद करते हुए प्रोत्साहन

करने लगे। सिंह के समान ऊंचे कंधों वाले गजशुंड के समान लंबी भुजाओं वाले उन दोनों महा पराक्रमियों को आमने सामने देखकर कोई यह न कह सकता था कि कौन किस को जीतेगा तब कौरवों की सारी सेना कर्ण की रक्षा के लिए उस को घेर कर खड़ी हो गई। उधर युधिष्ठिर भीम धृष्टद्युम्न सात्यकी तथा अन्य योधा अर्जुन की सहाय ता के लिए खड़े होगए। हे राजन्! उस महायुद्ध रूप जूए में कौरवों और पांडवों के कर्ण और अर्जुन दोनों दांव थे। जिनके हरने से हार और जीतने से जीत निश्चित थी। हे धृतराष्ट्र! उस समय कर्ण ने हंसते २ शल्य को पूछा हे शल्य यदि युद्ध में अर्जुन हमको मार डाले तो तुम सच सच कहो क्या करोगे? शल्य ने उत्तर दिया हे कर्ण! यदि अर्जुन तुम को मार डाले तो मैं कृष्ण और अर्जुन दोनों को बिना मारे न छोड़ूं। उधर यही प्रश्न अर्जुन ने श्रीकृष्ण से किया तो श्रीकृष्ण बोले, हे अर्जुन! सूर्य्य टल जाए, वायु अपने स्वभाव को छोड़ दे, समुद्र सूख जाए, अग्नि ठंडी हो जाय, यह सब कुछ होना संभव है परन्तु कर्ण के हाथ से तेरा मारा जाना असंभव है, तू इसको अपने तीक्ष्ण बाणों से यमपुरि को भेजेगा यह मुझे निश्चय है। हे अर्जुन! तू भी ऐसा ही निश्चय करके युद्ध कर। यह सुन कर अर्जुन हंस कर बोले हे केशव! आज तुम मेरे पराक्रम को देखोगे, आज तुम गांडीव की वह घोर गर्ज सुनोगे जिसे तुमने इससे पहले न सुना हो। हे वासुदेव! आज

तुम कर्ण को टुकड़े २ होकर पृथिवी पर पड़ा हुआ देखोगे । हे कंस के मारने वाले ! इस महादुष्ट ने सभा में द्रौपदी को जो कुछ कहा था वह मुझे भूला नहीं, आज हे माधव ! इस महायुद्ध का अंत होगा । आज तुम कुन्ती को धीरज दोगे, तेरह वर्ष से रोती हुई द्रौपदी के आंसू आज सूखेंगे, आज पांडव शान्ति का सांस लेंगे ।

चौथा अध्याय ।

कर्ण और अर्जुन का युद्ध ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र ! अर्जुन ने युद्ध से पहले कर्ण के किए हुए अत्याचारों को एक २ करके कृष्ण के सामने दोहराया और फिर छेड़े हुए सर्प के समान ज़ोर २ से सांस लेकर कर्ण पर टूट पड़ा ।

तब उन दोनों में महा घोर युद्ध प्रवृत्त हुआ । कर्ण और अर्जुन का जब कुछ देर तक संग्राम होता रहा तो संसप्तकों ने दूसरी ओर पांडवों का भीषण संहार करना आरंभ किया । संसप्तकों की मार से सहस्रों पांडव पक्ष के वीर घायल हुए, मारे गये । उस समय उनकी कोई भी रक्षा न कर सकता था । तब पांडव दल में हाहाकार मच गया । यह देखकर युधिष्ठिर अर्जुन के प्रति बोले हे महाबाहो ! यह देखो हमारी सेना के वीर शत्रुओं से पीडित होकर भागे जारहे हैं, तुम शीघ्र जाकर उनकी रक्षा करो। हे किरीटि ! भीम और धृष्टद्युम्न की सहायता से आज मैं कर्ण के दांत तोडूंगा ।

तब अर्जुन कर्ण को छोडकर संसप्तकों का नाश करने लगे। इधर अपने सन्मुख युधिष्ठिर को देख कर्ण उनपर बाणों की असह्य मार करने लगे। युधिष्ठिर ने कर्ण को अपने बहुत ही निकट आते देखकर उसपर एक २ करके चार तोमर मारे, जिनसे कर्ण के मस्तक और छाती से रक्त बहने लगा। इससे क्रोधित होकर कर्ण ने एक ही भाले से युधिष्ठिर की ध्वजा को काट दिया, और फिर तीक्ष्ण बाणों से उसके रथ को चूर चूर कर दिया। रथ-हीन हुआ २ युधिष्ठिर दौडकर दूसरे रथ पर चढ़ गया और युद्धक्षेत्र से भाग गया। युद्धक्षेत्र से भागते देख कर्ण ने बड़े वेग से रथको उसके पीछे दौड़ाया और फिर उसको पकडकर बोला, हे अधम क्षत्रिय ! जिस कुल में तू जन्मा है, युद्ध से भागकर तूने उसको कलङ्क लगा दिया। इस समय तेरे मारने के लिये मेरा एक ही तलवार का हाथ बहुत है, परन्तु कुन्ती से की हुई प्रतिज्ञा का पालन करता हुआ मैं तुझे छोडता हूं। हे क्षत्रियों में कायर ! तू बनमें जाकर अग्निहोत्र कर, युद्ध-भूमि तेरे लिए अच्छा स्थान नहीं है। यह कहकर कर्ण फिर पाण्डवों की सेना को अपने बाणों से दग्ध करने लगे। उनके बाणों से हाथी घोडे भाग भागकर अपनी ही सेना दलने लगे, आकाश धूल से भर गया, सहस्रों रणबांकुरे सैनिक अपने आपको मृतक दर्साने के बहाने जान-बूझ कर लेट गये। तब धूल के अन्दर छिपी हुई अपनी सेना

में युधिष्ठिर के झण्डे को न देखकर अर्जुन घबरा कर श्रीकृष्ण से बोला, हे केशव! मालूम होता है, कि कर्ण हमारी सेना का भयङ्कर नाश कर रहा है, वह देखो भूमि और आकाश गर्द से भर गई है, जिस से बहुत देखने पर भी युधिष्ठिर का झण्डा कहीं दिखाई नहीं देता। हे वासुदेव! मेरे रथ को शीघ्र ही युधिष्ठिर के पास ले चलो। उनको कुशल-पूर्वक देखकर फिर आकर इनको मारूंगा। तब श्रीकृष्ण बड़ी तेज़ी से रथको उधर लेगये, जहां वह उनको छोड़ गया था। परन्तु वहां उनको न देखकर वह शीघ्र ही भीमसेन के पास गया और अधीरता से बोला, हे महाबाहो! महाराज युधिष्ठिर युद्धक्षेत्र में दिखाई नहीं देते, शीघ्र उनका समाचार कहो, वह कुशल तो हैं? भीम बोला, हे वीरशिरोमणि! महाराज युधिष्ठिर कर्ण के बाणों से अतिशय घायल होकर शिविर में लौट गये हैं, कुशल है व नहीं, यह तुम जाकर शीघ्र देखो तब अर्जुन वायु-वेग से उड़ता हुआ शिविर में पहुंचा। वहां जाकर उनको अकेले लेटे हुए देखकर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने उनके पांओं छुए। हे राजन्! श्रीकृष्ण और अर्जुन को शिविर में लौट आए देख धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने समझा कि कर्ण युद्ध में मारा गया। इसी विचार से वह गद्गद प्रसन्न होकर बोले, आइए, आइए, आपका आना शुभ हो। हे श्रीकृष्ण! हे अर्जुन! आज दुर्य्योधन के एकमात्र सहारे, युद्ध के बीजरूप, कौरवों में भयङ्कर

सर्प कर्ण को मारकर तुमने जो काम किया है, वह देवताओं से भी नहीं होसकता था। तुम्हारा कल्याण हो, हे कृष्ण! तुम्हारी जय हो।

युधिष्ठिर के वचन सुनकर अर्जुन बोला, हे राजन्! आपकी आज्ञा से संसप्तकों को मारते मारते जब मैंने आपके झण्डे को न देखा तो व्याकुल होकर आपको देखने के लिये वापस आया, परन्तु आपको उस स्थान पर न पाकर भीम के समाचार से आपको कुशलपूर्वक देखने के लिये यहां आया हूं। हे नरेन्द्र! अब मुझे आज्ञा दें मैं शीघ्र जाकर अश्वत्थामा को रोकूं, जो हमारी सेनाको धुनियों की नाई धुनक रहा है! हे नरेन्द्र! कर्ण की सेना के साथ मिलकर उसने पांडवों का बहुत नाश किया है, आज कर्ण और अश्वत्थामा दोनों को यमपुरि में भेजकर आपके सन्ताप को दूर करूंगा।

हे धृतराष्ट्र! कर्ण के जीवित होने का समाचार सुनकर युधिष्ठिर को बहुत दुःख हुआ, वह उसके बाणों से घायल होकर यहां पड़े २ तड़प रहे थे, उनका हर्ष शोक में बदल गया, वह इस समय अपने आपसे बाहर होगये, और क्रोध से भृकुटि चढ़ाकर बोले, हे अर्जुन! तुम ने बारबार भुजा ठोककर हमारे सामने प्रतिज्ञा की, कि तुम अकेले ही उस सूतपुत्र को मारोगे, परन्तु आज उसको बिना मारे ही कैसे तुम शिविर को लौट आए। हे अर्जुन! प्राणों के भय से अकेले भीम को युद्धक्षेत्र में छोड़ कर

यहां आना तुम्हारी कायरता को प्रकट करता है। तुम्हारे ही भुजबल के भरोसे हम तेरह वर्ष से राज्य पाने की आशा को मन में रक्खे हुए थे, परन्तु आज तुमने हमको महल के ऊपर चढ़ाकर बड़े ज़ोर से नीचे गिरा दिया। धिक्कार है तुम्हारे गाण्डीव धनुष पर धिक्कार, है तुम्हारी इन लम्बी भुजाओं पर, धिक्कार है तुम्हारे तरकश पर, धिक्कार है तुम्हारे इस दिव्य रथ पर, जो समय पर निरर्थक सिद्ध हुए। क्यों नहीं इनको किसी अन्य शूरवीर को देदेते...............। युधिष्ठिर की बात अभी पूरी भी न हुई थी कि अर्जुन के नेत्र क्रोध से उबलने लगे। उसने अपनी तलवार को म्यान से खैंच लिया।

अर्जुन को इस दशा में देख श्रीकृष्ण ने घबराकर उसके हाथ को पकड़ लिया और बोले, हे वीरों में श्रेष्ठ! यद्यपि यहां तुम्हारा कोई शत्रु नहीं है, परन्तु फिर भी तुम्हारे नेत्र क्रोध से लाल हो रहे हैं, तुम्हारी तलवार म्यान से बाहर चमक रही है, हे अर्जुन! इससे तुम्हारा क्या प्रयोजन है? तुम किसको मारना चाहते हो? महाराज को तुमने कुशल-पूर्वक देख लिया है। इस समय तुम्हें प्रसन्न होना चाहिये, फिर क्यों इस प्रकार पागलों के समान चेष्टा करते हो?

तब क्रोध से कांपते हुए अर्जुन ने युधिष्ठिर की ओर बड़ी कड़ी दृष्टि से देखा और सर्प के समान फुंकारे मारते हुए बोले, हे वासुदेव! जो हमारा अकारण ही अपमान

करे, जो हमारे गांडीव धनुष को धिक्कारे वही हमारा शत्रु है, वही हमारे बध के योग्य है। तुम ने और जो कुछ कहना हो कह डालो, आज हम युधिष्ठिर को मारे बिना नहीं छोड़ेंगे।

श्रीकृष्ण ने यह सुना तो उनके पाओं तले से मट्टी खसक गई वह अर्जुन को धिक्कारते हुए बोले, हाय! संकट मे बड़े २ बुद्धिमान भी गिर जाते हैं। हे अर्जुन! धिक्कार है तेरी इस बुद्धि पर। मूर्खों के समान बड़े भाई को मारने के लिये तुम्हें तैय्यार देख आज हम बड़े हैरान हैं। हे महाबाहो! सूत पुत्र कर्ण ने तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठिर को बे तरह घायल कर दिया है, पीड़ा से व्याकुल हुए २ धर्मपुत्र आज ही उसे मरा हुआ देखना चाहते हैं इसी लिये वह तुमको ऐसा कह रहे हैं। हे अर्जुन! जिस ने तुम्हारे प्राणों से प्यारे भाई की युद्ध में ऐसी दुर्दशा की है उसको मार कर भाई को प्रसन्न करो, उन के कठोर बचनों का अभिप्राय केवल इतना ही है कि किसी प्रकार उतेजित होकर तुम शीघ्र ही कर्ण का संहार करो।

श्रीकृष्ण के वचन से अर्जुन ने तलवार को तो म्यान में किया परन्तु अपमान से जलते हुए बोला हे राजन्! युद्ध भूमि से एक कोस दूर अपने शिविर में सुख से बैठे हुए तुम युद्ध का क्या हाल जान सकते हो, फिर बिना कारण ही क्यों तुमने हमारा अपमान किया? भीम को हम अकेले छोड़ आये है, वह जो चाहें हमें कह सकते हैं,

हमारी निंदा कर सकते हैं अपमान कर सकते हैं परन्तु आप स्वयं युद्ध में किसी योग्य भी न होकर उलटा हमारी निन्दा करते हैं। हम सदा तुम्हारी रक्षा करते हैं। इस महानिन्दित युद्ध का बीज तो तुम्हीं ने बोया, तुम्हीं ने अपनी मूर्खता से जूए में सब कुछ हार दिया, तुम्हारे ही कारण राजसूय यज्ञ में वेद मन्त्रों से पूजित हुए २ द्रौपदी के केश खैंचे गये, तुम्हारी ही जड़ता से हम सब ने तेरह वर्ष बन में महाविपत्ति को सहन किया, और अब स्वयं डेरे में बैठकर यह आशा करते हो कि हम शत्रुओं को पराजय करें। हे राजन्! कृष्ण के कथन से इस बार हम ने तुम्हारे कठोर बचनों को सहन किया, परन्तु फिर कभी इस प्रकार हमारा अपमान न करना।

अर्जुन के इन बचनों से युधिष्ठिर के मन को बड़ा सन्ताप हुआ, वह शय्या से उठकर बैठगये और आंसु गिराते हुए बोले, हे अर्जुन! हमने बहुत बुरा किया हमारी ही मूर्खता से तुम को इतनी विपत्तियां सहन करनी पड़ीं। हम बड़े मूर्ख हैं, कायर हैं, अज्ञानी हैं, अपने बन्धुओं को दुःख देने वाले हैं। इसी से अब हम और जीना नहीं चाहते, तुम शीघ्र ही तलवार से हमारा सिर काटदो।

तब अपने जेठे भाई के मुख से ऐसे नम्र वचन सुन कर अर्जुन का क्रोध शान्त होगया और वह अतिलज्जित होकर युधिष्ठिर के पैरों पर गिर पड़े और आंसुओं की

अविरल-धारा बहाने लगे। यह देखकर युधिष्ठिर का हृदय करुणा से फूट पड़ा, उन्होंने रोते रोते अर्जुन को उठा कर कण्ठ से लगा लिया इस प्रकार बहुत देर तक दोनों भाई रोते रहे। जब दोनों का मन हल्का हुआ तो श्रीकृष्ण ने कहा, हे अर्जुन! बड़े भाई का तिरस्कार करना उसको मार डालने के बराबर है, अतएव तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी हुई, अब तुम शान्त होवो और कर्ण को मारकर धर्मपुत्र को प्रसन्न करो।

तब अर्जुन ने धर्मपुत्र के पैर छूकर कहा, हे राजन्! जो कुछ हमारे मुख से निकला वह सब क्षमा करो। बच्चों के मुख से निकले हुए कठोर बचन को बडे लोग क्षमा कर देते हैं। परन्तु हम तुम्हारे चरणों की सौगन्द खाकर कहते हैं, कि आज हम कर्ण को बिना मारे नहीं लौटेंगे।

तब युधिष्ठिर प्रसन्न होकर बोले, हे अर्जुन! कर्ण की मार से दुःखी होकर हम ने तुम को बहुत अनुचित शब्द कहे, इसलिए जो कुछ तुम ने हम को कहा, वह उचित था। हम तुम्हें क्षमा करते हैं। हे तात्! अब मैं तुमको आज्ञा देता हूं, कि शीघ्र ही जाकर उस अभिमानी कर्ण का बध करो।

पांचवां अध्याय।

कर्ण और अर्जुन का युद्ध।

धर्मपुत्र से आज्ञा पाकर अर्जुन शीघ्र ही फिर कर्ण के

मारने के लिए युद्ध-भूमि में डट गये। उन्हों ने देखा कि हमारे चले जाने के पीछे कर्ण ने सोमकों की सारी सेनाको इस प्रकार काट डाला है, जैसे घसियारा घास को। उधर भीम ने भी अपने अद्भुत पराक्रम से दुर्य्योधन की सेना रूप बनको इस प्रकार दग्ध कर दिया है जैसे दावानल अग्नि बनको। रुधिर की नदी बह रही थी, अनगिनत हाथी घोड़े और मनुष्य उस में डूबे हुए थे, दोनों दलों से बड़ा हाहाकार मचा हुआ था, परन्तु वह दोनों वीर अभी तक उन्मत्तों की नांईं मनुष्यों का लहु गिरा रहे थे। यह देखकर अर्जुन कर्ण की ओर दौड़े और तीक्ष्ण बाणों से उसकी सेना को काटने लगे। तब उन दोनों का फिर घोर युद्ध होने लगा। हे राजन्! बड़े २ दांतों वाले दो मदमत्त हाथी जिस प्रकार हथिनी के निमित्त परस्पर टक्करें मारते हैं उसी प्रकार वह दोनों योद्धा एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। धीरे २ युद्ध की तीक्ष्णता बढ़ने लगी। उनके धनुषों के टंकार बज्र के समान कठोर थे, जिनको सुनकर कान फट जाते थे। तब कर्ण ने तेज धार वाले दस बाण अर्जुन की छाती में मारे, जिनसे उसका कवच फूट गया। उसके अनंतर अर्जुन ने भी दस बाणों से उसके कवच को फोड डाला। तब दोनों के इस अद्भुत युद्ध को देखने के लिए दोनों दल वहां आकर खडे होगये और अपने अपने योद्धा की प्रशंसा करते हुए सिंहनाद करने लगे।

हे राजन्! उस समय शेरों के समान झल्लाए हुए

उन दोनों के मुख देखने से भय लगता था इतने में जोर से खींची जाने के कारण अर्जुन के धनुष की डोरी बडे तडाके के शब्द से टूट गई। अर्जुन को धनुष रहित देखकर कर्ण ने उसके ऊपर इतने बाण बरसाए कि उसका रथ बाणों के अंदर छिप गया। उस समय पांडवों के दलमें हाहाकार मच गया और कौरव लोग अर्जुन को मरा समझ कर आकाश में वस्त्र उछालने लगे। तब अर्जुन के सहायक राजाओं ने मिलकर कर्ण के बाणोंको काटना आरंभ किया परंतु कर्ण के हाथ में इतनी फुर्ति थी, कि वह सब मिल कर भी अर्जुन की कुछ सहायता न कर सके, और कृष्ण अर्जुन दोनों ही घायल हो गए तब अर्जुन को बडा क्रोध हुआ और उन्होंने जोर से धनुष को झुकाकर उस पर नयी डोरी चढ़ाई और आंधी के समान वेग से बाण छोडने लगे जिससे कर्ण के सब बाण कट गये। उस समय अर्जुन के क्रोधका वारापार न था उनके हृदय रूप समुद्र में मानों तूफान आया हुआ था, जिससे उनका सारा शरीर क्षुब्ध हो रहा था। उन्होंने असंख्य बाणों से आकाश और भूमि को भर दिया। उस समय आकाश में पक्षियों के उडने के लिये भी स्थान न था, इससे कर्ण की बहुत दुर्दशा हुई शेष कौरव भी सहस्रों की संख्या में कट कर मरकर और घायल होकर गिरने लगे। तब वह भय से आंखे मीच कर त्राहिमाम् त्राहिमाम् करते हुए भागने लगे। हे राजन्! अपने दलके योद्धाओं को भागते देख कर भी

तेजस्वी कर्ण पर्वत के समान खड़ा हुआ बाणों की वर्षा को सहन करता रहा। जब सर्पों के समान क्रूर बाण अर्जुन की चुटकी से निकलकर कर्णको डसने लगे तो उसने बादल के समान गंभीर गर्जना की और बारंबार क्रोध से हुंकार भरते हुए बड़े वेग से बाण मारने लगा। बहुत देर तक उन दोनों का भयानक युद्ध होता रहा। परंतु जब कर्ण ने देखा कि अर्जुन किसी प्रकार भी नहीं मरता तब उन्होंने विष से बुझा हुआ महा घोर नाग नामक अस्त्र निकाला, जो केवल अर्जुन ही के मारने के लिए चिरकाल से संभाल कर रखा हुआ था। अग्नि की लाट के समान कराल जिह्वा वाले नागास्त्र को उन्होंने अर्जुन का सिर काटने के लिये धनुष के आगे जोड़ा और प्रत्यंचा को जोर से खैंच कर कान तक चढ़ाया। तब उन के सारथि शल्य ने कर्ण को हंसते हुए कहा हे सूतपुत्र! अर्जुन बड़ा बलवान है यह अस्त्र उस के मस्तक को कभी नहीं काट सकेगा। इस लिये कोई इस से अच्छा दूसरा अस्त्र चलाओ।

शल्य की बात सुन कर्ण ने उसकी ओर घूर कर देखा और बोला हे मद्राज! जो बाण कर्ण ने एक बार हाथ में ले लिया फिर उसको छोड़ना उसकी मर्य्यादा में नहीं है, अब तुम एक टक होकर अर्जुन के सिर को उड़ता देखो। यह कह कर उस कराल बाण को, उस अटल मृत्यु रूप शर को, बड़ी, टंकार के साथ अर्जुन पर छोड़ दिया।

तब श्रीकृष्ण ने आग के समान जलते हुए उस अस्त्र

को अर्जुन की ओर उड़ कर आते देख कर समझा, कि इस अस्त्र से यदि अर्जुन की रक्षा न की गई तो इसकी मृत्यु में कोई संशय नहीं । यह सोच कर हे राजन्! श्रीकृष्ण ने अपने घोड़े की टांगों पर जोर से चाबुक मारी जिस से घोड़े घुटनों के बल जल्दी से पृथ्वी पर झुक गये । इससे सहसा रथ आगे की ओर झुक गया और वह नागास्त्र अर्जुन के मस्तक पर न लग कर उस के किरीट पर जा लगा । जिससे अर्जुन का किरीट टुकड़े टुकड़े हो गया । किरीट के टूट जाने पर अर्जुन के नेत्र क्रोध से ऐसे हो गए जैसे जलते हुए अंगारे । उन्होंने पीत वस्त्र से अपने केशों को बांधा और लोहे के दण्ड के समान दो बाण धनुष पर चढ़ाये और कान तक खैंच कर उनको छोड़ दिया। बिजली की चमक के समान वह बाण क्षणमात्र में कर्ण के कवच को फाड़ कर उसकी छाती में घुस गए, उनसे कर्ण की छाती में गहरा घाव लगा, रक्त का स्रोत बह निकला। लहु में नहाया हुआ वह वीर मूर्छा खाकर रथ में गिर पड़ा। उसको अचेत अवस्था में देखकर अर्जुन ने बाण चलाना बंद कर दिया । यह देख कर श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन तुम्हारा शत्रु अभी जीता है, परंतु तुम युद्ध से विमुख हो कर धनुष को छोड़ बैठे हो, यह बड़े आश्चर्य्य की बात है, अर्जुन बोले हे माधव! कर्ण मूर्छित होकर गिर पड़ा है, उस के हाथ में से शस्त्र छूट गया है, धर्म युद्ध के किस नियम से अब मैं इस पर वार कर सकता हूं । श्रीकृष्ण बोले

हे अर्जुन! धर्म के तत्व बहुत गूढ़ हैं, शत्रु जागता सोता बैठा अथवा युद्ध करता किसी दशा में भी मित्र नहीं है उसको मारना ही एक मात्र धर्म है। हे किरीटि! द्रौपदी के अपमान का स्मरण कर और इस को मार कर युद्ध को शान्त कर। तब श्रीकृष्ण के कथन से अर्जुन ने फिर धनुष को उठाया। परंतु इस समय कर्ण की मूर्छा जाती रही थी, चोट खाये हुए सर्प के समान वह बड़े वेग से बाणों की प्रचंड वर्षा करने लगे। तब दोनों ओर से असंख्य बाण छूटे हुए आकाश में टकराने लगे। आकाश बाणों से छा गया थोड़ी ही देर में दशों दिशाएं बाणों से भर गईं। हाथी घोड़े और मनुष्य कट कट कर गिरने लगे, रथ चूर चूर हो गईं, और रण भूमि में रक्त की नदी बहने लगी। हे राजन्! युद्ध करते करते कर्ण का रूप बड़ा विक्राल हो गया। लहु से भीगा हुआ वह काल के समान बारंबार गर्जता था और क्षण क्षण में सैकड़ों पांडवों को काटता मारता और गिराता दिखाई देता था। उधर अर्जुन के सनसनाते हुए बाण कौरवों को अत्यन्त पीडित कर रहे थे, दोनों ओर के वीरों में मृत्यु खेलती दिखाई देती थी। मारो मारो, काटो काटो का शब्द करते लाखों मनुष्य घोर युद्ध में लगे हुए थे, उस समय अपने और बेगाने की पहचान कठिन थी। वह बीर पुकार पुकार कर और पूछ पूछ कर कि कहीं तुम पांडव तो नहीं, अथवा कौरव तो नहीं मनुष्यों, का संहार करते थे। योद्धाओं के

नेत्रों के सामने लहु के बादल आते और चले जाते थे। भूमि लाल थी, आकाश लाल था, दशों दिशाएं लाल थीं और सहस्रों ही मनुष्य लहु की नदी में डूब रहे थे, दौड़ रहे थे और लड़ रहे थे। उस युद्ध में हे राजन्! इतनी लोथें पट गईं कि चलने का रास्ता न था। जो जहां खड़ा था वहीं लडने लगा, वहीं मारा गया उसी रक्त की नदी में बह गया। ऐसा घोर भयानक, और कंपा देने वाला युद्ध इससे पहले कभी किसी ने नहीं देखा। अर्जुन और कर्ण के इस द्वैरथ युद्ध को देखने के लिये आकाश में इतने देवता आए कि उन के विमानों की एक छत बन गई। दोनों ही एक समान योद्धा, वीर, बलवान और पराक्रमी थे। कानों तक खैंच कर भुजाओं के पूरे बल से जब कर्ण अर्जुन के रथ पर बाण छोडता था तो अर्जुन का रथ धक्के से तीन गज पीछे हट जाता था, परन्तु अर्जुन अपने बाण के धक्के से कर्ण के रथ को सात गज तक पीछे हटा देता था। जब बहुत देर तक वह दोनों इस प्रकार युद्ध करते रहे तो श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन! कर्ण वीरों में श्रेष्ठ और पराक्रमी है इस के समान बलवान इस समय तीनों लोकों में नहीं है जो तेरे पर्वताकार रथ को बाण के धक्के से पीछे हटा रहा है। तब अर्जुन बोला हे मधुसूदन! आप क्या कहते हैं, कर्ण से मैं किसी बात में भी न्यून नहीं हूं, हे वासुदेव! यह देखिये मेरे बाण से उस का रथ सात सात गज पीछे हटता है, हे केशव! किस

बातें से तुम उसको मुझ से बढ़कर बतलाते हो ? अर्जुन की बात सुनकर श्रीकृष्ण मुस्करा कर बोले हे अर्जुन ! कर्ण के बाण लगने से तेरा रथ पीछे न हटे इसी विचार से त्रैलोकी का भार मैंने तेरे रथ पर डाल रखा है, परन्तु फिर भी कर्ण रथ को पीछे हटाने में समर्थ है, यह कह कर श्रीकृष्ण ने अपने मुख को खोला जिस में अर्जुन ने तीनों लोकों को देखा। उस समय अर्जुन ने श्रीकृष्ण के चरणों को छुआ और फिर धनुष पकड कर कर्ण पर प्रहार करने लगा तब क्रोध खाकर कर्ण ने ब्रह्मास्त्र को छोडा जो सारे संसार को जला डालने में समर्थ था, अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र को ब्रह्मास्त्र छोड कर ही रोका। तब कर्ण ने आग्नेयास्त्र चलाया जिस से भूमि आकाश सब ओर से आग बर्सने लगी अर्जुन ने उसी समय वारुणास्त्र चलाकर इतना जल बर्साया कि सब आग ठंडी होगई । उस भयानक युद्ध में किसी को हारता न देख श्रीकृष्ण ने कहा हे अर्जुन! इस युद्ध में अब धनुष का काम नहीं रहा, तुम बराबर अस्त्र ही चलाते जाओ तब अर्जुन ने महां घोर द्रोण अस्त्र छोडा जिस से सहस्रों ही बाण एक साथ निकल २ कर कौरवों को सर्पों के समान डसने लगे। हे धृतराष्ट्र! उसी समय दैव योग से कर्ण के रथ का पहिया भूमि में धंस गया। उस समय शल्य ने पूरे बल से रथ को आगे चलाने का यत्न किया परन्तु वह पहिये को न निकाल सके। ऐसी दशा को देख कर कर्ण के नेत्रों में

आंसु आ गये और वह रथ पर से कूद कर दोनों हाथों से पहिया निकालने लगा परंतु बहुत बल लगाने पर भी पहि-या न निकल सका। तब कर्ण हाथ ऊंचे करके अर्जुन को बोला, हे अर्जुन! हे वीरों में श्रेष्ठ! हे सदा धर्म पर चलने वाले! दैवयोग से हमारे रथ का पहिया भूमि में धंस गया ,हइसै कारण थोड़े समय के लिये युद्ध बंद करो, हम इस कीचड़ से निकाल लें। हे पदार्थ! तुम धर्मात्मा हो, धनुर्धारियों में श्रेष्ठ हो, शरण आये हुए, अभय दान मांगते हुए पुरुष पर शूरवीर शस्त्र नहीं चलाते। हे लंबी भुजाओं वाले जब तक मैं इस पहिये को निकालता हूं, कायर के समान तुम ने मुझ पर प्रहार न करना। कर्ण की इस प्रार्थना को सुनकर श्रीकृष्ण बोले हे कर्ण! धन्य हो तुम और धन्य है तुम्हारा धर्म जो इस समय तुम्हें याद आया है। रे मूढ़! नीच पुरुषों पर जब विपत्ति आती है उस समय वह धर्म की दुहाई देने लगते हैं, वही हाल इस समय तेरा है। हे नीच! जब सभा में द्रौपदी का अपमान किया था, उस समय धर्म कहां था? जब बन में पांडवों को मारने का प्रयत्न किया था, उस समय तुम्हारा धर्म कहां था, जब तुम सब ने मिल अकेले और शस्त्रहीन बालक अभिमन्यु के प्राण लिये थे उस समय तेरा धर्म कहां था। इस समय प्राणों के भय से व्यर्थ धर्म धर्म की पुकार करने से क्या लाभ? श्रीकृष्ण के इन वचनों से कर्ण के आंसु बह निकले और वह क्रोध से तपा हुआ

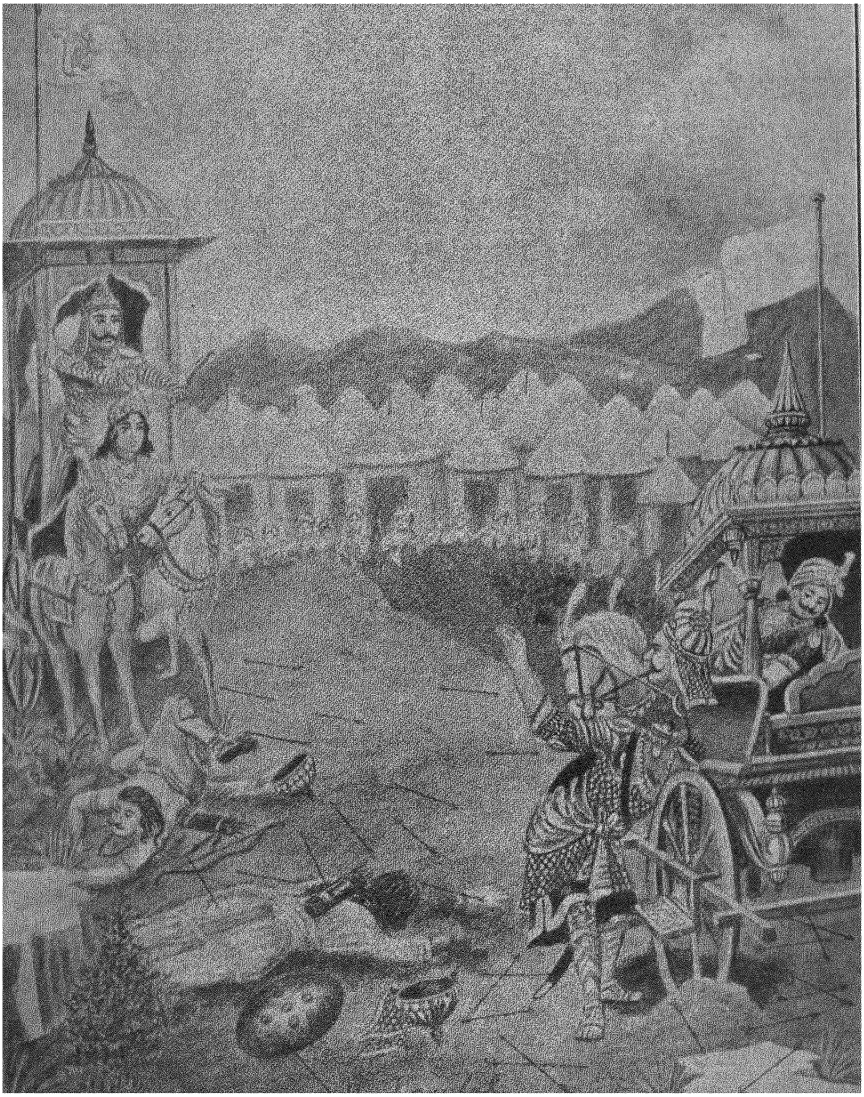

कर्णवध

Calcutta Art Printing Works, Lahore.

फिर रथ पर सवार हो गया और अर्जुन पर तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगा। उन बाणों में से एक अर्जुन की छाती में जाकर धंस गया, जिस से वह संज्ञा शून्य हो कर गिर पड़ा। इतने में कर्ण फिर उतर कर रथ के पहिये को दोनों हाथ से खींचकर निकालने लगा, परंतु वह पहिया तिल मात्र भी न हिला और इस प्रकार जम गया मानों पृथिवी ने उसको पकड़ लिया हो। इतने में अर्जुन की मूर्छा दूर हो गई तब श्रीकृष्ण बोले हे अर्जुन! कर्ण का सिर काटने का यही अवसर है, रथ में चढ़ने से पहले ही इसको यमपुरि में भेज दो। तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण की आज्ञा से बिजली के समान प्रकाशमान एक अर्धचंद्रबाण भत्थे से निकाला और उसको गांडीव पर जोड़ा। हे राजन्! काल के समान वह बाण गांडीव की घोर टंकार के साथ छूटा और उल्का के समान आकाश को प्रकाशित करके सहसा कर्ण के सिर को उड़ा कर ले गया।

हे धृतराष्ट्र! शरतकाल के गगन मंडल से गिरे हुए सूर्य्य के समान कर्ण का सिर दूर जाकर धर्ती पर गिरा। बिजली गिरने से जिस प्रकार पर्वत का शिखर टूट कर लुड़क जाता है और उस के अंदर से गेरी की धारा बह निकलती है उसी प्रकार तेजस्वी कर्ण का पर्वताकार शरीर लोहु लुहान होकर धड़ाम से पृथिवी पर गिर पड़ा, उस गिरे हुए योद्धा की गर्दन से उस समय जलती हुई आग का एक बगूला निकल कर आकाश में उड़ा और युद्ध

भूमि के अंदर घूमने लगा। उस आग बगूले ने युद्ध क्षेत्र की सात परिक्रमाएं की और अंत में श्रीकृष्ण के मुख में प्रवेश कर गया। हे राजन! कर्ण के उस तेजस्वी आत्मा को देखकर सब कौरव और पांडव आश्चर्य्य में रह गये।

हे राजन्! कर्ण को दिव्य लोक में गये देखकर श्रीकृष्ण के आनंद का पारावार न रहा उन्होंने पांचजन्य शंख को जोर २ से बजाना आरंभ किया। पांडवों के दल में सहस्रों बीर योद्धा आकाश में वस्त्र उछाल उछाल कर सिंहनाद करने लगे, दशों दिशाओं में शंख ध्वनि होने लगी। पांडवों के सब योद्धा जय जय करते हुए अर्जुन के पास आ गया। उस समय हे धृतराष्ट्र! तुम्हारा पुत्र दुख के समुद्र में डूब गया, उसका मस्तक सुन्न हो गया मानों अकस्मात वज्रपात हो गया हो। उस के नेत्रों से आंसुओं की धारा बह निकली और वह विलाप करता हुआ कर्ण की लोथ के पास आया। उनके साथ सब कौरव दल भी रोता हुआ आया। अपनी सेना के रथ हाथी घोडे और योद्धाओं समेत कर्ण को भूमि पर गिरा देखकर दुर्योधन महां बिलाप करने लगा। युद्ध भूमि में पडा हुआ बाणों से पूर्ण लहू से लतपत कर्ण उस समय ऐसे प्रतीत होता था मानों सूर्य्य आकाश से गिरा हो। हे राजन! आंसुओं की धारा बहाते हुए दुर्योधन सहित सब कौरव कर्ण को घेर कर बैठ गये। उस समय कर्ण को मरा देख कर भीमसेन ताल ठोकता हुआ जोर जोर से हंसने लगा,

जिसको देखकर दुर्य्योधन मनही मन अति लज्जित हुआ और दीनों की नाईं हा कर्ण हा कर्ण करता हुआ रोने लगा। तब महारथी शल्य दुर्य्योधन को अत्यन्त दुख से विलाप करते देखकर बोला हे सुयोधन ! तुम्हारी सारी सेना मारी गई यह देखो रथ हाथी घोड़े चूर चूर होकर युद्ध क्षेत्र में लुटे हुए पड़ाव की समान पड़े हैं। हे राजन्! कर्ण की मृत्यु पर शोक करना वृथा है, उस ने युद्ध में अर्जुन कृष्ण और सारे पांडवों को ग्रस लिया था, परंतु दैव तेरे प्रतिकूल थी, इसीलिए वह प्रतापी मारा गया। हे राजन् ! जैसा कर्ण और अर्जुन का यह युद्ध हुआ है वैसा कभी नहीं हुआ। अब सन्ताप को छोड़ो, और करने योग्य कर्म का विचार करो। शल्य के इन वचनों से दुर्य्योधन बड़ा दुःखी होकर रोने लगा, तब कृपाचार्य्य ने धीरज देते हुए कहा हे दुर्य्योधन ! भीष्म से लेकर कर्ण तक तेरे सब महारथी मारे गये, जब वह भी पांडवों को नहीं जीत सके तो अब तुम किस पर भरोसा कर सक्ते हो। हे राजन् ! दो तीन सहस्र योद्धा जो अब तक बचे हुए हैं उन से पांडवों को जीतना असम्भव है, इस लिये मैं कहता हूं कि युद्ध बन्द कर दो और पांडवों को उनका भाग दे दो। हे दुर्य्योधन ! मैं युद्ध से डर कर यह सम्मति देता हूं, ऐसा न समझना, क्योंकि हम अमर हैं, परन्तु तुम्हारे हित के लिये ऐसा कहते हैं। युधिष्ठिर बड़े धर्मात्मा हैं वह अब भी तुम्हें तुम्हारा भाग दे देंगे। हे

राजन् ! दोनों भाई मिल कर सुख से राज भोगो । यह सुन कर दुर्य्योधन ने कुछ काल तक विचार किया और फिर बोले हे आचार्य ! तुम्हारी सलाह हमारे हित के लिये है, यह सत्य है परन्तु लाखों वीर योद्धाओं और अपने पुत्रों भाइयों तथा सम्बन्धियों को मरवा कर अब मैं युद्ध को बन्द करना उचित नहीं समझता। अपने प्रिय बन्धुओं के बिना मुझे जीवित रहना अच्छा नहीं लगता और ना ही यह शोभा देता है, इस लिये हे आचार्य्य ! अपने प्राणों को अन्तिम आहुति देकर इस युद्ध के महा यज्ञ को समाप्त करूंगा। इस प्रकार विचार करके उन सब ने तेजस्वी कर्ण को प्रणाम किया और बड़े शोक में मुह लटकाए हुए शिविर को चले गये । उधर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कण्ठ से लगाकर कहा हे महाबाहो ! इन्द्र ने जिस प्रकार वृत्र को मारा था उसी प्रकार तुम ने कर्ण को मारा है, जब तक संसार रहेगा लोग कर्ण-बध की कथा किया करेंगे । हे श्वेतवाहन् ! चलो अब महाराज युधिष्ठिर को यह समाचार सुनावें जो कर्ण के घावों से व्याकुल हो रहे हैं। इसके अनन्तर कृष्ण और अर्जुन दोनों शंख बजाते हुए शिविर में पहुंचे। वहां जाकर उन्हों ने बड़े हर्ष के साथ राजा के पांओं छुए। उन दोनों को गद्गद प्रसन्न देखकर महाराज ने समझ लिया कि कर्ण मारा गया है। वह उठकर खड़े हो गये उन के नेत्रों से आनन्द के आंसु छलकने लगे। तब श्रीकृष्ण बोले

हे राजन् ! आप की जय हो, कर्ण मारा गया है आपकी जीत हुई है । हे राजन् ! जिस कर्ण ने द्रौपदी का अपमान किया था आज उस के रक्त से पृथिवी अपनी प्यास बुझा रही हैं आज आपके शत्रुओं का नाश हुआ, आज द्रौपदी का हृदय ठण्डा हुआ आज कुन्ती के क्लेश दूर हुए। मूर्ख दुर्य्योधन को आज मेरे कथन का मूल्य प्रतीत हुआ। श्रीकृष्ण के बचन सुन कर युधिष्ठिर ने उन को छाती से लगा लिया और बोले हे केशव ! जिन के सारथि आप हों उस ने यदि कर्ण को मार डाला है तो इस में आश्चर्य्य क्या है हे वासुदेव ! जिधर धर्म है उधर आप हो और जिधर आप हैं। उधर विजय है आप के साथ होने से हम कभी हार नहीं सकते। इसके अनन्तर युधिष्ठिर सेना समेत वहां पहुंचे जहां कर्ण का दाह संस्कार किया गया था। अग्नि की ज्वाला को आकाश से छूते देखकर युधिष्ठिर ने बार बार उसकी प्रशंसा की। और फिर श्रीकृष्ण को कण्ठ से लगाकर बोले! हे वीर शिरोमणि आज मैं तुम्हारी कृपा से राजा हुआ आज हमारा चिर शत्रु, हमारा हृदय कंटक दूर हुआ। आज हम सुख से सोएंगे।

इति कर्ण पर्व समाप्त ।

अथ शल्य पर्व।

युद्ध का सतारवां दिन।

संजय बोले हे राजा धृतराष्ट्र! भीष्म द्रोण दुःशासन और कर्ण के मारे जाने पर दुर्य्योधन ने मद्राज शल्य को सेनापति बनाया और उसको सब योद्धाओं के सन्मुख राज तिलक दे कहा हे वीर शिरोमणि! मेरी सेना के बड़े बड़े योद्धा इस युद्ध में मारे गए, परन्तु तुम्हारी सहायता पाकर मैं अब भी पांडवों को हराने की आशा रखता हूं। हे महाबाहो! कर्ण से तुम किसी बात में भी कम नहीं हो बाहु बल अस्त्र शस्त्र और राजनीति में तुम्हारे समान किसी को भी नहीं देखता, अब तुम वह काम करो जो किसी से नहीं हो सका। भीष्म और द्रोण पांडवों को मारना नहीं चाहते थे इस लिये वह स्वयं उनके हाथों मारे गए, कर्ण के तेज और बाहुबल पर मुझे भरोसा था, परन्तु महांमुनि परशुराम के शाप से युद्ध में उनके रथका पहिया पृथिवी में धंस गया और उसी समय अर्जुन ने अन्याय से उसको मार डाला, परन्तु तुम सब प्रकार से योग्य हो इस लिए हे मामा! इन पापी पांडवों का नाश करके इस युद्ध अग्नि को शान्त करो। दुर्योधन के इन शब्दों को सुनकर शल्य ने उसको बहुत कुछ धीरज दिया फिर अश्वत्थामा और कृपाचार्य्य को साथ लेकर सूर्य्य के समान चमकते हुए रथ पर सवार हुए। उस समय सब

कौरव वीरों ने शंख भेरियां और अनेक प्रकार के बाजे बजाए। तब महां पराक्रमी शल्य को सेना समेत युद्ध क्षेत्र में आते देख धर्म पुत्र युधिष्ठिर बोले हे अर्जुन! हे कृष्ण! हे भीम! श्रीकृष्ण की कृपा से और अपने भुजबल से तुम ने भीष्म कर्ण आदि योद्धाओं को यमपुरि में भेज दिया, आज यह शल्य दूसरे कर्ण के समान युद्ध भूमि में गर्ज रहा है, हे वीर जनों! आज इस को मैं अपने हाथ से मारूंगा, तुम सब कल के थके हुए भी हो, इस लिये इस महां दुर्मद शत्रु को मेरे हाथ से मरने दो, यह कह कर महाराज युधिष्ठिर सारी पांडव सेना को पीछे करके आप शंख बजाते हुए आगे आगे चले। हे राजन्! दोनों ओर की सेनाएं आमने सामने आकर सावन भादों के मेघों के समान गर्जने लगीं, वायु मंडल में चमकती हुई तलवारें बिजली के समान तड़पने लगीं, ऊंचे ऊंचे और रंग बिरंगे झंडे लहराते हुए इन्द्र धनुष की शोभा देने लगे तब क्षण मात्र में सहस्रों ही बाण सांय सांय करते हुए बर्सने लगे थोड़ी देर तक तो वह युद्ध सुहावना प्रतीत होता था, परन्तु शनैः शनैः उसका रूप बड़ा भयंकर हो गया। पांडव दल के साहस बढ़े हुए थे, और कौरव जीवन की आशा छोड़ कर मरने मारने पर तुले हुए थे। तब क्रोध से होंठ चबाते हुए युधिष्ठिर ने सात बाणों से शल्य के चारों घोड़ों को मार डाला, उस के छत्र को गिरा दिया और चंवर को तोड़ डाला। तब घोड़ों को मरा

हुआ देख कर शल्य अपने रथ से कूद कर तत्काल ही दूसरे रथ पर चढ़ गए जैसे सिंह पर्वत पर। उस समय शल्य को महां क्रोध चढ़ा, उस ने धर्मपुत्र की छाती में एक तीक्ष्ण बाण मारा जो उनके कवच को फोड़ कर अन्दर घुस गया जैसे काला नाग अपनी बांबी में; उस बाण के लगने से महाराज युधिष्ठिर मूर्छित होगए। हे राजन्! अश्वनीकुमार के अवतार नकुल ने उसी समय उनको एक बूटी सुंघाई जिस से उनकी मूर्छा दूर होगई। उस बूटी से चैतन्य होकर युधिष्ठिर ने क्रोध से शल्य पर एक बाण छोड़ा, परन्तु उस ने इस चोट की कुछ भी परवा न की और फुर्ति से पैने पैने बाण छोड़ कर युधिष्ठिर के सारथि और घोड़ों को घायल कर दिया और एक बाण से धर्मपुत्र के धनुष के टुकडे टुकडे कर दिये। धर्मपुत्र ने झट ही दूसरा धनुष हाथ में लिया और अनन्त बाणों से उस को रथ समेत ढक दिया। हे राजन्! इस प्रकार वह दोनों नरपति दो घंटे तक घोर युद्ध करते रहे, परन्तु कोई किसी को न हरा सका। यह देखकर गुरुपुत्र अश्वत्थामा शल्य की सहायता करता हुआ युधिष्ठिर पर बाणों की घोर वृष्टि करने लगा, तब युधिष्ठिर की रक्षाके लिए भीम ने भी अनन्त बाण गुरुपुत्र पर छोडे और फिर बादलके समानगर्जता हुआ गदा हाथ में पकड कर कौरव दल के अन्दर घुस गया और शल्य की सेना को इस प्रकार फाडने लगा जैसे सिंह भेडों के बाडे में घुस कर उनको फाडता है। भीम के हाथों अपनी

सेना को इस प्रकार मरते देखकर अश्वत्थामा क्रोध से जलने लगा, और तीक्ष्ण तथा वेग वाले बाणों से पांडवी सेना को ऐसे जलाने लगा जैसे अग्नि घास के ढेर को। हे राजन्! अश्वत्थामा की मार को न सहती हुई पांडव सेना भागने लगी। अपनी सेना को भागते देखकर भीम ने गम्भीर गर्जना की और उन सब को ललकार कर फिर वापस लौटाया और स्वयं तपे हुए सूर्य्य के समान कौरव दल पर तीक्ष्ण बाण चलाने लगा। उसके बाणों से हे राजन्! आप की सेना इस प्रकार ढकी गई जैसे बादलों से पर्वत, सहस्रों मनुष्य उस बीर ने देखते देखते मार डाले, तब कौरव सेना घबरा कर भागने लगी, परन्तु कृपाचार्य्य और दुर्य्योधन ने उनको अनेक प्रकार से धीरज देकर फिर मोर्चे पर खड़ा किया। तब अश्वत्थामा कृपाचार्य्य और शल्य तीनों ने मिल कर धर्मपुत्र युधिष्ठिर को घेर लिया और एक ही बार उन के रथ पर टूट पड़े, शल्य ने धर्मपुत्र की छाती में बाण मार कर उन को घायल कर दिया, अश्वत्थामा ने घोड़ों को पीस डाला और कृपाचार्य्य ने सारथि को मार डाला, तब पांडवी सेना हाहाकार करने लगी। तब महाबलि भीम कौरवी सेना को छोड़ कर तुरन्त ही इन तीनों पर आकर टूट पड़े, नकुल और सहदेव भी भीम के साथ मिल कर इन तीनों को बाणों से पीड़ित करने लगे। उस समय तीन ही उधर और तीन ही उधर आमने सामने होकर

घोर युद्ध करने लगे। दोनों ओर से प्रलय काल के समान अस्त्र शस्त्र छूटने लगे। हे राजन्! उस समय ऐसा घोर युद्ध मचा, कि भीष्म और कर्ण के युद्ध भी भूल गये। एक ही समय हाथी हाथियों से टकराने लगे रथों से रथ टकरा कर चूर २ होने लगे; बाण भाले बर्छियां, मुद्गर गुर्ज तोमर आदि सहस्रों शस्त्रों की झंकार से सारी रण भूमि गूंज उठी। सहस्रों मनुष्य तथा हाथी घोड़े रक्त में नहाए हुए पृथिवी पर देखते देखते लेट गये युद्ध क्षेत्र में एक बार फिर रक्त की नदी बहने लगी जिस के प्रवाह में कमर कमर तक डूबे हुए योद्धा प्राणों की आशा छोड़ कर युद्ध करने लगे। इस प्रकार घोर युद्ध करते करते सूर्य्य अस्त होने से कुछ ही देर पहले धर्मपुत्र इन तीनों के घेरे से निकले। घेरे से निकल सूर्य्य के समान तेजस्वी धर्मपुत्र ने एक लम्बी बर्छी ताक कर शल्य पर छोड़ी, जो बिजली के समान कड़क कर शल्य की छाती में धंस गई। उस के लगते ही मद्रराज शल्य मूर्छित होकर रथ से नीचे गिर गए हे धृतराष्ट्र! धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने फुर्ति से एक अर्ध चंद्राकार बाण उस पर छोड़ा, जिस से शल्य का कुंडलों वाला सिर कट कर दूर जा गिरा। उस समय सूर्य्य अस्त हो रहा था, दुर्योधन की सारी सेना सेनापति के मरने पर भाग चली तब दुर्योधन ने उन को हाथ जोड़ २ कर फिर इकट्ठा किया और एक बार फिर घमसान का रण ठन गया। कौरव दल को लौट कर आते देख अर्जुन ने

क्रोध से गांडीव धनुष को सम्हाला और बड़े वेग से उन को मारने लगा। गांडीव की मार से कौरव बीर इस प्रकार गिरने लगे जैसे वेग युक्त आंधी से पेड। हे राजन्! उस वीर ने भीम और नकुल के साथ मिल कर थोडे ही समय में सहस्रों मनुष्यों को मार गिराया। तब कौरव दल हाहाकार करता हुआ भाग निकला। दुर्योधन का साहस टूट गया फिर उस ने उनको ठहराने का और यत्न न किया। और बचे खुचे सैनिकों के साथ बडे शोक में डूबा हुआ शिविर को लौट गया।

इति शल्य पर्व समाप्त।

अथ गदा पर्व ।

पहला अध्याय ।

युद्ध का अठारहवां दिन ।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! शल्य के मरने पर दुर्योधन बहुत उदास हुआ। उस की सब आशाएं टूट गईं, कोई उसको सलाह देने वाला न रहा और उसने अपने आप को यम की दाढ़ में फंसा हुआ देखा। आधी रात तक वह अपने डेरे में पडा २ पांडवों के मारने के उपाय सोचता रहा, परंतु जब कोई उपाय न सूझा तो वह वहां से उठ कर सीधा अपनी माता गांधारी के पास आया, और बालकों की तरह फूट फूट कर रोता हुआ बोला, हे माता! दैव मेरे विरुद्ध है ऐसा प्रतीत होता है, जिन पराक्रमी योद्धाओं से इन्द्र आदिक देवता भी डरते थे, वह सब एक एक करके पांडवों के हाथों मारे गए। इस समय मेरी दशा उस अंधे के समान है जो बन में अकेला खडा रास्ता भूल गया हो। हे माता! युद्ध होने से पूर्व कृष्ण ने मुझे कहा था, कि यह युद्ध अठारह दिन के अंदर समाप्त हो जायगा और मैं अपने सहायकों सहित मारा जाऊंगा। दश दिन तक भीष्म पितामह चार दिन तक द्रोण और दो दिन तक वीर कर्ण ने मेरी रक्षा की और वह सब मारे गये। मामा शल्य एक ही दिन में स्वर्ग पधार गये। इस प्रकार आज १७ दिन व्यतीत हो गए।

परन्तु कल अठारहवां दिन है और कृष्ण के कथनानुसार कल अंत का दिन है। हे जननी ! मेरे सिवा और कोई महारथी अब बाकी जीवित नहीं है, सो यदि कल के दिन मैं न मारा जाऊं तो फिर पांडवों के हाथ से मेरी मृत्यु नहीं हो सकती यह निश्चय है । हे माता ! बहुत सोचने पर भी मुझे कोई उपाय नहीं सूझता, इस लिये तेरे पास आया हूं ।

दुर्योधन की इन दुःख भरी बातों से गांधारी को बहुत शोक हुआ, परंतु वह उसको धीरज देती हुई बोली, हे बेटा ! भावी अटल है, यह विचार कर तू अपने मन को स्थिर रख । पहले बहुत रोकने पर भी तू ने मेरा कथन न माना युधिष्ठिर और कृष्ण के वचन का तू ने अपमान कर दिया परन्तु अब भी मैं तुम्हें यही सलाह देती हूं, कि तू इसी समय अकेला शस्त्रों को उतार कर युधिष्ठिर के पास जा और उसी से कोई उपाय पूछ। वह धर्मात्मा है मुझे पक्का विश्वास है, कि वह तुम्हें कोई उपाय अवश्य बतलायेगा ।

हे राजन् ! माता के वचन पर विश्वास करके तेरा पुत्र उसी समय सब शस्त्र उतार कर अकेला ही निर्भय होकर युधिष्ठिर के शिविर में गया । रास्ते में कोई पहरे वाला अथवा अन्य पुरुष उस को न मिला और नां ही उस ने किसी को देखा युधिष्ठिर दुर्योधन को अकस्मात् इस समय अपने सामने देख बहुत विस्मित हुआ। उस ने दुर्योधन कों सन्मान पूर्वक आसन पर बैठा कर पूछा, हे

भाई! अर्ध रात्रि के समय अकेले यहां आ कर तुम ने राजनीति से विरुद्ध चेष्टा की, कहो किस निमित्त तुम्हारा आना हुआ, राजन् मैं इस समय भी मेल करने के लिए तैय्यार हूं।

दुर्य्योधन बोला हे राजन्! आप धर्मात्मा हैं, सत्य वक्ता हैं और सदा ही हमारा प्रिय चाहते रहे हैं, परन्तु अपने सब भाई बन्धुओं और मित्रों का बध करवा करके अब मैं मेल की इच्छा नहीं रखता। परंतु आप से केवल यह सलाह चाहता हूं कि किस उपाय करके मैं कल युद्ध में न मारा जाऊं?

दुर्य्योधन के इस प्रश्न से चकित होकर धर्मराज बोले हे भाई! धर्मयुद्ध में शत्रु भी यदि शरण आकर कुछ पूछे तो उसे मित्रों के समान सलाह देनी चाहिये, यही शास्त्र कहते हैं, सो मैं तुम को एक गुह्य भेद बतलाता हूं, यदि तुम मेरे कथन के अनुसार करोगे, तो कल क्या, संसार में कभी कोई तुम्हें मार न सकेगा। हे राजन्! अपनी माता गांधारी के सामने सब वस्त्र उतार कर एक बार नंगे खड़े हो जाओ, और वह तुम को सिर से पांओं तक आंखों से पट्टी खोल कर देख ले, तो फिर तुम्हारा शरीर वज्र का हो जायगा, इस में कुछ भी संदेह न करना।

धर्मपुत्र की बात सुन कर दुर्य्योधन ततकाल वहां से उठा और सीधा अपने शिविर की ओर रवाना हुआ। परंतु अभी वह थोड़ी ही दूर गया था, कि अकस्मात् श्रीकृष्ण

उनके सामने आए और नमस्कार करके बोले, हे दुर्योधन! इस अन्धेरी रात में चुपके चुपके युधिष्ठिर के पास आकर जो सलाह तुम ने ली है, उसे सत्य न मानना, राजन्! माता के सामने नंगा होना और फिर उसे देखने के लिये कहना, ऐसी निर्लज्जता का काम एक तुच्छ मनुष्य से भी नहीं हो सकता युधिष्ठिर तुम्हारा शत्रु है, उस ने ऐसी निन्दनीय सलाह देकर द्रौपदी के अपमान का बदला गांधारी से लिया है। हे राजन्! यदि मेरी बात पर तुम को विश्वास न हो और युधिष्ठिर को तुम धर्मपुत्र ही मानते हो तो जो चाहे करो परन्तु माता का मान रखना धर्म समझ कर अपनी कमर को फूलों से ही ढक लेना यह हमारा उपदेश है।

श्रीकृष्ण की बात को सुनकर दुर्योधन मन में तर्क वितर्क करता शिविर की ओर चला। युधिष्ठिर की सलाह से यद्यपि उस को बड़ी घृणा हुई परन्तु अपनी रक्षा के लिये उसे ऐसा करना ही पड़ता था। तब श्रीकृष्ण के कथनाऽनुसार दूसरे दिन प्रातः काल ही फूलों का लंगोट पहर कर वह गांधारी के सामने गया।

गांधारी ने विवाह के समय की बांधी हुई पट्टी अपने नेत्रों से खोली, और उसने बिजली के समान चमकते हुए दोनों नेत्रों को पुत्र की देह पर गाड़ दिया। अपने आत्मा की पूरी शक्ति से उस ने दुर्योधन को सिर से पैर तक देखा परन्तु कमर से जंघा तक फूलों से ढंपे हुए देख

कर उसने कहा "पुत्र ! युधिष्ठिर के कथनाऽनुसार तुमने नहीं किया, ऐसा प्रतीत होता है। क्या कहीं रास्ते में श्रीकृष्ण तो नहीं मिला था ? तब दुर्य्योधन के मुख से जब सारी बात उस ने सुनी तो एक लम्बी सांस लेकर बोली, बेटा ! जहां जहां पर मेरी दृष्टि पड़ी निस्सन्देह तू बज्र का हो गया, परन्तु अब जंघा को बचाकर लड़ना। इसके अनन्तर दुर्य्योधन अपनी बची खुची सेना लेकर रण भूमि में निकला। इधर पांडव भी कौरवों का समूल नाश करने के लिए अनेक प्रकार के बाजे बजाते हुए युद्ध क्षेत्र में निकले। हे राजन् ! पांडवों की बहुत बड़ी सेना को देखकर गांधार राज का पुत्र शकुनि बोला हे सुयोधन ! तुम सामने होकर युद्ध करो और मैं पीछे से पांडवों का संहार करूंगा। उस समय शकुनि के पास दस सहस्त्र भालों वाले मनुष्यों की घुड़ सवार सेना थी। वह पांडवों पर पीछे से बाण बर्साने लगा। महाराज युधिष्ठिर ने यह देखा तो द्रौपदी के पुत्रों को उस के सामने भेजा। वहां दोनों ओर से घोर संग्राम होने लगा। पांडवों के सैनिक शकुनि के घोड़ों और घुड सवारों को काट काट कर भूमि पर गिराने लगे युद्ध स्थल घोड़ों और मनुष्यों की मृत देहों से भर गया और थोडे ही समय में हार कर शकुनि छे सहस्त्र घुड़ सवारों को लेकर वहां से भागा। उधर धृष्टद्युम्न ने दुर्य्योधन के चारों घोड़ों को सारथि सहित मार डाला।

यह देख कर दुर्य्योधन भाग कर शकुनि की सेना में घुस गया! तब हे राजन्! दुर्य्योधन के सब भाई भीम को मारने के लिए उस पर टूट पड़े, परन्तु मतवाले हाथी की नाईं भीम ने उन सब को उठा उठा कर इस प्रकार मार डाला जैसे एरावत गज बन में वृक्षों को। उसने एक एक को पकड़ कर उठाया आकाश में घुमाया और भूमि पर पटक दिया और फिर मेघ के समान बारम्बार गर्जना करने लगा। तब दुर्य्योधन को शकुनि की सेना में छिपे हुए देखकर अर्जुन गर्जते हुए सिंह की नाईं उधर ही को झपटा और बाणों की मार से उसकी सब की सब सेना का नाश कर डाला। इसके अनन्तर वह त्रिगर्तों पर टूट पड़ा जो रथों पर बैठ कर अर्जुन पर बाण बरसा रहे थे अर्जुन ने क्रोध से गांडीव को चढ़ाया, और उनका भयंकर नाश करने लगा तब दोनों ओर से भयानक संहार होने लगा मानों, यमराज युद्ध में मृत्यु की खेल खेल रहे हैं, थोड़े ही समय में हाथी घोडे रथ और मनुष्यों से पृथिवी भर गई। उस समय शकुनि युद्ध के मद से मतवाला हुआ हुआ सहदेव की ओर दौडा, उसका पुत्र उलूक भी उसकी सहायता के लिये पांडवों पर टूट पडा परन्तु सहदेव ने एक ही भाले से उलूक का सिर काट दिया। अपने पुत्र को मरा हुआ देख कर शकुनि के नेत्रों से आंसु निकल आये और महात्मा विदुर के वाक्य को स्मरण करके उस ने एक

ठंडी सांस भरी। उलूक को मार कर सहदेव गर्जता हुआ शकुनि को बोला रे ढीठ! जूए में पांसे फैंक २ कर तुम प्रसन्न होते थे, आज उस पाप कर्म का फल देख, मूढ़ ! सभा में द्रौपदी का अपमान करके जिन २ ने हमारी हंसी की थी वह सब मार दिये गये, अब केवल तुम और कुलांगार दुर्य्योधन रह गये हैं यह कह कर उस तेजस्वी कुमार ने तांन कर ऐसी बर्छी मारी कि शकुनि का सिर कट कर भूमि पर गिर पडा । उस समय हे धृतराष्ट्र ! आप की सारी सेना चारों ओर भाग निकली। तब दुर्य्योधन ने बड़ी कठिनता से फिर उन भागे हुए सैनिकों को युद्ध में लौटाया। उनको एक स्थान पर इकट्ठे होकर लड़ते देख अर्जुन भीम नकुल सहदेव धृष्टद्युम्न सात्यकी तथा अन्य महारथियों ने अकस्मात् उन पर घेरा डाल दिया और चारों ओर से बाणों की वृष्टि करके उन सब को इस प्रकार मार डाला जैसे पिंजरे में फंसे हुए चूहों को, हे राजन्! आप की सारी सेना मारी गई, और अकेला दुर्योधन बहुत बुरी तरह घायल हुआ बच गया। वह दुर्य्योधन जो १८ दिन पहले ग्यारह अक्षौहिणी सेना का स्वामी था आज अपने आप को युद्ध क्षेत्र में अकेला देख कर घबरा गया, उसका रंग उड गया, मुख पीला हो गया, आंखे पथरा गईं, सिर चकरा गया, और उस के नेत्रों में अंधकार के बादल छा गये। उस समय धूल मट्टी में अपने आप को छिपाता हुआ वह पैदल ही वहां से भाग निकला। हे राजन् युद्ध क्षेत्र

से कोस भर दूर दुर्य्योधन को गदा कंधे पर रखे रुधिर से भरे हुए अकेले रोते हुए मैंने देखा। वृक्ष के नीचे खडे हो कर उस ने महात्मा विदुर के कहे हुए वचनों को स्मरण किया। शोक और दुःख में डूबे हुए उस को मैंने जाकर नमस्कार किया। मुझे देखकर उस ने लम्बी सांस ली, और बोला, हे सञ्जय! मेरे सब साथी इस युद्ध में मारे गये। अब मैं अकेला यहां खडा अपने भाग्य को रो रहा हूं। तुम जाकर मेरे नेत्र-हीन पिता से कहना कि आपका पुत्र दुर्य्योधन युद्ध क्षेत्र से भागकर पानी की इस बडी झील में छिपा हुआ है। हे संञ्जय! मेरे समान अभागा इस संसार में और कोई न होगा। अब तुम जाओ, और कौरवों के क्षय का सारा वृत्तान्त मेरे पिता से कह सुनाओ। हे राजन्! इतना कहकर बडे गहरे घावों से कराहता हुआ आपका पुत्र उस जल के बडे ह्रद में उतर कर छिप गया। थोडी ही देर बाद कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा अर्जुन के बाणों से घायल हुए २ वहां पहुंचे। उन्होंने तालाब के किनारे पर सञ्जय को खडे देखा तो घोडे दौडाते हुए वहां पहुंचे, और नमस्कार करके बोले, हे संञ्जय! हमारे बडे भाग्य हैं, जो हम ने तुम को जीता देख पाया है, कहिये राजा दुर्योधन जीते हैं या मर गए? तब सञ्जय ने उनको दुर्य्योधन की सारी बात कह सुनाई। अपने राजा की यह गति सुनकर वह तीनों बहुत रोये, और फिर सञ्जय सहित वहां से शिविर

में लौटे । उधर महाराज धृतराष्ट्र के वेश्या-पुत्र युयुत्सु ने सोचा, कि कौरवों का सर्वस्व नाश होगया है। वीर सब मारे गये, दास दासियां सब भाग गईं, इस लिए कौरवों की स्त्रियों को हस्तिनापुर पहुंचा देना उचित है । यह विचार कर युयुत्सु युधिष्ठिर के पास गये, और उनसे स्त्रियों को लेजाने की आज्ञा लेकर सब राज-महिलाओं को हस्तिनापुर पहुंचा दिया। युयुत्सु को देख विदुर प्रसन्न होकर बोले, हे पुत्र! कौरवों की स्त्रियों को सम्मान-पूर्वक हास्तिनापुर लाकर तुमने बहुत अच्छा किया है, तुम्हारे कुल का यही धर्म है । इस भयंङ्कर जन-संहारी युद्ध में से तुम्हें कुशल-पूर्वक लौट कर आए देख हम अपने आपको बडे भाग्यवान् समझते हैं। अब इस अन्धे राजा के तुम ही एकमात्र सहारे हो ।

दूसरा अध्याय ।

दुर्य्योधन-बध ।

सञ्जय बोले हे धृतराष्ट्र! जब मैं, अश्वत्थामा कृपाचार्य्य कृतवर्मा चारों शिविर में पहुंचे, हमारा हृदय कांप उठा। कोसों में फैला हुआ शिविर उजाड पडा था, कहीं कहीं कुत्ते भौंक रहे थे, और स्यार रो रहे थे । उस जन-शून्य स्थान पर उदासीनता फैली हुई थी। यह देख कर हम चारों फिर उसी स्थान पर पहुंचे, जहां दुर्य्योधन छिपा हुआ था। जल के किनारे पर खड़े होकर अश्वत्थामा पुकारने लगे, राजन्! आप बाहर निकल आएं, और हमारे

साथ मिलकर शत्रुओं का नाश करें, अथवा कर्ण, भीष्म और द्रोणाचार्य आदि वीर जहां गये हैं, वहां जाकर स्वर्ग का सुख लेवें। पांडवों की सेना बहुत थोड़ी रह गई है, यदि हम चारों मिलकर उनसे लड़ेंगे तो अवश्य ही उनको मार डालेंगे।

तब दुर्योधन ने उत्तर दिया, हे शूरवीरो! तुम को जीते देखकर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूं। हम युद्ध से पीछे नहीं हटते, परन्तु इस समय मेरा सारा शरीर घावों से पीड़ित है और हम थके हुए भी बहुत हैं, इसलिए कल तुम्हें साथ लेकर हम अवश्य लड़ेंगे। तब मैं और वह तीनों वहां से चले गये, और दुर्योधन फिर उसी तालाब में छिप गया।

हे धृतराष्ट्र! जब अश्वत्थामा इस प्रकार दुर्योधन से बातें कर रहे थे, उसी समय कुछ व्याध मछलियां पकड़कर उधर आए, उन्होंने उसी समय महाराज युधिष्ठिर को दुर्योधन का सारा पता दिया। युधिष्ठिर तो पहले ही से दुर्योधन को पाने के लिए उतावले होरहे थे। बहुत से जासूस उन्होंने उसका पता लेने के लिए छोड़े थे, व्याधों के मुख से यह समाचार पाकर वह अति प्रसन्न हुए और उनको बहुत-सा पुरस्कार दिया। इस के पश्चात् कृष्ण, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, सात्यकी तथा अन्य वीरों को साथ लेकर युधिष्ठिर सिंहनाद करते, बाजों के साथ दुर्योधन की ओर चले। तालाब के किनारे पर खड़े हो

युधिष्ठिर दुर्योधन को ज़ोर २ से पुकार कर कहने लगे, हे कुरु-कुल-कलंक! अपने सारे सम्बन्धियों और मित्रों को मरवाकर अब क्या सोचकर तुम यहां छिप रहे हो, अरे ढीठ! लोग तुमको बडा बीर बतलाते हैं, क्या प्राणों के डर से यहां छिपना तुम्हें शोभा देता है? तुम झूठे, डरपोक, धूर्त और निर्लज्ज हो। आओ, बाहर आकर बीरता से मरो, अथवा मारकर राज्य-सुख को प्राप्त करो।

युधिष्ठिर की इन जली कटी बातों को सुनकर दुर्योधन तालाब में खडा होकर बोला, हे राजन्! जिन के लिए हम राज्य पाने की इच्छा रखते थे, वह सब मारे गए, अब हम ऐसे राज्य को लेकर क्या करेंगे, जिनको भोगने वाला कोई नहीं। भीष्म कर्ण द्रोणाचार्य आदिक बन्धुओं से रहित होकर हम राज्य पाना नहीं चाहते, अब तुम ही राज्य भोगो, हम ने तुमको दे दिया हम तो अब मृगछाला पहन कर बन की राह लेंगे। यह सुनकर युधिष्ठिर बोले हे बकवादी! राज्य देने वाले तुम कौन हो? अब तो हम ने लोहे से राज्य लिया है, अब या तो तुम ही इस संसार में रहो या हम ही रहेंगे। जल्दी बाहर निकलो नहीं तो हम तुमको खेंचकर बाहर ले आएंगे। यह सुनकर दुर्योधन तालाब के बाहर निकल आया और स्वभाविक अभिमान से बोला हे युधिष्ठिर! हम मरने से नहीं डरते, थकावट होने के कारण हम

विश्राम लेने के लिए यहां बैठ गये थे, परन्तु यदि तुम अभी युद्ध के लिये हमें ललकारते हो तो हम भी तैय्यार हैं। परन्तु हे धर्म के जानने वाले! तुम्हारे पास रथ हाथी घोड़े सेना और सब प्रकार के शस्त्र हैं। हम अकेले हैं और शस्त्र हीन हैं, फिर किस प्रकार हम तुम से लड़ सकते हैं। हां धर्म के अनुसार यदि तुम में से अकेला अकेला हमारे साथ युद्ध करेगा तो हम सब को मार डालने में समर्थ हैं।

यह सुन कर युधिष्ठिर बोले हे दूर्य्योधन! आज तुम्हारे मुख से धर्म का नाम सुनकर मैं चकित हूं, परन्तु यह धर्म तुम को उस दिन याद न आया जिस दिन सारे महारथियों ने मिल कर अकेले बालक अभिमन्यु का बध किया था। आज विपत्ति के समय धर्म की दुहाई देते तुम्हें लज्जा नहीं आती, परन्तु फिर भी हम तुम्हें कहते हैं कि कवच पहन कर हम में से किसी एक के साथ जिस शस्त्र से तुम लड़ना चाहो लड़ो, हम में से यदि एक को भी तुम ने मार लिया तो यह राज्य तुम्हारा होगा, हमारी बात सच्ची जानो, इस में तनिक भी झूठ नहीं।

तब दुर्य्योधन ने प्रसन्न होकर कवच पहना और केशों को बांध कर गदा हाथ में लेकर बोला, हे युधिष्ठिर! अब हम युद्ध के लिये तैय्यार हैं, तुम में से जिस की मरने की इच्छा हो वह हमारे सामने निकले।

हे धृतराष्ट्र! युधिष्ठिर की गर्व से भरी हुई बातों

को सुनकर श्रीकृष्ण को बड़ा क्रोध आया वह बोले हे युधिष्ठिर ! क्या सोच कर तुम ने यह वचन दे दिया कि हम में से एक को मारने पर सारा राज्य दुर्य्योधन ले जावे, तुम्हारी इसी मूढ़ता ने हमें यह दिन दिखाए, यदि गदा युद्ध में दुर्य्योधन तुम को अथवा अर्जुन नकुल सहदेव में से एक को मार ले तो फिर क्या बने, गदा युद्ध में इस के बराबर भीम भी नहीं है फिर क्या समझ कर तुम ने हम सब को संशय के समुद्र में डुबो दिया ।

श्रीकृष्ण को क्रोध में देखकर भीम बोले हे केशव ! तुम डरो नहीं आज तुम्हारे सामने ही इस दुष्ट को मार कर वैर का अंत कर देंगे ।

तब श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर बोले, हे भीम ! इस दुष्ट को मारकर आज युद्ध की अग्नि को शान्त करो, परन्तु सावधान रहना, गदा युद्ध में यह बड़ा चतुर और सिद्ध हस्त है। हे धृतराष्ट्र ! इसी समय श्रीकृष्ण के भाई बलराम जो तीर्थों से लौट कर वहां आन पहुंचे। भीम और दुर्य्योधन दोनों ही उस के शिष्य थे। दुर्य्योधन ने उनको देखा तो उसको धीरज आ गया । उन सब ने बलराम को नमस्कार किया। तब बलराम जी बोले हे शूरवीरो ! हम तीर्थ यात्रा करने गये हुए थे। हमारी इच्छा थी, कि हम इस युद्ध में सम्मिलित न हों, परन्तु बयालीस दिन के पश्चात् आज अकस्मात हम यहां पहुंच गये हैं, इस लिये अपने दोनों शिष्यों का युद्ध देखने की हमारी

इच्छा हुई है परन्तु युद्ध के लिए यह स्थान ठीक नहीं है, इस लिए कुरुक्षेत्र ही में चल कर युद्ध करो, हम मध्यस्थ बनेंगे, और दोनों ओर से किसी प्रकार का अधर्म न होने पावे, यह देखते रहेंगे। तब वह सब वहां से फिर कुरुक्षेत्र में आए, बलराम मध्यस्थ बने, और गोल चक्र बांध कर सब लोग अखाड़े के आस पास बैठ गये। तब भीम और दुर्य्योधन दोनों वीर कवच पहन हाथों में गदा लिए एक दूसरे की ओर घूरते हुए अखाड़े में निकले।

तीसरा अध्याय।

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! बलराम को नमस्कार कर के भीम और दुर्य्योधन एक दूसरे के साथ इस प्रकार भिड़ गए जैसे क्रुद्ध हुए हुए सांड। गदा पर गदा पड़ने लगी उस समय उनका गदा युद्ध देखने के योग्य था, नाना प्रकार के दाव घात करके वह एक दूसरे पर चोट करते थे, गदा के साथ गदा टकराने लगी, जिनकी रगड़ से इतनी चिंगाड़ियां निकलने लगीं, कि उन से अखाड़ा भर गया। कभी दुर्य्योधन पीछे हट जाता और कभी भींम अपने बचाव के लिए पीछे हटता। उनकी गदा की चोट से वज्र के समान कठोर शब्द निलता, जिस से देखने वालों के हृदय कांप उठते। धीरे धीरे युद्ध ने बड़ा भयंकर रूप धारण कर लिया, और मतवाले हुए हुए दोनों योद्धा मरने मारने पर तुल गये, दोनों के शरीर रुधिर से लाल

हो गए उस समय वह दोनों वीर काल दण्ड के समान गदाएं हाथ में लिए यम के समान देख पड़ते थे, तब अकस्मात दुर्य्योधन ने दाईं ओर हो कर भीम की कुक्षि पर जोर से गदा मारी, इस से भीम को बड़ा क्रोध हुआ, उन्हों ने इस का बदला लेने के लिए दुर्य्योधन के सिर पर गदा चलाई, परन्तु वह उछल कर हट गया, यह देख कर सब लोग चकित रह गए। इस के अनन्तर दुर्य्योधन कभी आगे बढ़ता कभी पीछे हटता और कभी गोल चक्र बांधकर भीम पर प्रहार करने लगता। हे राजन्! तुम्हारे पुत्र की युद्ध-कुशलता देखकर पाण्डव लोग डर गये। दुर्योधन की मार से भीम के बहुत चोटें आई, उनके शरीर में बहुत घाव हुए, और उनका कवच स्थान स्थान से टूट गया। हे राजन्! भीम की यह दशा देख कर पाण्डव बड़े संशय में पड़े और अपने इष्ट-देवता का स्मरण करने लगे। इस प्रकार देर तक युद्ध होता रहा। इसके अनन्तर भीम को मार डालने की इच्छा से दुर्य्योधन ने उसकी छाती पर गदा का एक प्रचण्ड आघात् किया। इससे भीम का मस्तक चकरा गया और वह मूर्छित होगया। परन्तु तुरन्त ही सम्भल कर उसने इस ज़ोर से दुर्य्योधन के गदा मारी, कि वह घुटनों के बल गिर पड़ा। यह देख पांडवों ने सिंहनाद किया। इससे दुर्य्योधन को बड़ा क्रोध हुआ और वह प्राणों का मोह छोड़कर भीम पर टूट पड़ा और इस फ़ुर्ति से गदा

चलाने लगा कि भीम उसके वेग को सम्भाल न सका। भीम के वज्र तुल्य शरीर पर बारम्बार गदा का प्रहार होने लगा। यह देखकर हे राजन्! श्रीकृष्ण को बड़ी चिन्ता हुई, उन्होंने अर्जुन को कहा, हे महाबाहो! युधिष्ठिर ने ऐसी प्रतिज्ञा करके हम सब को संशय के भंवर में डाल दिया है। दुर्योधन यदि इसी प्रकार भीम को मारता रहा तो वह निश्चय ही जीत जायेगा, इस लिए धर्म-युद्ध को छोड़कर इस दुष्ट को मारने का उपाय करो। हे राजन्! शत्रु को मार डालना ही धर्म है। इस लिए भीम को कहो, कि वह सभा में की हुई अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करे।

तब हे राजन्! भीम की ओर देखते हुए अर्जुन ने अपनी जंघा पर ज़ोर से हाथ मारा, जिसे देखकर भीम समझ गया। तब भीम गदा उठाकर दुर्योधन के बाईं ओर हो गया और इस प्रकार युद्ध करने लगा मानों वह युद्ध-विद्या में कुशल नहीं है। दुर्योधन ने इस समय बारंबार उस पर प्रहार किया। अन्त में अवसर पाकर भीम ने जोर से एक गदा दुर्योधन की टांग पर मारी, जिससे हे राजन्! तेरे पुत्र की जंघा की हड्डी टूट गई और वह लड़खड़ा कर भूमि पर गिर पड़ा। तब भीमसेन गर्जता हुआ उस पर झपटा, और उसके मस्तक पर बारम्बार लात मार मार कर बोलाः—रे नीच! तूने सभा में द्रौपदी का अपमान किया था, और निर्लज्जों के समान बारम्बार

अपनी जंघा पर थपकियां देदेकर उसको इशारा किया था, आज उसी जंघा को तोड़कर मैंने अपनी प्रतिज्ञा को पूरा किया। हे राजन्! भीमसेन की यह चेष्टा किसी को अच्छी न लगी, बलराम तो क्रोध से उन्मत्त होकर अपने हल को उठा कर उसकी ओर दौड़ते हुए बोले, रे शठ! गदा-युद्ध में किसी को नाभि से नीचे प्रहार करना धर्म-विरुद्ध है, यह सब कोई जानते हैं, फिर तुमने ऐसा पाप क्यों किया। तब श्रीकृष्ण ने जल्दी से उठकर बलराम को भुजा से पकड़ लिया, और उनको शान्त करते हुए बोले, हे बलदेव! इतना क्रोध न करो, देखो, पाण्डव हमारे सम्बन्धी हैं, कौरवों ने उनको बहुत दुःख दिये। आज भीम ने चिरकाल के वैर को शान्त कर दिया है, और भीम ने उसकी जंघा तोड़ने की प्रतिज्ञा भी की हुई थी, इस लिए उसको पूरा करके उसने क्षत्रियों के वचन को निभाया है, दैव बड़ा प्रबल है, इस लिए अब आप शान्त हूजिए।

श्रीकृष्ण के इन वचनों को सुनकर बलदेव ने भीम को और कुछ न कहा, परन्तु सबके सामने ज़ोर ज़ोर से कहा कि पाण्डव हमारे सम्बन्धी हैं, यह युक्ति ठीक नहीं। धर्मयुद्ध में भीम ने अधर्म किया है, मध्यस्थ होने से हम इतना अवश्य कहेंगे, कि दुर्योधन गदा-युद्ध में जीत गया और भीम संसार में निन्दा का पात्र हुआ।

यह कह कर बलराम उसी समय रथ पर चढ़ कर

द्वारका को चले गए।

बलराम के चले जाने पर दुर्योधन को धूलि में गिरा देख, पाञ्चाल लोग हर्ष से सिंहनाद करने लगे, आकाश में वस्त्र उछालने लगे और नाचते हुए बोले, हे भीम! आज इस पापी दुर्योधन को गिरा कर तुम ने बहुत अच्छा काम किया, आज युधिष्ठिर कृत्यकृत्य हुए। इस पर श्रीकृष्ण ने कहा, हे राजाओ! अब यह पापी मर चुका है। हम तो इसको उसी दिन मरा हुआ समझ चुके थे, जिस दिन इस दुष्ट ने हमारी बात नहीं मानी थी। अब इस नीच को धूल में लेटे लेटे अपने पापों का स्मरण करके रोने दो, और तुम रथों पर चढ़कर यहां से चलो। सायंकाल होने मे थोड़ी ही देर बाकी है, इस लिए आज किसी अच्छे रमणीक स्थान पर जाकर रात-भर विजय का उत्सव मनावें।

तब युधिष्ठिर श्रीकृष्ण को हृदय से लगाकर बोले, हे पाण्डवों के मित्र! तुम्हारी ही दया से हम ने राज्य पाया है। आज तुम्हारी सहायता से हम ने वह सब कुछ प्राप्त किया, जिसकी हमें कभी आशा न थी। हे केशव! हमारे हित के लिए तुम ने बहुत सी गालियां सहीं, बाण सहे और अनेक कष्ट उठाए। आज दुर्योधन के मारे जाने से हम और तुम बड़े प्रसन्न हैं।

इसके अनन्तर हे राजन्! श्रीकृष्ण पांचों पाण्डव और सात्यकी पवित्र नदी के तट पर गये, और रात

भर वहीं उत्सव मनाने का निश्चय किया।

इधर द्रौपदी के पांचों पुत्र, धृष्टद्युम्न तथा अन्य पाञ्चाल लोग सिंहनाद करते, बाजे बजाते और फूले फूले अपने शिविर में लौटे, वहां द्रौपदी तथा अन्य राज-स्त्रियों को मङ्गल-सूचना देकर कौरवों के डेरों में गये जहां अनन्त रत्न मोती हीरे सोना चांदी आदिक पदार्थ उनके हाथ लगे, जो पांडवों के शिविर में पहुंचाए गए, हे राजन्! इस प्रकार आज का दिन पांडवों की विजय के साथ समाप्त हुआ॥

इति गदा पर्व समाप्त।

सौप्तिक पर्व

पांडवों का भीषण नाश

संजय बोले हे धृतराष्ट्र! जब आपके पुत्र की जंघा टूटने का हाल अश्वत्थामा कृपाचार्य्य और कृतवर्मा ने सुना तो वह तत्काल दुर्य्योधन के पास पहुंचे। वहां दुर्योधन को उन्हों ने धूल में तड़पते हुए देखा तो उनके हृदय शोक के समुद्र में डूब गये। वह दुर्योधन के निकट बैठ गए, तब अश्वत्थामा शोक और दुःख से अधीर होकर बोला, हे संसार के चक्रवर्ती राजा! इन्द्र के बराबर पराक्रमी होकर भी आज तुम बेबस हुए २ धूल में पडे हो, यह देखकर मेरे मन में यही धारणा होती है कि यह संसार असार है, धन धाम और ऐश्वर्य सब तुच्छ है, हाय हाय! जिन के चरणों में राजाओं के मुकट लोटते थे आज वह धूल में लोट रहे हैं, काल की गति बडी विचित्र है।

अश्वत्थामा को इस प्रकार दुःख से रोते देख दुर्योधन बोला हे आचार्य पुत्र! यह शरीर क्षण भंगुर है, राम और रावण से योद्धा इस काल ने ग्रास कर लिए। हे वीर! तुम ने मेरे लिए बहुत दुःख उठाए परन्तु फिर भी हम सफल न हो सके, तो इस में तुम्हारा क्या दोष है, हमारे भाग्य ही ऐसे हैं, परन्तु मैं प्रसन्न हूं, कि अपने सब मित्रों और सम्बन्धियों के समान युद्ध भूमि में ही मरा हूं, मैंने

युद्ध में कोई अधर्म नहीं किया, और मैं इस लिए भी प्रसन्न हूं, कि पांडव मुझे धर्म पूर्वक न मार सके। हे अश्वत्थामा! तुम तीनों बच रहे, इस से मुझे और भी प्रसन्नता हुई है, मेरे भाग्य में ऐसा ही लिखा था, अब तुम अधिक शोक न करो।

दुर्योधन के इन वचनों को सुनकर अश्वत्थामा क्रोध से जल उठे और नेत्रों से चिंगारियां बर्साते हुए बोले, हे राजन्! इन पांडवों ने आपको, हमारे पिता को कर्ण को और पितामह को धोखे से मारा है, यह महानीच हैं। आप को इस दशा में देखकर हमारा शरीर क्रोध से जल रहा है, इस लिए हम शपथ खाकर कहते हैं, कि यदि आज ही पांडवों का सर्वस्व नाश न करूं तो मेरे धर्म कर्म पुण्य और तीर्थ आदिक सब नष्ट होजाएं और मैं नर्क में गिरूं। हे राजन्! आप मुझे उनके मारने की आज्ञा दें।

अश्वत्थामा के इन वचनों से प्रसन्न होकर दुर्योधन ने उसी समय उसको सेनापति बनाया और अपने रुधिर से उसके मस्तक पर तिलक किया और फिर कृतवर्मा तथा कृपाचार्य को उसकी सहायता करने के लिए कहा। तब अश्वत्थामा अपने धनुष की टंकार करता हुआ नये मेघ के समान गर्जा, और अपने दोनों साथियों सहित वहां से रथ पर चढ़कर चल पड़ा।

हे राजन्! रात्रि का समय था, वह तीनों पांडवों के भय से छिपते हुए महा घोर बन में पहुंचे। वहां एक पुराना बोहड़ का वृक्ष था, जिसकी शाखाएं दूर २ तक फैली हुई थीं।

इन तीनों ने अपनी रथों के घोड़ों को वहां खोल दिया और उसी वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगे। कृतवर्मा और कृपाचार्य तो कुछ देर बाद सो गए परन्तु अश्वत्थामा के हृदय में प्रतिकार की अग्नि धधक रही थी, उस को नींद न आई। उस समय भी पांडवों के शिविर में से उत्सव के बाजों की ध्वनि उठ रही थी। अश्वत्थामा बैठे बैठे पांडवों के नाश का उपाय सोचने लगे। सोचते सोचते आधी रात बीत गई, जंगल का सन्नाटा और भी गहरा होगया। बाजों का शब्द बन्द हो गया, अश्वत्थामा सोचते सोचते थक गया, परन्तु कुछ समझ में न आया, अन्त में ठण्डी सांस भरता हुआ वह आकाश की ओर देखने लगा। उसी समय उस ने देखा कि एक उल्लु चुपचाप उस वृक्ष पर आया उस ने आते ही उस वृक्ष के रहने वाले कौओं पर आक्रमण किया किसी के पंख तोड़ डाले, किसी का बाजु तोड़ दिया, किसी को मार डाला, इस प्रकार देखते ही देखते उसने सैकड़ों कौओं को मार डाला। उल्लु की इस घटना से अश्वत्थामा के हृदय में एक चमक सी उठी, उसने सोचा, कि निस्सन्देह यह उल्लु दैव की ओर से भेजा हुआ मुझे रास्ता दिखा रहा है। आज पांडवों को इसी तरह मारूंगा, दूसरा कोई रास्ता नहीं है। यह सोच कर उसने अपने साथियों को जगाया और वह सारी घटना कह सुनाई। तब वह तीनों चुपके चुपके पांडवों के शिविर में गये। श्री कृष्ण और पांडव उस समय नदी तट पर

उत्सव मना रहे थे, शेष राजा लोग दिन भर के थके हुए घोर निद्रा में सोये पड़े थे। अश्वत्थामा ने कृपाचार्य्य और कृतवर्मा को शिविर के द्वार पर खड़ा किया और स्वयं पिछली ओर से तंबु फाड़ कर अन्दर घुसा। दैवयोग से पहले ही वह धृष्टद्युम्न के कमरे में पहुंचा जहां वह फूलों की शय्या पर सुख से लेटा हुआ था। अश्वत्थामा ने जाते ही उसके सिर पर एक लात मारी और फिर केशों से पकड़ कर पृथिवी पर पटक दिया। धृष्टद्युम्न सहसा नींद से जागा था वह घबरा गया, अश्वत्थामा ने उसके मुख पेट और सिर में इतने मुक्के मारे कि वह वहीं मर गया, इस मार कूट में द्रौपदी के पांचों पुत्र जाग उठे और वह शस्त्र लेकर अश्वत्थामा पर टूट पड़े, परन्तु उसने रुद्र अस्त्र से पांचों के सिर काट लिए तब तो शिविर में बडा कोलाहल मच गया। उस महा अन्धकार मयी रात्रि में कोई किसी को पहचान न सका तब एक दूसरे को शत्रु समझते हुए वह परस्पर मार काट करने लगे, हे राजन्! क्षण भर में वह उत्सव की रात्रि काल रात्रि बन गई अश्वत्थामा की तलवार से और आपस में एक दूसरे का गला काटते हुए वह सब के सब वहीं मर गए, और जो बच कर द्वार की ओर भागे वह कृपाचर्य्य और कृतवर्मा के हाथों मारे गये। हे राजन्! सब के मारे जाने पर जब पूर्ण सन्नाटा हो गया तो अश्वत्थामा द्रौपदी के पांचों पुत्रों के सिर भाले की नोक से बांध कर शिविर से बाहर आया। और अपने

दोनों साथियों को साथ लेकर उसी स्थान पर पहुंचा जहां दुर्योधन पड़ा पड़ा जान तोड़ रहा था, उसके चारों ओर गीदड़ और कुत्ते उसकी मृत्यु की राह देख रहे थे। अपने स्वामी की यह दशा देख वह तीनों बिलख बिलख कर रोने लगे। तब दुर्योधन के मुख पर से धूल पोंछ कर अश्वत्थामा बोले, हे राजन्! यदि जीते हो तो आंखें खोलो, इस समय पांडवों के पक्ष में से पांच पांडव श्रीकृष्ण और सात्यकी यह सात ही जीते हैं, शेष सबके सब मार डाले गये। हे राज राजेश्वर! पांडवों के शिविर में घुस कर हमने द्रौपदी के पांचों पुत्र, सारे पांचाल, धृष्टद्युम्न और उनकी सेना को मार डाला। इस समय उनके सात और हमारे तीन पुरुष जीते हैं।

अश्वत्थामा के इस प्रिय वचन को सुनकर दुर्योधन ने बड़ी कठिनता से आंखें खोलीं, और बोले, हे वीर! जो काम पितामह, आचार्य और कर्ण से नहीं होसका, वह तुमने कर दिखाया, परमात्मा तुम्हारा मंगल करे। मेरा बदला निकल गया, अब मैं सुख से मरूंगा। यह कह कर उसने उन तीनों को हृदय से लगाया, और बोला, अच्छा, अब स्वर्ग में मिलेंगे। हे धृतराष्ट्र! इसके अनन्तर वह सदा के लिए चुप हो गया, उसकी आत्मा इस असार संसार को छोड़ कर सूर्य्य-लोक को चली गई।

वैशम्पायन जी बोले, हे राजा जनमेजय! दुर्योधन की मृत्यु का हाल सुनकर अन्धे राजा धृतराष्ट्र बिलख बिलख कर रोने लगे, और अन्त में मूर्छित होकर गिर पड़े।

इति सौतिक पर्व समाप्त।

अथ स्त्री पर्व

वैशम्पायन जी बोले, हे जनमेजय ! जब संजय के मुख से अपने पुत्र की मृत्यु का समाचार सुनकर महाराज धृतराष्ट्र मूर्छित होकर गिर पड़े, तो विदुर ने उनको धीरज देते हुए कहा, हे राजन् ! उठो, इस समय शोक करना वृथा है, काल की यही गति है, विधाता के लिखे अक्षर अमिट हैं, संसार के सब प्राणी मृत्यु की ओर जा रहे हैं, कोई पहले और कोई पीछे, बिना मरे किसी की गति नहीं है। हे नाथ ! आपके पुत्रों ने स्वर्ग-प्राप्ति की है, युद्ध में प्राण देनेवाला क्षत्रिय सीधा वैकुण्ठ को जाता है। आप वेद पढ़े हुए हैं, बुद्धिमान् हैं, हे राजन् ! शोक को छोड़कर समयोचित कार्य्य करें।

विदुर के वचनों से जब धृतराष्ट्र को कुछ धीरज हुआ, तो वह रथ पर चढ़ कर युद्ध-क्षेत्र की ओर चले, उनके पीछे पीछे गान्धारी, कुन्ती तथा सहस्रों कुरुस्त्रियां, केश खोले, रोती पीटती, एकवस्त्रा होकर चलीं। उस समय सारे हस्तिनापुर में हाहाकार मच गया। हे जनमेजय ! उन रोती हुई सहस्रों नारियों को साथ लेकर राजा हस्तिनापुर से बाहर निकला।

उधर महाराज युधिष्ठिर अश्वत्थामाके हाथों अपनी सारी सेना, पुत्र-पोतों तथा सम्बन्धियों को मरा देखकर घोर दुःख में डूबा हुआ, अश्वत्थामा की तालाश में निकला, उनके पीछे

शेष पाण्डव, श्री कृष्ण तथा सात्यकी भी चले। बहुत ढूंढने के पश्चात् जब वह गंगा के तटपर पहुंचे, तो वहां उन्हों ने अश्वत्थामा को भस्म रमाए संन्यासी के वेष में व्यासदेवजी की शरण में बैठे पाया। हे जनमेजय! उसको देखकर बड़े क्रोध से दांत पीसते हुए धर्मपुत्र ने उसको पकड़ लिया, परन्तु व्यासदेव ने उनके बीच में पकड़ कर अश्वत्थामा को बचा लिया। तब श्रीकृष्ण के कथन से अर्जुन ने अश्वत्थामा के मस्तक से मणि को उखाड़ लिया, और गुरुपुत्र जानकर छोड दिया। हे राजा जनमेजय! इस प्रकार अश्वत्थामा को दण्ड देकर जब वह सब रोते और विलाप करते हुए सहस्रों स्त्रियों को साथ लेकर व्यासदेव सहित हस्तिनापुर की ओर चले तो युद्ध-भूमि के निकट ही उन्हों ने धृतराष्ट्र को आते देखा, तब कौरवों की स्त्रियां युधिष्ठिर को देखकर रोती-पीटती और विलाप करती हुई वचन के बाणों से उनके हृदय को बींधने लगीं। केश खोले और छातियों को पीटती हुई वह कहने लगीं, कहां गया युधिष्ठिर का धर्म, कहां गई उसकी दया, जो इसने गुरु, भाई, मित्र बन्धु और पुत्रों को मारा है। हे युधिष्ठिर! अपने बहनोई जयद्रथ और दादा को मारकर तुम्हारा मन कैसे प्रसन्न हुआ। द्रौपदी के पुत्र और अभिमन्यु को न देखकर अब राज्य किस के लिए करोगे। इस प्रकार कुररियों की नाई रोती हुई स्त्रियों को लांघ कर युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के चरण छुए, और फिर बारी बारी

सब पाण्डवों ने अपने अपने नाम लेते हुए राजा को नमस्कार किया। हे जनमेजय! पुत्रों के वियोग के दुःख से दुःखी हुए हुए धृतराष्ट्र ने खिन्न मन से सब को गले लगाते हुए मन में बदला लेने की इच्छा रख कर भीम को आलिङ्गन करने के लिए कहा। तब श्रीकृष्ण ने उसके हृदय की दुष्ट भावना को जानकर भीम के स्थान में एक लोहे का बना हुआ भीम उसके आगे कर दिया। हे जनमेजय! उस लोहे के भीम को भीम समझ कर अन्धे राजा ने उसे दोनों भुजाओं में भर लिया और दांत पीसते हुए इतने बल से दबाया कि वह चूर चूर होगया। अपनी सामर्थ्य से अधिक बल लगाने से उसके मुख से लहू आ गया, और मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा। कुछ देर बाद जब उसको सुधि आई और क्रोध शान्त हुआ, तो वह हाय भीम! हाय भीम! करता हुआ रोने लगा। जब श्रीकृष्ण ने देखा कि इसका क्रोध निकल गया है, और अब यह भीम के बध से दुःखी हो रहा है। तब वह बोले, हे राजन्! आप शोक न करें, आपने भीम नहीं मारा, यह तो लोहे की मूर्ति है, आप को क्रोध के वश में पड़ा देख मैंने भीम को मरने से बचा लिया है। हे राजन्! आपकी भुजाओं के अन्दर आकर कोई जीता नहीं रह सकता, इसीलिए मैंने लोहे की मूर्ति आगे कर दी, जो दुर्योधन ने अभ्यास के लिए बनवाई थी। हे राजन्! आपको उचित नहीं कि आप

भीम का बध करें। आपके पुत्रों ने जो कर्म किया था, उसका फल उन्हों ने भोग लिया, वह कदाचित जीते नहीं रह सकते थे, इस लिए दैव पर बात छोड़ कर अब अपने मन से द्वेष को दूर कीजिए। हे प्रभो! समर्थ होकर भी जब आपने अपने पुत्रों को नीच कर्म्मों से न हटाया, तो अब पांडवों पर क्या क्रोध करते हो। भीष्म विदुर और मेरे बहुत समझाने पर भी जब दुर्योधन ने किसी की न मानी तो फिर उसके मारने के सिवा और उपाय ही क्या था। हे राजन्! उस नीच ने भरी सभा में एक वस्त्रा द्रौपदी को मंगवा कर उसका अपमान किया, उसी का बदला लेने के लिए भीम ने उसे मार डाला। जब श्रीकृष्ण ने इस प्रकार खरी खरी कह सुनाई तो धृतराष्ट्र बोले, हे कृष्ण! तुम सत्य कहते हो, परन्तु पुत्र स्नेह बुरा होता है, उसने मुझे धैर्य्य पथ से गिरा दिया। हे कृष्ण! भीम को मेरी भुजाओं में न देकर तुमने बहुत अच्छा किया, अब मेरा क्रोध जाता रहा अब मैं शान्त हूं। इसके अनंतर धृतराष्ट्र ने रो कर भीम को गले से लगाया। तब पांडव और श्रीकृष्ण वहां से गांधारी के पास गये, और उसे सांत्वना देने लगे। उनको देखकर गांधारी बोली, हे पांडु पुत्र! जो कुछ होगया, उसका मुझे कुछ भी शोक नहीं, जो युद्ध में जाएगा वह मरेगा व मारेगा, क्षत्रियों का यही मार्ग है, परन्तु हे भीम! गदा युद्ध में तूने दुर्योधन की जंघा पर प्रहार करके धर्म विरुद्ध आचरण किया इससे मेरा हृदय

क्रोध से जल रहा है । तब भीम बोले हे माता ! पहले दुर्योधन ने अधर्म से युधिष्ठिर को जूए में जीता और फिर द्रौपदी का घोर अपमान किया इसी से मैंने भी धर्म विरुद्ध आचरण किया । तब गांधारी बोली हे भीम तुम ने मेरे सौ पुत्रों को मार कर बूढ़े राजा को दुःख के सागर में डुबो दिया, क्या उन सब में एक भी जीता रहने के योग्य न था, क्या एक भी थोड़े दोष वाला नहीं था । यह कह कर पुत्रों और पोतों के दुख से व्याकुल हुई हुई गांधारी ने पूछा, युधिष्ठिर कहां है । तब कांपते हुए युधिष्ठिर हाथ जोड़ कर बोले हे माता ! मैंने ही अपनी मूर्खता से सारे संसार को नाश करवाया, तेरे पुत्रों को मारने वाला निर्दयी क्रूर मैं ही पापी हूं, सब पुत्रों पोतों भाइयों और बड़ों को मरवा कर शोक सागर में डुबा हुआ मैं अब जीना नहीं चाहता हे माता ! मुझे शाप दो, मैं अभागा इस शून्य राज्य में जी कर नरक से बढ़ कर दुःख उठा रहा हूं । युधिष्ठिर के इन नम्र वचनों को सुन कर गांधारी का क्रोध जाता रहा और वह रोती हुई युधिष्ठिर को धीरज देने लगी । इसके अनंतर वह माता कुन्ती के निकट गये । चिरकाल के पश्चात् कुन्ती ने पुत्रों को देखा तो उसके नेत्रों से प्रेम के आंसु बहने लगे। उसने एक एक करके सबके घायल शरीरों पर हाथ फेरा फिर पुत्र शोक से पीड़ित द्रौपदी को गोद में लिया उस समय द्रौपदी फूट फूट कर रोने लगी । पुत्रों के शोक में रोती हुई वह बोली हे माता ! अभिमन्यु संहित तेरे वह

पोते जो क्षण मात्र भी तुझ से अलग नहीं होते थे आज चिरकाल के पश्चात् मिलने पर भी तेरे पास क्यों नहीं आते। हाय हाय! अब मैं जीकर क्या करूंगी, निपूती को राज्य से क्या काम, इस प्रकार कहते कहते उसके नेत्रों से आंसुओं की नदी बह निकली। तब उस मृगलोचनी के नेत्र पोंछती हुई कुन्ती ने उसको अनेक प्रकार से धीरज दिया और उसको साथ लेकर गांधारी के पास गई। गांधारी ने रोती हुई द्रौपदी को धीरज देते हुए कहा हे पुत्रि! मत रो, विधाता का लिखा अटल है, तूं मेरी ओर देख, मुझ से बढ़ कर दुखिया कौन है जिसके सौ पुत्रों में से एक भी जीता नहीं बचा। रो मत युद्ध में मरे हुओं के लिए शोक कैसा, यहां कौन ऐसा है जिसके सब नहीं मर गए। हे पुत्रि! यदि तूही शोक पीड़ित होकर रोएगी तो मुझे धीरज देने वाला कौन होगा। इसके अनंतर कुरुक्षेत्र में पहुंच कर पांडव और कौरव स्त्रियां रथों से उतर अपने सम्बन्धियों को रोती हुई तालाश करने लगीं। वहां उन्होंने अपने मरे हुए पति पुत्र और भाई देखे। उस समय कुररियों के समान रोती हुई वह उनके संग लिपट गईं। जहां एक दिन पहले वीरों के सिंहनाद रथों की घरघराहट और धनुषों के टंकार सुनाई देते थे वहां आज लाखों मरे हुए प्राणि पड़े थे, क्षण मात्र में स्त्रियों के रुदन से पृथिवी और आकाश भर गया, बड़ा ही शोकमय दृश्य हो गया। दुर्योधन को मरे पड़े देख गांधारी मूर्छित होकर गिर

पड़ी फिर सुधि आने पर वह नाना प्रकार से विलाप करने लगी । हे महा बाहो ! किस महारथि ने तुझे मारा है । पुत्र ! शोक से पीड़ित हुई हुई अपनी दुखिया माता को आंख खोल कर देख । हे बेटा ! तेरे बिना मुझे सारा संसार अंधेरा दिखाई देता है, पुत्र ! मैं भी तेरे पीछे पीछे आती हूं, स्वर्ग में तू मेरी राह देख, हाय ! दैव बड़ा प्रबल होता है । इस प्रकार रण भूमि में जिधर देखो उधर ही माताएं पुत्रों की छातियों पर सिर रखे रो रही थीं, पत्नियां पतियों के सिरहाने रुदन कर रही थीं, उस करुणाजनक दृश्य को देखकर पृथिवी आकाश दिशाएं सब रोती हुई प्रतीत होती थीं । इस प्रकार विलाप करते जब बहुत देर हो गई तो श्रीकृष्ण बोले हे गांधारी ! उठो अब और शोक न करो, संसार के सभी प्राणि अन्त में इसी गति को प्राप्त करते हैं, मृत्यु से कोई बच नहीं सकता, हम सब मृत्यु की ओर जा रहे हैं । इसी समय महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा से युधिष्ठिर ने विदुर धौम्य युयुत्सु सुशर्मा और संजय को साथ लेकर अगर तगर चंदन घी और लकड़ी की सहस्रों चिताएं बनवाईं और युद्ध भूमि में पड़े हुए सब वीरों का दाह संस्कार किया । उस बड़े मैदान में जलती हुई सहस्रों और लाखों चिताओं से निकला हुआ धुआं आकाश मण्डल में छा गया । अग्नि की लपटें, लकड़ियों के तड़ाके और जल जल कर उड़ते हुए शरीरों के पार्थिव परमाणु तथा स्त्रियों के विलाप ने पत्थर हृदयों को पानी कर

दिया। पांडव और बचे हुए कौरव इस शोकमय दृश्य को देखकर अपनी करनी पर पश्चाताप करते हुए रोने लगे हे जनमेजय ! ऐसे बड़े युद्ध का ऐसा दुःखमय अंत होगा, यह किसी को पता न था, उस दृश्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता था, मानो इन चिताओं के अन्दर भारत की राज्य लक्ष्मी भारत की धन सम्पत्ति, भारत का ज्ञान भारत का कर्म भारत की वीरता और भारत का सौभाग्य जल रहा है। उस समय विदुर तो बहुत ही रोए। उन सब का दाह संस्कार करके युधिष्ठिर धृतराष्ट्र को आगे करके गंगा तट पर पहुंचे, गंगा के पवित्र तीर्थ पर उन्होंने अपने गहने कपड़े और पगड़ियां उतारीं, और अपने सम्बन्धियों को जलाञ्जलियां देने लगे। उस समय दुःख से भरी हुई कुंती धीरे से बोली हे पुत्र ! कौरव और पांडव दोनों में सब से बड़ा बलवान् पराक्रमी प्रतापी, धर्मात्मा विद्वान् वेदों का जानने वाला तेजस्वी कर्ण वास्तव में मेरा सब से बड़ा पुत्र और तुम्हारा सब से बड़ा भाई था। हे पुत्रो ! तुम्हारे ही हाथों उसकी सद्गति होगी उसे जलाञ्जलि दो। हे जनमेजय ! माता के मुख से यह भेद भरी बात सुनकर पांडवों पर मानों वज्रपात हुआ, वह कर्ण के शोक में बहुत रोए अंत में रोते हुए युधिष्ठिर ने उसको जलाञ्जलि दी और फिर तीर पर आकर चुपचाप बैठ गया।

इति स्त्री पर्व समाप्त

अथ शान्ति पर्व

पहला अध्याय

वैशम्पायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! श्रीकृष्ण सहित पांडवों को गंगा तीर पर रहते एक महीना होगया परन्तु धर्म पुत्र युधिष्ठिर का शोक कम न हुआ, वह भाई भतीजे, गुरु, पुत्र आदिकों की मृत्यु से अति दुखित हो कर एक दिन बोले हे अर्जुन ! राज्य के लोभ से हम ने पुत्रों भाईयों और बड़ों बूढ़ों को मरवा डाला, जिस गुरु को हम पिता के समान समझते थे, उसको मैंने झूठ बोल कर मार डाला। वृद्ध भीष्म जो बाल्यावस्था में हमें कंधे पर उठाये फिरते थे उन्हें हमने बाणों से छलनी कर दिया बालक अभिमन्यु को राज्य लोभ से हमीं ने मरवा डाला, हमारी ही बढ़ी हुई तृष्णा से सहस्रों राज कुमार अपनी माताओं की गोद से सदा के लिए अलग हो गये हमारी ही मूर्खता से सहस्रों स्त्रियां विधवाएं हो गईं, इन सब बातों को सोचकर हमारा हृदय दुःख के अगाध समुद्र में डूब रहा है, हे अर्जुन ! बन्धुओं से हीन यह राज्य अब मेरे किसी काम का नहीं, मैंने घोर पाप किये हैं, इस लिए तुम अब हस्तिनापुर जाओ और राज्य सुख का उपभोग करो, मेरा मन अब इन भोगों में नहीं लगता, मैं बन में जाकर कठिन तपस्या करके अपने पापों का प्रायश्चित करूंगा।

धर्मपुत्र की इन उदासीनता की बातों को सुन कर तेजस्वी अर्जुन बोला, हे राजन् ! इतने दुःख सहार जो राज्य आपने पाया है, वह-आपसे त्यागने योग्य नहीं है। हे धर्मपुत्र ! किस लिए आपने सहस्रों प्राणियों का बध किया, यदि पीछे बन को जाना था। बन में रह कर अथवा मांग कर वृत्ति करना यह क्षत्रियों का धर्म नहीं। धनसे ही क्षत्रिय लोग धर्म कर सकते हैं, परमात्मा ने जिसका धर्म छीन लेना हो वह उस के धन को पहले छीन लेते हैं, इस लिए हे महाराज ! धर्म के लिए धन का उपार्जन करो।

इसके अनन्तर भीम बोले हे राजन् ! यदि बनमें रह कर जटा बढाने से मोक्ष मिल जाए तो बृक्ष आदि सभी जड़ पदार्थ मुक्त हैं, हम आप के पीछे लग कर ही दुःख उठा रहे हैं, हम ही मूर्ख हैं।

अर्जुन और भीमके बचन सुनकर भी जब युधिष्ठिर उसी प्रकार चुपचाप सिर झुकाए बैठ रहे तो परमबुद्धिमती द्रौपदी बोली हे महाराज ! जब द्वैत बन में हम सब असह्य दुख उठाते थे तो आप हमको यह बात कह कर धीरज दिया करते थे, कि घबराओ नहीं, बनवास के अंतमें जब हम तलवार से शत्रुओं का बीज नाश करेंगे फिर यही दुःख उस समय हमारे सुख का कारण होगा, हे नाथ ! अब राज्य को प्राप्त करके अपने वचन को निभाइये।

तब धर्म पुत्र बोले हे अर्जुन ! तुम सबने जो कुछ कहा

है वह अपने और मेरे हित से ही कहा है, परंतु वीर और नीतिज्ञ होने पर भी धर्म के गूढ तत्त्वोंको तुम नहीं समझते राज्य शासन में दण्ड का उपयोग है और धर्म किसी भी प्राणिको दुःख देने की आज्ञा नहीं देता, इन दो विरुद्धभावों में धर्म का भाव भी मेरे हृदय को शान्ति देता है, इस लिये तुम जाओ और राज्य सुखका उपभोग करो।

तब व्यासदेव जी बोले हे धर्मराज! तुमने धर्म के अनुसार ही सारी पृथिवी को जीता है, अब उसको छोड़ देना उचित नहीं है। आततायी को मार देना धर्म है और न मारना पाप है, क्योंकि जीता हुआ दुष्ट भले पुरुष को दुःख देता है, इस लिये हे राजन्! पहले तुम भाईयों के साथ हस्तिनापुर में जाओ और फिर धर्म के विषय में सब संशयों को दूर करनेके लिये भीष्म पितामह के पास जाना वह तुम्हारी सब शंकाएं दूर करेंगे और करने योग्य कर्म बताएंगे। तब श्रीकृष्ण बोले हे राजन! आप भगवान व्यासदेवजी के कथनाऽनुसार काम कीजिये और शोकको त्यागकर हस्तिनापुर चलिए। फिर श्रीकृष्ण के कथन से सब भाईयों समेत युधिष्ठिर धृतराष्ट्रको आगे करके हस्तिनापुर की ओर चलनेको सोलह घोड़ों वाले रथ पर आरूढ हुआ। भीम ने रासें पकड़ीं अर्जुन छत्र पकड़ कर पीछे खड़े हुए नकुल और सहदेव चँवर डुलाने लगे। उनके पीछे श्री कृष्ण सुन्दर रत्न जटित रथपर सवार होकर चले। धृत-राष्ट्र और गांधारी पालकियों पर सवार आगे आगे चले

उनके पीछे पांडव और कौरव स्त्रियां विदुर की रक्षा में चलीं।

दूसरा अध्याय ।

पांडवों का हस्तिनापुर में प्रवेश ।

वैशम्पायनजी बोले हे राजा जनमेजय! जब हस्तिनापुर के निवासियों ने सुना कि महाराज युधिष्ठिर आरहे हैं, तो वह लोग बड़े उत्साह से नगर को सजाने लगे। अनगिनत मनुष्यों के आने जाने से राजमार्ग में धूम मच गई। जल से पूर्ण कोरे घड़ों और फूल मालाओं को हाथों में लिये गोरी २ कँवारी कन्याओं से नगर का द्वार अपूर्व शोभा देने लगा। राजमार्ग पर लहराती हुई असंख्य झण्डियां महाराज का स्वागत करने लगीं, सुगन्धित धूप के उठते हुए धूएं से सारा आकाश छा गया। तब भाईयों सहित महाराज युधिष्ठिर ने वेद मंत्रों से नगर में प्रवेश किया। सहस्रों नगर निवासी उनके दर्शन को आने लगे। राजपथ के आस पास के घरों की छत्तें छज्जे और खिड़कियां दर्शनों के लिये आई हुई स्त्रियों से मानों कांपने लगीं। चारों ओर से महाराज की सवारी पर फूलों की वृष्टि होने लगी और जय जयकार से नगर गूंजने लगा। जब महाराज राज भवन में पहुंचे, तो दरिद्रों कंगालों और ब्राह्मणों को मुंह मांगा दान देकर विदा किया। इस के अनन्तर शोक और दुःख को त्यागकर महाराज युधिष्ठिर स्वर्ण के सिंहासन पर विराजमान हुए। श्रीकृष्ण और महावीर सात्यकी उनके सन्मुख स्वर्ण की कुर्सियों पर बैठे, भीम

और अर्जुन महाराज के दाएं बांएं रत्न जटित आसनों पर शोभा देने लगे, नकुल और सहदेव के साथ माता कुन्ति हाथीदांत के रत्न मण्डित आसन पर बैठे और धौम्य ऋषि महात्मा विदुर तथा धृतराष्ट्र सुन्दर ऊंचे आसनों पर बैठाए गए। इसके अनन्तर सारी प्रजा के लोग दर्बार में अपनी अपनी भेंट देकर बैठे, फिर पुरोहित धौम्य श्रीकृष्ण की आज्ञा से राजातिलक की सारी सामग्री वहां लाए और रत्नों से जड़ी हुई एक सुन्दर वेदी बनाई, उस पर चमकते हुए रेशमी वस्त्र पहरे द्रौपदी समेत महाराज युधिष्ठिर विराजमान हुए। फिर हवन की प्रचण्ड अग्नि में विधिपूर्वक आहुतियां डाली गईं। हवन समाप्त होने पर श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख में सब तीर्थों का जल भरा और उससे महाराज युधिष्ठिर को तिलक दिया। इस समय बाजों की घनघोर से नगर निवासियों के मन मयूर नाचने लगे, घर घर में मंगलाचार होने लगा, राजभवन पर दान के द्रव्य की वृष्टि होने लगी, हे राजन्! उस दिन महाराज ने इतना दान दिया, कि उस नगर में एक भी कंगाल न रहा। इस प्रकार महाराज युधिष्ठिर राज्य को अपने अधिकार में करके सारी प्रजा पर धर्मानुसार शासन करने लगे कुछ काल जब इसी प्रकार बीत गया तो एक दिन धर्मराज श्रीकृष्ण से बोले हे वासुदेव! आप के और भगवान् वेदव्यास के कथन से मैंने राज्य के भार को संभाल लिया अब यदि तुम को कष्ट न हो तो

हमारे साथ पितामह के पास चलें, वही मेरे मन के उन संशयों को दूर करेंगे जो अभी तक मुझे दुःख दे रहे हैं।

तब श्रीकृष्ण महाराज युधिष्ठिर की आज्ञाको शिरोधार्य करके हर्ष सहित कुरुक्षेत्र की ओर चले। वहां पहुंच कर उन्होंने युद्ध क्षेत्र को केश चर्बी और हड्डियों से भरा हुआ देखा, कोसों तक महां दुर्गंधि फैली हुई थी जिस से जीवित मनुष्यों के मस्तिष्क फटे जाते थे उन हड्डियों के समुद्र रूप विस्तीर्ण क्षेत्र को पार करके धर्मराज युधिष्ठिर भाइयों सहित श्रीकृष्ण का हाथ पकडे वहां पहुंचे जहां अस्त होते हुए सूर्य के समान मुनियों से घिरे हुए भीष्म पितामह बाणों की शय्या पर पड़े हुए थे। वह सब रथों से उतर कर पितामह के पास गये और उनके चरणों को छू कर बैठ गये। तब श्रीकृष्ण उनको प्रणाम करते हुए बोले हे नरेन्द्र! संसार में आपके समान धीर वीर विक्रमी और गुणों वाला दूसरा पुरुष नहीं है, हे नर श्रेष्ट! अपने बन्धुओं के नाश से दुःखी हुए हुए युधिष्ठिर आपकी शरण आये हैं, इनके शोक को दूर कीजिए, हे नाथ! इस लोक में आप के बिना इन के संशय दूर करने वाला दूसरा कोई नहीं। श्रीकृष्ण के यह वचन सुनकर पितामह बोले, हे केशव! मेरा मन बाणी और इन्द्रियां बलवान् हैं, मैं चेतना में हूं, युधिष्ठिर जो कुछ पूछना चाहे पूछे मैं उनको बतलाऊंगा। तब धर्मराज युधिष्ठिर ने उनके पैर छुए और विनीत भाव से बोले हे पितामह! इस महायुद्ध में अपने इष्ट मित्रों

भाई बन्धुओं पुत्रों भतीजों और वृद्धों तथा गुरुओं का नाश करके मेरा हृदय दुःख और शोक से फटा जा रहा है, राज्य से घृणा और बनवास की लगन बढ़ रही है, ऐसी अवस्था में हे दादा ! किस प्रकार मेरे मन को शान्ति हो ? मुझे क्या करना चाहिये, राज्य शासन अथवा बन-वास इन दोनों में से कौनसा मार्ग मेरे ग्रहण करने योग्य है, यह बतला कर हे दादा ! मेरे संशयों को दूर कीजिए। तब पितामह बोले हे धर्मपुत्र ! राजधर्म ही सब धर्मों में उत्तम है सो मैं तुम को कहता हूं, तू ध्यान से सुन। हे राजन् ! राजा को सदा प्रजा का हित करना चाहिये, और इस के लिये वह यज्ञ और दान करता रहे। सदा पुरुषार्थ और उद्यम करना चाहिये, क्योंकि दैव भरोसे रहने वाले राजा का राज्य नष्ट हो जाता है। राजा को चाहिये कि आरम्भ किये हुए कार्य्य को पूरा करके छोडे चाहे उस में कितने भी विघ्न क्यों न आएं। राजा को सदा सत्य बोलना सत्य करना और विचारना चाहिये। हे पुत्र ! राजा यदि अति कोमल हो तो प्रजा उस की आज्ञा नहीं मानती और अति कठोर हो तो लोग उस से घृणा करते हैं, इस लिये दोनों भावों को समय समय पर प्रगट करे। राजा को कभी धीरज नहीं छोडना चाहिये, धीर और सेना रखने वाले राजा को कहीं से भय नहीं होता। हे युधिष्ठिर ! सेवकों से हंसी ठट्ठा करने वाला राजा सेवकों

ही से अपमानित होता है। वह सेवक उसकी आज्ञा को उल्लंघन करते हैं प्रजा पर अत्याचार करते हैं, और रिश्वत से प्रजा को दुख देते हैं, पूजनीय पुरुष भी जब राज नियम के विरुद्ध काम करे तो राजा उसको पूरा२ दण्ड दे। राजाको चाहिये कि सेवकोंको समय पर वेतन दे, भूखों की सुधि लेवे और विद्वानों की पालना करे। पराये धनको छीनने वाला और क्रूर राजा अपने ही मनुष्यों से मारा जाता है। जिसके देश में प्रजा जन ऐसे निर्भय हो कर फिरते हैं जैसे पिता के घरमें पुत्र उस राजा को कोई जीत नहीं सकता।

हे युधिष्ठिर! इतनी बातों पर चलने से राज्य अटल होता है। चतुर गुप्तचर रखना, समय पर दान देना, युक्ति से धन लेना और युक्ति से देना, भले पुरुषों को साथ रखना, शूरवीरता, सत्य, प्रजा की भलाई, शत्रुओं को टेढे व सीधे उपायों से फाड़ते रहना, प्राचीन और टूटे फूटे ऐतिहासिक स्थानों को बनवाते रहना, समयानुसार दण्ड देना। कुलीन पुरुषों को कार्य्य पर लगाना, राज कोष और सब प्रकार के भंडार भरते रहना। हे राजन्! दुर्बल शत्रु की भी उपेक्षा नहीं करना चाहिये, क्योंकि विष थोड़ा भी मार देता है और चिंगारी छोटी सी भी घरको जला डालती है। हे धर्मपुत्र! बिना राजा के प्रजा की रक्षा नहीं होती। लोग आपस में एक दूसरे को लूटने लग जाते हैं, देश में अराजकता फैली हुई देश को नष्ट

कर देती है। यदि राजा रक्षा न करे तो धनवानों को लोग दिन दिहाड़े लूटलें, निर्बलों को बलवान मार दें, और अपने धन पर अपने आपपर अपनी स्त्री पर और घरों पर किसी को अपना होने का विश्वास न रहे। राजा से रक्षा किये हुए लोग रात को सुख से सोते हैं।

युधिष्ठिर बोले हे पितामह! राजा किस प्रकार शत्रुओं को जीते, किस प्रकार अपने देशकी रक्षा करे किस प्रकार गुप्तचरों से काम ले?

भीष्म बोले हे राजन्! सब को जीतने की इच्छा रखने वाले राजा को पहले अपना आप जीतना चाहिये, जितेन्द्रिय राजा सब शत्रुओं पर विजय पा सकता है। हे कुरुकुलावतंस! राजा अपने गुप्तचरों को किलों में, देश की सीमाओं पर, नगरके बगीचों में, और धर्म शालाओं व सरायों में लगावे। भूख प्यास और थकान को सहारने वाले नाना प्रकार की बोलियां बोलने वाले अंधों गूंगों और बहरों के तथा अन्य अनेक प्रकार के स्वांग भरने वाले पुरुषोंको गुप्तचर बनाना चाहिये। राज्य की आमदनी बढाने के लिये राजा को चाहिए कि धर्म पूर्वक प्रजा पर कर लगावे, न्याय को तकड़ी के तोल तोले। हे राजन्! राजा को मंत्रियों की, कोश की, सेना की, मित्रों की, देश की, राजधानी की और अपने आपकी सदा रक्षा करनी चाहिए। हे युधिष्टिर! राजा न तो सदा विश्वास ही करे और न अविश्वास ही। जिसको समझे कि मेरे नाश से

मेरा धन इसको मिलेगा, उस पर कभी विश्वास न करे, वह शत्रु होता है, और जिसको समझे कि मेरे नाश से इसका भी नाश हो जायगा जैसे पिता, उस पर सदा विश्वास रखे वह मित्र होता है। हे राजन्! अपने शरीकों का मन वाणी और कर्म से सदा मान रखे, क्योंकि दूसरों से अपमान किया हुआ मनुष्य शरीकों से सहारा दिया जाता है परन्तु शरीकों से अनादर किया हुआ कहीं ठिकाना नहीं पाता, शरीक आप अपमान कर सकते हैं परन्तु दूसरों से अपमान नहीं होने देते। हे राजन्! कंगाल की हाय बुरी होती है, इसलिए दीन दुखिया और कंगाल को कभी मत सतावे। हे युधिष्ठिर! जब प्रजा अन्न कष्ट से भीख मांगने तक आ जाती है, तो वह राजा को मार डालती है। हे राजन्! जिस देश में बेरुजगारी फैल जाती है, वहां का राजा थोडे ही दिनों में राज्य खो बैठेगा ऐसा समझो। हे धर्मपुत्र! यह संसार शूरवीर की भुजाओं में पुत्र के समान सहारा पाता है, इसलिए शूर-बीरता सब गुणों से बडा गुण है। हे धर्मराज! सब धर्मों में बडा धर्म सत्य बोलना है, परन्तु किसी २ समय सत्य कहना उचित नहीं भी होता, झूठ कहना उचित होता है, इस लिए झूठ और सत्य के समय का निश्चय कर के पुरुष धर्म को जानने वाला होता है। यदि डाकु किसी का धन छीनना चाहते हैं, तो उस समय डाकुओं को झूठ बोल कर धोखा देना सत्य से बढ कर है और

यही धर्म है। जो मनुष्य जैसा अपने साथ व्यवहार करे उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए अर्थात् धर्मात्मा से धर्मानुसार वरते और छलियों के साथ छल करे ।

हे राजन् ! जिनका भोजन केवल शरीर की रक्षा के लिए है, मैथुन संतान के लिए है, बाणी सत्य बोलने के लिये, वे सब विपत्तियों के पार होजाते हैं। हे राजन्! सब संसार के स्वामी परमात्मा की जो नित्य भक्ति करते हैं, वह सब विपत्तियों को पार कर जाते हैं इसलिए सदा भगवान की भक्ति किया करो।

इति शांति पर्व समाप्त

अथ अनुशासन पर्व

पहला अध्याय

वैशम्पायनजी बोले, हे राजा जनमेजय ! राज-धर्म के सुन चुकने पर धर्मपुत्र युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! यद्यपि आपने मुझे राजधर्म का पूरा पूरा उपदेश दिया है, परन्तु फिर भी मुझे शान्ति नहीं मिली। हे दादा ! आपके बाणों से भरे हुए शरीर को देखकर मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है। हे कुरुवीर ! पर्वत में से जैसे गेरी घुल कर बह रही हो, इसी प्रकार रुधिर से भरे हुए सहस्रों घावों वाले आपके शरीर को देखकर मैं अपने आपको घोर पापी समझता हूं। हे पितामह ! मुझे ऐसा उपदेश दीजिए, जिसके अनुसार कर्म करके पापों से रहित हुआ हुआ मैं परलोक में सुख पाऊं।

तब पितामह बोले, हे राजन् ! दैव से जोड़े हुए तुम अपने आपको कर्त्ता क्यों समझते हो। सब कुछ करने वाला वह पारब्रह्म परमेश्वर है। कुम्हार जैसे मिट्टी से जैसा जैसा चाहे वैसा वैसा बर्तन बनाता है, वैसे ही प्रजापति परमेश्वर सब रचना रचता है, परन्तु मूर्ख मनुष्य निमित्तमात्र होकर भी अपने आपको कर्त्ता समझता है, और दुःख प्राप्त करता है। युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! जब दैव ही सब कुछ करता है, तो मनुष्य

को पुरुषार्थ की क्या आवश्यकता है, यह बतला कर मेरे संशय को दूर करें।

भीष्म बोले, हे तात! बिना बीज के कुछ नहीं उगता। यह आत्मा बोने वाला है, शरीर खेत है, इसमें मनुष्य जैसा पुण्य अथवा पाप बीजता है, वैसा फल प्राप्त करता है। युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! पुण्य कर्म कौन से हैं, और उनके क्या फल हैं? पितामह बोले, अतिथि की मन, वचन और कर्म से पूजा करना पुण्य है। जो रास्ता चलते चलते थक गया है, भूखा है, प्यासा है, उसे विश्राम देना, अन्न-जल से प्रसन्न करना बड़ा पुण्य है। जिस प्रकार सहस्रों गौओं में छोड़ा हुआ बछड़ा अपनी ही मां के पास जाता है, इसी प्रकार किया हुआ कर्म कर्त्ता के पास जाता है।

युधिष्ठिर बोले, कैसे पुरुषों अथवा कैसी स्त्रियों को सुख-सम्पत्ति व लक्ष्मी मिलती है?

भीष्म बोले, हे तात! बुद्धिमान्, चतुराई से काम करने वाला, आलस्य-हीन, क्रोध न करने वाला, भगवान् का भक्त, कृतज्ञ, जितेन्द्रिय और उद्यमी इनमें लक्ष्मी सदा वास करती है। हे राजन्! जो समय को व्यर्थ नहीं गंवाते, दान देते हैं, साफ सुथरे रहते हैं, अपनी ही स्त्री में प्यार रखते हैं, और बड़ों की सेवा करते हैं, इन पुरुषों में लक्ष्मी सदा वास करती है। हे युधिष्ठिर! जो स्त्री अपने पति की प्यारी है, शान्ति वाली है, परमात्मा

की भक्ति करती है, घर के भाण्डों को मांज कर शुद्ध रखती है, गौ की सेवा करती है और अनाज को संभाल कर रखती है, लक्ष्मी सदा उस में वास करती है। जिस के भाण्डे इधर उधर लुड़कते रहते हैं, जो बिना सोचे समझे काम करती है जो पति के सामने बोलती है अर्थात् उसके विरुद्ध बोलती और काम करती है, जो पराये घरों में जाकर बैठती है, निर्लज्ज है, उसके घर से लक्ष्मी भाग जाती है। जो स्त्री चंचल है, सुघड़ नहीं अभिमानिनी है, साफ सुथरी नहीं रहती, कलह क्लेश करती रहती है, बहुत सोती है, ऐसी स्त्री लक्ष्मी का मुख भी नहीं देखती। जो स्त्री सच बोलती है, सुन्दर और हंस मुखी है, गुणवाली है, पतिव्रता है, ऐसी स्त्री के घर में लक्ष्मी वास करती है। हे राजन्! स्वाध्याय करने वाले ब्राह्मण, धर्म की रक्षा के लिए तत्पर क्षत्रिय, खेती प्रिय वैश्य और सेवा करने वाले शूद्र में लक्ष्मी का वास होता है।

युधिष्ठिर बोले हे पितामह! किन किन कर्मों करके मनुष्य नरक प्राप्त करता है और किन किन कर्मों से स्वर्ग प्राप्ति है सो मुझ से कहिये।

पितामह बोले हे युधिष्ठिर! प्रजापालक राजा पर चोट करने वाला, गौ बध करने वाला, हवन आदि वेद के त्यागने वाला मनुष्य नरक को प्राप्त करता है।

दूसरों की चुगली खाने वाला, प्याऊ को तोड़ने

वाला कूंए का जल खराब करने वाला, पुलों और घरों के तोड़ने वाला, विधवा, कन्या, वृद्धा, डरी हुई और तापसी स्त्री को छलने वाला मनुष्य नरक को जाता है जो किसी के रोज़गार को तोड़ता है वह नरक प्राप्त करता है कन्याओं और गौओं के काम में विघ्न डालने वाला नरक गामी है। अकेला खाने वाला मनुष्य नरक को प्राप्त करता है।

हे युधिष्ठिर! हिंसा न करने वाले, दूसरों को सहारा देने वाले, माता पिता की सेवा करने वाले, भाइयों के साथ प्रेम रखने वाले, दयालु, बाग लगवाने वाले, कूएं प्याऊ और धर्मशालायें बनवाने वाले मनुष्य स्वर्ग प्राप्त करते हैं। हे युधिष्ठिर! कन्या के बेचने वाले घोर नरक में जाते हैं।

युधिष्ठिर बोले हे पितामह! जिस कर्म करके गृह में सदा सुख रहे वह कर्म कहो।

भीष्म बोले हे तात! गृह में सब सुखों का मूल स्त्री है इस लिए पिता भाई देवर और पति सबको चाहिए कि स्त्रियों का सदा आदर करें और अच्छे अच्छे वस्त्रों और भूषणों से उनको प्रसन्न रखें। जिस घर में स्त्रियों की पूजा होती है, वहां देवता वास करते हैं, और जहां इनका अपमान होता है, उस घर की मट्टी उड़ जाती है। स्त्रियां मान के योग्य हैं। सन्तान का उत्पन्न करना, पालना और घर के सब कार्य्य स्त्रियों द्वारा ही चलते हैं। हे राजन्! स्त्रियों के लिए न यज्ञ है न श्राद्ध है न व्रत है, स्त्री का धर्म

अपने पतिकी सेवा करनी है पति की सेवा करने वाली अक्षय स्वर्गको प्राप्त करती है। हे राजन्! स्त्रियां साक्षात् लक्ष्मी का रूप हैं, बढ़ती चाहने वाले को स्त्रियों का सम्मान करना चाहिये। युधिष्ठिर बोले हे तात! वेदों में मनुष्य की सौ वर्ष की आयु लिखी है, सो किस कारण मनुष्य अकाल में मर जाते हैं?

भीष्म बोले हे राजन्! सदाचारी मनुष्य सौ वर्ष जीता है, अचारहीन मनुष्यों की अकाल मृत्यु होती है। जो मनुष्य क्रोध नहीं करते, सत्य बोलते हैं किसी से द्रोह नहीं करते, पर निंदा छल कपट से रहित हैं, वह सौ वर्ष तक जीते हैं। हे राजन्! जो मनुष्य सूर्य्योदय से पहले ब्राह्ममुहूर्त में जागते हैं, और फिर शौच से निवृत्त होकर सन्ध्या करते हैं वह दीर्घायु होते हैं। हे राजन्! मनुष्यों के लिये पर स्त्री गमन जैसा आयु के घटाने वाला है वैसा और कोई कर्म नहीं, इस लिये सौ वर्ष तक जीने की इच्छा वाला मनुष्य कभी पर स्त्री के साथ भोग न करे! नित्य अग्नि होत्र करे, दान देवे, चुपचाप दातन करे। इससे आयु बढती है। पर स्त्री को कुदृष्टि से न देखे, एकान्त में पर स्त्री के साथ न बैठे, मन को विकारों से बचाए हे राजन्! ऐसा करने से मनुष्य शतायु होता है।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! इतना कह कर भीष्म पितामह मौन हो गये। तब उनको चुप देखकर व्यासदेव जी बोले हे पितामह! युधिष्ठिर के अब सब संशय

दूर हो गये हैं अब इनको नगर में जानेकी अनुज्ञा देवें। यह सुन कर पितामह ने कहा हे तात! अब तुम भाईयों समेत नगर में जाओ, अपने कर्त्तव्य का पालन करो, बड़ी बड़ी दक्षिणा वाले यज्ञ करो, सारी प्रजा का धर्म पूर्वक पालन करो। हे धर्मपुत्र! जब सूर्य्य उत्तरायण में आएगा, तब मेरे पास आना वही मेरी मृत्युका समय होगा। तब युधिष्ठिर ने पितामहके चरण छुए और प्रदक्षिणा करके भाईयों तथा श्रीकृष्ण सहित हस्तिनापुर लौट गये।

दूसरा अध्याय।

भीष्म की मृत्यु।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! हास्तिनापुर आकर धर्मराज युधिष्ठिर प्रजा का हित करते हुए राज्य करने लगे महायुद्ध में जिनके पति व पुत्र आदिक मारे गये थे उन को बहुत सा धन देकर संतुष्ट किया। फिर अपनी प्रजा का सम्मान बढ़ाते हुए धर्मपूर्वक उन पर शासन करने लगे जिस से सारी प्रजा सुख और शान्ति से रहने लगी। इसी प्रकार राज्य करते जब कुछ दिन व्यतीत हो गये। तो युधिष्ठिर ने समझा कि अब भीष्म पितामह का मृत्युकाल आगया। यह विचार कर उन्होंने नाना प्रकार के रत्न, घृत, सुगान्धित पदार्थ, वस्त्र, अगर तगर चंदन कपूर आदि सारी सामग्री कुलपुरोहित को देखकर स्वयं धृतराष्ट्र गांधारी कुन्ती महात्मा विदुर श्रीकृष्ण तथा अपने भाईयों समेत कुरुक्षेत्र की ओर चले।

वहां पहुंच कर उन्होंने देखा कि ऋषि मुनि और तपस्वी जन पूर्ववत उन्हें घेर कर बैठे हैं। तब भाईयों सहित रथों से उतर कर युधिष्ठिर ने ऋषियों को प्रणाम किया और फिर पितामह के चरण छूकर बोले हे दादा ! हम युधिष्ठिर हैं, आपको प्रणाम करते हैं। युधिष्ठिर की आवाज सुन कर भीष्म ने नेत्र खोल दिये और बड़े प्रेमसे युधिष्ठिर का हाथ पकड़ कर बोले हे बेटा ! मंत्रियों सहित तुम हमारे पास आए हो, यह देखकर हम बहुत प्रसन्न हुए हैं। हम अट्ठावन दिन तक इन तीक्ष्ण नोकीले बाणोंकी शय्यापर पड़े रहे। यह दिन हमें सौ कल्पके समान व्यतीत हुए हैं, अब पवित्र माघ का महीना और शुक्लपक्ष आगया है सूर्य्य उत्तरायण हो गया है। इस के अनंतर वह धृतराष्ट्र से बोले हे पुत्र ! अब तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए, तुम धर्म के तत्त्व को जानते हो, विधाता के लिखे को कोई मिटा नहीं सकता, होनहार अवश्य होकर रहती है। अब पांडव धर्मके अनुसार तुम्हारे पुत्र हैं, तुम पुत्रों के समान उनका पालन करो। युधिष्ठिर गुरुभक्त हैं, सीधे सादे और छल से रहित हैं यह सदैव पिता के समान तुम्हारी आज्ञा मानते रहेंगे। इतना कह कर वह श्रीकृष्ण से बोले हे वासुदेव ! तुम सदा ही पांडवों की रक्षा करते आये हो, तुम्हारे ही बलसे इन्होंने राज्य प्राप्त किया है, तुम ही इनके सहारे हो, हे केशव ! पहले की तरह सदा इन से मित्रता रखना, अब हमारा अन्त समय आगया है हमारी मृत्यु पर किसी प्रकार का

शोक न करना, संसार की यही गति है। इतना कह कर उन्होंने बारी बारी सबको हृदय से लगाया औरफिर चुप हो गये, थोड़ी देर में उन्होंने अपनी सारी इन्द्रियों और मनको संयमित किया और फिर दशम द्वार में प्राण चढ़ा लिये। उनके प्राण रुक गये और उसी समय उनका महान् आत्मा ब्रह्म रन्ध्र से निकल कर सूर्य्य लोकको उड गया। इस प्रकार भरतकुल के सूर्य्य महा तेजस्वी परम पराक्रमी बाल ब्रह्मचारी भीष्म पितामह सदा के लिये इस अनित्य संसार को छोड़ कर अपनी कीर्ति को अचल कर गये। इसके अनंतर पांडवों ने एकत्र होकर काष्ठ और अनेक प्रकारकी सुगन्धित वस्तुओंसे चिता बनाई। विदुर और युधिष्ठिर ने पितामह की देहको सुन्दर रेशमी वस्त्रों से ढक दिया। नकुल और सहदेव चंवर ढुलाने लगे अर्जुन ने छत्र पकड़ कर उन पर छाया की ब्राह्मण सामवेद का गान करने लगे। फिर भीष्म की देह को चिता पर रख दिया गया। उसके ऊपर अगर तगर चंदन कपूर आदि सुगन्धित पदार्थ रखे और फूल मालाओं से उसको अलंकृत किया गया और विधि पूर्वक चिता में आग लगाई गई। हे राजन्! आकाश को छूने वाली अग्नि शिखाओं को देख कर सब पांडवों के नेत्रों से आंसु बहने लगे। इस प्रकार दादाका दाह संस्कार करके बड़े शोक से सिर झुकाए वह सब गंगा तीर पर आए और उनको जलाञ्जलि दी। फिर सब ने स्नान किया। हे जनमेजय! गंगा के बाहर निकल कर

युधिष्ठर रो रो कर घायल हाथी के समान पृथ्वी पर गिर पड़े। तब श्रीकृष्णने उनको भूमिसे उठाकर कहा हे राजन्! धीरज धरें, यह समय रोनेका नहीं है। धर्मराजको दुःखसे विलाप करते देख धृतराष्ट्र बोले हे बेटा! उठो और शोक को छोड़ कर अपने कर्तव्य का पालन करो, तुमने धर्म युद्ध में शत्रुओं को जीत कर राज्य पाया है, अब भाईयों बन्धुओं और मित्रों सहित उसको सुखसे भोगो। तुम्हारे शोकका इस समय मैं कोई कारण नहीं देखता। हे पुत्र! यदि हम शोक करें तो उचित ही है। देखो हमारे और गांधारीके सौ पुत्र जिनको बड़े दुःखों से हमने पाला इस प्रकार नष्ट हो गये, जैसे स्वप्न में पाया हुआ धन। हम बड़े अदूर दर्शी हैं, यदि हम पहले विदुरका कथन मान लेते तो आज हमें शोकसागर में डूबना न पड़ता, हे बेटा! तुम शोक को त्यागकर हमारी ओर देखो, इस प्रकार धृतराष्ट्रने युधिष्ठिर को बहुत समझाया, परन्तु वह पहले की तरह विलाप करते रहे। तब श्रीकृष्ण बोले हे पांडव! परलोक में गये हुए प्राणियों के लिये जो अधिक शोक करता है वह उन प्राणियों को बहुत दुःख देता है। इस लिये हे राजन्! इस शोकको दूर करो और अब किसी बड़े दक्षिणा वाले यज्ञकी तैय्यारी करो जिससे तुम्हारे ज्ञात अथवा अज्ञात सब पाप दूर हों। हे राजन्! सोम से देवताओं को, अमृत पितरों को और अन्न जल आदि पदार्थों से अतिथियों को तृप्त करो, हे राजन् दीनों को दान देने से तुम्हारा कल्याण

होगा, आप पितामह के मुखसे धर्मके तत्त्वों को सुन चुके हैं, इस कारण अब और शोक करना उचित नहीं, अब अपने पूर्व पुरुषों के समान उत्साह के साथ राज करें।

तब युधिष्ठिर बोले हे मधुसूदन ! जो कुछ तुम कहते हो वह हमारे हित के लिये ही है, यह हम भली भान्ति जानते हैं परंतु हम क्या करें, पितामह भीष्म और महाबलि कर्णकी मृत्यु से हमको किसी प्रकारभी शांति नहीं मिलती।

तब युधिष्ठिर को इस प्रकार शोक सागर में डूबे हुए देख व्यासदेव जी बोले हे पुत्र ! पितामह के उपदेश सुन कर भी तुम्हे इतना मोह हो रहा है, इससे यही जान पड़ता है, कि उनके वचनों का तुम पर कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ। हे राजन् ! तुम तो सब बातों के प्रायश्चित जानते हो, इस लिये इस शोक को छोड़ कर ऐसा काम करो जिस से तुम्हारी कल्याण हो। हे राजन् अश्वमेध यज्ञ से सब पाप छूट जाते हैं, तुम्हें वही करना चाहिये।

तब युधिष्ठिर बोले हे भगवन्! अश्वमेध यज्ञसे राजा सब पापोंसे छूट जाता है, यह हम जानते हैं, परंतु इस भयानक युद्धके पश्चात् जिससे संसार के सभी राजा मारे गए हैं और उनके छोटे छोटे बालक राजकुमार मंत्रियों द्वारा राज कर रहे हैं, किस प्रकार हम धन एकत्र कर सकते हैं। इस युद्ध ने सारे संसार के धनका नाश कर दिया है, राजा लोग कंगाल हो रहे हैं, ऐसी अवस्था में हम उनसे मांगते शोभा नहीं देते और दान करना ही अश्वमेध यज्ञ

का मुख्य उद्देश्य है, इस लिए हे महर्षे! आपही बतलायें इस समय हमें क्या करना चाहिये।

तब वेदव्यासजी बोले हे धर्मपुत्र! एक समय महाराज मरुत ने हिमालय पर्वत पर बड़ा भारी यज्ञ किया था। उस यज्ञ में उन्होने ब्राह्मणों को दक्षिणामें इतना धन दिया था, कि वह वहां से उठा कर न ला सके। हे राजन्! पर्वत के समान स्वर्ण का वह ढेर वहां अभी तक ज्यों का त्यों पड़ा है। इस समय उस धनके लाने से तुम्हारा यज्ञ भली भान्ति पूरा हो जाएगा।

इस प्रकार भगवान वेदव्यास के कथन से महाराज युधिष्ठिर का शोक दूर हुआ और वह बोले हे महर्षि! हिमालयसे उस स्वर्णको लाकर हम अवश्य ही यज्ञ करेंगे। तब भगवान वेद व्यास ज़ी तथा अन्य ऋषि मुनि वहां से विदा हुए, और धर्मराज युधिष्ठिर ब्राह्मणों को बहुतसा दान देकर श्रीकृष्ण तथा भाईयों सहित धृतराष्ट्र को आगे कर हस्तिनापुर में आए और सुख पूर्वक राज्य करने लगे।

इति अनुशासन पर्व समाप्त।

अथ अश्वमेध पर्व

पहला अध्याय ।

श्रीकृष्ण का द्वारका जाना ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! कौरवों के नाशके पश्चात् महाराज युधिष्ठिर निष्कंटक राज्य करने लगे । सब ओर से निश्चिन्त होकर श्रीकृष्ण और अर्जुन बन पर्वत नदी आदिक रमणीक स्थानों में घूमने लगे। इस प्रकार जब कुछ काल आनंद से व्यतीत हो गया तो एक दिन श्रीकृष्ण अर्जुन को बोले हे अर्जुन ! कौरवोंका नाश करके धर्मराज ने धर्मपूर्वक राज्य प्राप्त कर लिया, अब महाराज युधिष्ठिर तुम लोगों से रक्षित होकर निर्विघ्न राज्य शासन करें । हे अर्जुन ! यद्यपि तुम सबसे बिछड़ने को हमारा जी नहीं चाहता, परंतु बहुत दिनों से हमने अपने माता पिता तथा अन्य यादवों को नहीं देखा, उनको मिलने की हमारे चित्त में बड़ी उत्कण्ठा है इस लिये मेरी ओर से तुम महाराज युधिष्ठिर को कहो कि वह मुझे द्वारका जाने की अनुज्ञा देवें ।

प्रिय सखा श्रीकृष्ण की यह बात सुन कर अर्जुन के नेत्रों से प्रेमके आंसु बह निकले, उन्होंने बड़ी कठिनता से श्रीकृष्ण के इस प्रस्ताव को स्वीकार किया । तब वह दोनों युधिष्ठिर के भवन में गये जहां वह मंत्रियों के साथ बैठे मंत्रणा कर रहे थे। कृष्ण और अर्जुनको आए देख

महाराज ने उनको बड़ी प्रसन्नता से आसनों पर बैठाया और कुशल पूछ कर बोले हे अर्जुन ! जान पड़ता है तुम किसी विशेष कार्य्य से आए हो कहो क्या काम है, मैं उसे अवश्य पूरा करूंगा। तब वाक चतुर अर्जुन बोले, महाराज! हमारे परम प्रिय सखा श्रीकृष्ण को यहां आए बहुत दिन हो गए अब वह माता पिता के दर्शनों के लिये आप से विदाई चाहते हैं, सो यदि आप आज्ञा दें तो वह द्वारका जाएं। यह सुन कर युधिष्ठिर बोले हे वासुदेव ! आपकी सहायता से हम ने निष्कंटक राज्य प्राप्त किया आप बड़े सुखसे द्वारका जाएं। मामा वसुदेव और देवकी को हम सबकी ओर से प्रणाम करना। हे केशव ! हमारा हृदय तुम्हें आंखोंसे ओझल करना नहीं चाहता, परंतु इस समय हम तुमको रोक नहीं सकते, हमें भूल न जाना और अश्वमेध यज्ञ के समय अवश्य आना। हे यसोधा नंदन ! यह सब धन रत्न और ऐश्वर्य्य तुम ने ही हमको जीत कर दिये हैं, सो जाते समय जो जो अच्छे रत्न आदि पदार्थ तुम्हें पसंद हों वह साथ लेते जाना यह सब कुछ तुम्हारा ही है।

यह सुन कर श्रीकृष्ण बोले महाराज ! हमारे घरमें हाथी घोड़े स्वर्ण रत्न आदिक जो पदार्थ हैं वह आप ही के हैं आप उनको अपना ही समझें।

तब श्रीकृष्ण को बड़े आदर सहित महाराज ने विदा किया। श्रीकृष्ण ने बुआ कुन्ती विदुर धृतराष्ट्र

तथा अन्य गुरु जनोंको नमस्कार किया और बहन सुभद्रा को साथ लेकर रथ पर सवार हुए। श्रीकृष्णको जाते देख नगर के बड़े बड़े लोग चारों पांडव तथा विदुर उन के पीछे पीछे चले। नगर के बाहर जाकर श्रीकृष्ण ने रथको खड़ा किया और अर्जुन से गले मिल कर सबको बड़े मधुर वचनों से लौटाया। इसके अनन्तर बन पर्वत नदी नालों को पार करके वह द्वारका पहुंचे।

दूसरा अध्याय।

अश्वमेध यज्ञ।

वैशंपायन जी बोले हे जनमेजय! श्रीकृष्ण के द्वारका चले जाने पर एक दिन महाराज युधिष्ठिर ने चारों भाईयों और मन्त्रियों को बुलाकर कहा हे भाईयो! भगवान वेदव्यास भीष्म पितामह तथा श्रीकृष्णने हमको अश्वमेध यज्ञ करने की आज्ञा दी थी जिससे ब्रह्म हत्याका पाप भी दूर हो जाता है। उसके लिये वेदव्यासजी ने महाराज मरुत का धन लाने के लिये कहा था। सो हे भाईयो! यदि उसको तुम लासको तो सारे कार्य्य सिद्ध हो सक्ते हैं। तब भीमसेन बोले हे राजन्! आपकी आज्ञा से हम वहां जाकर उस धनको ले आवेंगे। तब भाई की आज्ञा पाकर भीमसेन बहुत बड़ी सेना तथा लाखों खच्चर बैल रथ और लद्दू जन्तुओं को साथ लेकर दुर्गम पर्वतों को पार करके उस स्थान पर पहुंचे जहां राजा मरुतका धन गड़ा पड़ा था। वहां उन्होंने उस स्थान को खोद डाला

जिसके अन्दर से बड़े बड़े कड़ाहे बर्तन और भाण्डे सोने के भरे हुए निकले। उस विपुल स्वर्ण संपत्ति को भीमसेन ने खच्चरों बैलों और रथों पर लाद दिया, जिसके बोझ से पीड़ित हुए हुए जन्तु बड़ी कठिनता से धीरे धीरे हस्तिनापुर की ओर चले।

हे जनमेजय ! इसी अंतर में यज्ञका समय निकट आया जानकर श्रीकृष्ण बलदेव प्रद्युम्न युयुधान चारुदेष्ण कृतवर्मा तथा सुभद्रा और सत्यभामा हस्तिनापुर पहुंचे यह सब अभी राज भुवन में पहुंचे ही थे, कि अभिमन्यु की स्त्री उत्तरा के एक बालक उत्पन्न हुआ। उस बालक के जन्म लेने पर अंतःपुर की स्त्रियां बड़ा आनन्द मनाने लगीं, परन्तु वह बालक न हिलता न रोता और न ही श्वास लेता था, उसको प्राण हीन मृतक देखकर वह सारा आनन्द दुःख में बदल गया और स्त्रियों के रोने से राज महल भर गया। तब कुन्ती सुभद्रा और द्रौपदी जल्दी जल्दी श्रीकृष्ण को बुलाने के लिये दौड़ीं। इतने में श्रीकृष्ण भी घबरा कर अन्दर पहुंचे। वहां उन्होंने देखा कि सब स्त्रियां रो रही हैं, श्रीकृष्ण को देखकर उनकी भाञ्जी उत्तरा पृथ्वी पर लेट गई और उनके पांओं पकड़ कर रोने लगीं। यह दशा देखकर श्रीकृष्ण का हृदय दया से उमड़ आया। उन्होंने ब्रह्मास्त्र से मारे हुए उस बालक के सारे शरीर पर हाथ फेरा, कुछ देर हाथ से मलने पर बालक हिलने लगा। यह देख कर

राज महिलाओं के आनंद का पारावार न रहा। उत्तरा ने उसी समय पुत्रको प्यार से गोद में लिया और उठकर पुत्र सहित श्रीकृष्ण को प्रणाम किया। तब श्रीकृष्ण ने प्रसन्न होकर कहा, कि वंश के क्षय होने के पश्चात् इस बालक ने जन्म लिया है, इस कारण इसका नाम परीक्षित रखा जाय। हे राजा जनमेजय! इस प्रकार तेरे पिताका जन्म हुआ।

परीक्षित के उत्पन्न होने के एक मास पश्चात् भीमसेन राजा मरुत का धन लेकर हस्तिनापुर पहुंचे। जब कुछ दिन पुत्र जन्म के उत्सव को मनाते हो गये तो भगवान् व्यासदेव जी हस्तिनापुर में आए। कौरवों और यादवों ने उनकी पूजा अर्चना की और फिर युधिष्ठिर हाथ जोड़ कर बोले हे भगवान्! आपके बताये हुए धन को हम ले आए हैं अब यज्ञ को शीघ्र ही आरम्भ कर दीजिए। तब व्यासदेव जी बोले हे राजन्! चैत्र मास की पौर्णमासी के दिन तुम यज्ञ को आरम्भ करो। सर्व गुणों से युक्त घोड़े को शास्त्र के अनुसार छोड़ो जब वह घोड़ा सम्पूर्ण भूमण्डल के राजाओं की भूमि को मर्दन करके लौटेगा तब तुम्हारा राज्य अटल होगा।

इस के अनंतर यज्ञ की दीक्षा लेकर महाराज ने शुभ दिन शुभ घड़ी और शुभ महूर्त में सुन्दर श्वेत शरीर वाले श्याम कर्ण घोडे को छोडा और अर्जुन को उसका रक्षक नियुक्त करके बोले हे अर्जुन! दिग्विजय

के चिन्ह रूप इस घोडे को मैं तेरी रक्षा में सौंपता हूं। जहां जहां यह घोडा अपनी इच्छा से जाए इसे घूमने देना जो राजे तुम से लडना चाहें, उन से हमारे यज्ञ का हाल कहना, और जहां तक हो सके युद्ध को टाल देना। महाराज की आज्ञा पाकर अर्जुन ने उस घोडे की पूजा की, और फिर अंगुश्ताना पहर कर गाण्डीव की टङ्कार की और जलते हुए अग्नि के समान घोडे के पीछे पीछे चले। अर्जुन और उस घोडे को देखने के लिए हस्तिनापुर के नर-नारियों से सडकें और मकान भर गए, फूलों की वर्षा से पृथ्वी पट गई, और जयकारों के शब्द से नगर गूंज उठा। हस्तिनापुर से बाहर निकलकर घोडा उत्तर दिशा को रवाना हुआ। रथ पर सवार अर्जुन सेना-सहित उस के पीछे पीछे चले। रास्ते में अनेक राजाओं ने घोडे को पकडा, परन्तु अर्जुन से हार खाकर सब ने अधीनता स्वीकार की, और यज्ञ में सम्मिलित होने का वचन दिया। हे जनमेजय! उत्तर दिशा को विजय करके घोडे ने पूर्व की ओर मुख किया, और त्रिगर्तों के देश में पहुंचा। वहां के राजकुमारों ने उस घोडे को पकड लिया, तब अर्जुन से उनका रण ठन गया। उस युद्ध में बहुत-से त्रिगर्त-कुमार मारे गए, और अन्त में हारकर अर्जुन के पांओं पड़ गए। इस के अनन्तर बहुत से देशों को स्वेच्छा से पार करता हुआ घोडा चीन देश में पहुंचा। वहां वज्रदत्त नाम का राजा भगदत्त का पुत्र

सम्हाला, और सारी भेंट-पूजा की सामग्री लौटा ली। फिर रथपर सवार होकर सेना सहित दुर्ग से निकला। तब दोनों ओर से बाण वृष्टि होने लगी। हे राजन्! पिता पुत्र के उस घोर युद्ध को देखकर देवताओं ने आकाश से पुष्प-वृष्टि की। इतने में बभ्रुवाहन ने अर्जुन की छाती में एक भयानक बर्छी मारी, जो अर्जुन के कवच को फाड़ कर उनकी छाती में उतर गई, इस से अर्जुन बेसुध होकर पृथिवी पर गिर पड़े। अपने पिता को इस दशा में देखकर बभ्रुवाहन अतिदुःख से रोने लगा। तब उलूपी ने पाताल देश से लाई हुई सञ्जीविनी नाम की मणि को उनकी छाती पर रक्खा, जिससे अर्जुन को फिर सुधि आगई उन्होंने नेत्र खोलकर देखा, कि वह भूमि पर गिर पड़े हैं, और उनके पास बभ्रुवाहन, उसकी माता और उलूपी बड़ी चिंता में बैठे हैं।

तब अर्जुन ने उठकर कहा, हे पुत्र! इस रणक्षेत्र में तुम्हारी माता चित्राङ्गदा और उलूपी किस लिए आई हैं? तब उलूपी ने सारा वृत्तान्त सुनाया, जिसे सुनकर अर्जुन बहुत प्रसन्न हुए और फिर बभ्रुवाहन को यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए कहा। वहां से अर्जुन घोड़े सहित लङ्का में गये, और घोर युद्ध में उनको हराकर, बहुत सा धन और रत्न लाए इस प्रकार अर्जुन सारी पृथिवी का मान मर्दन करते हुए, बड़े हर्ष के साथ हास्तिनापुर को लौटे।

तीसरा अध्याय ।

अश्वमेध यज्ञ ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! जब धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने दूतों के मुख से अर्जुन के निर्विघ्न लौट आने का समाचार सुना तो गद्गद प्रसन्न होकर उन्हों ने भीम को यज्ञ मण्डप सजाने की आज्ञा दी जिस को भीमसेन ने बड़ी उत्तम रीति से पूरा किया। यज्ञ स्थली स्वर्ण से मढ़वा दी गई, देश देशान्तरों से आने वाले राजाओं के लिए सहस्रों महल तैय्यार करवाए गए, बड़े बड़े सुन्दर उपवन और तालाबों से सटे हुए वह राज महल चारों ओर आकाश में चमक रहे थे। थोड़े ही दिनों में सारे भूमंडल के राजा सेनाओं समेत वहां पधारे। हे जनमेजय ! उस समय नाना देशों से आये राजाओं से शोभायमान यज्ञ मण्डप ऐसा प्रतीत होता था मानों सारा जंबु द्वीप एक स्थान पर बैठा हो । इसके दूसरे दिन अर्जुन दिग्विजय करके बड़े समारोह के साथ नगर में प्रविष्ट हुआ। भूमंडल के सारे राजे उसकी अगवानी के लिए आगे गये। उस समय युधिष्ठिर और हस्तिनापुर की प्रजा आनंद में मतवाली हो गई, राज पथ फूलों से भर गया बाजों की ध्वनि से आकाश गूंज उठा । राज भवन में पहुंच कर अर्जुन ने पहले धृतराष्ट्र के चरण छुए फिर युधिष्ठिर को प्रणाम किया भीम और श्रीकृष्ण के गले मिले। इसके अनंतर युधिष्ठिर ने दीन दुखियों को बहुत सा दान दिया

इसके तीसरे दिन भगवान् वेदव्यास जी ने कहा हे युधिष्ठिर ! आज से लेकर यज्ञ करो। तब यज्ञ मण्डप में वेद के जानने वाले ऋषियों मुनियों और ब्राह्मणों ने यज्ञ करवाना आरम्भ किया वेद मन्त्रों की ध्वनि से यज्ञ मण्डप गूंजने लगा, सहस्त्रों मनों सामग्री के धूम से आकाश ऐसा हो गया मानों बादल छा गये हों, नदी के स्रोत की नांई गिरती हुई घृत धारा आकाश और पाताल को मिलाने लगी, तब सोम पीने वालों ने सोम रस निकाल कर सेवन किया। हे राजा जनमेजय! उन दिनों उस नगरी में कोई भूखा दरिद्री व कृपण दिखाई न देता था। प्रातः से सायं तक भीमसेन सहस्त्रों मनुष्यों को भोजन देते थे इसके अनंतर पूर्णाहुति पड़ी । तब भगवान व्यासने महाराज को बधाई दी। समाप्ति के पश्चात् युधिष्ठिर ने तीन करोड़ स्वर्ण मुद्राएं ब्राह्मणों को दक्षिणा में दीं। यज्ञ मण्डप में स्वर्ण के पात्र खंभे और बर्तन जो कुछ था, वह भी सब ऋत्विजों को दान दे दिया। इसके अनंतर महाराज ने समस्त तीर्थों के जल से स्नान किया और पाप रहित होकर भाईयों सहित ऐसे शोभायमान हुआ जैसे देवताओं में इन्द्र। उस समय सहस्त्रों राजाओं में ऊंचे सिंहासन पर विराजमान हुए महाराज युधिष्ठिर ऐसे शोभा देने लगे जैसे तारों में चन्द्रमा। महाराज युधिष्ठिर ने उन सब राजाओं को करोड़ों रुपयों के रत्न मणि माणिक और बहु मूल्य पदार्थ भेंट में दिये। श्री कृष्ण

बलदेव तथा अन्य यादवों की भली भान्ति पूजा सत्कार की। हे राजा ऐसा अश्वमेध यज्ञ इससे पहले कभी किसी ने न देखा न सुना जिसमें इतना दान दिया गया कि न कोई भिखारी रहा न कंगाल रहा मानों सभी राजा बन गए। सर्वत्र आनंद ही आनंद छा गया।

इति अश्वमेध पर्व समाप्त।

अथ आश्रम वास पर्व ।

पहला अध्याय ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! अश्वमेध यज्ञ करने के पश्चात् पांडवों का राज्य दृढ़ और उपद्रव रहित हो गया। प्रजा सुखसे अपने व्यापार को बढ़ाने लगी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चारों वर्ण अपने अपने धर्म को पालन करते हुए सुख पूर्वक रहने लगे। पांडव लोग महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा से सब काम करने लगे। कुंती द्रौपदी तथा सुभद्रा गांधारी की सेवा करके उन्हे प्रसन्न रखतीं। अंधे राजाको धर्म पुत्र युधिष्ठिर तथा उनके मन्त्री गण सदा प्रसन्न रखते। इस प्रकार सुख पूर्वक पंद्रह वर्ष व्यतीत हो गये। इतने दिनों में सब पांडवों ने धृतराष्ट्र को प्रसन्न करने में कोई कसर उठा न रखी परन्तु भीमसेन अपने हृदय से धृतराष्ट्र की अनीति को भुला न सके, सभा में किया गया द्रौपदी का अपमान उनके हृदय में अभी तक शूल की नांई चुभता था, इसी कारण वह धृतराष्ट्र की ओर से अपने मनको निर्मल न कर सके उनके इस भावको अंधे राजा भी समझते थे। एक दिन राज सभा में धृतराष्ट्र और गांधारी कर्ण और दुर्योधन की वीरता की बातें कर रहे थे, कि भीमसेन ने उसी समय अपनी भुजाओं को ठोक कर कहा हे राजन्! जिस दुर्योधन की आप बारंबार प्रशंसा करते हैं, उस

नीच कुलांगार को मारने वाला यह भीम आपके सामने है, जिन भुजाओं ने तुम्हारे पुत्र के पशु के समान प्राण निकाले हैं, वह चन्दन-चर्चित भुजाएं इस समय राज्य करती हैं।

भीमसेन के इन वचनों ने धृतराष्ट्र के हृदय को टुकड़े टुकड़े कर डाला। कुछ देर सोच कर उन्होंने सबको बुलाकर कहा, हे वीरो! महाभारत के जन-संहार-कारी युद्ध के कारण हमीं हैं, हमीं ने पुत्र-मोह से पाण्डवों का राज्य छीनकर यह महापाप किया, हमारी ही अनीति से हमारे कुल का भयानक क्षय हुआ, इन सब बातों को स्मरण करके हम मन ही मन रोते हैं। हे युधिष्ठिर! पन्द्रह वर्ष से हम दिन रात में केवल एक बार थोड़ा सा भोजन करते हैं। गान्धारी जो कभी सौ पुत्रों की मां थी और नर्म गदेलों पर सोया करती थी, हमारी तरह मृग-चर्म बिछाए भूमि पर सोती है, परन्तु युधिष्ठिर को दुःख न हो, इस लिए हम ने यह बात कभी प्रगट नहीं की। अब हम चौथी अवस्था को पहुंच गये, अब हमको बन में रह कर तप करना उचित है। इस लिए हे पुत्र! हमें बन में जाने की आज्ञा दो। इतना कहते कहते वृद्ध राजा अकस्मात् अचेत हो कर गान्धारी के शरीर पर गिर पड़े। धृतराष्ट्र की यह दशा देखकर युधिष्ठिर बड़े दुःखी होकर विलाप करने लगे। हाय हाय! जिनकी भुजाओं में सहस्रों हाथियों का बल था, आज वह मृतक-समान

स्त्री के आसरे पड़े हैं। यह सब हमारे ही दोष से हुआ है। धिक्कार है हमारी बुद्धि को, हमारे ज्ञान को धिक्कार है हमको और हमारे राज्य को। यदि महाराज धृतराष्ट्र और माता गान्धारी भोजन न करेंगे, तो आज से हम भी अन्न जल ग्रहण न करेंगे। इस प्रकार विलाप करते हुए युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के शरीर पर अपना नर्म नर्म मणियों से विभूषित हाथ फेरा जिससे धृतराष्ट्र की मूर्छा दूर हुई, और वह बैठकर बोले, हे धर्मपुत्र! बनवास करना हमारे कुल की सनातन मर्य्यादा चली आई है। हमें भी उस मर्य्यादा का पालन करना चाहिये, अब हमारा तप करने का समय है, तुम्हारे साथ पन्द्रह वर्ष रहकर हमने बहुत सुख भोगा, इसी लिए हम बारम्बार तुम से बन में जाने की अनुज्ञा मांगते हैं। तब धर्मपुत्र युधिष्ठिर रोकर उनके चरणों में लिपट गये और बोले, हे पिता! सब बातों को छोड़कर पहले आप भोजन करें, आपके भोजन करने से हम समझेंगे कि आप हम से रुष्ट नहीं हैं।

हे जनमेजय! इसी समय अकस्मात् व्यासदेवजी वहां आ गये, और युधिष्ठिर से बोले, हे धर्मपुत्र! तुम्हारे पिता समान महात्मा धृतराष्ट्र अब चौथी अवस्था को प्राप्त हुए, अब यह संसार के दुःखों और चिन्ताओं को सहन नहीं कर सकते। गान्धारी ने भी अपने सौ पुत्रों के शोक को बड़े धैर्य्य के साथ सहन किया है, इसलिए अब इनको उसी पथ पर चलना चाहिए, जिस पर आपके

पूर्वपुरुष चले हैं। हे राजन्! अब इनको वन में तप करने ही से शान्ति मिल सकती है। तब युधिष्ठिर ने व्यासदेव जी के कथन को स्वीकार किया। इसके पश्चात् युधिष्ठिर की अनुज्ञा पाकर महाराज धृतराष्ट्र ने गान्धारी समेत भोजन किया।

हे राजा जनमेजय! कार्तिकी पौर्णमासी को ब्राह्मणों से यज्ञ करवा कर अग्निहोत्र को आगे करके वृक्षों के वल्कल और मृगचर्म पहन कर महाराज धृतराष्ट्र बन्धु-जनों से घिरे हुए राजभवन से बाहर निकले। धृतराष्ट्र के बनवास का समाचार जंगल की आग के समान सारे नगर में फैल गया। प्रजा के बाल, वृद्ध, युवा पुरुष और स्त्रियें महाराज के अन्तिम दर्शनों के लिए रोते हुए राजभवन की ओर दौड़े। तब धृतराष्ट्र को जाते देख युधिष्ठिर कांपता हुआ "हाय नाथ! कहां जाते हो" कह कर भूमि पर गिर पड़ा। अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, संजय, विदुर, युयुत्सु, धौम्य तथा नगर के बड़े बड़े अधिकारी रोते हुए उनके पीछे पीछे चले। पाण्डवों की माता कुन्ती गान्धारी को सहारा देकर साथ साथ चलने लगी, और धृतराष्ट्र गान्धारी के कन्धे पर हाथ रखकर चलने लगे। हे राजा जनमेजय! राजपथ पर और घरों पर दर्शनों के लिए खड़े हुए नर-नारियों के नेत्रों से आंसुओं की धाराएं बह रही थीं, जिनके बीच में से धृतराष्ट्र दोनों हाथ जोड़ कर चलने लगे। इस प्रकार

उस दुःखमय समुद्ररूप हस्तिनापुर को पार करके वह नगर के बाहर निकले । द्वार के बाहर खड़े होकर महाराज धृतराष्ट्र दोनों हाथ जोड़ कर सब नगरवासियों से बोले, हे भाइयों ! मेरे लिए तुमने बहुत कष्ट उठाया, मैंने अपने राज्यकाल में अच्छा व बुरा जो कुछ किया, उस सबको तुम क्षमा करना, युधिष्ठिर बड़े धर्मात्मा हैं, जिस प्रकार तुमने मेरी आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं किया, इसी प्रकार धर्मराज युधिष्ठिर को अपना राजा समझना। अब तुम जाओ परमात्मा तुम्हारा धन और धर्म बढ़ाए। यह कह कर धृतराष्ट्र ने रोते हुए पुरवासियों को विदा किया, और स्वयं बन को रवाना हुए। महाराज युधिष्ठिर भी विलाप करते हुए सब भाइयों के साथ वापस लौटे, परन्तु कुन्ती, संजय और विदुर वापस न लौटे । तब धर्मपुत्र युधिष्ठिर कुन्ती के पीछे जाते हुए बोले, हे मातः ! तुम बन्धुओं के साथ नगर में चलो। परन्तु युधिष्ठिर की बात का कुंती ने कुछ उत्तर न दिया और वह दृढ निश्चय से गान्धारी के साथ साथ चलती गई। तब दीन हुआ हुआ युधिष्ठिर फिर बोला, हे मातः ! श्रीकृष्ण द्वारा तुम ने ही हम को युद्ध के लिए सन्देशा भेजा, अब अपने भुजबल से उपार्जित राज्य को छोड़कर चले जाना तुम्हें शोभा नहीं देता। हे मातः ! यदि तुम न लौटोगी, तो मैं राज्य छोड़कर तुम्हारे साथ जाऊंगा। इसके पश्चात् भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी ने बारम्बार

कुन्ती को लौट चलने के लिए विनती की, द्रौपदी तो रो रो कर मूर्छित हो गई, महाराज धृतराष्ट्र ने भी बहुत कहा परंतु कुंती ने किसी की न मानी और दृढ़ मन से बोली पांडु पुत्र। अपने पति के राज्य में मैंने बहुत काल तक सुख भोगा, अब पुत्रों से जीते हुए राज्य में मैं नहीं रहूंगी, हे बेटा! अपनी सास गांधारी और श्वसुर की सेवा करके बन में तप करती हुई स्वर्ग लोक में तेरे पिता के दर्शन करना चाहती हूं, अब तुम तुम भाईयों समेत सुख से राज्य करो, द्रौपदी ने बन में बहुत दुःख पाये हैं, उसे सदा प्रसन्न रखो। इतना कह कर कुंती ने द्रौपदी का मुख चूमा पुत्रों को प्यार दिया और उन से विदा हुई।

दूसरा अध्याय।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! धृतराष्ट्र गांधारी कुंती संजय और महात्मा विदुर के चले जाने पर पांडव दुःख और शोक में डूबे हुए स्त्रियों समेत हस्तिनापुर में आए, उस समय हस्तिनापुर शोकमय, आनंद हीन, सूना सा दिखाई देता था। महाराज धृतराष्ट्र उसी दिन चलते चलते बहुत दूर गंगा के तट पर पहुंचे, वहां जाकर स्नान करके उन्हों ने विश्राम किया। इसके अनंतर वह कुरुक्षेत्र में गये। वहां केकय देशों का महाराजा राज्य संपत्ति को त्याग कर बन में तपस्या करता था। धृतराष्ट्र ने वहीं पर भगवान् बेद व्यास से दीक्षा ली, और उस राजा के आश्रम में निवास करने लगे। कुछ काल वहां रह कर

धृतराष्ट्र ने वानप्रस्थ के सारे धर्म सीखे और उग्र तपस्या करने लगे ।

हे राजा जनमेजय ! इधर युधिष्ठिर दिन पर दिन माता कुन्ती, अंधे राजा, गांधारी तथा विदुर के कष्टों को सोच कर अति दुखित रहने लगे । बन में उन पर क्या बीतती होगी, नर्म नर्म शय्या पर सोने वाले किस प्रकार हिंस्र जंतुओं से भरी हुई कठिन भूमि पर सोते होंगे इस प्रकार के विचारों ने उस को विक्षिप्त सा बना दिया । वह प्रति क्षण उन के दुख से दुखी हुआ २ जल हीन मछली के समान तड़पने लगा । एक दिन उन्हों ने भाइयों और मंत्रियों को बुलाकर कहा हे वीरो ! हम बन में जाकर महाराज धृतराष्ट्र को देखना चाहते हैं, तुम शीघ्र सेना तैय्यार करवाओ । तब दूसरे दिन भाईयों सहित धर्म पुत्र युधिष्ठिर ने बन को प्रस्थान किया । नद नदी बन और नगरों में क्रम २ से विश्राम करते हुए धर्म पुत्र कुरुक्षेत्र में पहुंचे । वहां रथों से उतर कर स्त्रियों समेत नंगे पांओं वह आश्रमों की ओर गये, और उस आश्रम में पहुंचे जहां धृतराष्ट्र निवास करते थे । तपस्वियों की शान्त भूमि में पेड़ों की छाया, निर्मल शीतल से भरा हुआ सरोवर, मृगों, गौओं, पक्षियों से युक्त उस आश्रम को देख कर युधिष्ठिर का संतप्त मन कुछ शान्त हुआ तो उन्हों ने मुंनियों से पूछा कि हमारे पिता समान महाराज धृतराष्ट्र कहां है । उन्हों ने क़हा, कि वह यमुना तीर पर स्नान

करने गए हैं। तब पांडव वहां से उठकर यमुना की ओर गये। थोड़ी दूर पर ही उन्हों ने तपस्वी धृतराष्ट्र को पैदल चलते देख लिया। सहदेव रोता हुआ माता कुन्ती के चरणों में लिपट गया। इस के अनंतर युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल माता के पास गये और उस के पांओं छूए, कुंती ने सब को प्रेम से गले लगाया। फिर गांधारी और धृतराष्ट्र के चरण छू कर सब ने अपने २ नाम बताए और जल से भरे हुए घड़ों को अपने कंधों पर उठा लिया। और सब मिलकर आश्रम की ओर आये। हे राजन्! बंधुओं से मिलकर राजा धृतराष्ट्र परम प्रसन्न हुए, और रात भर नाना प्रकार की बातों में मन बहलाते रहे, परंतु वहां विदुर को न देखकर युधिष्ठिर ने पूछा हे महाराज! आप के साथ आए हुए महात्मा विदुर को मैं यहां नहीं देखता हूं, क्या वह कुशल तो हैं? तब धृतराष्ट्र बोले हे राजन्! इस असार संसार की माया मोह को दूर करके महात्मा विदुर निकट ही बनमें घोर तप कररहे हैं, इस प्रकार जब यह परस्पर बातें कर रहे थे, तो भीम ने आश्रम के पास ही विदुर जी को देखा, तब वह दौड़ कर उन की ओर गये, परंतु विदुर जी बिना कुछ बोले भीम से मुख मोड़ कर बन में दौड़ने लगे, भीम भी उन को पुकारते हुए उन के पीछे पीछे दौड़े, कुछ दूर जाकर विदुर जी एकाएक एक वृक्ष के सहारे खड़े हो गये। भीमसेन ने उनके निकट जाकर उनके चरण छूए और कुशल पूछी,

परंतु विदुर की ओर से उस को किसी बात का उत्तर न मिला अंत में भीम ने जब चांदनी रात में अच्छी तरह उन का मुख देखा तो उनको मरा हुआ पाया। महात्मा विदुर की मृत्यु से दुखित हुए हुए भीम आश्रम की ओर लौटे और वहां आकर सारा हाल सुनाया। इस दुखद समाचार से आश्रम में शोक छा गया। प्रातःकाल यमुना नदी पर जाकर उन्हों ने विलाप करते हुए विदुर को जलांजलि दी।

हे राजा जनमेजय! इस प्रकार आश्रम में निवास करते पांडवों को एक महीना हो गया। तब एक दिन धृतराष्ट्र बोले हे पुत्र! राजा के बिना राज्य में बड़े विघ्न होते हैं, अब तुम जाओ, परमात्मा तुम्हारा कल्याण करे, मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूं, अब मेरे सब शोक दूर हुए। तब धृतराष्ट्र की आज्ञा पाकर सब पांडव वापस हस्तिनापुर लौट आए।

तीसरा अध्याय।

धृतराष्ट्र गांधारी और कुंती की मृत्यु।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! धृतराष्ट्र से मिल कर पांडवों को हस्तिनापुर आए दो वर्ष व्यतीत हो गए तब एक दिन अकस्मात् महामुनि नारद जी हस्तिनापुर आए। महाराज युधिष्ठिर ने उन की पाद्य अर्घ्य से पूजा की और उत्तम आसन पर बैठा कर कहा हे महर्षि! आप तीन लोक चौदह भुवन में घूमने वाले हैं। हम ने

कुरुक्षेत्र वासी तपस्वियों से सुना है कि महाराज इन दिनों बन में घोर तपस्या में लीन हैं। नारद बोले हे राजन्! उन्हीं का समाचार मैं तुमसे कहने आया हूं सो तूं स्थिर हो कर सुन हे धर्म पुत्र! आपके लौटने पर धृतराष्ट्र गंगाद्वार की ओर चले गये। वहां वह गहवर बनमें घोर तपस्या करने लगे, आपकी माता कुंती भी सेवा करती थी और संजय धृतराष्ट्र को अनेक इतिहास सुनाया करता था। इस प्रकार बहुत दिन तक वह परमतप को तपते रहे। एक दिन उस बन में बड़े बेग की अंधेरी चली जिससे परस्पर टकराते हुए बासों से आग निकली और देखते ही देखते चारों ओर से उस बन को खाने लगी जिसमें धृतराष्ट्र बैठे थे। उस भयानक अग्नि में से निकलने का कोई मार्ग न देख कर संजय ने कहा हे महाराज! सारे बनको दग्ध करने वाली यह अग्नि आपकी ओर आ रही है, जिसमें से निकलने का कोई रास्ता मैं नहीं देखता हूं, हाय, क्या जाने हम ने कौन से पाप किये हैं, जो इस प्रकार अवगत मृत्यु से मरने लगे हैं। यह सुनकर धृतराष्ट्र बोले हे संजय! हम अंधे हैं, बन में चारों ओर आग लग रही है, तुम कुन्ती को लेकर निकल सकते हो तो निकल जाओ। तब संजय के बहुत कहने पर भी कुंती ने उनका साथ छोड़ना स्वीकार न किया, अंत में धृतराष्ट्र ने संजय को कहा हे संजय ! तुम हमारे अवगत मरने की चिन्ता न करो, हम तपस्वी हैं, तपस्वियों की मृत्यु

जल में होने पर जन्तुओं से खाये जाने पर अग्नि में जल जाने पर श्लाघा होती है, तुम जाओ, कुंती हमारे साथ स्वर्ग को जाएगी जहां पांडु चिरकाल से इनकी राह देख रहे हैं। तब धृतराष्ट्र की आज्ञा पाकर संजय उस जलते हुए बन से बड़ी कठिनता से निकला और तुम्हारे ज्येष्ठ महाराज धृतराष्ट्र सती गांधारी और तुम्हारी माता उस अग्नि में जल गये। केवल संजय को हमने गंगा तट पर विचरते देखा था, अब वह हिमालय में चला गया है। हे राजन्! इस प्रकार उस बड़े प्रतापी राजा का अंत हो गया जिसके भय से तीनों लोक कांपते थे।

महामुनि नारद के मुख से यह समाचार सुन कर युधिष्ठिर मूर्छित होकर गिर पड़े, सारे रणवास में हाहाकार मच गया, हस्तिनापुर नगर की सब हाट बाजार बंद होगये शोक की घटा छा गई। कुछ काल बाद युधिष्ठिर की मूर्छा घटी तो विलाप करके बोले हा दैव! कर्मों की गति न्यारी है, जो सारी पृथिवी के नाथ थे वह अनाथों के समान बन में जल कर मर गये। हाय! युधिष्ठिर भीम और अर्जुन की माता अनाथ हुई हुई बनमें जल गई, दैवकी लीला को कौन जान सकता है। तब वह सब रोते हुए नंगे सिर नंगे पांओं एक वस्त्र पहर कर गंगा तट पर आए। युयुत्सु ने महाराज धृतराष्ट्र को और उनके नाम पर बहुत सा दान दे दिया, और फिर शोक से सिर झुकाए वापस आए।

इति आश्रमवास पर्व समाप्त।

अथ मौसल पर्व

पहला अध्याय।

यादवों का सर्व नाश।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! युधिष्ठिर को राज्य दिलाकर श्रीकृष्ण को द्वारका गये ३५ वर्ष हो गये भोज, अंधक, वृष्णिक आदिक यादव शराब आदिक दुर्व्यसनों में लिप्त होकर लोगों को दुःख देने लगे। दिन रात मद्य में मतवाला रहना, स्त्रियों पर अत्याचार, बड़ों का अनादर, यह उनका प्रति दिन का व्यवहार हो गया। दैवयोग से एक दिन महर्षि विश्वामित्र कण्व और नारद द्वारका को गये। दुश्चरित्र यादवों ने उनका भी अपमान किया। एक दिन वह सब श्रीकृष्ण के पुत्र साम्बको स्त्री का वेश पहरा, उसके पेट पर लोहे का बर्तन बांध, घुंघट निकाल कर उसे उन ऋषियों के पास लेजा कर बोले, हे महर्षिगण! आप हृदयों को जानने वाले हैं, यह बभ्रु की स्त्री गर्भवती है, कृपा करके बतलाइये कि इसके पेटसे क्या उत्पन्न होगा? यादवों की इस दुष्ट चेष्टा से उन को बड़ा क्रोध हुआ, और वह बोले, मालूम होता है तुम्हारे नाशका समय आगया है, इसी लिये तुम इतने दुश्चरित्र हो गये हो, जाओ इसके पेट से वह वस्तु उत्पन्न होगी जो सारे यदु वंशका नाश करेगी। हे जनमेजय! ऋषियों के मुखसे यह शाप सुन कर उन की आंखें खुल गई, शराब

का मद उतर गया और चुपचाप वहां से चल कर सोचने लगे कि अब क्या उपाय करना चाहिये, यह शाप व्यर्थ नहीं जायगा। तब सब मिलकर समुद्र तट पर प्रभास क्षेत्र में गये और साम्ब के पेट के उस लोहे के बर्तन को नाश करने के लिये उसे पत्थर पर रगड़ने लगे। जब रेत के समान पिसा हुआ वह पात्र अंगुलि प्रमाण रह गया तो उसको समुद्र में फैंक दिया जिसको एक मछली ने निगल लिया। वह मछली उद् शिकारी ने पकड़ी और मछली के अंदर से फल निकला वह बाण पर लगाया।

हे राजा जनमेजय! दैव बड़ा प्रबल होता है, कुछ काल पश्चात् घिसे हुए पात्र के परमाणु किनारे पर लगते हुए दूर तक फैल गये, जहां थोहर के सहस्रों हरे हरे डण्डे से उग पड़े। जब श्रीकृष्ण को ऋषियों के शाप का हाल मालूम हुआ तो उन्हें बड़ा शोक हुआ। उसी दिन से उन्हों ने शराब न निकालने की आज्ञा देदी और आज्ञा उल्लंघन करने वाले को कठोर दंड दिया जायगा। इतना करने पर भी यादवों की नीच वृत्तियां न घटीं। प्रकृति के अंदर भी आये दिन बड़े २ अनिष्ट होने लगे। बेमौसम आंधियां नित्य आने लगीं, अकाल वर्षा, वज्र पात, भूकंप होने लगे। यह देखकर एक दिन श्रीकृष्ण ने बड़े यादवों को बुलाकर बोले हे वीर गण! महाभारत के युद्ध से पहले जो शकुन होते थे, वैसे ही मैं इन दिनों यहां देखता हूं इस लिये हम सब को तीर्थ यात्रा करके पाप का प्रायश्चित

करना चाहिये। वृष्णि और अंधक लोगों ने श्रीकृष्णकी यह बात मान ली, खान पान की प्रचुर सामग्री छकड़ों पर लाद कर वह सब प्रभास क्षेत्र की ओर चले। वहां वह सुन्दर घरों में रहकर मांस मदिरा और वेश्याओंके नाच में दिन रात मतवाले रहने लगे। एक दिन सात्यकी गद बभ्रु तथा अन्य यादव लज्जा को छोड़ कर श्रीकृष्ण के सामने ही शराब पीने लगे। उनकी इस ढिठाई को देख कर श्रीकृष्ण ने सोचा कि होनहार बड़ी प्रबल है, वह चुप चाप देखते रहे। अंत में अतिशय मद के नशे में चूर हो कर वह एक दूसरे को गालियां बकने लगे। उसी समय लड़खड़ाते पांओं से झूमते हुए सात्यकी कृतवर्मा को बोले अरे कृतवर्मा! सोते हुए मनुष्यों को मारकर तैंने क्षत्रिय कुल को कलंक लगा दिया, तू बडा नीच और निर्लज्ज है। प्रद्युम्न ने भी सात्यकी का पक्ष लिया और नाना प्रकार के दुर्वचन कह उसका बहुत तिरस्कार किया। कृतवर्मा भी नशे में मतवाला हो रहा था उसने उठ कर उत्तर दिया, सात्यकि! हाथ पांओं कटे हुए भूरिश्रवा का सिर काट कर तुमने कौन सी वीरता दिखाई थी, तू महा निर्लज्ज है। इस पर श्रीकृष्ण ने टेढ़ी आंख कर के सात्यकी और कृतवर्मा को रोका, परंतु इसका कुछ फल न हुआ और बात बहुत बढ़ गई और सब एक दूसरे पर कलंक लगाने लगे इस पर दो बडे दल बन गये। सात्यकी ने क्रोध से कृतवर्मा का सिर काट लिया। श्रीकृष्ण उठ कर उन को रोकने

के लिये दौड़े परंतु कृतवर्मा के साथियों ने सात्यकी को घेर लिया और प्रद्युम्न सात्यकी की सहायता में लड़ने लगे, परंतु दोनों ही उनके हाथोंसे मारे गये। तब श्रीकृष्ण को बहुत क्रोध चढ़ा, उन्होंने थोहर के समान मूसलाकार उगे हुए डण्डों में से एक को उखाडा और उनसे उन को मारने लगे, उन की देखा देखी सब यादवों ने उन डंडों को उखाड़ लिया और मार मार कर एक दूसरे के प्राण लेने लगे, थोड़े ही समय में शराब के नशे में चूर हुए २ वह सब के सब मर गए, केवल श्रीकृष्ण, बभ्रु और दारुक तीन बच गए। इस भीषण हत्या काण्ड के हो जाने पर श्रीकृष्ण ने बभ्रु को कहा, हे भद्र! यदु कुल का नाश हो गया, अब तुम शीघ्र द्वारका जाकर स्त्रियों की रक्षा करो, क्योंकि ऐसे समयों में प्रायः डाकु लोग लूट लिया करते हैं। हम बलराम जी से भेंट करके शीघ्र आते हैं। बभ्रु वहां से चलकर अभी थोड़ी ही दूर गया था कि किसी ने लोहे की गदा मार कर उसे वहीं मार डाला। श्रीकृष्ण और दारुक बलराम को ढूंढते ढूंढते एक बन में पहुंचे। वहां उन्होंने देखा कि योगसमाधि लगाकर बलराम जी ने प्राण छोड़ दिये हैं। वहां से श्रीकृष्ण द्वारका गये और वसुदेव जी को सारा हाल बताकर बोले हे पिताजी! यदुकुल का नाश होगया, बलराम भी इस संसार में नहीं हैं, अब हम उन का दाह संस्कार करने जाते हैं, आप हमारे आने की प्रतीक्षा करें। इसके पश्चात् श्रीकृष्ण दारुक

से बोले हे वीर ! तुम शीघ्र हस्तिनापुर जाकर अर्जुन को सारा समाचार दो, और उन को साथ लेकर द्वारका आना, जो कुछ वह कहें वैसा ही करना, वही इस समय हमारे एक मात्र सहारे हैं। इस प्रकार दारुक को हस्तिना पुर भेज कर श्रीकृष्ण स्वयं उस बन में गये जहां बलराम की मृतक देह पड़ी थी वहां जाकर उन्होंने उन की देह को हिंस्र जंतुओं से सुरक्षित स्थान पर रखा, फिर यादव कुल के विनाश को सोचते सोचते थक कर एक वृक्ष की छाया में बैठ गये। हे राजा जनमेजय! उस बन में एक शिकारी शिकार की तलाश में घूम रहा था। श्रीकृष्ण को मृग समझ कर उस ने एक बाण इन पर छोड़ा जो इन के पांव के तलवे के आर पार हो गया। जब मृग को लेने के लिये वह आया तो श्रीकृष्ण को देखकर रोने लगा, कि हाय हाय मैंने क्या कर दिया। तब श्रीकृष्ण ने लोहे के फल को देख कर कहा हे व्याध! तुम्हारा इसमें कोई दोष नहीं, होनहार होकर ही रहता है ब्रह्मशाप किसी को नहीं छोड़ता, इतना कह कर श्रीकृष्ण ने इस असार संसार को त्याग दिया।

दूसरा अध्याय।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय! नदियों बनों और पर्वतों को वायु वेग से पार करता हुआ दारुक हस्तिना पुर पहुंचा। वहां जाकर उसने पांडवों को यदुवंश के क्षय का सारा हाल सुनाया, जिसे सुनकर वह सब शोक समुद्र

में डूब गये। वहां से चलकर दारुक सहित अर्जुन ने द्वारका आ कर देखा कि जो नगरी सदैव नव-वधु के समान प्रफुल्लित रहती थी आज विधवा स्त्री के समान छबि हीन दिखाई दे रही है। अर्जुन को उस समय बड़ा दुख हुआ और शोक में विह्वल हुए हुए वह श्रीकृष्ण के अंतःपुर में गये। अर्जुन को देखकर रणवास की सभी रानीयां रोने लगीं हाहाकार मच गया उनके विलाप से सारा राज महल करुणा हाय से भर गया। अर्जुन भी उस समय धीरज न रख सका और हा श्रीकृष्ण ! हा केशव ! हा प्यारे सखा ! कहता हुआ भूमि पर गिर पड़ा। कुछ देर बाद जब उसे होश आई तो वह रोता हुआ मामा वसुदेव के पास गया। उस ने देखा कि वसुदेव अन्न जल त्याग कर बड़े दुर्बल हुए हुए हैं। अर्जुन को देख कर वसुदेव ने लेटे लेटे ही उसको गले से लगाया और कुल क्षय की सारी कथा सुनाई। दूसरे दिन प्रातःकाल ही वसुदेव ने भी प्राण छोड़ दिये। शोक से संतप्त मन वाले अर्जुन ने सब सामग्री एकट्ठी की और उन का अन्त्येष्टि संस्कार किया, इस समय सारी नगरी बिलख बिलख कर रो रही थी, इस के अनंतर वह प्रभासक्षेत्र में गये जहां सहस्रों मनुष्य मरे पड़े थे, इस आश्चर्यमयी घटना को देखकर अर्जुन ने ठंडी सांस ली और रोते हुए उन सबका संस्कार किया। फिर कृष्ण और बलराम को ढूंडा। बन में श्रीकृष्ण की मृतक देह को देखकर उसकी चीखें निकल गईं, वह

रोता हुआ बोला, देवगति विचित्र है, जिनकी भुजाओं में सहस्रों हाथियों का बल था, जिनकी बुद्धि से असम्भव बातें सम्भव हो गईं, संसार के सभी राजा महाराजा जिनके चरणों में लोटते थे, जिनके समान कामदेव भी सुन्दर नहीं था, काल के चक्कर में वह भी नहीं बच सके। मालूम होता है, अब हमारा भी काल निकट है, श्रीकृष्ण के विना जीकर क्या करना है। इस प्रकार रोते हुए अर्जुन ने श्रीकृष्ण और बलदेव का दाह-संस्कार किया, और फिर यादवों की स्त्रियों को रथों पर चढ़ाकर, श्रीकृष्ण के पोते वज्रदत्त को साथ लेकर हस्तिनापुर की ओर चला।

तीसरा अध्याय।

वैशम्पायन जी बोले, हे राजा जनमेजय! अर्जुन यादवी-स्त्रियों को लेकर अभी थोड़ीही दूर गये थे, कि एका-एक द्वारका नगरी सागर में डूब गई। इस घटना से चकित हुए हुए, दुर्गम-मार्गों को पार करते हुए अर्जुन जब पञ्चाल देश में पहुंचे तो वहां के डाकुओं ने इतनी स्त्रियों के साथ थोड़े से रक्षकों को देखकर उनको लूटने का विचार किया, और वह सहस्रों की संख्या में लाठियां हाथ में लिए उन पर टूट पड़े। वज्रदत्त उनको देखते ही घबरा गया, तब अर्जुन ने गांडीव धनुष को संभाला और तीक्ष्ण बाणों की वृष्टि करने लगा। परन्तु उसने देखा कि बाणों की पर्वा न करके वह स्त्रियों को उठा उठाकर लेजा रहे हैं। अर्जुनने उनको बचाने का पूरा यत्न किया, परंतु उस समय घबराहट में उसे दिव्य

अस्त्र भूल गये, गांडीव से छोड़े हुए बाण भी पूरे जोर से न पड़ते थे, इससे निराश होकर वह मूढ़ों के समान वहां खड़ा देखता रह गया, बहुत सी स्त्रियों को वह उठा कर ले गये, बहुत सी अपनी इच्छा से उनके पास चली गईं। जो कुछ थोड़ी सी बच गईं, उनको साथ ले लज्जा से सिर झुकाए अर्जुन वज्रदत्त सहित हस्तिनापुर पहुंचा।

वहां आकर उसने द्वारका का सारा हाल सुनाया जिसे सुनकर सब पांडव बड़े शोक से व्याकुल हो गये। इतने में भगवान् वेदव्यासजी वहां आगये। उन्होंने यदुवंश के नाश का, रास्ते में लूटे जाने का सारा हाल सुना तो बोले, हे पाण्डव! शोक मत करो, संसार की यही गति है, ब्रह्मशाप से वह सब लोग मारे गये हैं, उनका काल आचुका था, और मालूम होता है तुम्हारा भी काम समाप्त होचुका है। असुरों के भार से पीड़ित हुई२ पृथिवी का दुःख दूर करने के लिए वह महान् आत्मा श्रीकृष्ण आए थे, तुम उनके निमित्तमात्र थे। वह अपने कार्य को पूरा करके चले गए, अब तुमको भी उसी धाम में चलने की तैयारी करनी। चाहिए। भगवान् वेदव्यासजी के वचन से पाण्डवों को सन्तोष हुआ। इसके पश्चात् वज्रदत्त को इन्द्रप्रस्थ का राज्य देकर युधिष्ठिर ने सब यादव राज-कुमारों और स्त्रियों का प्रबन्ध किया। हे जनमेजय! इस प्रकार उस योगेश्वर श्रीकृष्ण की सांसारिक-लीला समाप्त हुई।

इति मौसल पर्व समाप्त।

महाप्रस्थानिक पर्व
और
स्वर्गारोहण पर्व

पहला अध्याय ।

वैशंपायन जी बोले हे राजा जनमेजय ! अर्जुन के मुख से यादव-कुल के भारी क्षय का हाल सुनकर युधिष्ठिर बोले हे अर्जुन ! होनहार अमिट है यह सब काल की गति है । काल सब जीवों को उत्पन्न करता और मारता है । हे महाबाहो ! हम भी काल की डाढ़ में हैं, श्रीकृष्ण के बिना हमारा जीना शोभा नहीं देता, इसलिये हम को उन्हीं के पीछे जाना चाहिये । बड़े भाई की बात सुनकर अर्जुन भीम नकुल और सहदेव ने कालही को जीने और मरने का कारण माना और श्रीकृष्ण के पीछे जाना स्वीकार किया । तब धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने युयुत्सु को बुलाकर उसे राज्य की सौंपना की और अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को युवराज का तिलक दिया । फिर सुभद्रा को बुला कर बोले हे भद्रे ! अब हमारा समय पूरा हो चुका । जिस महापुरुष श्रीकृष्ण के सारथ्य से अर्जुन ने अकेले ही सारे संसार को जीता था, उनके स्वर्गवास होने के साथ ही गांडीवधारी की शक्ति भी जाती रही और अपने सामने ही डाकुओं से सब कुछ लुटवा बैठा, इससे जान पड़ता है,

कि यह सारा बल उन्हीं के बल से था। उन की मानव लीला समाप्त करते ही हमारा भी काम समाप्त हो गया। अब युयुत्सु की छाया में परीक्षित हस्तिनापुर में राज्य करे और वज्रदत्त धर्म पूर्वक इन्द्रप्रस्थ का शासन करे। हे भद्रे! कोई किसी प्रकार का अन्याय न कर पावे यह तू ने देखते रहना। अब हम चलते हैं। हे सुभद्रे! अब द्वापरयुग का अंत हो गया है कलियुग ने अपना प्रथम चरण रख दिया है। कलियुग में भाई २ की प्रीति नहीं रहेगी, पुत्र पिता के, स्त्री पति के विरुद्धाचरण करेगी। मनुष्य पाप कर्म में लिप्त हुए २ निर्लज्ज हो जाएंगे, धन ही एक मात्र सब का बंधु होगा, ऐसे क्रूर काल में हे भद्रे! जो पुरुष मर गये हैं मैं उन्हीं को धन्य समझता हूं। इस लिए परस्पर प्रीति वाले हम सब भाई जितनी जल्दी इस संसार से चले जायें अच्छा है। यह कहकर युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव और द्रौपदी ने अपने २ वस्त्रों और आभूषणों को उतार दिया। अंतिम अग्निहोत्र करके वल्कल वस्त्रों को धारण किया, और फिर अग्नि की प्रदक्षिणा करके अग्नि होत्र के अग्नि को कुण्डों सहित जल में गिरा कर स्वर्ग प्रस्थान के लिए राज महल से बाहर निकले। हे जनमेजय! द्रौपदी समेत पांचों भाईयों को सदा के लिए जाते देख सब पुरवासी रोते हुए उनके पीछे २ चले, परन्तु "मत जाओ" यह कहने की किसी की भी सामर्थ्य न हुई। हस्तिनापुर के बाहर होकर आगे २ युधिष्ठिर उन के

पीछे भीम, पीछे अर्जुन फिर नकुल सहदेव और सबके पीछे द्रौपदी नंगे पांओं चले उन सब के पीछे पीछे एक कुत्ता चला। नदियों बनों को पार करते वह हरद्वार में पहुंचे, वहां पवित्र गंगा में स्नान करके, हृषिकेश तपोबन होते हुए बद्रिकाश्रम पहुंचे। फिर ऊंचे ऊंचे बर्फ़ों से लदे हुए पर्वतों और दुर्गम घाटियों को पार करते हुए वह पश्चिम की ओर चलते२ सागर तट पर पहुंचे। वहां उन्हों ने द्वारका को जल में डूबा हुआ देखा। फिर वह सारी पृथिवी की प्रदक्षिणा करने की इच्छा से लौट कर उत्तर दिशा को होगये, और संसार के मुकुटरूप आकाश को भेदन करने वाले हिमालय को पार कर के रेत के बड़े सागर पर पहुंचे। उस रेत के समुद्र को बड़ी कठिनता से पार करके वह सुमेरु पर्वत पर चढ़ने लगे जो बर्फ़ से ढका हुआ यम के सदृश दिखाई देता था। वहां सर्दी से उन सब के शरीर अकड़ने लगे दांतों से दांत बजने लगे, परन्तु उस को सहन करते हुए वह ऊपर ही ऊपर चढ़ने लगे। हे जनमेजय! कुछ दूर चल कर बर्फ़ से ठण्डी हो कर द्रौपदी गिर पड़ी। तब भीम युधिष्ठिर को बोले हे राजन्! यशस्विनी द्रौपदी जिस के अपमान को न सहते हुए महाभारत के युद्ध में आपने लाखों मनुष्यों को मार डाला, वह बर्फ़ में गिर कर मर गई है, हे धर्मराज! किस कारण से यह स्वर्ग तक नहीं पहुंच सकी। तब युधिष्ठिर बोले हे भीम! यह हम सब में से अर्जुन के

साथ अधिक प्रीति रखती थी, इसी पाप से इसकी मृत्यु हुई, अब तुम आगे चलो। तब वह सब फिर ऊपर चढ़ने लगे। वहां से चार कोस आगे चल सहदेव भी गिर पड़ा। उसको गिरा देख भीम ने कहा हे धर्मराज! जिस सहदेव ने कभी कोई पाप नहीं किया, वह भी गिर कर मर गया है, इस का क्या कारण है? युधिष्ठिर बोले हे भीम! यह अपने समान किसी को बुद्धिमान नहीं समझता था। इसी दोष से इस की मृत्यु हुई है। तुम पीछे न देखो आगे चलो। तब थोड़ी दूर ऊपर चढ कर नकुल गिर पड़ा। नकुल की मृत्यु से दुखित हुआ भीम बोला—हे युधिष्ठिर! जिसने सदा आपकी सेवा की है, कभी धर्म से मुंह नहीं मोड़ा, वह रूपवान् नकुल क्यों गिर गया। युधिष्ठिर बोले, हे भीम! यह भी अपने आप से बढ कर संसार में किसीको रूपवान् नहीं समझता था। तुम आगे चलो। परन्तु नकुल की मृत्यु से अर्जुन का धीरज टूट गया, और वह भी लड-खडाकर वहीं गिर पडा। युधिष्ठिर बोले, हे भीम! अर्जुन सभी शूरवीरों का अपमान करता था, तुम इसकी ओर न देखो। तब वह दोनों और तीसरा कुत्ता बर्फ के पर्वत को पार कर के बहुत ऊंचे चढ गए, जहां रुण्ड पर्वत अपनी ऊंची चोटियों से गगन-मण्डल का भेदन कर रहे थे। वहां न जल, न कोई पेड, न बनस्पति थी, उन फिसलने वाले पर्वतों पर बडी कठिनता से चढते चढते भीम भूख प्यास से

व्याकुल होकर गिर गये। भीम को गिरते देखकर अकेले युधिष्ठिर आगे चले। उनको जाते देख भीम बोले, हे भाई! मैं किस कारण से गिरा हूं? युधिष्ठिर बोले, हे भीम! तुम बहुत खाते थे, और सदा अपने बल की प्रशंसा किया करते थे। यह कहकर युधिष्ठिर उस कुत्ते के साथ मन ही मन परमात्मा का ध्यान करते हुए आगे चले, और उस शिखर पर पहुंचे जिस से ऊंची कोई चोटी न थी। उनके वहां पहुंचते ही देवराज इन्द्र रथपर चढ़े हुए आकाश और पर्वतों को गुंजाते उनके पास पहुंचे, और युधिष्ठिर को बोले, हे धर्मपुत्र! इस रथपर चढ़ो, तुम्हारा स्थान स्वर्ग में है। इन्द्र को देखकर धर्मराज ने उनको प्रणाम किया, और बोले, हे देवदेव! अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव और द्रौपदी यह मेरे साथ आये हैं, परन्तु रास्ते में मर गए। उनके बिना मैं स्वर्ग में जाने की इच्छा नहीं रखता, वह भी मेरे साथ चलें, यदि यह आपको स्वीकार हो तो मैं रथपर चढ़ने को तैय्यार हूं, नहीं तो आप जाएं, मैं यहीं इस देह को त्याग दूंगा। इन्द्र बोले, हे धर्मपुत्र! अपने भाईयों और द्रौपदी का शोक न करो, वह तुम से पहले स्वर्ग में पहुंच गये हैं, वहां जाकर तुम उन को देखोगे, तुम इस देह सहित स्वर्ग में चलो। तब युधिष्ठिर बोले, हे देवताओं के स्वामी! यह कुत्ता घर से मेरे साथ चला है, रास्ते में भूख प्यास और अनेक कठिनाईयों को सहते हुए इसने

मेरा साथ नहीं छोड़ा। अब इस का साथ छोड़ कर मैं स्वर्ग में कैसे जा सकता हूं। अतः इसे भी साथ चलने की आज्ञा दें। इन्द्र बोले हे राजन्! कुत्ते के लिए स्वर्ग में स्थान नहीं है। कुत्ता स्वामी भक्त है परंतु देश भक्त नहीं है, कुत्ते वाले के सब शुभ कर्म निष्फल होते है, इसलिये हे युधिष्ठिर! कुत्ते का त्याग करो और रथ पर चढ़ो। तब युधिष्ठिर बोले हे देवेन्द्र! यह मेरा भक्त है, भक्त को त्याग करने से ब्रह्महत्या का पाप लगता है। इस लिये मैं इस को किसी प्रकार भी त्याग नहीं करूंगा, इस के बिना मैं स्वर्ग की इच्छा नहीं करता। तब हे जनमेजय! उसी समय वह कुत्ता यमदूत का रूप धारण करके धर्मराज के सन्मुख खड़ा हुआ और हाथ जोड़ कर स्तुति करने लगा, हे धर्मपुत्र! तुम धन्य हो, पिता पितामह की मर्य्यादा पर चलने वाले तुम बड़े पुण्यात्मा हो, तुम्हारा स्वर्ग में अक्षय निवास हो, मैं यमदूत हूं, और आपका काल आजाने पर यमराज की ओर से भेजा गया हूं। यह सुनकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर रथपर चढ़े, और अपने सात्विक शान्त तेज से दशों दिशाओं को प्रकाशमान करते हुए स्वर्ग-लोक को चले गए।

दूसरा अध्याय।

वैशम्पायनजी बोले, हे राजा जनमेजय! स्वर्ग में जाकर धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर ने देखा, कि दुर्य्योधन का

मुख मण्डल सूर्य्य के समान चमक रहा है और वह उत्तम आसन पर बैठा दशों दिशाओं को प्रकाश मान कर रहा है। दुर्य्योधन को इस प्रकार स्वर्ग में बैठे देख युधिष्ठिर के मन में सहसा क्रोध उत्पन्न हुआ। वह उस की ओर घृणा से देख कर वहां से यह कहते हुए लौट पड़े कि हे देवताओ! मैं इस लोभी नीच वृत्ति कुल कलङ्क दुर्य्योधन के साथ नहीं रहना चाहता, मुझे वहां ले चलो जहां मेरे भाई हैं। तब महर्षि नारद बोले हे धर्मपुत्र। अब तुम मर्त्य लोक को छोड़ कर स्वर्ग में आए हो, यहां मर्त्यलोक के संस्कार शेष नहीं रहते, स्वर्ग में द्वेष व वैर भाव नहीं होता। यह सुन कर धर्मपुत्र बोले हे महामुने! जिन्होंने मेरे लिए अपने प्राण दिये हैं, धर्म के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर दिया है, वह राजपुत्र कहां हैं, मैं उन्हें देखना चाहता हूं। तब देवदूतों ने महाराज को अपने पीछे २ चलने के लिए कहा। उन दूतों के पीछे पीछे चलते हुए युधिष्ठिर उन मार्गों पर चलने लगे, जहां घोर अन्धकार था, महादुर्गन्धि से मस्तिष्क फटा जाता था, केश रुधिर मांस और चर्बी से महा दुर्गन्धित उन मार्गों को बड़े कष्ट से पार करते हुए वह बड़ी चिन्ता में पड़ गए। रास्ते में तपे हुए जल, रुधिर और पीप से भरी हुई नदियों को उन्होंने देखा, जिस से उनको घोर दुःख हुआ, अंत में चलते चलते वह एक घोर अन्धकार युक्त स्थान पर खड़े हुए, जहां उन का

दुर्गंधि से मस्तिष्क फटने लगा। तब वह घबरा कर वहां से लौट पड़े। हे जनमेजय! उनके लौटते ही चारों ओर से करुणाजनक आवाजें आने लगीं, हे धर्मपुत्र! हे पुण्यात्मा हे पाण्डु पुत्र!! कृपा करके यहां कुछ देर और ठहरे रहिये। हे धर्मात्मा राजन्! तुम्हारी पवित्र देह से जो सुगन्धित और शीतल वायु बहने लगा है इससे अग्नि में जलते हुए हमारे शरीरों को शान्ति और सुख मिल रहा है। यह सुन कर धर्मसुत युधिष्ठिर का हृदय करुणा से भर गया और वह ठंडी सांस भर कर वहां ठहर गये और पुकार पुकार कर कहने लगे, आप कहां से बोल रहे हैं? कौन हैं? किस लिए दुख उठा रहे हैं? तब चारों ओर से फिर आवाजें आने लगीं हे पांडु पुत्र! मैं द्रौपदी हूं, मैं भीम हूं, मैं कर्ण हूं, मैं नकुल हूं, मैं सहदेव हूं, मैं धृष्टद्युम्न मैं सात्यकी हूं, आप हम को इस नरक कुण्ड से निकालिए। अपने भाइयों के इन दीन वचनों को सुन कर युधिष्ठिर का हृदय दुःख से फटने लगा। वह घोर चिन्ता में मग्न होकर सोचने लगे हे भगवन्! यह क्या लीला है, जिस दुर्य्योधन ने आयु भर में एक भी शुभ कर्म नहीं किया, पराए धन की लालसा में सहस्रों मनुष्यों की हत्या की, मद्यपान और परस्त्री गमन, जुआ आदिक पापों में जो सदा ही मग्न रहा, वह महा निर्दयी राक्षस दुर्य्योधन तो स्वर्ग में सुख भोग रहा है और यह हमारे भाई बन्धु तथा अन्य पुण्यात्मा जीव जो सदा